देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

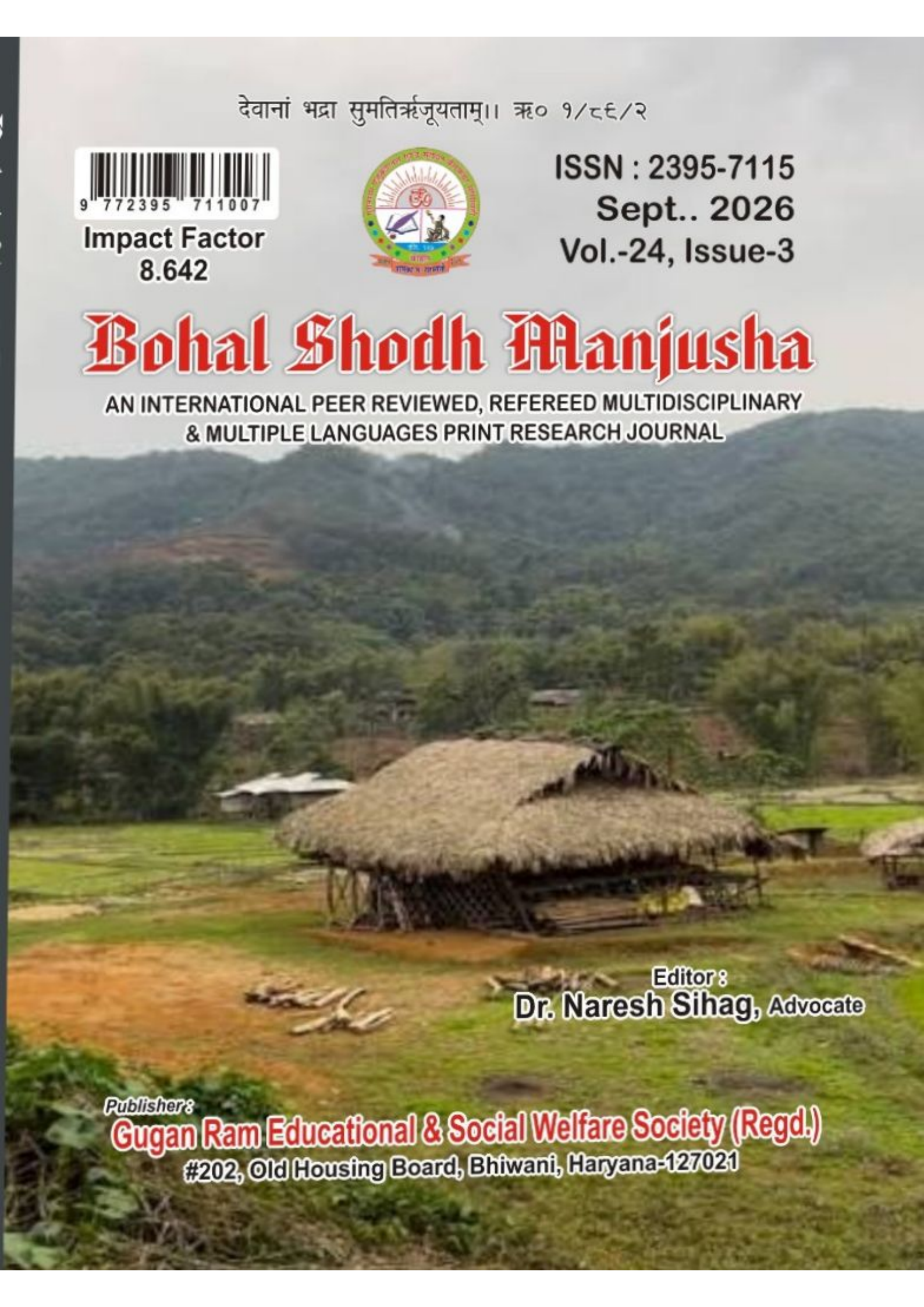
9 772395 711007

Impact Factor
8.642

ISSN : 2395-7115
Sept.. 2026
Vol.-24, Issue-3

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES PRINT RESEARCH JOURNAL



Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

Publisher :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
#202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

स्व. चौ. गुगनराम सिहाग व उनकी छोटी बहन स्व. श्रीमती गीना देवी के शुभाशीर्वाद से प्रकाशित

JOURNAL OF HUMANITIES, COMMERECE, SCIENCE, MANAGEMENT & LAW

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Vol. 24 | I SSUE-3(part-one) | (सितंबर 2026) | ISSN : 2395-7115

प्रेरणा :

चौ. एम. सिहाग

सम्पादक :

डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल', एडवोकेट

एम.ए. (समाजशास्त्र, लोक प्रशासन, हिन्दी शिक्षा शास्त्र, पत्रकारिता),
एम.फिल (समाजशास्त्र, हिन्दी) एम. लिब., एल-एल.बी. (ऑनर्स),
डिप्लोमा पंचायती राज (रजत पदक विजेता), पी.एच.डी. (हिन्दी)
डी.लिट् (मानद उपाधि), काठमांडू, नेपाल
विभागाध्यक्ष हिन्दी एवं शोध निर्देशक
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर-335001 (राज.)

प्रकाशक :

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा)

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL REFEREED/REVIEWED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
ISSN 2395-7115

सम्पादकीय सम्पर्क :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,
भिवानी-127021 (हरियाणा)
Email : nksihag202@gmail.com
मो. 09466532152

Published by :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board,
Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA
Email : grsbohal@gmail.com
Facebook.com/bohalshodhmanjusha
Website : www.bohalsm.blogspot.com
WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1100/-

<u>*Disclaimer :*</u>

1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originallyof their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

बोहल शोध मंजूषा परिवार*

मानद संरक्षक

डॉ. कैलाश चन्द्र शर्मा 'शंकी'
पूर्व शिक्षा अधिकारी,
साहित्यकार,
चरखी दादरी (हरियाणा)

डॉ. विश्वबंधु शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
बाबा मस्तनाथ वि.वि.
रोहतक (हरियाणा)

डॉ. विनोद तनेजा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुरूनानक वि.वि. अमृतसर
पंजाब।

सम्पादक मण्डल

सह सम्पादिका :
डॉ. रेखा सोनी
उप प्राचार्या, शिक्षा विभाग
टाटिया वि.वि. श्रीगंगानगर।

सह सम्पादिका :
डॉ. सुशीला आर्या
हिन्दी विभाग, चौ. बंसीलाल
विश्वविद्यालय, भिवानी।

प्रबंध सम्पादक :
समुन्द्र सिंह
भिवानी, हरियाणा।

विधि विशेषज्ञ

डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट
जिला न्यायालय
भिवानी, हरियाणा।

अजीत सिहाग, एडवोकेट
पंजाब एवं हरियाणा हाईकोर्ट,
चंडीगढ़।

चरणवीर सिंह, एडवोकेट
जिला न्यायालय
पटियाला, पंजाब।

विषय विशेषज्ञ/परामर्शदात्री/शोधपत्र निरीक्षण समिति

डॉ. कुमारी लक्ष्मी जोशी
हिन्दी विभाग, त्रिभुवन वि.वि.
काठमाण्डू, नेपाल।

डिल्लीराम शर्मा संग्रौला
विभागीय प्रमुख, संस्कृत, पत्रकारिता, हिंदी
पद्मकन्या बहुमुखी कैंपस, काठमांडू, नेपाल।

डॉ. संजय एल. मादार
विभागाध्यक्ष, पी.जी. केन्द्र
द.भा.हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद।

डॉ. गीता दहिया, प्राचार्या,
नैशनल टीटी कॉलेज फॉर गर्ल्स
अलवर, राजस्थान

डॉ. इस्पाक अली
पूर्व प्राचार्य, लाल बहादुर शास्त्री
शिक्षा महाविद्यालय, बेंगलूरू

डॉ. मो. रियाज़ खान
बीएमएस वूमैन कॉलेज आटोनोमेस
बेगलूरू

डॉ. वनिता कुमारी
च. दादरी (हरियाणा)

श्री सहदेव समर्पित
सम्पादक, शान्तिधर्मी, जीन्द

डॉ. अंजली उपाध्याय
उत्तर प्रदेश

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कालेज
धारवाड़, कर्नाटक

प्रो. अमनप्रीत कौर
गुरू तेग बहादुर खालसा कॉलेज
फॉर वूमैन, दसूहा, पंजाब

डॉ. वर्षा रानी
संस्कृत विभाग, डॉ. भीमराम
अम्बेडकर, वि.वि., आगरा

प्रो. कमलेश चौधरी
राजकीय रणबीर महाविद्यालय
संगरूर, पंजाब

डॉ. परमजीत कौर
बरेली कॉलेज बरेली,
उत्तर प्रदेश।

डॉ. बी. संतोषी कुमारी
पी.जी.विभाग, दक्षिण भारत हिन्दी
प्रचार सभा, मद्रास।

डॉ. करमजीत कौर
प्राचार्या, दशमेश गर्ल्स कॉलेज
चक आला, मुकेरिया, पंजाब।

डॉ. मनमीत कौर
राधा गोविन्द वि.वि.,
रामगढ़, झारखण्ड।

डॉ. शबाना हबीब
गवर्नमेंट कॉलेज फॉर वूमैन
त्रिवन्तपुरम, केरल।

डॉ. मानसिंह दहिया
संस्कृत विभाग
हरियाणा सरकार।

प्रो. नरेन्द्र सोनी
सूचना एवं जन सम्पर्क अधिकारी,
हरियाणा सरकार।

पठान चिन्ना जानी
सहायक प्राध्यापक
सी.एच.एस.डी. सेंट थेरेसा
महिला महाविद्यालय (ए)
एलुरु, आंध्र प्रदेश

डॉ. किरण गिल
दीनदयाल टी.टी. महाविद्यालय
बारी, जिला सीकर, राज.

डॉ. राजकुमारी शर्मा
श्रीराम कॉलेज,
नई दिल्ली।

श्री राकेश ग्रेवाल
सन जॉस,
कैलिफोर्निया, यू.एस.ए.

श्री राकेश शंकर भारती
साहित्यकार व अनुवादक,
यूक्रेन।

डॉ. रीना उन्नीयाल तिवारी
शिक्षा संकाय, डी.ए.वी. पीजी
कालेज, देहरादून

डॉ. शिवकरण निमल
सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान
एसपीसी राजकीय महा. भीम, राजस्थान।

डॉ. नीलम आर्या
संस्कृत विभाग
उत्तर प्रदेश।

डॉ. रोहतास
एस.जी.पी.जी.आई.एम.एस.
लखनऊ, उत्तर प्रदेश।

डॉ. वैशाली सिंह
सहायक प्राध्यापक
शिक्षा विभाग, एस.एम.टी. अनार देवी
टी.टी. कॉलेज, बखराना
(कोटपुतली) राजस्थान।

डॉ. सविता घुड़केवार
पीजी विभाग, दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

डॉ. श्रीविद्या एन.टी.
श्री शंकराचार्य संस्कृत वि.वि.
केरल।

डॉ. पंडित बन्ने
भारत महाविद्यालय,
सोलापुर (महाराष्ट्र)

डॉ. उमा सैनी
आई.ए.एस.ई. विश्वविद्यालय
सरदारशहर, राजस्थान

डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां
डीन फिजिकल एजुकेशन
टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर,

डॉ. राधाकृष्णन गणेशन
भारत कला भवन
वाराणसी, उत्तर प्रदेश।

डॉ. रवि सुण्डयाल
हॉयर एजुकेशन डिपार्टमेंट
जम्मू कश्मीर।

प्रो. सत्यबीर कालोहिया
पूर्व प्राचार्य, कैलिफोर्निया।

डॉ. रेखा रानी
गवर्नमेंट रणबीर कॉलेज
संगरूर, पंजाब

डॉ. के.के. मल्होत्रा
पूर्व विभागाध्यक्ष
गवर्नमेंट कॉलेज, गुरदासपुर

*सम्पूर्ण बोहल शोध मञ्जूषा परिवार/सम्पादक मण्डल अवैतनिक है।

शोध-पत्र प्रकाशन के लिए निर्देश मंजूषा

गुगनराम सोसायटी (पंजीकृत) द्वारा शोधार्थियों व अध्येताओं के शोध/अनुसंधान की गतिविधियों को प्रोत्साहित करने हेतू बोहल शोध मंजूषा ISSN 2395-7115 नामक बहुभाषिक अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। कला, संस्कृति, विज्ञान, वाणिज्य, मानविकी, प्रबंध, प्रौद्योगिकी, विधि, भूगोल, शिक्षा, पत्रकारिता पर केन्द्रीत इस शोध पत्रिका को विषय विशेषज्ञों तथा मनीषी विद्वानों की सक्रिय सहभागिता प्राप्त है। पत्रिका का वार्षिक शुल्क 1100 रु. है।

आप अपना शोध पत्र कम्प्यूटर से मुद्रित फोन्ट साईज 14, कृतिदेव-10, कृतिदेव-21 में व अंग्रेजी के Arial, Times New Roman में पेज मेकर या माइक्रोसोफ्ट वर्ल्ड में हमारी Email ID : grsbohal@gmail.com पर भेजें। शोध पत्र प्रेषित करने से पूर्व दिये गये सन्दर्भ, मात्रा आदि की पूर्णतया जाँच कर लें।

नोट :- उर्दू, पंजाबी आदि भाषा के शोध पत्र पेपर साईज 7x9.5 पर टाईप कराकर JPG या PDF फाईल हमारी ईमेल आई.डी. पर भेज सकते हैं।

हमारी पत्रिका में शोध पत्र लेखक के फोटो सहित प्रकाशित किये जाते हैं। इसलिए आप अपने शोध पत्र के साथ पासपोर्ट साईज फोटोग्राफ, सम्पर्क सूत्र : टेलीफोन, मोबाईल नं., ई-मेल तथा पिनकोड सहित पत्र व्यवहार का पूरा पता (हिन्दी व अंग्रेजी) कम्प्यूटर द्वारा टाईप करवाकर भेजें।

★ शोध पत्र 2000-2500 शब्दों (4-6 पेज) से अधिक नहीं होनी चाहिए, यदि शब्द सीमा अधिक होती है तो सम्पादक को अधिकार होगा यथा स्थान संक्षिप्तीकरण कर दें। अस्वीकृत शोध पत्र की वापसी संभव नहीं है।

★ पत्रिका में प्रकाशित श्रेष्ठ शोध पत्र को हमारी सोसायटी/पत्रिका की ओर से बहुउपयोगी श्रीमती गिना देवी शोधश्री सम्मान प्रदान किया जायेगा।

★ शोध पत्र में व्यक्त विचार लेखकों के स्वयं के विचार हैं। उनसे सम्पादक, प्रकाशक की सहमति आवश्यक नहीं है। शोध पत्र में प्रयुक्त किए गए तथ्यों के प्रति संबंधित लेखक उत्तरदायी होगा। पत्रिका में शोध आलेख प्रकाशन के लिए भेजने से पहले सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करना लेखक का दायित्व है। प्रत्येक विवाद का न्यायक्षेत्र भिवानी (हरियाणा) होगा।

★ सम्पादकीय पद अव्यावसायिक और अवैतनिक हैं। पत्रिका में केवल शोध पत्र ही प्रकाशनार्थ भेजें। शोध पत्र का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय व प्रकाशित समस्त शोध पत्रों का सर्वाधिकार समिति/सम्पादक के पास सुरक्षित होगा।

नोट :

सहयोग/सदस्यता राशि 1100/- रू. का ड्राफ्ट/चैक/आई.पी.ओ. 'गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी' के नाम भेजें तथा ऑनलाईन बैंक में सहयोग जमा राशि की रसीद की फोटोप्रति अपने आलेख के साथ हमें मेल कर सूचित करने का कष्ट करें ताकि समय पर रसीद भेजी जा सके। ऑनलाईन सहयोग राशि के साथ 50/- रू. अतिरिक्त अवश्य जमा करवायें। प्रकाशन सहयोग शुल्क वापिस देय नहीं।

बैंक का नाम	:	पंजाब नैशनल बैंक, हालु बाजार., भिवानी (हरियाणा)
खाता धारक का नाम	:	गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी
बैंक खाता संख्या	:	1182000109078119
IFSC Code	:	PUNB0118200
MICR CODE	:	127024003

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Table 2

Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc.,)

S.N.	Academic/Research Activity	Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences	Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines
1.	**Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals**	08 per paper	10 per paper
2.	**Publications (other than Research papers)**		
	(a) Books authored which are published by ;		
	International publishers	12	12
	National Publishers	10	10
	Chapter in Edited Book	05	05
	Editor of Book by International Publisher	10	10
	Editor of Book by National Publisher	08	08
	(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties		
	Chapter or Research paper	03	03
	Book	08	08
3.	**Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula**		
	(a) Development of Innovative pedagogy	05	05
	(b) Design of new curricula and courses	02 per curricula/course	02 per curricula/course

अनुक्रमणिका - सितंबर 2026

क्रमांक	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	संपादकीय	डॉ० नरेश सिहग	10-10
2.	अवध की प्रशासनिक एवं सैन्य व्यवस्था : नवाबी शासन की संस्थागत संरचना का अध्ययन	प्रो० अरुण कुमार सिंह	11-18
3.	प्रकृति का नैसर्गिक सौंदर्य और डॉ. 'सुमन' की कविता	डॉ० नेमीचंद कुमावत	19-23
4.	जयशंकर प्रसाद के काव्य में प्राकृतिक सौन्दर्य	डॉ० सतकुमार	24-27
5.	राजेंद्र यादव के उपन्यासों में दांपत्य जीवन : एक अध्ययन	सुमन यादव	28-31
6.	आदिवासी समाज में पिछड़ेपन के कारण	मोनिका, डॉ० अनिल कुमार	32-35
7.	रेत समाधि:हर हद-सरहद पार का आख्यान	सलोनी प्रिया	36-41
8.	छत्तीसगढ़ की नदी-परंपरा और हिन्दी साहित्य: प्रकृति, आस्था एवं जीवन-दर्शन का अध्ययन	संजू लदेर, डॉ. राधा शर्मा	42-47
9.	मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानी 'बिगड़ैल बच्चे' में मूल्यबोध	डॉ. कुलदीप	48-51
10.	रमणिका गुप्ता की कहानी 'जिंदा रहने के लिए' में आदिवासी जीवन का संघर्ष	मनीषा देवी	52-55
11.	Idea"s of the Guru Nanak Dev Ji for Human Rights: Relevance in Democracy	RUPINDER SINGH	56-60
12.	जीवन मूल्य के सन्दर्भ में ज्ञानप्रकाश विवेक की कहानी 'शिकारगाह' का अध्ययन	डॉ. सुदेश कुमारी	61-63
13.	गिरीश कारनाड के नाटक 'पुष्प' में मिथकीय प्रयोग : भक्ति, कामना और आधुनिक चेतना	राहुल	64-67
14.	झारखण्ड के विद्यालयों में शारीरिक शिक्षा एवं खेल सुविधाओं की उपलब्धता, उपयोगिता एवं चुनौतियों का अध्ययन	रंजन तिग्गा	68-72
15.	हरियाणा के लोकसाहित्य में सांस्कृतिक चेतना	डॉ० सतकुमार	73-77
16.	हाशिए से केंद्र तक : दलित साहित्य की वैचारिक यात्रा एवं	मंजीत कुमार	78-86

	ओमप्रकाश वाल्मीकि का कथा साहित्य		
17.	डिजिटल मार्केटिंग का आधुनिक व्यवसाय एवं उपभोक्ता व्यवहार पर प्रभाव: एक अध्ययन	भारत सिंह जामोद	87-91
18.	“अग्निदेव का त्रिविध स्वरुप” गृह्य, दाक्षिणात्य एवं आहवनीय का शास्त्रीय विवेचन	संदीप उपाध्याय	92-96
19.	चित्रा मुद्गल के कालातीत नारीवादी उपन्यास “आवा”	फातिमा हेन्ना	97-99
20.	ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਵਿਧੀ	ਡਾ. ਲਖਵਿੰਦਰ ਕੌਰ	100-104
21.	भारत-अमेरिका सामरिक साझेदारी और भारत-रूस संबंधों के बीच संतुलन: बदलती वैश्विक राजनीति का अध्ययन	डॉ० अमित कुमार	105-109
22.	भारत की ‘Neighbourhood First’ नीति का दक्षिण एशिया की क्षेत्रीय सुरक्षा एवं आर्थिक एकीकरण प्र प्रभाव : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ० योगेश कुमार कनौजिया	110-114
23.	‘वर्किंग विमेंस हॉस्टल’ की कविताओं में स्त्री प्रतिरोध के विविध आयाम	डॉ.उषस .पी .एस	115-121
24.	Youth-Led Development in Chhattisgarh and the Viksit Bharat Vision: Demographic Dividend, Skills, and Civic Participation	Dr. Bhuneshwarlal Sahu, Dr. Digeshwar Sahu	122-126
25.	नाट्यशास्त्रानुसार नाटक व नाटक की विशिष्टता	डा० मुन्ना जोशी	127-131
26.	भारत में समान आचार संहिता:अवधारणा, विवाद एवं समकालीन संभावनाएँ	डॉ. ममता गौतम	132-136
27.	साहित्य और संस्कृति के संवाहक के रूप में अनुवाद और तुलनात्मक अध्ययन का महत्व :मनोज दास की (ओड़िआ) कहानियों के संदर्भ में	चंद्रिका भोइ, डॉ.चक्रधर पधान	137-145
28.	अमीर खुसरो के साहित्य में सूफी दर्शन और सांस्कृतिक चेतना	डॉ. शीनुल इस्लाम मलिक	146-153
29.	ग्रामीण क्षेत्रों में ई-कॉमर्स और उद्यमिता का विकास:-अवसर चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ	डॉ. पूजा यादव	154-160
30.	भीष्म साहनी कृत उपन्यास 'निल्लू नीलिमा नीलोफ़र' में स्त्री-अस्तित्व, स्वायत्तता और समकालीन समाज: एक सघन	रिम्पल सिंह, डॉ. दिनेश कुमार मीणा	161-165

	विश्लेषण		
31.	समकालीन हिंदी फिल्मों में बाल यौन शोषण की समस्या एवं सरकारी नीतियों की सिनेमाई अभिव्यक्ति (विशेष सन्दर्भ: कहानी 2, आर्टिकल 15 एवं A Thursday)	हिक्की देवदास, डॉ० बी अशोक	166-169
32.	Contemporary Global Issues and New World Order	Dr. Pankaj Kumar Tiwari	170-173
33.	रामफल सिंह खटकड़ के प्रबंध काव्यों में राष्ट्रीयता की भावना	रजनी	174-178
34.	पूर्वांचल की लोक-संस्कृति में धोबिया गीत एवं नृत्य: ऐतिहासिक संदर्भ, समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य और समकालीन संकट	डॉ. दीपक कुमार कन्नौजिया	179-183
35.	دکنی ادب کی تحقیق	نبیلہ جبین	184-188
36.	वन-विनाश और रामायण की अरण्य-चेतना	Sanchita Santra	189-192
37.	सामाजिक अस्मिता के निर्माण भाषा का योगदान (हिंदी के संदर्भ में)	विन्द्रेश यादव, डॉ. ओमप्रकाश	193-198
38.	डिजिटल युग में सांस्कृतिक पहचान और सामाजिक परिवर्तन: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन	वंदना शर्मा, प्रो. प्रेमलता	199-203
39.	Indian Women's Theatre as a Cultural Intervention: Performance of Sexual and Gender-Based Violence and Resistance	Dinesh Kumar	204-215
40.	ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਰਾਜਨੀਤੀ ਵਿੱਚ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਦਾ ਸੰਕਟ: ਇੱਕ ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਣ	ਮਨਦੀਪ ਕੁਮਾਰ	216-222
41.	डिजिटल युग में हिंदी भाषा और साहित्य की चुनौतियाँ	डॉ. महावीर नाथ	223-227
42.	मधु कांकरिया के उपन्यासों में नारी अस्मिता और संघर्ष : एक समालोचनात्मक अध्ययन	स्पम कुमारी	228-232
43.	'परख' में प्रेम और मर्यादा का द्वन्द्व	नियंता, डॉ० कुमार धनंजय	233-236

संपादकीय





साहित्य : समय की धड़कन और समाज की आवाज़

प्रिय पाठको, शोधार्थियों, रचनाकारों एवं साहित्य-प्रेमियों!

सादर नमस्कार,

'बोहल शोध मंजूषा' के सितंबर 2026 अंक को आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें अत्यंत हर्ष और संतोष की अनुभूति हो रही है। प्रत्येक अंक हमारे लिए केवल शोध-पत्रों और रचनात्मक रचनाओं का संकलन नहीं, बल्कि विचारों के उस जीवंत संसार का निर्माण है, जहाँ साहित्य, समाज, संस्कृति, शिक्षा और मानवीय संवेदनाएँ एक-दूसरे से संवाद करती हैं।

'बोहल शोध मंजूषा' का मूल उद्देश्य भी इसी साहित्यिक और बौद्धिक संवाद को आगे बढ़ाना है। हमारा विश्वास है कि शोध केवल उपाधि प्राप्त करने का साधन नहीं होना चाहिए। शोध का वास्तविक अर्थ है—प्रश्न करना, तथ्यों की पड़ताल करना, स्थापित धारणाओं को परखना और ज्ञान की नई संभावनाओं को सामने लाना। इसलिए शोध में मौलिकता, प्रमाणिकता, तर्कशीलता और संदर्भबोध को सर्वोच्च स्थान मिलना चाहिए।

सितंबर का यह अंक इसी व्यापक दृष्टि का प्रतिनिधित्व करता है। इसमें विविध विषयों पर प्रस्तुत शोध आलेख ज्ञान के अलग-अलग क्षेत्रों को जोड़ने का प्रयास करते हैं। हमें विश्वास है कि ये आलेख शोधार्थियों, अध्यापकों और साहित्य के गंभीर पाठकों को नए प्रश्नों पर विचार करने के लिए प्रेरित करेंगे। साथ ही, रचनात्मक साहित्य पाठकों के भावलोक को स्पर्श करेगा और उन्हें अपने आसपास की दुनिया को नए दृष्टिकोण से देखने का अवसर देगा।

आज जब सूचना बहुत है, लेकिन चिंतन के लिए समय कम होता जा रहा है, तब साहित्य और शोध दोनों की जिम्मेदारी बढ़ जाती है। हमें सूचना से आगे बढ़कर ज्ञान, ज्ञान से आगे बढ़कर विवेक और विवेक से आगे बढ़कर मानवीय संवेदना की ओर जाना होगा।

'बोहल शोध मंजूषा' इसी यात्रा में आपका सहयात्री बनना चाहती है।

हम अपने सभी लेखकों, शोधकर्त्ताओं, समीक्षकों, संपादकीय सहयोगियों और पाठकों के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करते हैं, जिनके विश्वास और सहयोग से यह साहित्यिक-शोध यात्रा निरंतर आगे बढ़ रही है। आपकी प्रतिक्रियाएँ, सुझाव और आलोचनाएँ हमारे लिए मार्गदर्शक हैं।

आइए, हम मिलकर ऐसी साहित्यिक और शोध संस्कृति का निर्माण करें जहाँ मौलिकता को सम्मान मिले, विचारों को स्वतंत्रता मिले, भाषा को गरिमा मिले और मनुष्य को केंद्र में स्थान मिले।

शब्द तभी सार्थक होते हैं जब वे समाज में कुछ बदलने की क्षमता रखते हों।

इसी विश्वास के साथ—

सितंबर 2026 अंक के सभी रचनाकारों एवं शोधकर्त्ताओं को हार्दिक शुभकामनाएँ।

– **सादर,**

– **डॉ. नरेश सिहाग**

– **संपादक**

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 11-18
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

अवध की प्रशासनिक एवं सैन्य व्यवस्था : नवाबी शासन की संस्थागत संरचना का अध्ययन

प्रो० अरुण कुमार सिंह
इतिहास विभाग
डी.ए.वी. पी.जी. कॉलेज,
(सम्बद्ध महाराजा सुहेलदेव विश्वविद्यालय आजमगढ़) आजमगढ़, उत्तर प्रदेश, पिन कोड - 276001

सारांश

अवध का नवाबी शासन अठारहवीं शताब्दी के भारतीय राजनीतिक इतिहास में प्रादेशिक सत्ता के उभार का महत्वपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत करता है। 1722 ई. में सआदत खाँ बुरहान-उल-मुल्क के आगमन से आरम्भ हुई राजनीतिक प्रक्रिया ने धीरे-धीरे अवध को एक सुदृढ़ उत्तर भारतीय राज्य के रूप में विकसित किया। इस विकास में केवल नवाबों की राजनीतिक महत्वाकांक्षा ही निर्णायक नहीं थी, प्रशासनिक संस्थाओं का पुनर्गठन, राजस्व-संग्रह की व्यवस्था, न्यायिक नियंत्रण, पुलिस संगठन, स्थानीय शक्तियों का नियमन तथा सैन्य संगठन ने संयुक्त रूप से राज्य की शक्ति को आधार प्रदान किया। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य अवध की नवाबी शासन-व्यवस्था की संस्थागत संरचना का ऐतिहासिक विश्लेषण करना है।अवध में नवाब सर्वोच्च राजनीतिक सत्ता का केंद्र था। उसके अधीन विभिन्न अधिकारी राजस्व, न्याय, पुलिस और प्रादेशिक प्रशासन का संचालन करते थे। स्थानीय जमींदारों और प्रभावशाली भू-स्वामियों को प्रशासनिक ढाँचे से जोड़कर शासन ने ग्रामीण क्षेत्रों में अपनी पहुँच बनाए रखने का प्रयास किया। भूमि से प्राप्त राजस्व राज्य की वित्तीय व्यवस्था का प्रमुख आधार था। इसी आय से सैनिकों का वेतन, प्रशासनिक व्यय तथा सुरक्षा संबंधी आवश्यकताएँ पूरी होती थीं। इस कारण राजस्व और सैन्य व्यवस्था के बीच गहरा संबंध स्थापित हुआ।न्याय एवं पुलिस व्यवस्था ने सामाजिक अनुशासन, व्यापारिक सुरक्षा तथा सार्वजनिक शांति बनाए रखने में योगदान दिया। दूसरी ओर सैन्य संगठन में घुड़सवार, पैदल सैनिक तथा तोपखाने की भूमिका रही। स्थानीय सैनिक शक्तियों का उपयोग भी परिस्थितियों के अनुसार किया जाता था। किंतु अंग्रेजी कंपनी के बढ़ते राजनीतिक हस्तक्षेप ने इस स्वायत्त व्यवस्था को धीरे-धीरे कमजोर किया। 1801 ई. की संधि के बाद अवध की स्वतंत्र सैन्य क्षमता अत्यधिक सीमित हो गई और अंततः 1856 ई. में नवाबी सत्ता समाप्त कर दी गई।अतः अवध

का प्रशासनिक एवं सैन्य इतिहास केवल शासन-प्रणाली का विवरण नहीं है, यह प्रादेशिक राज्य-निर्माण, राजस्व-संसाधनों, स्थानीय शक्तियों, सैन्य स्वायत्तता और औपनिवेशिक संबंधों को समझने का महत्वपूर्ण माध्यम है।
मुख्य शब्द-अवध, नवाबी शासन, प्रशासन, राजस्व, न्याय, पुलिस, सेना, जमींदार, सुरक्षा, स्वायत्तता आदि।

प्रस्तावना

अवध का इतिहास अठारहवीं शताब्दी के भारतीय राजनीतिक परिवर्तन को समझने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। मुगल साम्राज्य के केंद्रीय नियंत्रण में कमी आने के साथ अनेक प्रादेशिक शक्तियाँ उभरने लगी थीं। इन शक्तियों में अवध का स्थान विशिष्ट था, क्योंकि यहाँ विकसित नवाबी सत्ता ने मुगल प्रशासनिक परम्पराओं को पूरी तरह अस्वीकार करने के बजाय उन्हें स्थानीय राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों के अनुरूप ढालते हुए अपना स्वतंत्र स्वरूप निर्मित किया। इस प्रक्रिया ने अवध को केवल एक प्रशासनिक प्रांत के रूप में नहीं रहने दिया, उसे क्रमशः एक प्रभावशाली उत्तर भारतीय राज्य में परिवर्तित कर दिया।अवध की राजनीतिक शक्ति के विकास को समझने के लिए उसके प्रशासनिक संगठन का अध्ययन आवश्यक है। किसी राज्य की स्थिरता उसके भू-क्षेत्र या शासक की व्यक्तिगत क्षमता मात्र पर निर्भर नहीं करती। शासन की वास्तविक प्रभावशीलता इस बात से निर्धारित होती है कि राज्य अपने संसाधनों का संग्रह किस प्रकार करता है, अधिकारियों को किस प्रकार नियुक्त करता है, ग्रामीण एवं नगरीय समाज पर नियंत्रण कैसे स्थापित करता है, विवादों का समाधान किस व्यवस्था से करता है और आवश्यकता पड़ने पर अपने निर्णयों को लागू कराने के लिए किस प्रकार की सैन्य शक्ति का प्रयोग करता है। अवध के नवाबी शासन में इन सभी तत्वों का परस्पर संबंध दिखाई देता है।सआदत खाँ बुरहान-उल-मुल्क के समय से अवध में प्रशासनिक पुनर्गठन की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। उनका उद्देश्य केवल राजस्व बढ़ाना नहीं था। वे स्थानीय शक्तियों को नियंत्रित करते हुए ऐसी व्यवस्था स्थापित करना चाहते थे जिसके माध्यम से शासन की वास्तविक शक्ति प्रांत के भीतर केंद्रित की जा सके। इसके लिए उन्होंने स्थानीय भू-स्वामियों, जमींदारों और अन्य प्रभावशाली समूहों के साथ संबंधों को नए रूप में व्यवस्थित किया। आगे चलकर सफदरजंग ने इस प्रक्रिया को विस्तृत किया और अवध की राजनीतिक स्थिति को उत्तर भारत की व्यापक राजनीति से जोड़ दिया।अवध की प्रशासनिक संरचना में राजस्व का स्थान केंद्रीय था। कृषि पर आधारित अर्थव्यवस्था में भूमि से प्राप्त आय ही राज्य के आर्थिक संसाधनों का प्रमुख आधार थी। राज्य को प्रशासन, सेना, न्याय और सुरक्षा के लिए पर्याप्त धन चाहिए था और इसकी पूर्ति मुख्यतः कृषि उत्पादन से होने वाली आय से होती थी। इसलिए राजस्व-संग्रह केवल वित्तीय कार्य नहीं था; वह शासन की राजनीतिक शक्ति का आधार भी था। राजस्व वसूली में सफलता का अर्थ था कि राज्य ग्रामीण समाज तक अपनी सत्ता पहुँचा पाने में सफल है।इस व्यवस्था में स्थानीय जमींदारों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण थी। वे ग्रामीण समाज में सामाजिक प्रतिष्ठा के साथ-साथ आर्थिक और कई बार सैनिक प्रभाव भी रखते थे। नवाबी शासन ने उन्हें एक ओर प्रशासनिक ढाँचे में सम्मिलित किया, तो दूसरी ओर उनकी शक्ति को नियंत्रित रखने का प्रयास किया। यही कारण था कि अवध की शासन-व्यवस्था में केंद्रीय सत्ता और स्थानीय प्रभुत्व के बीच सहयोग, संघर्ष और समझौते की निरंतर प्रक्रिया दिखाई देती है।

प्रशासन का दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष न्याय और पुलिस था। राज्य की स्थिरता के लिए यह आवश्यक था कि नागरिक विवादों का समाधान हो, अपराधों पर नियंत्रण रहे और नगरों तथा व्यापारिक केंद्रों में शांति बनी रहे। कोतवाल जैसे अधिकारियों की भूमिका नगर-व्यवस्था से जुड़ी थी। ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय अधिकारी तथा प्रभावशाली भू-स्वामी प्रशासनिक नियंत्रण को आगे बढ़ाने में सहायक होते थे। इस प्रकार न्याय और पुलिस व्यवस्था ने प्रशासनिक आदेशों को सामाजिक जीवन से जोड़ा।सैन्य शक्ति इस समूची संरचना की सुरक्षा-व्यवस्था थी। नवाबी राज्य को बाहरी राजनीतिक शक्तियों, स्थानीय विद्रोहों तथा राजस्व-विरोधी गतिविधियों से निपटने के लिए सैनिक

संगठन की आवश्यकता थी। घुड़सवार सेना, पैदल सैनिक तथा तोपखाना इसके प्रमुख घटक थे। साथ ही स्थानीय शक्तियों के सैनिक संसाधनों का भी आवश्यकता के अनुसार उपयोग किया जाता था। अवध की सेना पूरी तरह एकरूप केंद्रीय संगठन नहीं थी, उसमें राज्य की प्रत्यक्ष सैन्य शक्ति और स्थानीय सैन्य संसाधनों के बीच संबंध दिखाई देता था।सेना और राजस्व के बीच सीधा संबंध था। सैनिकों के वेतन तथा युद्ध सामग्री के लिए राजस्व आवश्यक था, जबकि राजस्व-संग्रह की सुरक्षा के लिए सेना आवश्यक थी। किसी क्षेत्र में राज्य की राजस्व माँग का विरोध होने पर सैनिक शक्ति का प्रयोग किया जा सकता था। इसी प्रकार महत्वपूर्ण मार्गों और प्रशासनिक केंद्रों की सुरक्षा के लिए सैनिकों की आवश्यकता रहती थी। इसलिए अवध की प्रशासनिक और सैन्य व्यवस्था को एक-दूसरे से अलग करके देखना ऐतिहासिक रूप से उचित नहीं होगा।अवध की भौगोलिक स्थिति ने भी उसकी प्रशासनिक और सैन्य आवश्यकताओं को प्रभावित किया। गंगा के मैदान में स्थित होने के कारण यह कृषि उत्पादन के लिए अनुकूल था। यही कृषि-समृद्धि राज्य की आर्थिक शक्ति का आधार बनी। दूसरी ओर यह क्षेत्र उत्तर भारत के महत्वपूर्ण राजनीतिक और व्यापारिक मार्गों से जुड़ा हुआ था। परिणामतः मार्गों की सुरक्षा, नगरों की व्यवस्था और सीमावर्ती क्षेत्रों की निगरानी भी राज्य के लिए महत्वपूर्ण थी।अवध के नवाबों ने समय के साथ प्रशासनिक व्यवस्था में परिवर्तन किए। प्रारम्भिक नवाबों के सामने राज्य की स्थापना और स्थिरीकरण की चुनौती थी। बाद के शासकों को बढ़ते दरबारी खर्च, स्थानीय शक्तियों की महत्वाकांक्षा, सैन्य आवश्यकताओं और अंग्रेजी कंपनी के दबाव का सामना करना पड़ा। इस प्रकार प्रशासनिक व्यवस्था स्थिर और अपरिवर्तनीय नहीं थी, राजनीतिक परिस्थितियों के अनुसार बदलती रही।अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अंग्रेजी कंपनी के साथ अवध के संबंधों ने इस व्यवस्था को गहराई से प्रभावित किया। बक्सर के युद्ध के बाद कंपनी का प्रभाव बढ़ा। अवध की सुरक्षा और वित्तीय मामलों में कंपनी की भूमिका बढ़ती गई। इससे नवाब की स्वतंत्र निर्णय क्षमता सीमित होने लगी।1801 ई. की संधि ने इस प्रक्रिया को निर्णायक रूप दिया। अवध के भू-भाग का बड़ा हिस्सा कंपनी के अधीन चला गया और नवाबी सेना की स्वतंत्र क्षमता पर कठोर प्रतिबंध लगा।इस परिवर्तन के बावजूद अवध की आंतरिक प्रशासनिक संरचना तत्काल समाप्त नहीं हुई। नवाब के अधीन अधिकारी, स्थानीय शक्तियाँ और राजस्व-संगठन बने रहे, लेकिन उनके ऊपर कंपनी का राजनीतिक दबाव लगातार बढ़ता गया। अंग्रेजी अधिकारियों ने अवध के प्रशासन को कमजोर और अव्यवस्थित बताकर हस्तक्षेप का औचित्य प्रस्तुत किया। अंततः 1856ई. में अवध का विलय कर दिया गया। अवध की प्रशासनिक एवं सैन्य व्यवस्था का अध्ययन दो स्तरों पर किया जाना आवश्यक है। पहला, वह स्तर जिसमें नवाबी सत्ता ने स्थानीय संसाधनों और संस्थाओं के सहारे एक प्रभावशाली प्रादेशिक राज्य का निर्माण किया; दूसरा, वह स्तर जिसमें औपनिवेशिक दबाव के कारण उसी व्यवस्था की आर्थिक और सैन्य स्वायत्तता धीरे-धीरे समाप्त हुई।

अवध की प्रशासनिक संरचना, अधिकारी व्यवस्था और न्यायिक संगठन

अवध की प्रशासनिक व्यवस्था का विकास अचानक नहीं हुआ। यह मुगलकालीन प्रशासनिक परम्पराओं, स्थानीय सामाजिक शक्तियों और नवाबी शासन की आवश्यकताओं के बीच विकसित हुई एक क्रमिक संरचना थी। आरम्भिक चरण में अवध के सूबेदार को राजस्व, सैन्य और कार्यपालिका से संबंधित अनेक शक्तियाँ प्राप्त थीं। मुजफ्फर आलम के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अठारहवीं शताब्दी में प्रांतीय शासन के भीतर सैन्य, कार्यपालिका और वित्तीय अधिकारों का अधिकाधिक केंद्रीकरण सूबेदार की स्थिति को मजबूत कर रहा था।**1** सआदत खाँ के सामने सबसे पहली आवश्यकता प्रशासनिक नियंत्रण स्थापित करने की थी। अवध में अनेक स्थानीय शक्तियाँ पहले से प्रभावशाली थीं। अतः राज्य के लिए ऐसी व्यवस्था आवश्यक थी जिसमें स्थानीय प्रभुओं की शक्ति का उपयोग भी किया जा सके और उनकी स्वायत्तता को इतना न बढ़ने दिया जाए कि वे केंद्रीय सत्ता के लिए चुनौती बन जाएँ। इसी संदर्भ में राजस्व और सैन्य संगठन का पुनर्गठन हुआ।मुजफ्फर आलम के अनुसार बुरहान-उल-मुल्क और

सफदरजंग के समय जागीर प्रशासन, फौजदारों की स्थिति और इजारेदारी व्यवस्था में परिवर्तन किए गए। इन परिवर्तनों का प्रभाव स्थानीय सामाजिक समूहों के साथ प्रांतीय सरकार के संबंधों पर पड़ा। पुराने जमींदारों को संरक्षण देने के साथ-साथ उनकी शक्ति को नियंत्रित करने की नीति अपनाई गई। राजस्व-मूल्यांकन बढ़ाकर अधिक आय प्राप्त करने और मजबूत प्रांतीय सेना के निर्माण का प्रयास भी इसी प्रक्रिया का हिस्सा था।**2** अवध की प्रशासनिक व्यवस्था में केंद्रीय अधिकारी और क्षेत्रीय अधिकारी दोनों महत्वपूर्ण थे। दीवान का संबंध वित्तीय मामलों से था, जबकि प्रादेशिक स्तर पर नाज़िम और नायब जैसे अधिकारियों का महत्व बढ़ा। उपलब्ध विश्वविद्यालयीय अध्ययन-सामग्री के अनुसार फौजदारी संस्था में परिवर्तन के साथ परगना स्तर पर फौजदार की भूमिका सीमित हुई और सरकार तथा चकला जैसे बड़े क्षेत्रों में नाजिम अथवा नायब प्रशासनिक, वित्तीय और सैन्य अधिकारों के महत्वपूर्ण केंद्र बनने लगे।**3**यह परिवर्तन केवल पदों के नाम बदलने का विषय नहीं था। इससे प्रशासन की वास्तविक शक्ति के वितरण में बदलाव आया। क्षेत्रीय अधिकारियों को वित्तीय और सैन्य अधिकार प्राप्त होने से शासन स्थानीय स्तर पर अधिक प्रभावशाली बना। राजस्व-संग्रह, सुरक्षा और प्रशासनिक आदेशों के क्रियान्वयन के बीच बेहतर समन्वय संभव हुआ।

राजस्व प्रशासन नवाबी शासन की वित्तीय रीढ़ था। कृषि-प्रधान अर्थव्यवस्था में भूमि से मिलने वाली आय राज्य के लिए सबसे महत्वपूर्ण साधन थी। प्रशासन को यह सुनिश्चित करना पड़ता था कि कृषकों से राजस्व प्राप्त हो, स्थानीय मध्यस्थ अपने हिस्से की शक्ति का अतिक्रमण न करें और राज्य की निर्धारित आय नियमित रूप से राजधानी तक पहुँचे।इजारेदारी इसी संदर्भ में महत्वपूर्ण थी। इसमें राजस्व-संग्रह का अधिकार निश्चित धनराशि के बदले किसी व्यक्ति या समूह को दिया जाता था। इससे राज्य को तत्काल वित्तीय आय प्राप्त हो सकती थी, लेकिन इसके साथ यह जोखिम भी रहता था कि राजस्व-संग्रहकर्ता कृषकों पर अतिरिक्त दबाव डालें। इसलिए इजारेदारी राज्य की वित्तीय आवश्यकता और ग्रामीण समाज के हितों के बीच तनाव का क्षेत्र भी थी।स्थानीय जमींदारों के प्रति नीति अपेक्षाकृत व्यावहारिक थी। उन्हें पूर्णतः हटाने की जगह राज्य ने कई बार उनके प्रभाव का उपयोग किया। ग्रामीण समाज में उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा और स्थानीय जानकारी राजस्व-संग्रह में सहायक हो सकती थी। परंतु यदि उनकी शक्ति बहुत बढ़ जाती तो वे नवाबी सत्ता के लिए चुनौती बन सकते थे। अतः संरक्षण और नियंत्रण साथ-साथ चलते रहे।अवध की ग्रामीण संरचना को समझने में सैयद ज़हीर हुसैन जाफरी का अध्ययन विशेष उपयोगी है। उन्होंने अवध की कृषि समाज-व्यवस्था और1856 तक उसमें आए परिवर्तनों का विश्लेषण किया है। उनके अनुसार नवाबी काल में कृषि समाज, जमींदारी संबंध और राज्य की राजस्व व्यवस्था ऐसे परस्पर जुड़े क्षेत्र थे जिन्हें अलग-अलग समझना कठिन है।**4** न्याय व्यवस्था प्रशासनिक संरचना का दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष थी। न्याय का उद्देश्य विवादों का समाधान, अपराध पर नियंत्रण और सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखना था। धार्मिक कानूनों के साथ स्थानीय परम्पराओं और प्रशासनिक आदेशों का भी व्यवहारिक महत्व था। नगरों में कोतवाल जैसी संस्थाएँ कानून-व्यवस्था तथा सार्वजनिक अनुशासन की निगरानी करती थीं।न्यायिक व्यवस्था का संबंध पुलिस से भी था। किसी अपराध की सूचना, अपराधी की गिरफ्तारी, बाजारों में शांति और सार्वजनिक व्यवस्था की निगरानी प्रशासनिक तंत्र के विभिन्न अंगों के समन्वय से होती थी। इस कारण न्याय और पुलिस को अलग-अलग संस्थाओं के रूप में देखने के बजाय शासन की संयुक्त व्यवस्था के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है।नगर प्रशासन विशेष रूप से लखनऊ के विकास के साथ महत्वपूर्ण हुआ। राजधानी के रूप में लखनऊ के विस्तार ने दरबार, व्यापार, शिल्प और विभिन्न सामाजिक समूहों को एक स्थान पर केंद्रित किया। इससे प्रशासन के सामने सार्वजनिक सुरक्षा, बाजार नियंत्रण और नगर व्यवस्था की नई आवश्यकताएँ उत्पन्न हुई।अवध के प्रशासन का एक विशिष्ट पक्ष यह था कि शासन की संस्थाएँ पूरी तरह आधुनिक विभागीय रूप में पृथक नहीं थीं। अनेक अधिकारियों के कार्यक्षेत्र परस्पर जुड़े हुए थे। वित्तीय

अधिकारी का निर्णय सैन्य आवश्यकताओं को प्रभावित कर सकता था, जबकि सैनिक कार्रवाई का परिणाम राजस्व-संग्रह पर पड़ सकता था। इसी प्रकार न्याय और पुलिस प्रशासन सामाजिक स्थिरता के लिए आवश्यक थे।हामिद अफाक कुरैशी ने अवध के इतिहास में सेना और प्रशासन को व्यापक राजनीतिक परिवर्तन से जोड़कर देखा है। उनके ग्रंथ में "वजारत की नायबियत, सेना और प्रशासन" के लिए स्वतंत्र अध्याय है, जिससे स्पष्ट होता है कि अवध के शासन में प्रशासनिक और सैन्य संस्थाओं का अध्ययन परस्पर संबद्ध रूप में किया जाना चाहिए।**5** अवध की प्रशासनिक व्यवस्था में केंद्रीय सत्ता, क्षेत्रीय अधिकारी, राजस्व-संग्रहकर्ता, न्यायिक अधिकारी, पुलिस अधिकारी और स्थानीय भू-स्वामियों के बीच संबंधों का जटिल तंत्र विकसित हुआ। यही तंत्र नवाबी राज्य को लंबे समय तक संचालित करने में सक्षम बना।

सैन्य संगठन, सुरक्षा व्यवस्था तथा प्रशासन और सेना का पारस्परिक संबंध

अवध की सैन्य व्यवस्था को उसके प्रशासनिक संगठन से अलग करके समझना संभव नहीं है। राज्य की आर्थिक आय, प्रशासनिक नियंत्रण और सैनिक शक्ति एक-दूसरे पर निर्भर थे। राजस्व से सेना चलती थी और सेना राजस्व-संग्रह, मार्गों तथा प्रशासनिक केंद्रों की सुरक्षा सुनिश्चित करती थी।आरम्भिक नवाबी शासन में सेना के संगठन का एक महत्वपूर्ण आधार स्थानीय सैनिक शक्ति थी। अवध के निवासी सैनिकों की संख्या पर्याप्त थी और उन्हें प्रांतीय सेना में सम्मिलित किया जाता था। मुजफ्फर आलम के अध्ययन में यह स्पष्ट किया गया है कि अवध के लोग मुगल और प्रांतीय दोनों सेनाओं में महत्वपूर्ण भाग रखते थे। राजस्व-वृद्धि और प्रांतीय सेना को मजबूत करने की नीति ने अवध की स्थिरता तथा उसकी बढ़ती स्वायत्तता में योगदान दिया।**6** (मुजफ्फर आलम, मुगल उत्तर भारत में साम्राज्य का संकट : अवध और पंजाब,1707-1748 , ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2013, पृष्ठ 244। **OUP**

घुड़सवार सैनिकों का विशेष महत्व था। उत्तर भारतीय मैदानी क्षेत्र में तीव्र गति से संचालित होने वाली सेना प्रशासनिक अभियानों तथा युद्ध दोनों में उपयोगी थी। पैदल सैनिकों का प्रयोग नगरों, दुर्गों और प्रशासनिक केंद्रों की सुरक्षा में किया जाता था। तोपखाने ने युद्धक क्षमता को और बढ़ाया।

स्थानीय जमींदारों के सैनिक संसाधन भी प्रशासनिक दृष्टि से महत्वपूर्ण थे। अनेक भू-स्वामियों के पास अपने अनुयायी और सशस्त्र दल होते थे। राज्य उनसे सहयोग प्राप्त कर सकता था, किंतु उनकी स्वतंत्र सैन्य शक्ति को पूरी तरह अनियंत्रित छोड़ना राजनीतिक दृष्टि से जोखिमपूर्ण था। इस कारण नवाबी शासन का सैन्य प्रशासन स्थानीय शक्तियों के साथ सहयोग और नियंत्रण दोनों पर आधारित रहा।

सेना की आर्थिक आधारभूमि राजस्व थी। नियमित आय के बिना सैनिकों का वेतन, घोड़ों की व्यवस्था, अस्त्र-शस्त्र, रसद तथा सैन्य अभियानों का खर्च पूरा करना कठिन था। इसलिए राजस्व प्रशासन की दक्षता सीधे सैन्य शक्ति की क्षमता को प्रभावित करती थी।

इसके विपरीत सैन्य शक्ति की उपस्थिति राजस्व प्रशासन को प्रभावी बनाती थी। यदि किसी क्षेत्र में राजस्व-वसूली का विरोध होता या कोई स्थानीय शक्ति राज्य के आदेश को अस्वीकार करती, तो सैनिक हस्तक्षेप आवश्यक हो सकता था। इस प्रकार सेना केवल युद्ध की संस्था नहीं थी; वह राज्य की प्रशासनिक पहुँच को सुरक्षित रखने का माध्यम भी थी।

सुरक्षा व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण पक्ष व्यापारिक मार्गों की रक्षा था। अवध की आर्थिक गतिविधियों में नगरों और बाजारों की भूमिका बढ़ रही थी। व्यापारी तभी सुरक्षित रूप से आवागमन कर सकते थे जब मार्गों पर लूट, हिंसा और स्थानीय संघर्ष का नियंत्रण हो। इस प्रकार सैन्य तथा पुलिस व्यवस्था आर्थिक गतिविधियों की निरंतरता से भी जुड़ी थी।

हामिद अफाक कुरैशी के ग्रंथ में अवध की सेना के प्रशासन और उसके राजनीतिक प्रभाव पर स्वतंत्र सामग्री उपलब्ध है। उनके अध्ययन में सेना की स्थिति को नवाबी शासन की राजनीतिक स्वायत्तता तथा बाद के अंग्रेजी हस्तक्षेप के संदर्भ में देखा गया है। (हामिद अफाक कुरैशी, मुगल, अंग्रेज और अवध के शासक, १७२२ ई. से १८५६ ई. तक : एक बहुआयामी अध्ययन, न्यू रॉयल बुक कंपनी, २००३, पृष्ठ ७२–१२०)।

Google Books

अवध की सैन्य शक्ति के सामने सबसे बड़ी चुनौती अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अंग्रेजी कंपनी का बढ़ता प्रभाव था। बक्सर के युद्ध के बाद अवध को कंपनी की राजनीतिक और आर्थिक शर्तों का सामना करना पड़ा। समय के साथ सुरक्षा के नाम पर कंपनी की सैनिक उपस्थिति बढ़ती गई और नवाब की स्वतंत्र सैन्य क्षमता पर दबाव पड़ने लगा।

कंपनी की यह नीति केवल सैन्य विस्तार नहीं थी। वह अवध के वित्तीय संसाधनों और राजनीतिक निर्णयों पर भी प्रभाव स्थापित करना चाहती थी। जब कोई राज्य अपनी सुरक्षा के लिए बाहरी शक्ति पर निर्भर हो जाता है, तो उसकी सैन्य स्वतंत्रता के साथ-साथ उसकी राजनीतिक स्वतंत्रता भी कमजोर होने लगती है।

१८०१ ई. की संधि इस प्रक्रिया का निर्णायक चरण बनी। इसके अंतर्गत अवध को अपने महत्वपूर्ण भू-भाग कंपनी को सौंपने पड़े। साथ ही कंपनी ने अवध की सुरक्षा का दायित्व अपने हाथ में लिया और नवाबी सेना को बहुत सीमित कर दिया। अध्ययन सामग्री के अनुसार इस व्यवस्था ने अवध की सेना को उसके पूर्व आकार के बहुत छोटे हिस्से तक सीमित कर दिया और कंपनी ने बाहरी तथा आंतरिक शत्रुओं से राज्य की रक्षा का दायित्व ग्रहण किया।

eGyankosh

इसका परिणाम यह हुआ कि अवध की राजस्व क्षमता और सैन्य स्वायत्तता दोनों कमजोर हुए। जो राज्य पहले अपने संसाधनों के बल पर सेना रखता था, वह अब अपनी सुरक्षा के लिए बाहरी शक्ति पर निर्भर होने लगा। इससे नवाब की राजनीतिक स्थिति में मूलभूत परिवर्तन आया।

सैन्य शक्ति के कमजोर होने का प्रभाव प्रशासन पर भी पड़ा। किसी राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था तभी प्रभावी होती है जब उसके आदेशों को लागू कराने की क्षमता उसके पास हो। सेना के सीमित होने से स्थानीय शक्तियों पर नियंत्रण कठिन हुआ और अंग्रेजी हस्तक्षेप के लिए अधिक अवसर उत्पन्न हुए।

हामिद अफाक कुरैशी ने वाजिद अली शाह से पहले के चरण में भी इस प्रक्रिया के संकेतों की चर्चा की है। उनके अध्ययन के अनुसार अवध की स्वतंत्र सैन्य क्षमता का कमजोर होना, अंग्रेजी प्रतिनिधि का बढ़ता प्रभाव तथा दरबारी गुटों की शक्ति नवाबी स्वायत्तता के लिए गंभीर समस्या बन गई थी। (हामिद अफाक कुरैशी, स्वतंत्र नवाबी की झलक : अवध के नवाब वज़ीर अली खाँ, न्यू रॉयल बुक कंपनी, २००२, पृष्ठ १–४०)।

New Royal Book Company

प्रशासनिक संस्थाओं पर अंग्रेजी हस्तक्षेप का प्रभाव भी इसी संदर्भ में समझना चाहिए। कंपनी के अधिकारियों ने अवध के शासन में अव्यवस्था, भ्रष्टाचार और कमजोर सुरक्षा जैसे आरोपों को हस्तक्षेप के औचित्य के रूप में प्रस्तुत किया। किंतु आधुनिक इतिहासलेखन यह प्रश्न भी उठाता है कि क्या ये आरोप पूरी तरह प्रशासनिक वास्तविकता का निष्पक्ष वर्णन थे या राजनीतिक अधिग्रहण के लिए तैयार किया गया औचित्य।

अवध की कृषि समाज-व्यवस्था पर किए गए सैयद ज़हीर हुसैन जाफरी के अध्ययन से यह संकेत मिलता है कि १८५६ में विलय के औचित्य के लिए अंग्रेजी अधिकारियों ने कृषि और ग्रामीण व्यवस्था की समस्याओं को विशेष रूप से रेखांकित किया था। इसलिए प्रशासनिक कमजोरी की औपनिवेशिक व्याख्या को समकालीन

राजनीतिक हितों से अलग करके नहीं देखा जा सकता। (सैयद ज़हीर हुसैन जाफरी, अवध में कृषि समाज : पूर्व-औपनिवेशिक शासन के अंतर्गत संरचना और परिवर्तन, लगभग १५९५–१८५६, ओम प्रकाशन, २०२२, पृष्ठ १–२६)।

Om Publications

१८५६ ई. में अवध के विलय के साथ नवाबी प्रशासन की संप्रभुता समाप्त कर दी गई। किंतु इससे पहले ही प्रशासनिक और सैन्य स्वायत्तता काफी कमजोर हो चुकी थी। इसलिए १८५६ का विलय अचानक घटित घटना न होकर लंबे समय से चल रही राजनीतिक और संस्थागत निर्भरता का परिणाम था।

१८५७ ई. में अवध की प्रतिक्रिया इस ऐतिहासिक प्रक्रिया का महत्वपूर्ण परिणाम थी। अंग्रेजी सत्ता के विरुद्ध विद्रोह में स्थानीय भू-स्वामी, सैनिक, किसान तथा पूर्व नवाबी व्यवस्था से जुड़े अनेक समूह सक्रिय हुए। इससे स्पष्ट होता है कि नवाबी शासन के दौरान निर्मित स्थानीय शक्ति-संबंध औपनिवेशिक सत्ता के विरुद्ध प्रतिरोध में भी प्रभावी रहे।

अवध की सैन्य व्यवस्था का मूल्यांकन करते हुए यह भी ध्यान रखना चाहिए कि उसका उद्देश्य केवल बाहरी युद्ध नहीं था। सेना राज्य की राजस्व व्यवस्था, प्रशासनिक अधिकार और राजनीतिक प्रतिष्ठा की रक्षक थी। जब यह शक्ति स्वतंत्र रूप से कार्य करने में सक्षम थी, तब नवाब अपने निर्णयों को अधिक प्रभावी ढंग से लागू कर सकते थे। जब वही शक्ति बाहरी कंपनी के नियंत्रण में चली गई, तब प्रशासनिक स्वायत्तता का क्षरण तेज हो गया।

इस प्रकार अवध का सैन्य इतिहास वास्तव में राज्य की राजनीतिक संप्रभुता का इतिहास भी है। सेना की क्षमता जितनी अधिक स्वतंत्र थी, नवाब की राजनीतिक स्थिति उतनी ही मजबूत थी। इसके विपरीत कंपनी की सैन्य निर्भरता बढ़ने के साथ नवाबी शासन का राजनीतिक आधार कमजोर होता गया।

निष्कर्ष

अवध की प्रशासनिक एवं सैन्य व्यवस्था का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि नवाबी राज्य की शक्ति किसी एक संस्था पर आधारित नहीं थी। उसका आधार प्रशासन, राजस्व, न्याय, पुलिस, स्थानीय सामाजिक शक्तियों और सैन्य संगठन के परस्पर संबंधों में निहित था। १७२२ ई. के बाद अवध में जो राजनीतिक संरचना विकसित हुई, उसने मुगल प्रशासनिक परम्पराओं को स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप परिवर्तित करके एक विशिष्ट प्रादेशिक शासन-व्यवस्था को जन्म दिया।

अवध के प्रशासन में नवाब सर्वोच्च सत्ता का केंद्र था, किंतु उसके शासन की वास्तविक पहुँच विभिन्न स्तरों पर कार्य करने वाले अधिकारियों और स्थानीय शक्तियों के सहयोग से बनती थी। नाज़िम, नायब, राजस्व अधिकारी, न्यायिक अधिकारी तथा पुलिस से संबंधित पदों ने प्रशासन को क्षेत्रीय स्तर तक पहुँचाया। स्थानीय जमींदारों को कभी सहयोगी, कभी मध्यस्थ और कभी नियंत्रित किए जाने वाले शक्ति-केंद्र के रूप में देखा गया। इस व्यवस्था ने अवध को लंबे समय तक स्थिरता प्रदान की।

राजस्व प्रशासन इस पूरी संरचना का आर्थिक आधार था। कृषि-प्रधान समाज से प्राप्त आय के माध्यम से राज्य ने प्रशासन और सेना को संसाधन उपलब्ध कराए। इसी कारण भूमि-राजस्व केवल वित्तीय विषय नहीं था; वह राजनीतिक नियंत्रण का माध्यम भी था। स्थानीय भू-स्वामियों के साथ संबंधों की प्रकृति इसी आवश्यकता से प्रभावित होती रही।

न्याय और पुलिस व्यवस्था ने प्रशासनिक नियंत्रण को सामाजिक जीवन से जोड़ा। नगरों में सार्वजनिक व्यवस्था, व्यापारिक सुरक्षा और अपराध-नियंत्रण तथा ग्रामीण क्षेत्रों में विवादों और राजस्व-संबंधी मामलों का प्रबंधन राज्य की स्थिरता के लिए आवश्यक था। इस व्यवस्था की प्रभावशीलता ने प्रशासनिक आदेशों को समाज

में स्वीकार्य और लागू बनाने में सहायता की।

सैन्य संगठन इस प्रशासनिक संरचना का सुरक्षा-आधार था। घुड़सवार, पैदल सैनिक, तोपखाना तथा स्थानीय सैनिक संसाधन अवध की राजनीतिक शक्ति के महत्वपूर्ण घटक थे। सेना का संबंध केवल युद्ध से नहीं था; वह राजस्व-संग्रह, मार्ग-सुरक्षा, आंतरिक शांति और राजनीतिक नियंत्रण से भी जुड़ी थी। इसलिए प्रशासन और सैन्य शक्ति को एक संयुक्त संस्थागत तंत्र के रूप में देखना अधिक उपयुक्त है।

अवध की सबसे बड़ी ऐतिहासिक उपलब्धि यह थी कि उसने स्थानीय परिस्थितियों के भीतर एक प्रभावशाली प्रादेशिक राज्य का निर्माण किया। किंतु इसकी सबसे बड़ी कमजोरी भी इसी संरचना में दिखाई देती है। स्थानीय शक्तियों पर निर्भरता, वित्तीय दबाव और बढ़ते बाहरी हस्तक्षेप ने केंद्रीय सत्ता की क्षमता को धीरे-धीरे सीमित किया। अंग्रेजी कंपनी ने इसी स्थिति का लाभ उठाकर अवध की आर्थिक तथा सैन्य स्वायत्तता को कमजोर किया।

१८०१ ई. की संधि के बाद यह निर्भरता निर्णायक रूप ले चुकी थी। सेना का आकार घटा, भू-क्षेत्र कम हुआ और सुरक्षा की जिम्मेदारी बाहरी शक्ति पर निर्भर हो गई। परिणामस्वरूप नवाबी शासन की वास्तविक संप्रभुता कमजोर होती चली गई। १८५६ ई. का विलय इसी दीर्घकालीन प्रक्रिया की परिणति था।

इसलिए अवध की प्रशासनिक एवं सैन्य व्यवस्था को केवल "सुदृढ़" या "कमजोर" कहना पर्याप्त नहीं है। यह एक गतिशील व्यवस्था थी जिसने बदलती परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को पुनर्गठित किया, स्थानीय शक्तियों को समायोजित किया और लंबे समय तक राज्य को स्थिर रखा; लेकिन औपनिवेशिक सैन्य एवं राजनीतिक दबाव के सामने इसकी स्वायत्तता टिक नहीं सकी। यही अवध के प्रशासनिक इतिहास की सबसे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक विशेषता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. मुजफ्फर आलम, मुगल उत्तर भारत में साम्राज्य का संकट : अवध और पंजाब, 1707-1748, ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2013, पृष्ठ 57।
2. वहीं, पृष्ठ 206।
3. इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, अठारहवीं शताब्दी के उत्तराधिकारी राज्य, अध्ययन सामग्री, पृष्ठ 1-16।
4. सैयद जहीर हुसैन जाफरी, अवध में कृषि समाज : पूर्व-औपनिवेशिक शासन के अंतर्गत संरचना और परिवर्तन, लगभग 1595-1856, ओम प्रकाशन, 2022, पृष्ठ 26।
5. हामिद अफाक कुरैशी, मुगल, अंग्रेज और अवध के शासक,1722 ई. से 1856 ई. तक : एक बहुआयामी अध्ययन, न्यू रॉयल बुक कंपनी, 2003, पृष्ठ 72।

ई-मेल - arunnsingh99@gmail.com, मोबाइल नंबर – 8318225375

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 19-23
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

प्रकृति का नैसर्गिक सौंदर्य और डॉ. 'सुमन' की कविता

डॉ० नेमीचंद कुमावत
सह आचार्य, हिंदी,
माणिक्य लाल वर्मा राजकीय महाविद्यालय, भीलवाड़ा (राजस्थान) 311001

डॉ. नेमीचन्द कुमावत, सह आचार्य (हिन्दी), मा.ला. वर्मा राजकीय महाविद्यालय, भीलवाड़ा (राजस्थान)

हिंदी की प्रगतिशील काव्य-धारा में सामाजिक चेतना की अभिवृद्धि करने वाले कवियों में डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन' एक महत्त्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं। उत्तरप्रदेश के उन्नाव जिले के झगरपुर गाँव में 16 अगस्त, 1916 ई. को जन्मे डॉ. 'सुमन' अध्यापन कर्म से संपृक्त रहे हैं। उनके 'हिल्लोल' (1939ई.), 'जीवन के गान' (1941ई.), 'प्रलय-सृजन' (1945ई.), 'विश्वास बढ़ता ही गया' (1955ई.), 'पर आँखें नहीं भरीं' (1956ई), 'विंध्य-हिमालय' (1966ई.), 'मिट्टी की बारात' (1972ई.), 'वाणी की व्यथा' (1980ई.), 'कटे अँगूठों की बंदनवारें' (1991ई.) आदि नौ काव्य-संग्रह हैं। उनके काव्य में प्रकृति का नसर्गिक और प्रेरक रूप में अनुपम चित्रण है, जिसे इस शोध-पत्र में दर्शाने का एक प्रयास है।

सभ्यता और संस्कृति के उदय से लेकर आज तक मनुष्य और प्रकृति में घनिष्ठ संबंध रहा है। डॉ. रामविलास शर्मा ने भी लिखा है कि "क्या भारत और क्या यूरोप, कहीं भी अब तक कोई बड़ा मानव-प्रेमी कवि नहीं हुआ, जो प्रकृति का भी प्रेमी न रहा हो।"[1] मानव प्रकृति का अभिन्न अंग है और प्रकृति मानव की चिर-सहचारी है। सांख्य-दर्शन के अनुसार प्रकृति ही सृष्टि का मूल कारण है। मानव के स्थूल भौतिक शरीर का निर्माण पंच-तत्त्वों से हुआ है। ये तत्त्व मूलतः प्रकृति के ही विविध रूप हैं। अतः सर्वप्रथम प्रकृति-सत्ता का जन्म हुआ और उसके उपरांत मानव-सत्ता का। आदिकाल से ही प्रकृति के नैसर्गिक सौंदर्य पर मानव-मन का प्रेम उमड़ा है। मानव प्रकृति से निर्मित है और उसी के प्रदत्त तत्वों से पोषित होकर उसी में समाहित होकर पूर्णता प्राप्त करता है, जो मानव और प्रकृति के चिरंतन संबंधों का द्योतक है। कवि 'सुमन' ने भी लिखा है; यथा-

"जिन उपकरणों से मेरी देह बनी है/उनका अणु-अणु धरती की लाज बचाएं।"[2]

यहां 'धरती की लाज' में कर्तव्य-बोध की संवेदना है कि मनुष्य प्रकृति के नैसर्गिक सौंदर्य और मानव-सत्ता का रक्षक है। एक रचनाकार सामान्य जन की तुलना में विशिष्ट प्राणी, अधिक भावुक और संवेदनशील होता है, इसलिए वे प्रकृति के

नैसर्गिक सौंदर्य से अछूता नहीं रह सकता। इस संदर्भ में हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी लिखा है कि "साहित्य के उपासक अपने पैर के नीचे की मिट्टी की अपेक्षा नहीं कर सकते। हम सारे बाह्य-जगत को असुंदर छोड़कर सौंदर्य की सृष्टि नहीं कर सकते। सुंदरता सामंजस्य का नाम है... बाह्य सुंदरता के ढूह में खड़े होकर आंतरिक सौंदर्य की उपासना नहीं हो सकती, निरन्न, निर्वसन जनता के बीच खड़े होकर आप परियों के सौंदर्य-लोक की कल्पना नहीं कर सकते।"[3] उक्त कथन से स्पष्ट है कि मानव और प्रकृति एक ही सिक्के के दो पहलू है। मनुष्य और प्रकृति के क्रिया-कलापों को आदिकाल से ही स्वप्नदर्शी कलाकारों ने लयात्मक छंदों में लेखनी-बद्ध करने का प्रयास किया है। साहित्य की हर भाव-भंगिमा में प्रकृति की नैसर्गिक सुषमा का वास होता है। प्रत्येक काल के महाकवियों ने अपनी भावाभिव्यक्ति को सुंदर और मर्मस्पर्शी बनाने हेतु प्रकृति को आलंबन बनाया है।

कवि 'सुमन' प्रकृति-प्रेमी हैं। उनकी कल्पना-शक्ति ने प्रकृति के नाना क्षेत्रों में स्वच्छंद विचरण किया है। उन्होंने प्रकृति को अपनी भावनाओं के रंग में रंगकर, उसके मनोहरी चित्र प्रस्तुत किए हैं। उनकी स्वच्छंदतावादी प्रवृत्ति, उन्हें प्रकृति के सानिध्य में ले जाती है। उनके काव्य में प्रेम-प्रकृति-सौंदर्य का सहधर्मी रूप अंकित हुआ है। उनका अधिकांश प्रकृति-चित्रण छायावादी शैली में हुआ है, किंतु कहीं-कहीं प्रकृति का स्वच्छंद चित्रण भी है, जो अपनी नवीन भाव-भंगिमा के कारण अपनी एक अलग ही पहचान रखता है। उन्होंने जहाँ प्रकृति पर अपनी अंतर्भावनाओं का आरोप कर इच्छा-आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति दी है, वहाँ छायावादी शैली का प्रभाव लक्षित है। उनकी प्रकृतिपरक कविताएं एक ओर प्रकृति के प्रति अपना अगाध प्रेम व्यंजित करती हैं तो दूसरी ओर अपने रूप-सौंदर्य से मानव-हृदय की तृष्णा को तृप्त करती हैं। कवि 'सुमन' ने मनुष्य को प्रकृति की सर्वोत्कृष्ट रचना के रूप में देखा है, इसलिए उनके काव्य में प्रकृति जीवन का एक अभिन्न अंग बनकर उपस्थित हुई है।

कवि 'सुमन' के प्रकृति-दृश्यों में हर्ष और उल्लास का भाव विद्यमान है। वे जीवन-संघर्षों के बीच प्रकृति से ही संजीवनी प्राप्त करते हैं। उनकी प्रकृतिपरक कविताएं जीवन-शैली, ज्ञान-क्षेत्र के विस्तार के साथ ही उनके भाव-क्षेत्र का भी विस्तार करती हैं। समाज में विषमता पूंजीवादी प्रवृत्तियों की देन है। पूंजीवाद मनुष्य को अर्थ-केंद्रित करके उसके सौंदर्य-बोध को नष्ट करता है, इसलिए कवि 'सुमन' श्रीविहीन मनुष्य की गरिमा और उसके सौंदर्य-बोध की रक्षा प्रकृति के माध्यम से करते हैं। वे मिट्टी की सोंधी गंध का पान कर, उसी के बल पर जर्जर सामाजिक व्यवस्था को बदलने के आकांक्षी हैं; यथा-

"बौछार के उल्लास में/सोंधी धरा की गंध को/पी लूं तृषित गजराज-सा
झुमूँ सहज.../झपटूं शिकारी बाज बन/जर्जर व्यवस्था के जलपते गिद्ध पर...।"[4]

प्रकृति के प्रति गहरा अनुराग कवि-कर्म की दिशा निर्धारित करता है। कवि को धरती के कण-कण से प्यार है, इसलिए उसे मंगलमय बनाने हेतु उन्होंने प्रकृति के माध्यम से अपना संकल्प भी व्यक्त किया है; यथा-

"हिमगिरी के उर का दाह दूर करना है,/मुझको सर-सरिता-नंद-निर्झर भरना है।
मैं बैठूं कब तक केवल कलम सम्हाले,/मुझको इस युग का नमक अदा करना है।"[5]

कवि सुमन ने प्रकृति के सहारे सामाजिक उद्देश्यों को प्राप्त करने की कोशिश की है। उन्होंने प्रकृति के माध्यम से सामाजिक जीवन के गहरे अंतर्विरोधों का उद्घाटन किया है। साम्राज्यवादी शक्तियों को उन्होंने प्रकृति के माध्यम से ललकारा है; यथा-

"तिनका-तिनका खड़ा दे रहा/तुमको खुली चुनौती...
नोची श्वान-श्रृंगालों ने जीवित मानव की बोटी/तेरे कारण मरघट-सा/जल उठा हमारा नंदन।"[6]

ऋतुओं और त्योहारों के प्रकृति-दृश्य एक ओर हमारी सांस्कृतिक विरासत से परिचित कराते हैं तो दूसरी ओर इन्हीं में कवि के स्वच्छंद व्यक्तित्व की रेखाएं उभरती हैं। 'शरद पूर्णिमा', 'होली', 'रंग पंचमी', 'आ गया बसंत', 'आसों आम बहुत बौराए' सरीखी कविताओं में कवि 'सुमन' की स्वच्छंद प्रवृत्ति लक्षित होती है। एक उदाहरण दृष्टव्य है; यथा-

"बौराए जो नहीं, जवानी उसकी क्या?/गदराए जो नहीं, कहानी उसकी क्या?"[7]

'सुमन' जी ने प्रकृति के स्वस्थ, स्वच्छ और प्रेरणादायी रूप को अधिक आतुरता के साथ ग्रहण किया है। उनके काव्य में नव-जीवन, नयी-चेतना और जीवन-संघर्ष के रूप में प्रकृति का प्रेरक रूप अधिक चित्रित हुआ है। उन्होंने एक 'फूल' के माध्यम से जीवन-संघर्ष में मनुष्य को कभी निराश न होने की प्रेरणा दी है। यहाँ अदम्य जिजीविषा का प्रेरक रूप दृष्टव्य है; यथा-

"बचपन से ही मलयानिल ने/मुझको काँटों में दुलराया/काँटों की गोदी में पल
मैंने मादक यौवन पाया/पर बेध नहीं पाते मुझको मेरी/डाली के शूल सखे...
मानव! तुम अपने दुखड़ों का/नाहक रोते रहते रोना... जीवन का अर्थ यही समझा
हँस-हँस कर प्राण अर्पित करें/आओ चर-अचर सभी मिलकर नव-सुषमा का निर्माण करें।"[8]

कवि 'सुमन' ने मानव-जीवन के कटु सत्यों को प्राकृतिक उपकरणों के माध्यम से उभरा है। उनकी दृष्टि में प्रकृति ही मानव का आश्रय स्थल है। जब जीवन-संघर्ष में मानव पराजित होता है, तब प्रकृति ही उसके कष्टों का निवारण करती है तथा उसे नवीन ऊर्जा देती है; यथा-

"जड़ जग के संघर्षण में/जब मानव थक जाता है/तेरी ही शीतल छाया में/वह नव-जीवन पाता है।"[9]

'सुमन' प्रकृति के अनुपम चितेरे कवि हैं। प्रकृति की हर वस्तु के प्रति उनका आत्मीय लगाव है। उनकी कविताओं में शरद, बसंत, ग्रीष्म, वर्षा आदि ऋतुओं के सुंदर चित्र अंकित हुए हैं। प्रकृति ही मानव के सुख-दुख की सहधर्मिणी है। यह एक अटूट सत्य है कि जब हम सुखी होते हैं तो प्रकृति भी हँसती मुस्कुराती प्रतीत होती हैं और जब हम दुखी होते हैं तो प्राकृतिक उपादान भी दुखमय प्रतीत होते हैं। प्रणय में ऋतुएं माननीय भावों को उद्दीप्त करने का कार्य करती हैं। वर्षा ऋतु का एक दृश्य प्रस्तुत है; यथा-

"ताल-तलैया भरे चहुं ओर/झकोर हिलोर में डोलै हिया
बादर की चादर फैली दिगंत लौ/मोर को शोर मरोरें जिया।"[10]

इसी तरह बसंत-ऋतु का एक सुंदर दृश्य प्रस्तुत है, जिसमें रागात्मकता और ध्वन्यात्मकता के साथ मानव-आत्मा को तृप्त करने की पूर्ण क्षमता है; यथा-

"अणु-अणु हर्षित, तृण-तृण मुखरित/किसलए प्रमुदित, कलि-कलि कुसुमित
भ्रमरों की गुन-गुन से गुंजित/कोकिल-कुंजित मेरा उपवन/मधु ऋतु के दिन, मधु ऋतु के दिन।"[11]

छायावादी कवियों की भांति कवि 'सुमन' ने कहीं-कहीं प्रकृति में अज्ञात सत्ता के भी दर्शन किए हैं। 'मेरे पावन, मेरे पुनीत' शीर्षक कविता में उन्होंने चंद्रमा के क्रिया-कलापों में रहस्यवादी-सत्ता के दर्शन किए हैं। इस कविता में सारी सृष्टि पर चंद्रमा की किरणों का प्रभाव चित्रित है। यही किरणें उषाकाल में सूर्य के रूप में उदित होकर समग्र सृष्टि को सुनहरी बना देती है; यथा-

"जब उषा के वातायन से/तुम देखा करते ऊझक झांक/जग तृण-तरु पर मृदु कुसुमों पर
लेता सुंदर छवि आँक-आँक/ भू पर विलसित हो जाता है/कल्पित स्वप्नों का स्वर्ण नाक।"[12]

कवि 'सुमन' ग्रामीण परिवेश में अल्प समय तक ही रहे हैं, फिर भी उनकी बहुत-सी कविताओं में मालवा अंचल के प्रति आत्मीयता के साथ ग्राम्य जीवन और प्रकृति के चित्र उपस्थित हैं। अमराई, आम, अटारी, पनघट, कुआं, खेत-खलियान आदि के संदर्भ उनकी स्मृति में सदा रहे हैं। उन्होंने एक किसानी परिवेश में अपना परिचय देकर ग्रामीण जीवन को प्रत्यक्ष किया है; यथा-

"मैं एक ग्रामवासी, परिचित/खलिहान, खेत, टीले, ऊसर/अमराई और जीर्ण पनघट
मेरी स्मृति के हैं चिह्न अमर.../मेरे घर के दाहिनी ओर/है बसी अहीरों की बस्ती...
हैं घास-फूस के घर उनके/दरवाजे चौपाए बंधते/दिन चढ़े जहां गोरे हाथों/मथनी मथती, कंडे पथते...।"[13]

यहां बैसवाड़े अंचल का जीवन सहज, सरल और यथार्थ रूप में चित्रित हुआ है। गौरैय्या', 'गंगा-दशहरा', 'गांव में बरसात' जैसी कविताओं में भी ग्रामीण प्रकृति की सुंदर छवियां हैं। प्रकृति के साहचर्य में ही कवि की प्रयण-व्यंजना हुई है। 'मालीपुरा की होली', 'सुनी सांझ', 'गंगा-दशहरा', ,'नशीली-रंगीनी' आदि कविताओं में प्रणय का मूलाधार प्रकृति ही है। 'सुनी सांझ' की कुछ पंक्तियां दृष्टव्य हैं; यथा-

"बहुत दिनों में आज मिली है/सांझ अकेली, साथ नहीं हो तुम
पेड़ खड़े फैलाए बाहें/लौट रहे घर को चरवाहे/यह गोधूलि! साथ नहीं हो तुम।"[14]

कवि 'सुमन' अपने प्रगतिशील आयामों को प्रकृति के उपकरणों के माध्यम से प्राप्त करने के आकांक्षी हैं। उन्होंने जन-जागृति की संवेदनाओं को प्रकृति के माध्यम से अभिव्यक्ति दी है, जिसमें प्रकृति मानवीय भावों की आधारभूमि बनकर सजीव हो उठी है; यथा-

"कण-कण सिहर उठे/अणु-अणु ने सहस्राक्ष अंबर को ताका/शेषनाग फूतकार उठे
सांसों से निःसृत अग्निशलाका/धुआंधार नभ का वक्ष-स्थल/उठे बवंडर आंधी आई
पर मर्दिता रेणु अकुलाकर/छाती पर, मस्तक पर छाई।"[15]

कवि ने अपनी अद्भुत संवेदनाओं की सशक्त अभिव्यक्ति हेतु- सुमन, मिट्टी, चंद्र, रात, आंधी, तूफान, किरण, सांझ, मोर, नदी, धारा आदि प्राकृतिक उपादानों को आलंबन बनाकर जीवन-यथार्थ को वाणी दी है। यहां एक उदाहरण प्रस्तुत है, जिसमें कवि ने 'पुष्प' की मुरझाई पंखुड़ियों के सहारे अपनी वृद्धावस्था का कटु यथार्थ प्रस्तुत किया है; यथा-

"सब कहते हैं, सुमन, तुम्हारी/कुम्हला जाएंगी पंखुड़ियां
पीले पत्तों से शरीर में/रह जाएगी प्रमुख झुरियां।"[16]

कवि 'सुमन' ने छायावादी कवियों की भांति प्रकृति पर मानवीय क्रियाओं का आरोप कर, उसे सजीव रूप में चित्रित किया है। 'हिल्लोल' संग्रह की 'शशिबाला से' कविता में चंद्रमा को नायिका के रूप में प्रस्तुत कर उसके मादक सौंदर्य का उत्कृष्ट चित्र उकेरा है। 'पर आंखें नहीं भरीं' संकलन की 'चेरापूंजी'; 'विंध्य हिमालय' संग्रह की 'वातायन से हिमालय दर्शन', ' विंध्य का सोता' 'शरद पूर्णिमा', 'आसों आम बहुत बौराए', 'आ गया बसंत'; 'मिट्टी की बारात' संकलन की 'मौसमी के फूल', ' केशर-कुसुम' तथा 'वाणी की व्यथा' संग्रह की 'सिंधु-गर्भ-दर्शन' और 'खेतों का शिल्प-शोध' आदि कविताओं में प्रकृति के मानवीकरण रूप को स्थान मिला है। यहां एक उदाहरण प्रस्तुत है, जिसमें कवि ने निर्जीव हिमालय को एक तपस्वी के रूप में प्रस्तुत किया है; यथा-

"नव स्फटिक की स्निग्ध सिहरन में/चमके ऊर्ध्व कलशों को/नित्य निहारा करता हूं
यही आशा लिए मन में/कि शायद तुम कभी बोलो/हमारी अर्चना तो लों।"[17]

इसी तरह 'चेरापूंजी' कविता का एक सुंदर दृश्य प्रस्तुत है; यथा-

"अंबर-अवनी मुग्ध परस्पर पुलकन-चुंबन/कुहरांचल में मेघ-मनुज करते आलिंगन।"[18]

कवि ने प्रकृति के मूक चित्रों में मानव-हृदय की उदात्त भावनाओं की प्रतिष्ठा कर, उन्हें मौन से मुखर और जड़वत से गतिशील रूप में चित्रित कर अपने प्रकृति-प्रेम का परिचय दिया है, जिसमें कवि की नवीन दृष्टि-भंगिमा का भी परिचय मिल जाता है। उन्होंने प्रकृति को लोक-जीवन की भूमि पर उतारा है, उसके सौन्दर्यापूरित रूप के साथ ही उसके मंगलमय रूप को अपनी शब्द-रेखाओं में बांधा है। आज अर्थ-केंद्रित औद्योगिक सभ्यता, प्राकृतिक संसाधनों का अनियंत्रित दोहन कर रही है, जिसके कारण पर्यावरण संकट में है। कवि 'सुमन' की प्रकृतिपरक कविताएं मनुष्य और प्रकृति के बीच आदिम साहचर्य-भाव, उसमें संतुलन और सामंजस्य तथा नैसर्गिक सौंदर्य को पुनः स्थापित करने का प्रयास करती हैं। वस्तुत: उनका स्फूर्तिमय और प्रेरणादायक प्रकृति-चित्रण आज के वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अत्यंत प्रासंगिक है।

संदर्भ-ग्रंथ-सूची:-

1. नई कविता और अस्तित्ववाद : डॉ. रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम सं. 1968, पृष्ठ 149
2. विंध्य-हिमालय, सुमन समग्र-2, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि.सं. 1997 ई., पृष्ठ 32
3. अशोक के फूल : हजारी प्रसाद द्विवेदी, नैवेद्य निकेतन, वाराणसी, संस्करण 1968, पृष्ठ 184
4. मिट्टी की बारात, सुमन समग्र-2, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि.सं. 1997 ई., पृष्ठ 110
5. विंध्य-हिमालय, सुमन समग्र-2, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि.सं. 1997 ई., पृष्ठ 32
6. विश्वास बढ़ता ही गया, सुमन समग्र-1, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि.सं. 1997 ई., पृष्ठ 246
7. विंध्य हिमालय, सुमन समग्र-2, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि.सं. 1997 ई., पृष्ठ 43
8. जीवन के गान, सुमन समग्र-1, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि.सं. 1997 ई., पृष्ठ 100-101
9. हिल्लोल, सुमन समग्र-1, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि.सं. 1997 ई., पृष्ठ 61
10. पर आंखें नहीं भरीं, सुमन समग्र-1, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि.सं. 1997 ई., पृष्ठ 315
11. वही, पृष्ठ 308
12. हिल्लोल, सुमन समग्र-1, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि.सं. 1997 ई., पृष्ठ 23-24
13. प्रलय-सृजन, सुमन समग्र-1, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि.सं. 1997 ई., पृष्ठ 163-164
14. मिट्टी की बारात, सुमन समग्र-2, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि.सं. 1997 ई., पृष्ठ 159
15. विश्वास बढ़ता ही गया, सुमन समग्र-1, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि.सं. 1997 ई., पृष्ठ 244
16. हिल्लोल, सुमन समग्र-1, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि.सं. 1997 ई., पृष्ठ 69
17. विंध्य-हिमालय, सुमन समग्र-2, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि.सं. 1997 ई., पृष्ठ 89-90
18. पर आंखें नहीं भरीं, सुमन समग्र-1, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वि.सं. 1997 ई., पृष्ठ 324

पिन कोड नं. 311001, मो. नं. 92522-78880

E-Mail Id : nemichandkum1977@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 24-27
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

जय शंकर प्रसाद के काव्य में प्राकृतिक सौन्दर्य

डॉ0 सतकुमार
एसोसिएट–प्रोफेसर (हिन्दी–विभाग),
छोटू राम किसान, महाविद्यालय, जीन्द, हरियाणा

'सौन्दर्य' भारतीय साहित्य का अत्यन्त पूराना शब्द है। सौन्दर्य शास्त्र का विवेचन विषय सौन्दर्य है और यह सौन्दर्य, मूलतः ऐन्द्रिय सम्वेदना का ही विषय है तथा सौन्दर्य शास्त्रियों ने उसके दो आधार माने है – प्रकृति और कला।

हिगेल के कथनानुसार :– 'यह एक ऐसा विषय है, जिसके अन्तर्गत सौन्दर्य का सम्पूर्ण क्षेत्र आ जाता है और स्पष्ट रूप से कहे तो इसका क्षेत्र कला का है या कहना चाहिए ललित कला का क्षेत्र है।'(1)

हेमलुट कुल का मत भी अवलोकनीय है :– ''सौन्दर्य शास्त्र कलाओं और उससे सम्बंध (मानव) व्यवहार तथा अनुभूति का सैद्धान्तिक अध्ययन है। परम्परा के अनुसार दर्शन की एक शाखा है। जिसका प्रयोजन है सौन्दर्य, कला एंव प्रकृति में अभिव्यक्त उसके बहुविध रूपों का अध्ययन।''(2)

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि सौन्दर्यशास्त्र कलां एंव प्रकृति के महत्त्व को पूर्णतया प्रतिबोधित करने वाला ग्रन्थ है। सौन्दर्यशास्त्र से हमारे विचारों में गहनता व्यवस्था तथा भावनाओं का परिष्करण करने वाली कला सम्बधी हमारी भावनाओं की परितृप्ति होती है।

सौन्दर्य शब्द की व्युत्पत्ति :– 'सुन्दर' शब्द वास्तव में जीव मात्र के लिए उपयोगी है। उसकी रमणीय शक्ति सर्वव्यापक है। सुन्दर से ही संसार की प्रत्येक वस्तु सुंदर है। सुन्दर का भव्य रूप एंव आकार अनुभूति का विषय होने के कारण अखण्ड एंव अनिर्ववचनीय है। महत्तम सुदंरता के कारण है इसकी परिभाषा में बुद्धिजन का मतैक्य नहीं है।

सु उपसर्ग उन्द धातु तथा अरन् प्रत्यय के सुनियोजन से यह शब्द बना है। उन्द का अर्थ है आर्द्र करना (पिघलना) तथा अरन् कर्तृवाच्य प्रत्यय है। सु का अर्थ है सुष्ठु या भलि भांति। इस प्रकार सुन्दर शब्द का अर्थ है भलिभांति आर्द्र करने वाला।

जयशंकर प्रसाद का प्राकृतिक सौन्दर्य

जयशंकर प्रसाद ने प्रकृति के अनन्त रूपों में विश्व आत्मा के दर्शन किए है। उन्होनें बुद्धिकौशल से संसार के असुन्दर पदार्थ को भी तराश कर निलम–सा बना दिया। वे निराली प्रवृत्ति के कवि है और छायावाद के मूल प्राण है। वे ही ऐसे कवि है जिन्होने छायावादी दृष्टिकोण के अनुसार सिद्धान्त रूप में प्रकृति में चेतना की अनुभूति की है।

प्रकृति का परम्परागत रूप

प्रकृति सौन्दर्य के परम्परागत रूप चित्रित करने के साथ प्रसाद ने अपने साहित्य में उसका विशेष विमोचन भी किया है। उन्हें जहाँ भी सुन्दर वस्तु ने लुभाया वे वहीं उसके उपासक बन गए। महाकवि बिहारी, केशवदास, जायसी आदि की तरह नाम परिगणत शैली उन्हें तनिक भी पसन्द नहीं थी। उन्हें आत्मा का सौन्दर्य प्रिय है। डॉ. वीणा प्रसाद माथुर के शब्दों में ''प्रकृति के जिस भी रूप में उनका दृष्टि निपात हुआ, उसका उन्होनें स्फुट रूप में, उसके रूप रंग का चित्रण भी नहीं किया अपितु उसके आन्तरिक प्रभाव को अत्यन्त उत्कृष्टता से चित्रित किया। यथा कुमुदिनी का सौन्दर्य रात्रि में खिलौने और चान्दनी की चर्चा है तो उसकी शीतलता, सात्विक एंव विलास कामना का संकेत करना भी प्रसाद नहीं भूले है। (3)

उपरोक्त आशय से स्पष्ट है कि प्रसाद की दृष्टि मूलतः सौन्दर्यवादी है तदनन्तर चेतना एंव भावों की करूण व्याख्यात्मकता जो उनके सम्पूर्ण साहित्य में विकास पाती है। प्रसाद की सुदृढ़ लेखनी इस महत्ता से स्वंय में सौन्दर्य की भूमि है।

ऋतु वर्णन

प्रसाद जी प्रकृति सौन्दर्य के श्रद्धालु एंव परउपासक है। उसी की उपासना में उनके काव्य का समस्त रूप परम उज्ज्वल दिखाई देता है। प्रसाद विमुग्ध हृदय से सौंन्दर्य का चित्रण करते है। 'ऋतु' सृष्टि सौन्दर्य का सोपान है जिसके द्वारा मानव जीवन समृद्धि को प्राप्त करता है।

ग्रीष्म वर्णन

ग्रीष्म ऋतु का वर्णन करते हुए कवि की दृष्टि उग्र हो गई है क्योंकि प्रकृति के उदान्त हृदय से ही हम उनके विकराल रूप को देख सकते है। प्रसाद ने ग्रीष्म ऋतु का वर्णन करते हुए उसे अत्यन्त संतप्त एंव क्रन्दन करती हुई भयभीता के रूप में चित्रित किया है।

निर्जन कानन में तरूवर जो खड़े प्रेत से रहते है।
डाल हिलाकर हाथों से वे जीव पकड़ना चाहते है।
देखों वृक्ष शातमली का यह महाभया वह कैसा है
आतम भीत विहंग कुल का क्रन्दन इस पर कैसा है
लू के झोके लगने से जब डाल सहित हिल उठता है,
हरे हरे पत्ते वृक्षों से तापित हो मुरझाते है।
देखा देखी सूख–सुखकर पृथ्वी पर गिर जाते है,
धूल उड़ाता प्रबल प्रभंजन उनकों साथ उड़ाता है।
अपने खड़–खड़ शब्दों को भी उनके साथ बढ़ाता है।(4)

इस प्रकार प्रसाद ने ग्रीष्म ऋतु का वर्णन निजी आधार पर किया है।

बसन्त ऋतु वर्णन :–

बसन्त ऋतु के वर्णन में कवि निजी जीवन की कल्पना करता है। इसमें कवि ने प्रकृति के सौन्दर्य एंव प्रफुल्लता द्वारा अपने मन की आशापूर्ण स्थिति का चित्रण किया है। कवि बसन्त ऋतु के वर्णन में अविराम परिश्रम करता है। क्यारी और कुँजों का निर्माण कर उन्हें अपने अश्रुजल से सींचता है और आशा करता है कि समय आने पर अवश्य ही माल्लिका पुष्प विकसित होगा।

फूल खिल उठेंगे। कुजो में मलयज का विकास होगा। नवीन कोपलों मे कोयल सानन्द कूजेगी और बसन्त मादक मदिरा का अनुपान कर धन्य हो उठेगा।

इस प्राकर कवि अनुपम तथा नवीन सौन्दर्य की कामना करता है।

मूक हो मतवाली ममता, खिले फूलों से विश्व अनन्त
चेतन बने अधीर मिलिन्द, आह वह आवे विमल वसन्त(5)

शरद ऋतु

कवि ने निरभ्र आकाश में शरद ऋतु का आभास आभामय माना है। 'कानन कुसुम' में सुखद शरद ऋतु मानव के स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त कल्याणप्रद है। इस प्रकार मानव जीवन में प्रकृति का सांमजस्य स्थापित करते हुए समय और परिस्थिति के अनुसार अन्य ऋतुओं का भी सम्यक् चित्रण किया है।

उषा वर्णन

प्रसाद जी को प्रकृति के समस्त उपादान प्रिय लगते है। उन्होने मानव को उद्‌बुद्ध करने के लिए विशेष रूप से अपने काव्यों में सुसज्जित किया है। भाव–विभोर करने वाले उनके चित्र अनुपम है। प्रसाद जी ने प्रकृति सौन्दर्य को उषा की लालिमा में ही चित्रित नहीं किया अपितु उसको नाना रूपों में सुशोभित कर उसका भव्य एवं मनोहारी चित्रण किया है। उषा नायिका के समान उदित होती है और कवि ने उषा के मादक विलास की अनुभूति करके ही उसका रोमांचकारी चित्र खींचा है। यही मुग्धा नायिका जब अम्बर पनघट में जल भरने जाती है। तो वह उसका विमल रूप और भी सुन्दर लगने लगता है।

अम्बर पनघट में डूबो रही,
ताराघट उषा नागरी,
खग कुल कुल कुल–सा बोल रहा,
किसलय का आँचल डोल रहा, (6)
लो यह लतिका भी भर लाई,
मधु मुकुल नवल रस गागरी।। (7)

उषा का भव्य चित्र मानवीय संस्पर्श से दोलायमान अपनी अनुपम छटा से बिखेर रहा है। कवि ने अनेक स्थलों पर मानो साक्षात्कार का उस अनुपम निधि अक्षयी बनाया है। कामायनी के 'आशा सर्ग' में उषा नया सन्देश देती है।

उषा सुनहले तीर बरसती जय लक्ष्मी सी उदित हुई,
इधर पराजित काल रात्री भी जल में अन्तर्निहित हुई। (8)

प्रभात वर्णन :– उषा के विलिन होने पर उसके साथ ही धीरे–धीरे प्रभात का आगमन होता है। प्रकृति का वातावरण तब अपनी क्रिया को और अधिक सजग और व्यस्तता में पाता है। कवि ने उषा के समान ही प्रभात का भी अनेक संश्लिष्ट चित्रों में प्रदर्शन किया है। सर्वप्रथम 'कानन कुसुम' में उन्होने प्रथम प्रभात को लेकर मानवीय भावनाओं का सूक्ष्म चित्रण किया है और कवि द्वारा रचित लहर नामक कविता में प्रभात का दृश्य अत्यन्त सुन्दर व दर्शनीय है, जो कि मानवीरण के पश्चात भी अपने आप में शक्ति विशेष रखता है। कामामनी में भी एक स्थान पर सुखद सुकोमल प्रभात की कल्पना की है।

नव कोमल आलोक बिखरता, हिम संसृति पर भर अनुराग।
सित सरोज पर क्रीड़ा करता, जैसे मधुमय पिंग पराग। (9)

निष्कर्ष :–

प्रसाद छायावादी कवि है, उनका प्राकृतिक वर्णन अनुपम है। जय शंकर प्रसाद का हिमालय वर्णन भी वास्तव में प्रकृति की स्वर्ग स्थली है। कामायनीकार ने प्रकृति के प्रातः कालीन दृश्य से लेकर रात्री वर्णन तक चित्रण भी किया है। कवि ने मानव के समान अपनी भावुकता से प्रेरित होकर प्रकृति मे भी मानवीय गुणों के दर्शन का चित्रण उसे व्यापक और लोकप्रिय बनाता है। प्रसाद स्वयं भी प्रकृति से होते है और दुसरों को भी प्रभावित कराते है।

संदर्भ सुचीः–

1. हिगेंल ही फिलोसॅफी ऑफ फाईन आर्ट (1902) पृ0 102
2. हेलमुट कुन्न एन्साईक्लोपीडिया ब्रिटेनिका (1968)
3. डॉ. वीणा माथुर, प्रसाद सौन्दर्य दर्शन, पृ0 110
4. जय शंकर प्रसाद, कानन कुसुम पृ0 25
5. जय शंकर प्रसाद झरना – पृ0 24

6. प्रसाद झरना पावस प्रभात – पृ0 23
7. प्रसाद लहर – पृ0 19
8. प्रसाद कामायनी आशा सर्ग पृ0 31
9. प्रसाद कामायनी आशा सग पृ0 31

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 28-31
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

राजेंद्र यादव के उपन्यासों में दांपत्य जीवन : एक अध्ययन

सुमन यादव
शोधार्थी,
इन्दिरा प्रियदर्शिनी राजकीय स्नातकोत्तर महिला वाणिज्य महाविद्यालय हल्द्वानी (नैनीताल)

परिवार किसी समाज की एक इकाई है। परिवारों का संग्रह ही समाज कहलाता है। अगर परिवार बेहतर होगा, तो समाज भी बेहतर होगा और अगर परिवार बेहतर नहीं होगा, तो समाज भी बेहतर नहीं हो सकता। हर इंसान किसी-न-किसी परिवार में पैदा होता है। घर, परिवार समाज का पहला शिक्षा संस्थान है। इसलिए अगर किसी समाज को बेहतर बनाना है, तो पहले परिवार को बेहतर बनाना होगा।

शिक्षा दो प्रकार की होती है—औपचारिक शिक्षा और अनौपचारिक शिक्षा। औपचारिक शिक्षा का मक़सद इंसान को नौकरी के लिए तैयार करना है और अनौपचारिक शिक्षा समाज के लिए बेहतर इंसान तैयार करने का एक ज़रिया है। स्कूल और कॉलेज औपचारिक शिक्षा के संस्थान हैं, जबकि परिवार अनौपचारिक शिक्षा का संस्थान है। समाज के भीतर जितने भी अनुभव होते हैं—चाहे सकारात्मक हों या नकारात्मक—वे सभी अनुभव घर के अंदर छोटे स्तर पर होते हैं।

राजेंद्र यादव नई कहानी आंदोलन के प्रमुख संवाहक रहे हैं। उन्होंने नई कहानी को दिशा और दशा प्रदान की है, और उनके उपन्यासों में दांपत्य जीवन पारंपरिक आदर्शों से मुक्त होकर आधुनिक मानसिक जटिलताओं, संवादहीनता तथा स्त्री-पुरुष के बीच उपजे तनाव को यथार्थवादी ढंग से प्रस्तुत करता है।

दाम्पत्य सम्बन्ध गृहस्थ जीवन का मूल आधार है। जिसका आरम्भ वैवाहिक जीवन के पश्चात् होता है। विवाह एक सामाजिक स्वीकृति है, जिसके माध्यम से एक स्त्री व पुरूष मिलकर दाम्पत्य जीवन का आरम्भ करते है। दाम्पत्य संबंध से आशय केवल पति-पत्नी के इकट्ठे रहकर अपनी यौन इच्छाओं को सन्तुष्ट करना ही नहीं बल्कि संतानोंत्पत्ति करके वंश वृद्धि भी करना होता है। ये संबंध पति-पत्नी के प्रेम व नोंक-झोंक से परिपूर्ण होता है। ये संबंध अच्छे-बुरे, मधुर व कटु होते है। अपने इस संबंध की मधुरता बनाए रखने के लिए पति-पत्नी में आपसी समझ व विश्वास का होना अति आवश्यक है।

मध्यवर्गीय परिवारों में स्थान का अभाव होने के कारण नव दम्पति हमेशा एकांत स्थान को ढूँढते है। जिससे कि वे एक दूसरे को समझ सके व उनका रिश्ता प्रगाढ़ हो सके। अपने दाम्पत्य जीवन को बनाए रखने के लिए एक स्त्री ही

हमेशा कोशिश करती है। जिस प्रकार 'एक इंच मुस्कान' में अमला अमर से मिलने जाने से पहले कैलाश को सूचित करना ठीक समझती है, अन्यथा कैलाश उसे नहीं समझेगा - "कैलाश को फोन करना है, नहीं तो वह घूमने निकल जाएगा। वह जानती है कि साथ न जाने की बात सुनकर ही कैलाश नाराज होगा.... और कारण जानकर तो बस, भभक ही उठेगा। साधारण लोगों से मिलना जुलना, उनके साथ बराबरी का व्यवहार करना कैलाश को कतई पसंद नहीं।"[1]

पुरूष अपने साथी से विश्वास की कामना करता है, लेकिन स्वयं उस पर विश्वास नहीं करता और उसे अपनी इच्छानुसार चाहता है। तथा उसके भावनाओं का कोई

सम्मान नहीं करता है। इसकी वजह से दोनों के विचारों में आपसी तनाव पैदा होता रहता है।

किसी तीसरे व्यक्ति के जीवन में प्रवेश होने से दाम्पत्य संबंधों में खटास आ जाती है। चाहे वह पुरूष हो या स्त्री। ऐसा ही रंजना के साथ होता है व उसका दाम्पत्य संबंध टूट कर बिखर जाता है।

अमर के जीवन में अमला के आ जाने से वह रंजना से सभी सच्चाई छिपाने लगता है। अमला अमर को लिखने के लिए प्रेरित करती है, उसकी आर्थिक रूप से मदद करती है व पत्र व्यवहार बनाए रखती है। अमर उन पत्रों को रंजना से छिपाकर रखता है। जिससे रंजना का विश्वास टूट जाता है और वह अमर को छोड़कर जाने का फैसला कर लेती है। जिसका अमर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वह अपनी कला को अधिक महत्व देते हुए कहता है "रंजना ईष्यालु पत्नी हो सकती है लेकिन कला सबसे ज्यादा ईष्यालु पत्नी है और जो एक बार इस पत्नी से गठबंधन कर लेता है, उसके सामने सिर्फ एक ही विकल्प होता है या तो इस पत्नी के साथ रहे या एकदम उसे छोड़ दे।"[2]

इन दाम्पत्य पूर्ण संबंधों को बनाए रखने के लिए स्त्री एवं पुरूष में समानता का भाव होना आवश्यक है। समानता के द्वारा ही दोनों में प्रेम संबंधों को प्रकार बनाया जा सकता है। असमानता की भावना दोनों के संबंधों को कटु बना देती है। इस समानता को प्राप्त करने के लिए नारी का आत्मनिर्भर होना आवश्यक है। 'उखड़े हुए लोग' में शरद एक सुख पूर्ण दाम्पत्य जीवन व्यतीत करने के लिए मानता था कि एक औरत को नौकरी कर स्वावलम्बी व आत्मनिर्भर बनना चाहिए। जिससे वह किसी दवाब में न आकर अपने दाम्पत्य जीवन को मजबूरीवश न ढोये।

इन दाम्पत्य पूर्ण संबंधों को बनाए रखने के लिए स्त्री एवं पुरूष में समानता का भाव होना आवश्यक है। समानता का भाव उनके प्रेम संबंधों को बहुत ही मजबूत बनाता है। जिससे उनमें मानवीय गुणों का विकास होता है। असमानता की भावना दोनों के संबंधों को कटु बना देती है। इस समानता को प्राप्त करने के लिए नारी का आत्मनिर्भर होना आवश्यक है। 'उखड़े हुए लोग' में शरद एक सुख पूर्ण दाम्पत्य जीवन व्यतीत करने के लिए मानता था कि एक औरत को नौकरी कर स्वावलम्बी व आत्मनिर्भर बनना चाहिए। जिससे वह किसी दवाब में न आकर अपने दाम्पत्य जीवन को मजबूरीवश न ढोये।आत्मनिर्भर रहते हुए वह अपने निर्णय को स्वयं लेने में सक्षम बना सके। शरद अपने दाम्पत्यजीवन को शुरू करने से पहले जया की इच्छा को जानना चाहता है। वह उसके मन की बात को जानकर तब उसके साथ अपना दांपत्य जीवन प्रारंभ करना चाहता है वह सोचता है "यह निश्चय करो कि विवाहित जीवन तुम चाहती हो या यह कि नहीं। तुम्हारे दिमाग में साफ तो है नहीं कि तुम चाहती क्या हों।"3

वह जया की समस्त इच्छाओं को ध्यान में रखता है, क्योंकि वह नारी मुक्ति का समर्थक है। वह जया की इच्छा के विरूद्ध कोई कार्य नहीं करना चाहता। जिससे वह अपने दाम्पत्य जीवन को शुरू करने से पूर्व जया की सहमति प्राप्त करना चाहता है। जय के प्रति उसका विशेष अनुराग रहता है। वह उसकी समस्त इच्छाओं को ध्यान में रखते हुए अपने निर्णय को धारण करता है। यहां पर एक पुरुष स्त्री के विचारों को सम्मान के साथ रखते हुए। अपने सभी कार्यों को पूर्ण करता है

। 'नए-नए आनेवाले' कहानी में लेखक ने महानवारों में व्याप्त अविश्वास का यथार्थ चित्रण किया है। "अच्छा, इन बीस सालों में भी इन लोगों पर इन शब्दों
का खोखला पन नहीं जाहिर हुआ ? आखिर कितने दिनों ये लोग बेवकूफ बनते रहेंगे? अब भी इन समझ में क्यों नहीं आता कि अपने लिए इन शब्दों का कोई अर्थ नहीं होता ?.. इन नए-नए आने वालों की समझा में क्या कभी 'नहीं नहीं आएगा आएगा कि इस शहर में इन शब्दों पर कोई विश्वास नहीं करता ?..."[4]

महानगरों में विश्वास और भावनाओं का अभाव होता है। विश्वास जैसा शब्द बहुत खोखला सा प्रतीत होता है। 'खेल' कहानी व्यक्ति बोध से परिचित कराते है। इसमे मन से कुंठित स्त्री की क्षणित तृप्ति को खेल के प्रतीकों के माध्यम से स्पष्ट किया गया है। 'पहली कविता' तथा 'मजाक' दोनों कहानियों में दाम्पत्य-सम्बन्धों में अन्य व्यक्ति के प्रवेश के कारण तनाव, घुटन, संत्रासू को अभिव्यक्त किया गया है। 'समझौता' कहानी में अपने पड़ोसी से किसी बात पर मन मुटाव होने पर पड़ोसी की मदद करना स्पष्ट करता कि अभी मानवीय मूल्यों का पतन पूरी तरह से नहीं हुआ है।

नौकरी न करने देने के पीछे उसका भय विद्यमान है। वह सोचता है कि कही सुराणीत को उससे कोई छीन न ले। गोयल नामक व्यक्ति को सुरजीत कसे राखी बधवा देता है इन्दु को भाभी कहलवाता है ताकि मोहनदा सुरजीत को बहन समझे। उसे डर है कि कही मोहनदा सुरजीत से प्रेम न करने लगे। अपनी बहादुरी दूरी के किस्से वह सुनाया करता ।

बहुत स्थिर नहीं बताया है। वैवाहिक सम्बन्ध में उपन्यास कार ने विवाह सम्बंधों को परिवर्तन होता दिखाई देता है। परम्परागत विबाह में बदलाव है। तारक तीन

बच्चों का पिता होते हुए भी सुरजीत से प्रेम करता है तथा उसे भगा ले जाता है। विवाह को समझौते के रूप में मानते हुए मोहनदा कहते हैं – "यह एक ऐसी स्थिति भर है। मूर तो आप उसे तंग कपड़ों की तरह तहाकर वैसे ही वापस सूट नहीं करती । परम्परा के नाम पर हो या स्वयं अपने चुनापर रख दे । के नाम पर अग्र बलि चढ़ा कर ही निभाने की सुजब्ररीहो तो उसका मूल उद्देश्य ही खत्म हो जाता है।"[5]

विवाह और प्रेम दोनों अलग-अलग पहलु है। आवश्यक नहीं कि जिससे प्रेगू हो उसी से विवाह भी हो जाए यह भी आवश्यक नहीं कि जिससे विवाह हो उससे प्रेम हो । इन्दु नारी के समर्पण भाव को स्वीकार करती है जबकि मोहनदा विवाह को केवल एक समझौता मानते है जिसे कभी भी खत्म किया जा सकता है।

निष्कर्ष: अतः राजेंद्र यादव एक चर्चित लेखक हैं जिनके साहित्य में मध्यवर्गी जीवन का यथार्थ चित्रण दिखाई देता है। इनके कथा साहित्य में किसान जीवन का भी यथार्थ चित्र मिलता है।प्रेम युक्त व्यक्ति को सबसे अधिक दुख तब पहुँचता है. जब वह अपने प्रेम से मिलता है। लेकिन वही प्रेम उसे पहचानने से इंकार कर देता है। ऐसी ही स्थिति सूरज के साथ द्रष्टव्य है "भौंचक होकर उसका मुँह खुला रह गया। मैंने फिर याद दिलाया चन्दा, तुमने मुझे नहीं पहचाना ?.... सूरज ? चन्दा ने शायद पहली ही बार पहचान लिया था। अब उसका मुँह एकदम कठोर हो गया। थानेदार साहब लौट पड़े थे। पूछा कौन है? वे कभी चन्दा को और कभी मुझे देखते। आखिर चन्दा बोल उठी 'पागल है, इसे हटाइए न ! देखिए, कैसी

आँखों से देख रहा है? मुझे डर लग रहा है।"[6]

लेकिन फिर भी सूरज ने अपनी प्रेमिका द्वारा दिए गए नाम को कभी मिटने नहीं दिया उसी नाम से अपनी पहचान बनाई।

आज के समय में प्रेम के विचार, परिभाषाएँ, मान्यताएँ व दूसरों के सोचने के नजरिए बदल चुके है। आज पुरुष अपने नए प्रेम को निभाने के लिए अपने वैवाहिक जीवन को तोड़ने से भी नहीं हिचकता। ऐसा ही 'मंत्रविद्ध' में द्रष्टव्य है।

जहाँ तारक अपने मित्र मोहन से अपने प्रेम को अभिव्यक्त करते हुए कहता है "अभी तक यही मशहूर था कि बंगाल की औरतें जादू से भेड़ा बना देती है, पंजाब की कुड़ियाँ भी मंत्र जानती हैं, यह भी तो पता चल गया।"[7]
जिसका सुरजीत विरोध करते हुए कहती है "बिल्कुल झूठ बात है। जादू मैंने इन पर किया था या इन्होंने मुझ पर ? आप ही बताइए, माँ-बाप की इकलौती लड़की, डैडी इतना प्यार करते हैं कि बस, पूछो नहीं, एक तरह घर-भर की मालकिन सब छोड़-छाड़कर इनके साथ यों ही चली आई।"[8]
लेकिन उनका यह नया-नया प्रेम आर्थिक तंगी के अभाव में चार दिन में काफूर हो जाता है और वह दोनों कलकत्ता वापस लौट जाते है।
अतः नर-नारी के प्रेम का रूप जो पहले था, वह आज भी है और हमेशा रहेगा, इसे खत्म नहीं किया जा सकता। कारण उसकी वैयक्तिक विवशता है, क्योंकि उम्र के एक पड़ाव के बाद एक-दूसरे के प्रति मन में प्रेम के अंकुर प्रस्फुटित होना स्वभाविक है। प्रेम सभी बन्धनों से ऊपर होता है। जाँति-पाँति धर्म किसी का विचार नहीं किया जाता।

संदर्भ सूची

1. एक इंच मुस्कान , राजेन्द्र यादव, राधाकृष्ण प्रकाशक प्रा०लि० , नई दिल्ली, 2015, पृष्ठ संख्या 21
2. एक इंच मुस्कान , राजेन्द्र यादव, राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा०लि०, नई दिल्ली, 2015, पृ०सं० 221
3. उखड़े हुए लोग , राजेन्द्र यादव, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015, पृष्ठ संख्या 33
4. राजेन्द्र यादव रचनावली खण्ड-7, सम्पादक-अर्चना वर्मा वबलवन्त कौर, राधाकृष्ण प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 130
5. मंत्र विध्द – राजेद्र यादव, राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली संस्करण-2004, पृष्ठ संख्या- 101
6. उखड़े हुए लोग , राजेन्द्र यादव, राधाकृष्ण प्रकाशक प्रा०लि० 7/31, अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, 2015, पृ०सं० 138
7. मंत्रविद्ध, राजेन्द्र यादव, राधाकृष्ण प्रकाशक प्रा०लि० 7/31, अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली, 2015, पृष्ठ संख्या 266
8. पूर्वोक्त , पृष्ठ संख्या 266

मो. न. +916387153031

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 32-35
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

आदिवासी समाज में पिछड़ेपन के कारण

मोनिका
शोधार्थी,
हिंदी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा
डॉ० अनिल कुमार
सहायक प्रोफेसर,
हिंदी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा

भारत में प्राचीन समय से ही आदिवासी समाज की स्थिति सन्तोषजनक नहीं हैं। समस्याएं हर समाज के सामने आती हैं और चली जाती हैं। परन्तु आदिवासी समाज की समस्याएं जितनी समाप्त नहीं होती उसे अधिक बढ़ जाती हैं। आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीति प्रवेश आदिवासी समाज की समस्याएं अधिक दिखाई देती हैं। आर्यकाल से ही आदिवासी समाज समस्याओं का सामना कर रहा हैं। उनको मैदानी इलाकों को छोड़कर जंगलों में जाने के लिए विवश कर दिया गया। अंग्रजों के समय में भी उनकी यह स्थिति रही उस समय जमीदारों, महाजनों को अधिक महत्व दिया गया। भारत में आजादी के पश्चात् भी कोई सुधार नहीं हुआ। पुलिस प्रशासन, नेता और महाजन आदिवासियों का शोषण करते आ रहे हैं। आदिवासी समाज भारत के मूल निवासी है। सभ्यता के विकास के साथ वे दमन और शोषण के शिकार होने लगे। जंगल के हकदार होने के बावजूद वे जंगल को छोड़ने पर विवश किया जा रहे है। भू–मंडलीकरण के वर्तमान संदर्भ में नई–नई विकास योजनाओं के नाम पर उनका विस्थापन और तीव्र होने लगा। आदिवासी समाज के पिछड़ने के अनेक कारण है।

सामाजिक

साहित्य को समझने और जानने के लिए समाज को जानना अनिवार्य है। समाज के विभिन्न पहलुओं का जिक्र साहित्य में मिलता है। हिंदी कहानियों में अभिव्यक्त आदिवासी समाज के पिछड़ेपन के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षणिक, धार्मिक एवं संस्कृतिक चित्रण प्रस्तुत किया है।

केदार प्रसाद मीणा संग्रह में पुन्नी सिंह की 'लकड़बग्घे' कहानी सहरिया आदिवासी समाज पर लिखी गई। आदिवासी लोग अमल के चलते बेरोजगारी, भुखमरी, गरीबी, कुपोषण, जैसी बीमारियों का शिकार हो रहे हैं। इस कहानी में आदिवासी समाज का चित्रण बड़ी मार्मिकता से हुआ है। इस संदर्भ में लेखक पुन्नी सिंह कहते हैं कि – ''बुद्ध ने फिर उसके सामने हथियार डाल दिये। फिर उसकी बात करता हुआ कहता है कि – हो सो तेई बात सही है। यह जमाना ही ऐसा है भीम भैया! झें बूढ़े–टेडन की पूछ कहाँ है।[1]

[1] केदार प्रसाद मीणा – आदिवासी कहानी 'लकड़बग्घे की कहानी' लेखक पुन्नी सिंह, पृ० सं० 28

अपन तो दोनों दिन ते गये भैया, अपने जमाने में जे सब कुछ हो नई और आज के जमाने में जब जे है। तब अपन को कोई पूछ नई रहो है।''

इस से ज्ञात होता है कि एक समय भारतीय समाज में बड़े–बुजुर्गों की बातों को महत्व दिया जाता था लेकिन आधुनिक समय में ऐसा कुछ नहीं है समाज में काफी परिवर्तन का हो चुका है। वर्तमान में बुजुर्गों के मान–सम्मान को महत्व नहीं दिया जाता है।

राजनीतिक

साहित्य का संबंध समाज से होता है और समाज में साहित्य बनता है। साहित्य और समाज का बड़ा गहरा रिश्ता है इसी तरह समाज का राजनीतिक से काफी गहरा संबंध होता है आधुनिक क्षेत्र में धर्म–संस्कृतिक, जाति या गोत्र से संबंधित संगठन समाज के संगठन में विभिन्न स्तरों में कहीं–न–कहीं राजनीति से जुड़ी हुई दिखाई देती है।

आदिवासियों को सरकार और उनसे मिले हुए पूंजीपति विकास के नाम पर इन्हें विस्थापित कर देते हैं। आदिवासी लोग प्रकृति के काफी निकट है और इनका अस्तित्व प्रकृति से जुड़ा हुआ है। विकास के विस्थापन से आदिवासियों के अस्तित्व और अस्मिता से संकट कैसे उत्पन्न हुआ। इस वर्णन 'और अंत' कहानी में देखने को मिलता है। उदय प्रकाश की 'और अंत' कहानी मध्य प्रदेश एवं उड़ीसा की उराँव, बैगर, गोंड़, कोल आदि जाति के जीवन पर लिखी गई है इस कहानी में आदिवासी समाज के अस्तित्व के संकट का वास्तविक चित्रण लेखक ने किया है।

कहानी के नायक डॉ० वाकणकर के शब्दों में – ''पेपर मिल 3 साल में बनकर तैयार हो जाएगा। ढींगर गाँव देश के औद्योगिक नक्शे में आ जाएगा। यहां के लोगों में रोजगार मिल जाएगा। आदिवासी क्षेत्र का विकास होगा कागज का कारखाना, कागज का उत्पादन करने के लिए ढींगर गाँव के सारे पेड़ों को काट खाएगा। जंगल उसके लिए रॉ मटेरियल है कच्चा माल। आस–पास के सारे जंगल खत्म हो जाएंगे। पीपल, सागौन, शीशम, सरई, कहुआ, महुआ, कोसम, छोडला, कुछ नहीं बचेंगे। जंगलों पर निर्भर रहने वाले आदिवासी शहरों में बनने वाली इमारतों या ऐसी ही किन्हीं दूसरी परियोजनाओं में सस्ती दिहाड़ी और फर्जी मास्टर सेल पर काम करने वाले मजदूर बन जाएंगे। ऊगरियाँ, बंसोर, मिम्मा, ढींगर आदि जातियों की पारंपरिक दस्तकारी का कुटीर उद्योग खत्म हो जाएगा। यहाँ के असली और काफी पुराने बागिचों में खेती–बाड़ी, कारखानों में ली जाएगी। पेपर मिल का वेस्ट प्रोडक्ट यानी रबड़, कचरा और कास्टिंग सोडा तथा अम्लों से भरा जहरीला धुआँ चारों ओर फैला जाएगा धरती पर, आकाश में तीतर–भीतर, सॉभर–चिराग, रीछ–खरगोश नहीं रहेंगे। अन्य प्राणी समाप्त हो जाएंगे। सिर्फ कुछ गिने–चुने शिकार बचेंगे जो ढींगर गाँव शहर के पिछवाड़े रहेएंगे।''[2]

इस से स्पष्ट है कि विनाश के चलते आदिवासी समाज का अस्तित्व खतरे में तो है ही और साथ–साथ उनसे जुड़ी सभी प्रकार के प्राकृतिक चीजों का अस्तित्व भी खतरे में है। इसलिए कहते जंगल का मतलब आदिवासी और आदिवासी का मतलब जल, जंगल जमीन पर इतना जीवन निर्भर होता है कि उनके अस्तित्व के मूल कारण है।

आर्थिक

कार्ल मार्क्स ने सही कहा है कि जिनकी आर्थिक स्थिति अच्छी होगी उनकी सामाजिक स्थिति भी अच्छी होगी। वर्तमान समय में जिनकी आर्थिक स्थिति में बदलाव आया है उनकी सामाजिक स्थिति में भी परिवर्तन होगा। मानव–जीवन में पूंजी ही केंद्र में होती है। इसका महत्व दिन–प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है और यह धन मानव–जीवन में कई समस्याएँ उत्पन्न करता है।

आदिवासी समाज का पालन–पोषण या जीवनयापन जंगलों पर ही निर्भर होता है। आदिवासी जंगल के बहुत ही निकट है। इसलिए उनकी सारी मूलभूत आवश्यकताएँ जंगल से ही पूरी होती है। इसी का आधार बनाकर समकालीन, कहानीकारों ने इन्हीं क्रिया–कलापों को आधार बनाकर अर्थापार्जन का वास्तविक चित्रण अपनी कहानियों में किया है।

रत्नकुमार सॉभरिया की खेत तथा अन्य कहानियाँ संग्रह में 'खेत' नामक कहानी एक आदिवासी किसान पर लिखी गई है। वकील इस कहानी के पात्र आदिवासी बुढ़े को अपने षडयंत्र से गुमराह कर

[2] उदय प्रकाश – और अन्त में प्रार्थना, पृ० 151

खेत खरीदना चाहता है। लेकिन वह बुढ़ा कतई राजी नहीं होता। लेखक पात्र के माध्यम से कहता है – ''वकील हो ना, मेरसिंह पागल कोनी, कालजो बेच दे अपणो।''[3]
इस कथन से स्पष्ट है कि आदिवासी अपनी जमीन से कितना लगाव करता है और उनके अस्तित्व को दिकु लोग खरीदना चाहते हैं। इसलिए कहा जाता आदिवासी लोग भूमि पुत्र होते हैं।

राकेश कुमार सिंह ने जोड़ा हारिल की 'रूपकथा' कहानी में मुंडा जनजाति समाज और उनके जीवनयापन के साधनों का अंत होने में अधिकारियों द्वारा शोषण का चित्रण है – ''बद्री मिसिर और जंगल साहब एन जंतल के पार थे। एक के बदले चार रूख काटे जा रहे थे। लाह, गोंद, चिरौंजी, कत्था, गोलोचन, वंटालोचन, मद्यु और ईधन – – – सपना होने लगे थे तब जंगल था तो जीव था जीने के सहारे थे। जंगली पदार्थ की बिक्री से नमक भाग चलता था। टेंट में चार पैसे रहते थे।''[4]
इस से ज्ञात होता है कि सरकार आदिवासी समाज के आर्थिक के साधन धीरे–धीरे नष्ट कर रही है साथ ही उनको बेगार बनाकर आर्थिक रूप से वंचित रखना चाहती है।

शैक्षणिक

भारत एक विशाल देश है और साथ ही बहुभाषी, बहुधर्मी, बहुसंस्कृति और वैविध्यपूर्ण भौगोलिक वातावरण वाला देश है। भारत में एकता में अनेकता भी साफ–साफ दिखाई देती है। भारत में आदिवासी समाज विभिन्न क्षेत्रों में पहाड़ों और जंगलों में निवास करता है इसलिए इसमें सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षणिक, आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक हीनता होना स्वाभाविकता है।

इनकी शिक्षा और संस्कृति पर डॉ० श्याम राम राठौर लिखते हैं कि – ''जिस संस्कृति को आज हम भारतीय संस्कृति के रूप में जानते हैं उसका प्रारंभिक या आदिम रूप जनजाति समाज से जुड़ा हुआ है। शिक्षा, धर्म और संस्कृति रूपी किसी भी एक भुजा का परिवर्तन अन्य दो भुजाओं की निश्चित रूप से प्रभावित करती है।''[5]

आदिवासी समाज भी इसी त्रिभुज रूपी समाज में जुड़ा हुआ है। भारतीय समाज में यह त्रिभुज रूपी समाज का रूप समय के अनुसार बदलता रहता है। साहित्यकार भी समय के अनुरूप ही अपनी रचना का सृजन करता है।

रोज केरकेटा की कहानी 'पगहा जोरी–जोरी रे घाटो' में जनजाति स्त्री की शिक्षा से संबंधित समस्याओं को एवं पितृसत्तात्मक जीवन–संघर्ष एवं दृढ़ संकल्प की झलक दिखाई देती है। इस कहानी में जनजाति स्त्री की अस्मिता को केंद्र में रखकर दर्शाया गया है। आदिवासी लोग एक तो मुख्य धारा के समाज से दूर रहने के कारण सरकारी सुविधाओं के अभाव से शिक्षा का प्रभाव उतना नहीं पड़ा। दूसरी स्त्री होने के कारण सामानता की छूट इतनी नहीं मिली। इस कहानी में बेटा–बेटी का अंतर भी दिखाया गया है। कहानी में दया नाम की लड़की गाय–बैल चराने का काम करती है। घर आकर अपने माँ–बाप का हाथ बँटाती है। उसने माँ–बाप बेटे को पढ़ा रहे हैं परंतु बेटी को नहीं इस पर लेखिका की कहानी की स्त्री पात्र दया की माँ कहती है ''बढ़िया से धान उसना–बरकाना सीधो बेटी। तुम्हारी सासू तुम्हें बहुत प्यार करेगी।''[6]

इस से स्पष्ट है कि आदिवासी समाज में लड़की को पढ़ने में हिचका रहे हैं और वह भी बेटा–बेटी के बीच भेदभाव करने में लगे हैं। इसमें स्त्रियाँ कामों के चलते शिक्षा से वंचित रह जाती है। परंपरा और धर्म के अनुसार बेटी को ससुराल के घर में काम करना ही अच्छा समझा जाता है।
विपिन बिहारी की 'सलीब' कहानी में शिक्षा के महत्व को प्रस्तुत किया गया है। कहानी के एक पत्र फादर विलिपम्स के माध्यम से शिक्षा के महत्व को उजागर करते हैं।
''शिक्षा ही एक ऐसी चीज है जो हमें अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाती है। इसीलिए अपने बच्चों को पढ़ने से मत रोको। उनकी फिक्र हम उठाने के लिए तैयार है।''[7]

---

[3] प्रत्यक्षा, घर का जादु तिल–तिल, पृ० सं० 50
[4] राकेश कुमार सिंह, जोड़ा हाशिल की रूप कथा, पृ० 122
[5] डॉ० श्याम राम राठोड़, साठोतर हिंदी उपन्यासों में आदिवासी जन–जीवन, पृ० 205
[6] रोज केरकेट्टा, पगहा जोरी–जोरी रे धाटी, पृ० 139
[7] विपिन बिहारी, अरावली उद्घोष, अंक 87, मार्च 2010, पृ० 23

यहां पर पता चलता है कि शिक्षा मनुष्य को जागरूक बनती है चाहे वह कोई भी समाज से हो। शिक्षा ही एक ऐसी चीज है जो कि अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाती है।

धार्मिक

आदिवासी समाज में लोक–संस्कृति के धार्मिक पक्ष के अंतर्गत विभिन्न जनजाति समाज में बलि प्रथा, भूत–प्रेत, जादू–टोना, जपन, ओझा, चुड़ैल, गंडा, ताबीज, शकुन–अपशकुन आदि पर विश्वास रखते हैं। मेहरुन्निसा परवेज की 'मेरी बस्तर की कहानियाँ संग्रह की 'टोना' कहानी बस्तर के आदिवासी समाज में टोना–टोटका पर आधारित है। इस कहानी में जनजातियों में चल रहे रीति–रिवाज के अंधविश्वास का चित्रण दर्शाया गया है।

जब खोड़ी जगतदलपुर हाट से लौटती है तो वहां पर जो गोदना गुदवाती है। लेखिका के शब्दों में गाँव का पुजारी कहता है – ''मरने के बाद भगवान के घर यही लेखा साथ जाता है, जिसका गोदना नहीं वह नरक भोगता है। यही देह का चिन्ह तो साथ जाए है। बिना गोदने वाली देह को कोई नहीं पूछता। सुरजानी ने तो जाँघ पर जब से गुदना उतरवाया है। जाने कहाँ–कहाँ से ब्याह का न्यौता आता है। दौ सौ रूपय देने को तैयार हो गए हैं। काफी के तो पूरे देह पर गोदना है। जिसके जितना गोदना होगा, वह उतना ही सुख भोगता है।''[8]

इससे ज्ञात होता है कि आदिवासी समाज में अंधश्रद्धा का प्रभाव दिखाई देता है इसी कारण ये समाज अशिक्षा, गरीबी, भुखमरी जैसी समस्याओं से जूझता हैं।

निष्कर्ष

आदिवासी समाज के पिछड़ेपन के सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, शैक्षणिक, अनेक कारण हैं। इन सभी कारणों को दूर करने आदिवासी समाज को मुख्य धारा में लाने के लिए संबंधित प्रयासों की आवश्यकता हैं।

संदर्भ ग्रन्थ

1. केदार प्रसाद मीणा – आदिवासी कहानियां (लकडबग्घे की कहानी) लेखक पुन्नी सिंह, पृ० सं० 28
2. उदय प्रकाश – और अन्त में प्रार्थना, पृ० सं० 151
3. प्रत्यक्षा, घर का जादु तिल–तिल, पृ० सं० 50
4. राकेश कुमार सिंह, जोड़ा हारिल की रूप कथा, पृ० सं० 122
5. डॉ० श्यामराव राठोड़, साठोतर हिंदी उपन्यासों में आदिवासी जन जीवन, पृ० सं० 205
6. रोज केरकेट्टा, पगहा जोरी–जोरी से घाटो, पृ० सं० 139
7. विपिन बिहारी 'सलील' (अरावली उदघोष अंक 87), मार्च 2010, पृ० सं० 23
8. मेहरून्निसा परवेज, मेरी बस्तर की कहानियाँ, पृ० सं० 27

Email : monikagohana973@gmail.com

[8] मेहरनन्निसा परवेज, मेरी बस्तर की कहानियाँ, पृ० सं० 27

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 36-41
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

रेत समाधि:हर हद-सरहद पार का आख्यान

सलोनी प्रिया
शोध छात्रा,
केशव प्रसाद मिश्र राजकीय महिला महाविद्यालय औराई संबद्ध महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी

शोध सारांश :

साहित्यिक जगत् में कई रचनाएँ हैं जो विचारों के स्तर पर उच्च हैं। किंतु विचारों और भावनाओं के साथ भाषिक स्तर पर यह उपन्यास अपने आप में अनूठा है। यह विभाजन, सरहद, मध्यवर्गीय जीवन संघर्ष, नारीवादी दृष्टिकोण, समलैंगिकता, पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव, वृद्ध विमर्श, राजनीतिक संकीर्णता, अदम्यता आदि पर केंद्रित रचना है, जिसके माध्यम से लेखिका कई नए भावों एवं विचारों के मध्य पाठक को प्रश्नांकित करती हैं। इसमें भावों के आवेग हैं और इन आवेगों से उठते प्रश्नों के जवाब लेखिका स्वयं नहीं देती बल्कि पाठक को इसके लिए स्वतंत्र करती हैं, जो रेत समाधि उपन्यास की विशिष्टता है। उपन्यास कला में मिलन कुंदेरा के अनुसार- "हर प्रश्न के जवाब देने की प्रवृति से लोगों में मूर्खता का कौशल विकास होता है। उपन्यास की उपलब्धि तो यह है कि वह हर जवाब पर फिर से प्रश्नांकित कर दे।"[1] गीतांजलि श्री इस उपन्यास में कई विषयों को समाहित करती हुई अंततः मानवता को स्थापित करती हैं। इस शोधालेख में उन सभी आयामों पर दृष्टि डाला गया है, जिसे लेखिका ने केंद्र में रखा है। आज़ादी के इतने वर्ष बाद विभाजन पर केंद्रित विषय पर गीतांजलि श्री द्वारा पुनः कलम चलाना एक साहसिक कार्य है। यहां उन्होंने अपनी कल्पना को विभाजन की त्रासदी के बाद की स्थितियों में विस्तारित किया है, जहां कई दबे भावावेग उठते-बहते कई प्रश्नों से टकराते जाते हैं। राष्ट्रीय, पारिवारिक, सामाजिक, भावनात्मक और भाषिक स्तर पर यह उपन्यास एक प्रतिमान स्थापित करता है, जो नवीन युवा रचनाकारों के लिए पथ-निर्धारक है। लेखिका मध्यमवर्गीय पारिवारिक परिवेश के बीच उच्छृंखलता के माध्यम से जिन मूल्यों को स्थापित करना चाहती हैं, उस सोद्देश्यता को पूर्ण करना ही इस शोधालेख़ का ध्येय है।

बीज शब्द: सरहद, समाधि, विभाजन, नारीवादी दृष्टिकोण, अदम्यता।

फ्रेंच लेखक पाल वैलरे ने कहा है, 'एक अच्छा उपन्यास अंततः संगीत होता है!' रेत समाधि इसका अच्छा उदाहरण है। इसकी संगीतात्मकता पाठक मन को झंकृत करती है, उसे उसमें बहने को विवश करती है। गीतांजलि श्री अपनी ही लेखन की सीमा को लांघती हुई एक ऐसी कृति से हमें रूबरू कराती हैं जो न सिर्फ अपने आप में अनूठा है

बल्कि हिन्दी साहित्य जगत् में भी एक प्रतिमान स्थापित करता है। रेत समाधि में गीतांजलि श्री की पूर्व रचनाओं की छटा भी दिखाई पड़ती हैं किंतु इसकी प्रासंगिकता उसके आगे की कड़ी के रूप में है। यह उपन्यास हर हद सरहद पार का आख्यान के रूप में देखने को मिलता है। चाहे बात लेखन की हो, भाषा की हो, कथानक की हो, भारत पाक विभाजन से पनपी सरहद की हो, कल्पनाओं की हो या फिर अस्सी वर्ष की बुजर्ग महिला की ऊर्जा एवं सीमा पार जाने का अदम्य साहस की हो। इन सब हद सरहदों को पार करता यह उपन्यास जीवन दृष्टि के विभिन्न द्वार खोलता है, जहॉ मध्यमवर्गीय जीवन संघर्ष, नारीवादी दृष्टिकोण, भारतीय परंपरा एवं संस्कृति, समलैंगिकता, थर्ड जेंडर की व्यथा, पश्चिम बनाम पूर्व, भाषाई संकीर्णता आदि को समाहित किए हुए है। जैसे नदी सिर्फ बहना चाहती है, ठहराव उसे स्वीकार्य नहीं। वैसे ही इसके कथानक, पात्र भी एक ढली हुई भाषा संरचना के प्रतिकूल प्रवाहित होते नजर आ रहे हैं। यही प्रवाहता गीतांजलि श्री की उपलब्धि है और मौलिकता भी। भाषा की सीमा को लांघती गीतांजलि श्री मानती हैं कि- "गाथा की कोई मुख्यधारा ज़रूरी नहीं। उसे छूट है कि भागे, बहे, नदी, झील, नए-नए सोते में।"[2]

1947 का वर्ष भारत-पाक की आजादी के साथ विभाजन की त्रासद का भी वर्ष रहा है। इस विभीषिका को अपनी रचनाओं में कई साहित्यकारों ने मुखरता से अभिव्यक्त किया है। कुछ ने इसे जिया है और शब्दों के माध्यम से गढ़ा है, जिसमें उस समय विशेष की जीवंतता समाहित है। इसके बावजूद गीतांजलि श्री ने विभाजन को अपने उपन्यास का आधार बनाया। क्यों? इसके प्रत्युत्तर में हमें यहीं देखने को मिलता है कि लेखिका उसके बाद के समय को और उसमें परिवर्तित जीवन को दर्शाना चाहती हैं। जैसा कि उनका हर संदर्भ में सीमा से परे जाने की लालसा है, वह यहॉ भी दृष्टव्य है। सभी रचनाकारों के अनुभव जगत् को समेट कर उसके बाद के जीवन दृष्टि को उजागर करने का उनका प्रयास इस उपन्यास को नवीनता प्रदान कर रहा है। देश विभाजन पर आधारित साहित्य की रचना करने वाले भीष्म साहनी, बलवंत सिंह जोगिंदर पाल, मंटो, राही मासूम रजा, कृष्णा सोबती, खुशवंत सिंह, रामानंद सागर, मंज़ूर एहेतशाम, राजेंद्र सिंह बेदी आदि को उपन्यासकार गीतांजलि श्री ने सम्मानपूर्वक याद किया है और उनकी प्रमुख रचनाओं को भी। जैसे 'झूठा सच', 'तमस', 'सूखा बरगद', 'ए ट्रेन टू पाकिस्तान', 'गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिंदुस्तान, 'ज़िन्दगीनामा' आदि कृतियों को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इस कृति में यथोचित स्थान दिया है। विभाजन के दीर्घतम काल के बाद अतीत के पन्ने को पुनः पलटना दर्द, अपनों से बिछड़ने की छटपटाहट, फिर न मिल पाने की कसक, नई जिन्दगी का नयापन, कुछ अधूरा रह जाने का खोखलापन आदि को नवीन पैमाने पर परिभाषित करने जैसा है।

उसने कहा था कहानी में फ्लैशबैक शैली का जितना अनूठा प्रयोग हुआ, उतना ही प्रभावशाली प्रयोग लेखिका ने रेत समाधि को आयाम देने में किया है। इसके कथानक तीन चरणों में देखे जा सकते हैं। प्रथम चरण में बिंब पीठ है, जो खिन्नता का बिंब है। पति की मृत्यु के पश्चात् अम्मा घरवालों से उदासीन हो दीवार की तरफ मुड़ जाती हैं और हमेशा अपनी पीठ से अपनी उदासीनता अभिव्यक्त करती हैं। ऐसा प्रतीत होता है मानो दीवार पीठ हो गया हो। अम्मा की यह उदासीनता पूरे घर को व्याकुल करता है। सब अपने तरीकों से उन्हें इस घेरे से बाहर लाने की कोशिश करते हैं लेकिन अम्मा की जिद्द की नहीं उठूंगी। इसी कशमकश में अम्मा को एक जादुई छड़ी मिलती है। जिसे लेकर वो अकेले ही बाहर निकल जाती हैं और फिर पुलिस स्टेशन में मिलती हैं। वहां से वह अपनी बेटी के घर आती हैं। यह उनके जीवन का दूसरा अध्याय होता है, जहां उनकी उदासीनता एक उत्साह में परिवर्तित हो जाता है। वह जीवन को पुनः नए ढंग से देखने और जीने को मचल उठती हैं। यहां दो स्त्रियां केंद्र में हैं- माँ और बेटी। माँ अपने उम्र के विपरीत बेटी बनती जाती हैं जहां युवावस्था का उमंग है, बेफिक्र जिंदगानी और आत्ममुग्धता। वहीं बेटी अपनी माँ को संभालने के क्रम में युवावस्था से प्रौढ़ता की ओर बढ़ती चली जाती है। समाधि की रेत से बाहर आकर मॉ की स्मृतियां जीवित हो गईं। अम्मा की

कल्पनाओं की पतंग उस कालविशेष के स्मृति पर अटकती है, जहां वह भी कभी स्वच्छंद तितली हुआ करती थीं। इसी समयविशेष की एक और कड़ी है रोजी। बेटी उसे बुआ संबोधन करती है। अम्मा और रोजी का एक अनूठा संबंध लेखिका ने यहां दर्शाया है। रोजी या दर्जी मास्टर रजा यह निश्चित नहीं है। रोजी का उभयलिंगी होना बाद में पता चलता है जिसे मां जिस सहजता से स्वीकार करती है। यह आज की समाज और नवीन पीढ़ी को संकेत है कि वे भी अपने हृदय और विचार को स्वंतत्र रख थर्ड जेंडर वर्ग को भी समाज में उचित स्थान दे न कि हेय दृष्टि। उनके सामाजिक उपेक्षा से भरे मन की व्यथा को लेखिका रोजी के शब्दों में उद्घाटित करती हैं- "न मेरे लिए फ़िल्म, न साहित्य, न कला, न कपड़े। जो आप उतार दें, उस उतरन में हम उतर लें। अपनी कहीं। गिनती नहीं। झील में बाजी डाल आओ तो किसी को पता नहीं चलेगा कि एक कम है।"[3]

रोजी इस उपन्यास में थर्ड जेंडर की प्रतिनिधि ही नहीं है बल्कि एक उदार हृदय की परिचायक और कथानक को गति प्रदान करने वाली कारक भी है। वह अम्मा की उस अतीत की साथी है, जहां उनके जीवन का एक महत्वपूर्ण अध्याय प्रारंभ तो होता है, किंतु विभाजन की विभीषिका में बह जाता है और रह जाता है अपने अधूरेपन के साथ अवचेतन मन में एक कसक। अवचेतन मन की इसी कसक को रोजी पुनः अम्मा के चेतन मन में उद्वेलित करती है तथा उन्हें पाकिस्तान जाने को प्रेरित करती है। वहीं पाकिस्तान जहां वह चंद्रप्रभा नहीं बल्कि चंदा होती हैं। एक्ट 1870 के आधार पर वो मुस्लिम अनवर से प्रेम विवाह करती हैं। राजनीतिक गतिविधियां सरहद बनाती हैं जिसकी भेंट चढ़ते हैं, व्यक्ति, समुदाय, रिश्ते आदि किंतु इन सब के बीच भाव का, प्रेम का, उदारता का एक कोना शेष रह जाता है। इसी रिक्तता को पूर्ण करने का अदम्य साहस दिखाती हैं अम्मा । जो विभाजन के बाद हिन्दुस्तान आ जाती हैं और उनका पूर्व पति अनवर पाकिस्तान रह जाता है। यहीं से अम्मा के जीवन का तीसरा अध्याय प्रारंभ होता है। जहां रोजी की असंदिग्ध मौत मानवाधिकार के संवैधानिक उपचारों के उल्लंघन को दर्शाता है तो वहीं अचेत अम्मा का न उठने की जिद्द के बाद न सिर्फ उठना बल्कि पाकिस्तान जाने की जिद्द अपनी पूर्णता की खोज की कड़ी के रूप में दिखाई पड़ता है। लेखिका इस चरण को रेत समुंदर नाम देती हैं। जैसे समुंदर अथाह जल का भंडारक होता है उसी प्रकार विस्तृत रेत की मरुभूमि थार को रेत समुंदर कल्पित किया गया है। इस उपन्यास में देश विभाजन के दौरान थार मरुस्थल में आने वाली आँधी, रेतीले तूफ़ान, घूर्णावृत आदि की वजह से पाकिस्तान से ट्रक भर-भरकर लाई गई हिन्दू लड़कियों को थार के असीम रेत समुंदर में दफ़न होने की दास्तान का सजीव वर्णन है। रेत के समुद्र में जल नहीं है, केवल रेत ही रेत है, इसलिए लेखिका ने 'जल समाधि' शब्द का प्रयोग नहीं करते हुए 'रेत समाधि' शीर्षक हेतु शब्द चयनित किया है।

सामान्यत: मिथकीय अवधारणा में समाधि शब्द का प्रयोग महान एवम् उदात्त व्यक्तित्व की मृत्यु के सम्मान में किया जाता है। इस उपन्यास में लेखिका ने शायद इसे ही आधार बनाकर अम्मा के व्यक्तित्व के माध्यम से शीर्षक रेत समाधि को सार्थकता प्रदान करने का प्रयास किया है। जो अपने जीवन के आखिरी क्षण में मुँह के बल अर्थात् हारकर नहीं गिरना चाहती, वो तो पीठ के बल आकाश की ओर मुंह कर रेत में समाधि लेना चाहती हैं और उस खुले आकाश में मानो अपनी जीत दर्ज कर यह साबित करना चाहती हैं कि मानवीय मूल्य, प्रेम और स्वच्छंदता की कोई सीमा नहीं होती और न ही कोई सरहद इसकी पूर्णता में अवरोधक बनने की क्षमता रखता है। वह एक मुक्त भाव है जो पीयूष स्रोत की तरह निरंतर बहना जानता है। लेखिका ने अम्मा के माध्यम से सरहद को परिभाषित किया है जिसका आधार मानवीय मूल्य है। वह कहती हैं कि- "सरहद तोड़ने के लिए नहीं वरन् जोड़ने के लिए होती है जैसे रुमाल की किनारी, मेज़पोश की बार्डर, खेतों की मेड़, आसमान की सरहद, छत की मुँडेर, तस्वीर की फ़्रेम आदि सारी सरहदें एक वुजूद को घेरती हैं, रोकती नहीं, जोड़ती हैं जैसे रात और दिन, ज़िन्दगी और मौत। सरहद जेल नहीं बल्कि इश्क़ है, संगम है, मुलाक़ात

है।'बार्डर माने कूदो।है ही कि लांघो, लौटो, खेलो, मुस्कराकर स्वागत करो, वहां मिलो रचो। मजा है उसे लांघने में।… मत मानो बार्डर को।बार्डर से अपने टुकड़े मत करो। इंसानी रिश्तों की सरहदें न कभी थीं, न कभी होंगी।"[4] उपन्यास का मुख्य संदेश है- बार्डर से अपने टुकड़े मत करो! वह इस सरहद को नहीं मानती जो राजनीतिक दलों ने बनाई हैं, जिसका आधार संकीर्ण मानसिकता है। वह तो सरहद की व्यापकता को आत्मसात करती हैं। यहीं कारण है कि सरहद को पार करने के लिए वीजा की आवश्यकता उन्हें निरर्थक लगता है। वह सरहद की कृत्रिमता एवं अमानवीयता पर क्रोधित हो कहती हैं- "हमारी किसे पड़ी, हम हैं ही नहीं, और हैं नहीं तो अपने हक़ हुक़ूक़ क्या, और हैं नहीं तो पासपोर्ट क्यों, ऐसे ही बॉर्डर आर और पार।"[5]

इस उपन्यास में कई पहलुओं के साथ नारीवादी दृष्टिकोण को भी उद्घाटित करती हैं। बेटी फेमिनिस्ट है और इस कारण वह मां का साथ देती है और सरहद पार ले जाती है। लेखिका ने प्रकृति को भी अपनी लेखनी में सहयोगी बनाया है। नारिवादिता संबंधित अपने अंतर्मन के विचार तुलसीदास की रामचरित मानस के कागभुशुंडी की तरह अपने काल्पनिक किरदार कौए की पत्नी कौवी के मुख से कहलवाए हैं -"वो अपने वक़्त की दबंग फेमिनिस्टों में, जिन्होंने ये हक़ अपनी बहनों को दिलाया कि हम मादाएँ भी हर मीटिंग में आयेंगी और पूरी बिरादरी के निर्णयों में हमारी भी साझेदारी होगी। ये भी कि कोई अपना अंडा दूसरे के घोंसले में कौवाकाहिली में नहीं छोड़ेगा, और न सींक तिनका फेंकफांक कर घरौंदा बनेगा हम भी क़रीने से रहेंगी, और कौवा भी अंडे सेंएगा, क्योंकि जो बच्चे होंगे वो उसके भी हैं।"[6] दर्शनिकता का पुट इस उपन्यास को और संजीदा तथा सार्थक बनाता है। इसमें जीवन के प्रति दृष्टि है और मौत की प्रासंगिकता। जिस तरह निरंतर जारी रहने वाला कार्य बोझिल होता है, वैसे ही मौत के न होने में जीवन की निर्थकता है। लेखिका लिखती हैं - "मौत है तभी जीवन अनंत है। आज जीवन ख़तरे में है क्योंकि वैज्ञानिक पैदा हो गए हैं जो लगे हैं कि मौत को ही ख़त्म कर दें और चिरकाल के लिए जीवित हो लें। वे ज़रूर जीवन का ख़ात्मा करने वाले हैं। उन्हें शायद पता नहीं कि ययाति को हमेशा युवावस्था में रहने का वरदान मिल गया तो वे स्वयं उसे तज देने को बेक़रार हो गए। दुश्मनी जवानी से नहीं, हमेशा से थी। क्योंकि हमेशा हो तो उसकी हस्ती मिट जाती है। मौत से ही जीवन है और दुःख से ही सुख। आदि इत्यादि।"[7] कथानक में संगीत है, लय है, निरंतर बहने की प्रवृत्ति। अंतिम क्षण में एक मौत होती है, जिसका पूर्वानुमान अम्मा को था इसलिए वह पीठ के बल गिरने का अभ्यास करती है। जब पीछे से गोली लगती है तब भी वह पीछे की ओर ही गिरती है। उनका यह अंत अधूरा नहीं रहता। वह अपनी पूर्णता के साथ मृत्यु का आलिंगन करती हैं। वह सारी सरहदें तोड़ती हैं भाव के, प्रेम के, सीमा के और साहस के। वह अपने पूर्व पति लकवाग्रस्त अनवर से मिलती हैं, एक माफीनामा के साथ। यहीं उनका उद्देश्य पूरा होता है लेकिन लेखिका का उद्देश्य यहां पूर्ण नहीं होता है। जिस कृत्रिम सरहद के पार जाने की कल्पना लेखिका अम्मा के माध्यम से करती हैं वह वही रह जाता है राजनीतिक तराजू पर। मानवीय मूल्य राजनीतिक ढ़ाँचे में कैद हो जाता है और ये सरहदें बांटती हैं अपने टुकड़ों को निरंतर। लेखिका का उद्देश्य संभवत: तब पूरा होगा जब सरहदों पर कंटीले तारों की जगह प्रेम रूपी बीज का बीजारोपण होगा। जिसके सुरभित पुष्प की सुगंधी समरसता को समाहित कर ले। जहां सबसे ऊपर मानव धर्म स्थापित हो सके। लेखिका पूर्व बनाम पश्चिम को भी स्थान देती हैं। भूमंडलीकरण ने जिस प्रकार पाश्चात्य संस्कृति को हावी कर दिया है और भारतीय भी उसे ही श्रेष्ठ मानने में अपनी सार्थकता समझने लगे हैं उस विसंगति को लेखिका उजागर करते हुए कहती हैं- "जिस भी रांडू पांडू से पूछो, जिस भी हिन्दुस्तानी ज़बान में, जवाब वो अँग्रेज़ी में देता है, वो भी ग़लत अँग्रेज़ी में, साइनबोर्ड पर हिंदी की भी वर्तनी ग़लत है, अँग्रेज़ी की तो माशाअल्लाह।"[8]

भाषिक तौर पर रेत समाधि उपन्यास में लेखिका वैसे ही मानकीकरण की सीमा लांघती हैं जैसे निराला ने जूही की कली के माध्यम से छंद विहीनता की सीमा। पात्र स्वयं कथा कहते हैं और सब अपने ढंग से। इसमें हिन्दी, उर्दू, पंजाबी, बांग्ला, संस्कृत और भोजपुरी आदि अन्य देशज भाषाओं के शब्दों का भरपूर समावेश है। कहीं-कहीं तो पात्रों की भाषा पूरी तरह इतर हिन्दी हो गई है। जैसे- "मैं भइया के पाँउ दबाइ रहौ हो लेकिन बिनने ध्यान नाएँ हो। बिनकी आँखें मुंदी हीं और म्हों में जैसें कछु फँसो भऔ है, निकारि रये हैं। तभई चिम्पू अख़बार लैकें दरबज्जे पै। भय्या जी उछले और बाई म्हों से बाके सामने। बू तौ दैया रे, अखबार फँकि कँ भागौ। बू कहतु है कि भइयाजी रोज जइ कत्तैं। उनैं कछु है गऔ है।"[9] इस उपन्यास की विशेषता है-निरंतरता और भाषा का प्रवाह। बनी बनाई परिपाटी को तोड़ते हुए भाषा एक ऐसी असमंजस की स्थिति पर ला खड़ा करता है जहां मानकीकरण का कोई पैमाना नहीं। तो प्रश्न यह कि क्या इसे व्याकरणिक दृष्टि से उचित ठहराया जाए? क्या नवीन रचनाकार इसे भाषा का नवीन पदचिन्ह मानें? यह उपन्यास पाठक से धैर्य चाहता है क्योंकि प्रारंभ के 200 पृष्ठ में कथानक धीरे-धीरे पृष्ठभूमि बुनता है, जो थोड़ा उबाऊपन भी लाता है। किंतु उसके बाद कथानक की गतिशीलता इस प्रकार बढ़ती है कि पाठक पढ़ता जाता है और बस पढ़ता ही जाता है। इस समय पूर्व की सारी कथानक तारतम्य स्थापित करती जाती है और इस उपन्यास को सार्थक बनाती हैं। सामान्य मध्यमवर्गीय परिवार से शुरू हुई कथा कैसे सरहद पार तक का सफर तय करती है, यहीं लेखिका की उपलब्धि है। लेकिन बात आज की प्रासंगिकता की की जाए तो थोड़ी फैंटेसी सी लगती है। क्योंकि आज न तो अस्सी वर्ष की वृद्धा में विचारों की ऐसी स्वतंत्रता आना स्वाभाविक है और अगर आ भी जाए तो उसे न तो आज जादुई छड़ी देने वाला उत्प्रेरक सहयोगी ही है। बिना वीजा के सीमा पार करना तब और भी चुनौतीपूर्ण है जब दो देशों का राजनीतिक संबंध शत्रुता की हो। आलोचक शंभुनाथ के शब्दों में- "उपन्यास की स्वतंत्रता कई बार यथार्थ से विद्रोह होती है। क्या रेत समाधि यथार्थ से विद्रोह ठाना हुआ एक अति काल्पनिक उपन्यास है, पाठकों को राष्ट्रविहीन ग्लोबल जीवन की तरफ आकर्षित करता हुआ? यहां कोई सरहद नहीं है। है सिर्फ पतंग सा उड़ता, चिड़ियों सा सरहद लांघता और तितलियों की तरह रंगों से भरा मुक्त जीवन। यह उपन्यास एक स्वतंत्र मनोराज्य प्रस्तावित करता है।"[10]

इन सब के साथ यह कहना अनुचित न होगा कि लेखिका इस उपन्यास के माध्यम से उन सारे पहलुओं पर हमारा ध्यान केन्द्रित करती हैं जो आज हमारे समाज और देश में व्याप्त हैं। जहां हमें अपने विचारों को और खोलने तथा संपन्न करने की आवश्यकता है। जीवन को नए ढंग से समझने और जीने की जरूरत है। यह मात्र सरहद पार की प्रेम गाथा नहीं है बल्कि यह उस इतिहास की गाथा है जहां सैकड़ों कहानियाँ मूक रूप से अभिव्यक्त हैं, जो इतिहास में दर्ज नहीं हैं। रेत में दफ़न हो गई कई स्त्रियों का अस्तित्व रेत मात्र रह गया, उसके कोई अंश अब मौजूद नहीं। ऐसे में लेखिका का अतीत के इस संजीदा पृष्ठ को पुनः पलटना सराहनीय कदम है। अपने विचारों को जिस सहजता से लेखिका ने सभी विषयों को समाहित करते हुए परिपक्वता से उकेरा है, ऐसे में कहा जा सकता है कि रेत समाधि हर हद-सरहद को पार करता आख्यान है।

संदर्भ :

1. https://samkaleenjanmat.in
2. गीतांजलि श्री; रेत समाधि, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि.; नई दिल्ली; 2022,
3. गीतांजलि श्री; रेत समाधि, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि.; नई दिल्ली; 2022, पृ. 239
4. वहीं पृ. 285
5. वहीं पृ. 290

6. वहीं पृ.185
7. वहीं पृ.196
8. वहीं पृ. 153
9. वहीं पृ. 46
10. वागर्थ पत्रिका, अक्टूबर 2020
(https://vagartha.bharatiyabhashaparishad.org)

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 42-47
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

छत्तीसगढ़ की नदी-परंपरा और हिन्दी साहित्य: प्रकृति, आस्था एवं जीवन-दर्शन का अध्ययन

संजू लदेर
शोधार्थी
पी. एच. डी.(हिन्दी)
डॉ. सी वी रमन विश्वविद्यालय
करगी रोड कोटा बिलासपुर छत्तीसगढ़
डॉ. राधा शर्मा
शोध निर्देशक
सहा. प्राध्यापक (हिन्दी)
डॉ.सी वी रमन विश्वविद्यालय
करगी रोड कोटा बिलासपुर छत्तीसगढ़

शोध का सारांश:-
प्रस्तुत शोध-पत्र में हिन्दी साहित्य के परिप्रेक्ष्य में छत्तीसगढ़ की नदी-परंपरा का सांस्कृतिक, प्राकृतिक तथा आध्यात्मिक अध्ययन किया गया है। भारतीय संस्कृति में नदियाँ केवल जलधाराएँ नहीं, बल्कि जीवन, सभ्यता और लोकचेतना की अमर संवाहिकाएँ मानी गई हैं। इसी परंपरा में छत्तीसगढ़ की महानदी, इंद्रावती, शिवनाथ, खारुन, पैरी, अरपा तथा हसदेव जैसी नदियाँ प्रदेश की सांस्कृतिक आत्मा के रूप में प्रतिष्ठित हैं। इन नदियों ने न केवल जनजीवन को पोषित किया है, बल्कि लोकसंस्कृति, लोकआस्था और साहित्यिक संवेदनाओं को भी समृद्ध किया है।
छत्तीसगढ़ की नदियाँ यहाँ के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन की आधारशिला हैं। इनके तटों पर विकसित लोकपरंपराएँ, धार्मिक अनुष्ठान, मेले तथा लोकगीत जनजीवन की आस्था और भावबोध को अभिव्यक्त करते हैं। राजिम का त्रिवेणी संगम धार्मिक चेतना और सांस्कृतिक समन्वय का प्रतीक बनकर उभरता है।

हिन्दी साहित्य में इन नदियों का चित्रण प्रकृति-सौंदर्य, करुणा, प्रेम, संघर्ष और जीवन-दर्शन के विविध आयामों के साथ हुआ है। साहित्यकारों ने नदी की कल-कल ध्वनि, उसके निर्मल प्रवाह और उफनते वेग को मानवीय भावनाओं से जोड़कर प्रस्तुत किया है। कहीं नदी वात्सल्यपूर्ण माँ के रूप में दिखाई देती है, तो कहीं जीवन-संघर्ष और परिवर्तन की प्रेरक शक्ति बन जाती है। लोकगीतों और कविताओं में नदियाँ लोकजीवन की संवेदनशील साक्षी के रूप में उपस्थित है। छत्तीसगढ़ की नदी-परंपरा हिन्दी साहित्य में केवल प्राकृतिक उपस्थिति नहीं, बल्कि सांस्कृतिक चेतना, लोकआस्था और जीवन-दर्शन की जीवंत अभिव्यक्ति है।

बीज शब्द:- छत्तीसगढ़, नदी-परंपरा, हिन्दी साहित्य, महानदी, इंद्रावती, लोकसंस्कृति, लोकआस्था, प्रकृति-चेतना, जीवन-दर्शन, राजिम त्रिवेणी संगम, लोकगीत, सांस्कृतिक चेतना।

प्रस्तावना:- भारतीय संस्कृति में नदियों को केवल जलधारा नहीं, अपितु जीवन, सभ्यता और संस्कृति की अमर वाहिनी माना गया है। भारत की सांस्कृतिक चेतना में नदियाँ मातृत्व, करुणा, पवित्रता और लोकजीवन की संवेदनाओं की प्रतीक रही हैं। वे मानव जीवन को पोषित करने के साथ-साथ साहित्य और संस्कृति को भी निरंतर समृद्ध करती आई हैं। छत्तीसगढ़ की धरती भी अपनी समृद्ध नदी-परंपरा के कारण विशेष महत्त्व रखती है। महानदी, इंद्रावती, शिवनाथ, खारुन, पैरी, अरपा, हसदेव तथा अन्य नदियाँ इस प्रदेश की प्राकृतिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक चेतना की आधारशिला हैं।

इन नदियों के तटों पर सभ्यताओं का विकास हुआ, लोकसंस्कृति ने आकार लिया तथा साहित्यिक संवेदनाओं की अभिव्यक्ति मिली। हिन्दी साहित्य में इन नदियों का स्वरूप कहीं माँ के समान वात्सल्यपूर्ण है, तो कहीं संघर्षशील जीवन का प्रतीक। लोकगीतों, कविताओं, यात्रावृत्तों और समकालीन साहित्य में इन नदियों का चित्रण प्रकृति, आस्था और जीवन-दर्शन के विविध आयामों को उद्घाटित करता है।

छत्तीसगढ़ की नदी-परंपरा का सांस्कृतिक स्वरूप:- छत्तीसगढ़ को नदियों का प्रदेश कहा जाए तो यह अतिशयोक्ति नहीं होगी। यहाँ की नदियाँ केवल कृषि और जीवन-निर्वाह का साधन नहीं, बल्कि लोकसंस्कृति की संवाहिका हैं। महानदी को छत्तीसगढ़ की जीवनरेखा कहा जाता है। इसकी धारा ने प्रदेश की सांस्कृतिक चेतना को सदियों से सिंचित किया है। नदियाँ ग्रामीण जीवन की जीवंतता को अभिव्यक्त करती हैं।लोक जीवन में नदियों का विशेष महत्त्व है। ग्रामीण अंचलों में नदियों को देवी स्वरूप मानकर उनकी पूजा की जाती है।

" अरपा, पैरी के धार, महानदी हे अपार।
इन्द्रावती है पखारय, तोर पइयां,
महूं पांवे पखारव, तोर भुइंया।
जय हो, जय हो छत्तीसगढ़ मईया।। "[1]

छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में नदियों का वर्णन अत्यंत भावपूर्ण ढंग से हुआ है। लोकगायक नदी को जीवनदायिनी माता कहकर संबोधित करते हैं। कहीं नदी प्रेम और विरह की संवेदना को व्यक्त करती है, तो कहीं वह श्रमशील जीवन की साक्षी बनती है।

हिन्दी साहित्य में प्रकृति और नदी-चेतना:- हिन्दी साहित्य में प्रकृति सदैव मानव जीवन की सहचरी रही है। छत्तीसगढ़ की नदियाँ इस प्रकृति - चेतना का महत्वपूर्ण अंग हैं। साहित्यकारों ने नदी की कल-कल ध्वनि, निर्मल प्रवाह, हरित तटों और प्राकृतिक सौंदर्य को मानवीय भावनाओं से जोड़कर प्रस्तुत किया है।

"शीतल स्वच्छ नीर ले सुन्दर, बता कहां से आती हैं।
इस जल्दी में हे महानदी, तू कहां घूमने जाती है।।"[2]

महानदी की विस्तृत धारा जीवन की व्यापकता और गंभीरता का प्रतीक बनती है। इंद्रावती का तीव्र प्रवाह संघर्ष और आत्मबल की अनुभूति कराता है। वर्षा ऋतु में उफनती नदियाँ प्रकृति की विराटता और ऊर्जा को अभिव्यक्त करती हैं। साहित्य में नदी का शांत स्वरूप करुणा और शांति का संदेश देता है, जबकि उसका प्रबल वेग जीवन-संघर्ष और परिवर्तन की प्रेरणा बन जाता है।

"सुमरि भाखौ चरित रसाल, महानदी बूढ़ो बड़ो जेठ भयो विकराल।
अस नभैयो आगे कब है भाखै बूढ़े लोग ,जैसे वारिद वारिभरि ग्राम दियो करि सोग।
शिव के जटा विहारिनी बही सिहावा आय ,गिरि कंदर मंदर सबै टोरि फेरि जल जाय।"[3]

प्रकृति और मानव के अटूट संबंध को साहित्यकारों ने नदियों के माध्यम से अत्यंत मार्मिक ढंग से व्यक्त किया है। नदी के बिना प्रकृति अधूरी प्रतीत होती है, और मानव जीवन निस्तेज। यही कारण है कि हिन्दी साहित्य में नदियाँ केवल प्राकृतिक तत्व नहीं, बल्कि जीवंत चेतना के रूप में चित्रित हुई हैं।

नदियाँ और लोकआस्था:- भारतीय संस्कृति में नदियों को पवित्रता और मोक्ष का प्रतीक माना गया है। छत्तीसगढ़ की नदियाँ भी धार्मिक और आध्यात्मिक चेतना से गहराई से जुड़ी हुई हैं। महानदी के तटों पर स्थित राजिम को "छत्तीसगढ़ का प्रयाग" कहा जाता है। यहाँ प्रतिवर्ष आयोजित राजिम कुंभ जनआस्था का विराट स्वरूप प्रस्तुत करता है।

"छत्तीसगढ़ के प्रयागराज नाम से,राजिम है विख्यात।
आंचल में अपने समेटे हुए है,सदियों का इतिहास।
राजीव लोचन का प्रसिद्ध मन्दिर,पर्यटकों को लुभाया,
महानदी, पैरी, वो , सोंढूर का संगम, त्रिवेणी संगम कहलाया।"[4]

नदी के प्रति लोकमानस की श्रद्धा लोकगीतों, कथाओं और धार्मिक परंपराओं में स्पष्ट दिखाई देती है। लोग नदी के जल को पवित्र मानते हैं और उसे जीवन के शुभ संस्कारों से जोड़ते हैं। विवाह, पर्व, स्नान तथा पूजा-अर्चना में नदी की महत्ता विशेष रूप से दिखाई देती है।

"सिद्ध, नाथ, शैव, शाक्त,वैष्णव, सबने किया
तुम्हारे पवित्र जल से आचमन।
यहीं तुम्हारे निर्मल घाट पर
मेरे माता पिता ने कराया, मेरा मुंडन संस्कार।
वे जानते थे तुम्हारी अप्रतिम, महिमा अगाध करुणा को।"[5]

हिन्दी साहित्य में यह आस्था केवल धार्मिक भावना तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वह मानव और प्रकृति के आत्मीय संबंध का प्रतीक बन जाती है। नदी यहाँ विश्वास, समर्पण और आध्यात्मिक शांति का माध्यम बनकर उभरती है।

"आठों गणसुर मुनि सदा, आश्रय करत सधीर,
जानि नारायण छेत्र शुभ, चित्रोत्पला नदी तीर,

देश कलिंगही आईके, धर्म रूप थिरपाई,
दरसन परसन बास अरु, सुमिरन ते दुःख जाई।"[6]

नदियों में जीवन-दर्शनः- नदी का स्वभाव निरंतर प्रवाहित होना है। यही प्रवाह मानव जीवन के दर्शन को भी अभिव्यक्त करता है। हिन्दी साहित्य में छत्तीसगढ़ की नदियों को जीवन-संघर्ष, धैर्य, परिवर्तन और कर्मशीलता के प्रतीक के रूप में चित्रित किया गया है।

इंद्रावती की वेगवती धारा संघर्ष और साहस का प्रतीक है, जबकि महानदी की शांत गंभीरता जीवन में संतुलन और धैर्य का संदेश देती है। इस प्रकार नदियाँ केवल प्रकृति का अंग नहीं, बल्कि जीवन-दर्शन की सजीव अभिव्यक्ति हैं।

समकालीन साहित्य और पर्यावरण चेतनाः- आधुनिक युग में औद्योगीकरण, प्रदूषण और जल-संकट ने नदियों के अस्तित्व को चुनौती दी है। समकालीन हिन्दी साहित्य में यह चिंता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। साहित्यकारों ने नदियों की पीड़ा, जल-प्रदूषण और पर्यावरणीय असंतुलन को गंभीर समस्या के रूप में प्रस्तुत किया है।

शरदचंद्रगौड़ की **"प्यासी इंद्रावती"** जैसी कृतियाँ नदी की व्यथा को अत्यंत मार्मिक रूप में अभिव्यक्त करती हैं। आधुनिक साहित्य यह संदेश देता है कि यदि नदियों का संरक्षण नहीं किया गया, तो मानव सभ्यता भी संकट में पड़ जाएगी।

धुलते हुए गंदे कपड़े, नंग धड़ंग उछलते कूदते
नहाते बच्चे मेरे जल में,
मैं किसके पास जाकर गाऊं ,अपना दुखड़ा
सुनाऊं कि मैं हो गई अब नीर विहीन।"[7]

नदी की करुण व्यथा को अत्यंत संवेदनशील और मार्मिक रूप में अभिव्यक्त किया गया है। कवि ने नदी को मानवीय स्वर देकर उसकी पीड़ा को जीवंत बना दिया है। जो जल कभी निर्मल, पवित्र और जीवनदायिनी था, वही आज मानव की लापरवाही के कारण मैला और क्षीण हो गया है।

नदी अपने दुख को व्यक्त करते हुए मानो असहाय होकर पूछती है कि वह अपनी व्यथा किसके पास जाकर कहे। उसकी पीड़ा सुनने वाला कोई नहीं है। कभी जो नदी जीवन का आधार थी, वही आज उपेक्षा और प्रदूषण के कारण नीर-विहीन होती जा रही है। उसकी सूखती धारा और घटती निर्मलता मानव के स्वार्थपूर्ण व्यवहार की दुखद कहानी कहती है।

"मैं मरणासन्न मेरी सांसे, धीरे- धीरे चलती हैं,
स्टेथोस्कोप गले में टांगे, डॉक्टर के लिए आंखें तरसती हैं।"[8]

नदी की दयनीय और करुण अवस्था का अत्यंत भावपूर्ण चित्रण किया गया है। कवि ने नदी को एक ऐसे रोगी के रूप में प्रस्तुत किया है, जो जीवन और मृत्यु के बीच संघर्ष कर रही है। नदी अपनी अंतिम अवस्था की वेदना व्यक्त करती है। उसकी साँसें धीरे-धीरे चल रही हैं, अर्थात उसका जलस्रोत सूखता जा रहा है और उसका अस्तित्व संकट में पड़ चुका है।

यह चित्रण केवल एक नदी की दशा नहीं, बल्कि आधुनिक समय में प्रदूषण, अतिक्रमण, वनों की कटाई और जल के अंधाधुंध दोहन से जूझती समस्त नदियों की व्यथा है। कभी जीवनदायिनी और कल-कल बहने वाली नदियाँ आज सूखती धारा, प्रदूषित जल और उपेक्षा के कारण दम तोड़ रही हैं।

"ऐसा लगता मानों, अस्पताल में पड़ी मरीज हूं।
मुझे देखने आये पर्यटक, मानों विजिटर बनकर आये है।
मेरी पतली धारा देख, सिर पीट खिसियाए है।"[9]

नदी की अत्यंत दयनीय और करुण स्थिति का हृदयस्पर्शी चित्रण किया है। नदी स्वयं को अस्पताल में पड़ी एक गंभीर रोगी के समान अनुभव करती है। जिस प्रकार कोई असहाय मरीज जीवन के लिए संघर्ष करता है, उसी प्रकार नदी भी अपने अस्तित्व को बचाने के लिए तड़प रही है। उसकी जलधारा क्षीण होकर इतनी पतली हो गई है कि उसमें पहले जैसी जीवंतता, वेग और सौंदर्य शेष नहीं रह गया है।

नदी संरक्षण की आवश्यकता आज केवल पर्यावरणीय प्रश्न नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और मानवीय दायित्व भी बन गई है। साहित्य इस चेतना को जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

उपसंहार:- छत्तीसगढ़ की नदियाँ हिन्दी साहित्य में प्रकृति, संस्कृति, आस्था और जीवन-दर्शन की सशक्त प्रतीक बनकर उभरती हैं। इन नदियों ने लोकजीवन को समृद्ध करने के साथ-साथ साहित्य को भावनात्मक गहराई और सांस्कृतिक विस्तार प्रदान किया है। हिन्दी साहित्य में उनका चित्रण केवल प्राकृतिक सौंदर्य तक सीमित नहीं, बल्कि मानवीय संवेदनाओं, लोकविश्वास और सामाजिक चेतना का दर्पण भी हैं।

"हे क्रांति शांति की पायस्विनी, तुम को मैं केवल नदी कहूं,
या स्वतन्त्रता संघर्ष कहूं, या फसलों की जिंदगी कहूं।
तुम शहरों को भी प्यारी हो, तुम गावों को भी प्यारी हो,
दोनों को दूध पिलाती हो, तुम दोनों की महतारी हो।"[10]

नदी का प्रवाह जीवन की निरंतरता का प्रतीक है। वह मानव को संघर्ष, धैर्य, प्रेम और समर्पण का संदेश देती है। अतः कहा जा सकता है कि छत्तीसगढ़ की नदी-परंपरा भारतीय साहित्यिक चेतना की अमूल्य धरोहर है, जो प्रकृति और मानव के शाश्वत संबंध को सदैव जीवंत बनाए रखती है।

संदर्भग्रंथ सूची:-

- वर्मा नरेंद्र देव, (2024) ,छत्तीसगढी काव्य एम ए छत्तीसगढ़ी पाठ्यक्रम पण्डित सुंदरलाल शर्मा मुक्त विश्वविद्यालय बिलासपुर छत्तीसगढ़।
- पाण्डेय मुकुटधर, (1916), पूजा फूल, ब्रम्हप्रेस इटावा, उत्तर प्रदेश।
- अनुपम रमेश, (2014), ठाकुर जगमोहन सिंह समग्र, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली।
- क्रान्ति डॉ किशन टंडन, (2022), छत्तिसगढ़ पर्यटन महिमा, बुक्स क्लिनिक पब्लिशिंग बिलासपुर छत्तीसगढ़।
- सिंह सतीश कुमार, (2017), सुन रहा हूं इस वक्त, बोधि प्रकाशन जयपुर।
- भोगहा मालीकराम, शिवरीनारायण माहात्म्य प्रो अश्वनी केशरवानी के आलेख से उल्लेखित।
- गौड़ शरद चंद्र, (2013), प्यासी इंद्रावती, यश पब्लिकेशन दिल्ली।
- गौड़ शरद चंद्र, (2013), प्यासी इंद्रावती, यश पब्लिकेशन दिल्ली।

- गौड़ शरद चंद्र, (2013), प्यासी इंद्रावती, यश पब्लिकेशन दिल्ली।
- चंद्राकार डॉ पुरुषोत्तम, (2023), कहानी अरपा की, संकल्प पब्लिकेशन बिलासपुर छत्तीसगढ़।

Mail Id ladersanju15@gmail-com

Mail Id dr.radhasharma17@gmail-com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 48-51
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानी 'बिगड़ैल बच्चे' में मूल्यबोध

डॉ. कुलदीप
सहायक प्रोफेसर हिंदी,
राजकीय स्नातकोत्तर नेहरू महाविद्यालय झज्जर

मूल्यबोध अच्छे-बुरे, सही-गलत, उचित व अनुचित के बीच तुलना कर सही को पहचानने की क्षमता प्रदान करता है| यह मानव जीवन को एक आयाम प्रदान करता है, जिससे व्यक्ति के आचरण, निर्णय व विचारधारा को नई दिशा मिलती है| मूल्य केवल नैतिक आदर्श को लेकर नहीं चलता बल्कि समाज, संस्कृति व सभ्यता को भी शामिल करता है| डॉ० हुकुमचंद राजपाल **"मानव मूल्यों और जीवन मूल्यों को एक ही मानते हैं| मानव के लिए मूल्यों की उपयोगिता के संबंध में उनका मत है, मानव मूल्य जीवन की सार्थकता के लिए अनिवार्य हैं|"1** हजारी प्रसाद द्विवेदी मनुष्य की श्रेष्ठ अवधारणा को मूल्य कहते हैं **"सर्वश्रेष्ठ मानव अवधारणाएँ ही मूल्य है|"2** जैसे-जैसे मनुष्य में मौलिक शक्ति का विकास होता जा रहा है,परंपरा से चले आ रहे मूल्यों का पतन होता जा रहा है| परंपरागत जीवन मूल्यों के विघटन व नवीन मूल्यों के उत्थान में जो टकराहट की गूँज उत्पन्न होती है उसमें पुरानी और नई पीढ़ी आमने-सामने आ जाती है| नई पीढी अर्थात युवा वर्ग नई मान्यताओं, नई जीवन -शैली तथा विचारधारा की जनक है| चाहे सभ्यता कोई भी हो जीवन मूल्य नवीन शैली और नई विचारधारा को उत्पन्न अवश्य करती है| **"प्रत्येक सभ्यता के जीवन में एक ऐसा मोड़ अवश्य आता है| जब उसके भीतर की मान्यताएँ टूटने लगती है| आंतरिक विश्वास अवरुद्ध हो जाता है|"3** आज के युग में मानवीय सभ्यता, मूल्य, आदर्श, जीवन शैली, संस्कार या आदर्श, रहन-सहन, विचार कुछ भी स्थिर नहीं है| इस तरह का परिवर्तन समय की माँग कहें या युवा चेतना| युवा वर्ग पर आज आधुनिकता का सबसे गहरा और गंभीर प्रभाव है| इसी कारण आज के युवा वर्ग के विषय में यह कहा जाता है कि यह लोग आधुनिकता और पाश्चात्य संस्कृति से इतने प्रभावित हैं कि भारतीय परंपरा और संस्कृति से इनकी जड़े छुटती जा रही है| युवा वर्ग के प्रति पुरानी पीढ़ी के विचार हैं कि इन आधुनिक होते युवाओं में न तो संस्कार हैं और न ही अक्ल| यह केवल बदतमीज बनते जा रहे हैं| आज की युवा पीढी में खुलापन है, लापरवाही है, जीवन के खतरे और समाज से उन्हें कोई वास्ता नहीं है| आज के युवा पर लगाया गया यह आरोप क्या सही है या नहीं। मनीषा कुलश्रेष्ठ मूल्य विघटन, अपसंस्कृति जैसे युवा वर्ग पर लगाए गए आरोपों को पुनर्परीक्षा कर युवा मूल्यबोध को पुनः परिभाषित करती है| वे मानव मूल्यों को पारंपरिक दृष्टिकोण से अलग हटाकर नए दृष्टिकोण से पाठक के समक्ष रखती हैं|

मनीषा कुलश्रेष्ठ का कहानी संग्रह ' **गंधर्व गाथा'** सामाजिक यथार्थ को बयां करता है| इस संग्रह में संकलित इनकी कहानी **'बिगड़ैल बच्चे'** सामयिक यथार्थ व पुरातन मूल्य बोध को नवीनतम आलोक में पुनर्मूल्यांकित करती है| यह कहानी आधुनिकता का जामा पहने युवा वर्ग के मूल्यों और संस्कारों को पुनः परीक्षित करते हुए युवा वर्ग के प्रति सामाजिक धरातल पर बनी पूर्व धारणाओं को चुनौती देती है| यह कहानी बताती है कि युवा वर्ग का आधुनिक पहनावा, खुला व्यवहार और नवीन जीवन शैली उनके चरित्र या नैतिक मूल्यों की सही पहचान नहीं है| इस कहानी में लेखिका बताती है कि आधुनिक रंग में रंगी युवा पीढ़ी को देखते ही लोग यह धारणा बना लेती है कि यह बच्चे बिगड़ैल अर्थात बुरे हैं| इस कहानी में भी जब लेखिका और वहाँ बैठे उसके सहयात्री डॉक्टर और उसकी पत्नी जब तीनों युवाओं को देखते हैं तो उनके पहनावे और उनके रहन-सहन को देखकर कहते हैं कि **"यह हाल है हमारे देश के युवा पीढ़ी का! यह डॉक्टर साहब कह रहे थे| दिन-पर-दिन बदतमीज होते जा रहे हैं| संस्कार बचे ही नहीं|... बात खाली एक जाति की नहीं है, हमारी यंग जनरेशन पूरी की पूरी ही ऐसी है| कुछ वेस्टर्न कल्चर का असर था, बचा-खुचा टी०वी० चैनल ने पूरा कर दिया|"4** पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव आज की युवा पीढ़ी पर पूर्ण रूप से देखा जा सकता है| न केवल खान-पान बल्कि रहन-सहन, वेशभूषा और भाषा में भी ये युवा विदेशों की नकल करते देखे जाते हैं| मीडिया और तकनीकी प्रचार-प्रसार ने इसे ओर भी अधिक गति प्रदान की है| **"संस्कृति के खुलेपन ने सोशल मीडिया के जरिए नई पीढ़ी को एक 'वास्तु' में तब्दील कर दिया है| नई पीढ़ी इससे 'मॉडर्न' विकास के रूप में एक दीवाने के रूप में स्वीकार करती जा रही है इससे भारतीयता का उच्चतम भाव कहीं लुप्त हो गया है|"5** लेकिन ऐसा कतई नहीं है कि आज का युवा भारतीय संस्कृति से नहीं जुड़ा है| आज भी युवा वर्ग में इंसानियत देखी जा सकती है| आज की युवा पीढ़ी पर पाश्चात्य का प्रभाव अवश्य है लेकिन उच्च आदर्श, संस्कारों और नैतिकता की समाप्ति नहीं हुई है| नवीन मूल्यों का उसमें निर्माण अवश्य हुआ है फिर भी आज की युवा पीढ़ी के संस्कारों को समझने के लिए आधुनिकता के साथ नवीन मूल्यों से उनकी पड़ताल की जानी जरूरी है| आज का युवा नवीन सभ्यता के साथ जुड़कर भी भारतीय संस्कारों को नहीं छोड़ पाता | मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानी 'बिगड़ैल बच्चे' में आधुनिकता के साथ-साथ मानवीय संवेदना है| जब लेखिका अलवर रेलवे स्टेशन पर मिठाई लाते हुए गिर जाती है और उसे गहरी चोट लगती है, तब ये तीनों युवा उसे उठाकर आराम कक्ष में लेकर जाते हैं, उसके लिए डॉक्टर बुलाते हैं, यहाँ तक की अस्पताल ले जाकर उसका इलाज भी कराते हैं| यह युवा बिना किसी स्वार्थ के केवल मानवीयता के नाते एक अजनबी महिला यानी लेखिका की मदद करते हैं| चोट लगने पर जब लेखिका को थोड़ा सा होश आता है, तब वह अपने पास डॉक्टर को देखती हैं और डॉक्टर उसे बताता है "**कैसी हैं आप? एक अजनबी रेलवे के डॉक्टर ने झुककर पूछा| चिंता की कोई बात नहीं... ये यंगस्टर नहीं होते तो...! इनका और खुदा का शुक्रिया अदा करें| गनीमत है कि कोई सीरियस इंजरी नहीं हुई| पुराना खाया-पिया काम आ गया| हँसकर डॉक्टर ने मेरे हवास दुरुस्त करने की कोशिश की|"6** यह युवा तीनों बच्चे लेखिका की मदद करते हैं| बाकी अन्य लोग भीड़ की भांति केवल उसे देखते रहते हैं| यहाँ तक की उनके सहयात्री डॉक्टर साहब और उनकी पत्नी अध्यापिका भी उसकी कोई मदद नहीं करते| इस तरह लेखिका की विचारधारा उनके प्रति बदलती है। लेखिका जिन्हें बिगड़ैल बच्चे समझ रही थी उनमें मानवीय भाव देखकर लेखिका की आंखें छलक जाती है|

इस कहानी में लेखिका स्थापित करती है कि नैतिकता केवल परंपरागत व्यवहार या जीवन शैली में नहीं बल्कि संकट के समय किए गए मानवीय कर्मों में समाहित होती है| जब यह तीनों बच्चे लेखिका की मदद करते हैं उसके लिए अपना मानवीय फर्ज अदा करते हैं तो लेखिका की बिगडैल बच्चों वाली धारणा बदल जाती है| "**उन युवा बिगड़ैल फरिश्तों ने मुझे पूरी तरह से संभाल रखा था| उन्हें अपने आगे के कार्यक्रमों से ज्यादा मेरी चिंता**

थी| तीनों के कपड़े में मेरी वजह से खून से सन गए थे| उन्होंने अपने सामान के साथ मेरा सामान संभाल रखा था|"7 इस तरह उनको जिम्मेदारी संभालते हुए देख बिगड़ैल बच्चे उसके लिए फरिश्ते बन जाते हैं और उसकी उन बच्चों के विषय में पूर्वधारणा गलत साबित होती है|

आजकल हमारी युवा पीढ़ी रूढ़ अवधारणाओं का विरोध करती है| इसका महत्वपूर्ण कारण युवा पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी में संवाद का अंतर है| इससे इन दोनों पीढीयों में अविश्वास पैदा हो जाता है| "**पुरानी पीढ़ी का मूल्य संसार जिसमें वे सदियों से रहते चले आए थे और जिसे उन्होंने अपनी अनुरक्ति और आस्था से पोषित किया था, क्रमश: छिनता चला गया है|"8** लेखिका ने कहानी के माध्यम से पुरानी पीढ़ी का युवा वर्ग के प्रति नजरिया इस तरह बताया है कि **"इनमें समझदारी ना मात्र की नहीं है| इनमें बस फालतू जोश! कुछ कर दिखाने, कुछ बनने की न तो काबिलियत है, न अक्ल, न हिम्मत| सोशल वैल्यूज के नाम पर जीरो|"9** लेखिका इस पीढ़ी के विषय में सोचती है कि पुरानी पीढ़ी और युवा पीढ़ी की सोच में इतना अंतर क्यों है? शायद ऐसा इसलिए है क्योंकि माता-पिता के पास समय ही नहीं है| अपने बच्चों को समय देने का, उनसे बातचीत करने का, उनके साथ घुलने-मिलने का, उन्हें संस्कारों का पाठ पढ़ाने का| सभी माता-पिता अपनी ही दुनिया में मशगूल है,तो ऐसे में युवा पीढ़ी में संस्कार, आदर्श कैसे समाहित होंगे| नई युवा पीढ़ी पुरानी पीढ़ी के भाव को किस प्रकार से समझ पाएगी| कितना समय दिया जाता है माता-पिता द्वारा अपने बच्चों को लेखिका इस संबंध में स्वयं कहती है **"हमारी भी गलती है, हमारे पास समय कहाँ है, जो इन्हें संस्कारों का पाठ पढ़ाएं|"10**आज के युवा आत्मविश्वासी और स्वतंत्र सोच रखने वाले हैं| उनकी जीवन शैली पुरानी पीढ़ी की अपेक्षा भिन्न है| यह समय की मांग है। यदि समयानुसार यह परिवर्तन नहीं होता तो वह दब्बू बनकर रह जाते हैं| आधुनिकता के साथ आज के युवा को कदम से कदम मिलना जरूरी है यदि ऐसा नहीं होता तो इस कहानी 'बिगड़ैल बच्चे' में लेखिका की बेटी और ट्रेन में बैठे बच्चों की भांति अंतर आ जाता है| पहले तो अपनी लड़की और ट्रेन में बैठे बच्चों की तुलना करती है और सोचती है कि उसने अपनी बेटी निशि को कठोर और सुरक्षित वातावरण में पाला है| उसकी शादी भी समय से कर दी है| इस पर वह गर्व करती है| लेकिन फिर वह निशि की जिंदगी को देखती हैं कि वह अब एक-एक पैसे को अपने पति का मुँह ताकती है, अब उसमें इतनी हिम्मत भी नहीं है कि अपने मायके अकेली आ सके| वह पूर्ण रूप से पति पर निर्भर हो गई है| चेहरे पर स्थाई भाव फैल गए हैं| यदि उसे भी स्वतंत्रता मिलती मुंबई जाकर मल्टीनेशनल कंपनी में हमने उसे नौकरी करने दी होती तो आज उसका स्वभाव व स्थिति कुछ और ही होती| **"आज निशि का चेहरा इस सामने बैठी लड़की सा चमकता| सताइस साल की उमर में वह पैंतीस की नहीं लगती| हर समय स्थायी हताशा उसके चेहरे पर नहीं होती, लेकिन ये बेहयाई! खतरों को आमंत्रित करता खुलापन! मैं असमंजस में थी|"11** इस तरह की तुलना कर लेखिका स्वयं उलझन में पड़ जाती है कि क्या उसने अपनी बेटी को स्वतंत्रता न देकर सही किया या नहीं| उसकी बेटी निशि आज दब्बू बन गई है और यह तीनों युवा पूर्ण रूप से स्वतंत्र सोच रखने वाले हैं|

अत: मनीषा कुलश्रेष्ठ की यह कहानी 'बिगड़ैल बच्चे' समाज को संदेश देती है कि युवा पीढ़ी को उसके पहनावे, भाषा, जीवन शैली के आधार पर नहीं पहचाना जाना चाहिए बल्कि उनके व्यवहार को देखना चाहिए| आज भले ही युवा वर्ग पुरानी पीढ़ी से भिन्न नजर आते हैं, लेकिन उनके हृदय में संवेदना, सहयोग, सामाजिक जिम्मेदारी व नैतिक चेतना जैसे सशक्त मूल्य आज भी उन्हें भारतीय संस्कारों से जोड़ ही देते हैं| यही उच्च मूल्य, आदर्श नवीन समाज बनाने में युवा वर्ग को सहयोगी पाते हैं| यह कहानी कोई नैतिक उपदेश नहीं देती बल्कि युवा वर्ग का दर्पण समाज के समक्ष पेश करते हुए समाज को इस वर्ग के प्रति सोच में बदलाव लाने को प्रेरित करती है तथा मूल्यबोध के आधार पर युवा वर्ग के संस्कारों की पुनर्खोज को प्रोत्साहन देती है|

संदर्भ ग्रंथ:-

1. डॉ. हुकुमचंद राजपाल, आधुनिक काव्य में नवीन जीवन मूल्य, पृष्ठ संख्या 581
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी, अशोक के फूल, पृष्ठ संख्या 07
3. डॉ. प्रमोद पाटिल, निर्मल वर्मा के कथा साहित्य में जीवन मूल्य, पृष्ठ संख्या 65
4. मनीषा कुलश्रेष्ठ, गंधर्व-गाथा, पृष्ठ संख्या 105
5. प्रतियोगिता दर्पण, नवम्बर 2017, पृष्ठ संख्या 102
6. मनीषा कुलश्रेष्ठ, गंधर्व-गाथा, पृष्ठ संख्या 111
7. वही, पृष्ठ संख्या 113
8. डॉ० ऋतु मंजरी, समकालीन कहानी में युवा चेतना, पृष्ठ संख्या 136
9. मनीषा कुलश्रेष्ठ, गंधर्व-गाथा, पृष्ठ संख्या 105 10.वही, पृष्ठ संख्या 105
10. वही, पृष्ठ संख्या 108

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 52-55
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

रमणिका गुप्ता की कहानी 'जिंदा रहने के लिए' में आदिवासी जीवन का संघर्ष

मनीषा देवी
शोधार्थी हिंदी-विभाग,
महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक

20वीं सदी के अंतिम दशक में उत्पन्न हुआ आदिवासी विमर्श आदिवासियों के लिए अस्मितामूलक व अस्मितामूलक विषय है| आज के दिन आदिवासी समाज, उनके जीवन, व्यवहार और उनकी विचारधाराओं पर अनगिनत बातें हो रही है| आदिवासी साहित्य पर हो रहे नित्य नए शोध व किताबें उनके विषय में भ्रम उत्पन्न कर रहे हैं| जिससे उनकी समस्याएँ सुलझाने की बजाय और ज्यादा उलझती जा रही है| उनकी सबसे बड़ी दिक्कत इस समाज को बाहरी समाज व सरकार के द्वारा ना समझ पाना है| सरकार का उनके प्रति अपरिचित व उपेक्षापूर्ण रवैये के कारण ही उनके जल, जंगल और जमीन छीनकर यहाँ विकास के मॉडल तो खड़े कर दिए गए हैं, लेकिन इन विकास मॉडलों का इन लोगों पर क्या प्रभाव पड़ा है| इस विषय पर जरा भी सोच विचार नहीं किया जा रहा है| इन विकास परियोजना में उनकी सांस्कृतिक पहचान तो नष्ट हो ही गई है, इसके साथ ही इनके अस्तित्व की रक्षा का प्रश्न भी खड़ा हो रहा है| यदि यह लोग अपनी पहचान बचाते हैं तो अस्तित्व पर संकट है और यदि अस्तित्व को बरकरार रखते हैं तो सांस्कृतिक पहचान समाप्त हो जाती हैं| **"आज का आदिवासी विमर्श अस्तित्व और अस्मिता का विमर्श है| यह एक ऐसा विमर्श है जिससे इस समुदाय की परंपरा, रूढ़ियाँ, संस्कृति, अन्याय, अत्याचार, अपमान, शोषण सभी कुछ बयान हो रहा है|"1** इस तरह आदिवासी विमर्श व साहित्य वन में जीवन जीने वाले लोगों की संस्कृति, अभाव, अतीत व वर्तमान विषयों पर किया गया विचार या अध्ययन है| यह लोग समाज की मुख्य धारा से इतने कटे हुए हैं कि सरकार को इनके दर्द का भान तक नहीं है| यह लोग एक, दो व्यक्ति नहीं बल्कि पूरा समुदाय है, जो झारखंड, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, दार्जिलिंग, राजस्थान व मध्य प्रदेश आदि राज्यों में अपना गुर्जर बसर करते हैं| यह यहाँ के मूल निवासी हैं| यदि इन्हें मिटा भी दिया जाए, तो समाज या सरकार में कुछ भी बदलने वाला नहीं है| लेकिन मानवीय दृष्टिकोण से यह भारत के मूल निवासी, प्रकृति वासी है और रहेंगे| इनका अस्तित्व बहती धारा या समुद्र की लहरों की भांति अडिग है| **"आदिवासी शब्द का अर्थ है- किसी क्षेत्र के मूल निवासी जो आदिकाल से किसी स्थान विशेष में रहते चले आ रहे हैं| माना जाता है कि आदिवासी भारतीय प्रायद्वीप के सबसे प्राचीन बाशिन्दे या मूल निवासी हैं|"2** वनांचल में रहने वाला

यह समुदाय प्रकृति को ही अपनी धरोहर समझता है| वह इसके लिए पूज्यनीय है| डॉ. विनायक आदिवासियों की परिभाषा करते हुए बताते हैं **"प्रकृतिनिष्ठ और प्रकृति पर निर्भर मनुष्य, भक्षण की खोज में मारा-मारा भटकता मनुष्य पशुपत जीवन यापन करने वाला मनुष्य आदिवासी है|"3** इस तरह आदिवासी विमर्श इनकी पहचान, अस्तित्व, इनके खिलाफ जारी प्रतिरोधों तथा उनकी समस्याओं का साहित्य है| अर्थात यह विमर्श हमारे देश के मूल निवासियों और उनके वंशजों के प्रति समाज में होने वाले भेदभाव का विरोधी है, इसके साथ ही यह जंगल, जमीन व जीवन रक्षा के लिए उनके अधिकारों का सवाल उठता है|

निर्मला पुतुल, वंदना टेटे, हरिराम मीणा, एलिस एक्सा, अनुज लगुन, महादेव गुप्ता के साथ आधुनिक लेखिका रमणिका गुप्ता आदिवासी जीवन को हाशिए से उठा चेतना के धरातल पर लाती है| इनका साहित्य आदिवासियों के जीवन संघर्ष, सभ्यता, संस्कृति, अधिकारों, आंदोलनों के साथ-साथ उनकी गरिमा को समाज में सम्मानजनक स्थान दिलाने के लिए कार्यरत है| उन्होंने आदिवासी जीवन को निकटता से देखा और उनके दर्द को महसूस किया है इनकी कहानी **'जिंदा रहने के लिए'** आदिवासी जनजीवन के अस्तित्व संघर्ष का मार्मिक दस्तावेज है| यह कहानी उनके कहानी संग्रह 'बहू-जुठाई' में संकलित है| इस कहानी में रमणिका गुप्ता ने आदिवासी समुदाय की गरीबी, भूख, प्यास, विस्थापन, जंगल-जमीन से बेदखली, मेहनत, मजबूरी और सांस्कृतिक अस्तित्व के संकट को यथार्थवादी तरीके से पेश किया है| वे इस कहानी के माध्यम से समाज को बताती हैं कि आदिवासी समुदाय का संघर्ष, पहचान, संस्कृति व मानवीय गरिमा का ही नहीं बल्कि आजीविका व भोजन का भी है| यह कहानी इस समाज को सामाजिक न्याय, मानवाधिकार व लोकतंत्रिकता से जुड़े मूल्यों पर विचारने का अवसर प्रदान करती है|

रमणिका गुप्ता की कहानी 'जिंदा रहने के लिए' आदिवासी जीवन का प्रतिबिंब है| यह कहानी इस समुदाय के मेहनतकश, आत्मसम्मानी और प्रकृति प्रेमी स्वरूप को निखारती हैं| यह कहानी पटना व राँची के बीच स्थित मुरी स्टेशन पर घटी घटना तथा गौतम धार पहाड़ियों और जंगल के आदिवासियों के जीवन की कहानी हैं| इस कहानी में दिखाया गया है कि जब आदिवासी लोग ट्रेन पर चढ़ जाते हैं तो वहाँ पहले से ही बैठे यात्रियों को परेशानी होती है और वह उन्हें वहाँ से उतारने के लिए टी०टी० को घूरते हैं| टी०टी० और आदिवासियों के बीच समझौता है| वह कभी भी टिकट लेकर नहीं चढ़ते बल्कि टी०टी० को आठ आने दे देते हैं क्योंकि पूरा किराया यदि वह दे देते तो उनको अपने व्यापार में से कुछ भी प्राप्त नहीं होता और भूखे मरने की नौबत उनके सामने उत्पन्न हो जाती| जब टी० टी० आदिवासियों को उतारना चाहता है, तो आदिवासियों के साथ उसकी बहस हो जाती है और हार स्वीकार कर हाथ जोड़कर उनसे अपनी मजबूरी बताता है कि आज साहब गाड़ी में सवार है| उसकी नौकरी को खतरा हो सकता है| इस तरह बच्चों और औरतों को छोड़कर जवान आदिवासी नीचे उतर जाते हैं| लेखिका और टी० टी० की आपसी बातचीत, आदिवासी महिला और लेखिका के बीच हुई बातचीत, और टी० टी० पर कसे आदिवासियों के ताने, आदिवासियों द्वारा बताई गई मजबूरी और सरकारी नियम-कानून इस कहानी में आदिवासियों की पहचान, उनकी मजबूरी और उनके संघर्षों को संवेदनशीलता के साथ बयां करती हैं| भूख, बेरोजगारी व विस्थापन जैसी समस्याएँ इस कहानी को और भी मार्मिकता की ओर ले जाती हैं| इस कहानी में यात्री इन आदिवासी को केवल इसलिए उतारना चाहते हैं क्योंकि वे सभ्य नहीं दिखाई देते| **"एक और उनसे यह उपेक्षा रखी जाती है कि वे आर्थिक और सामाजिक रूप से प्रबुद्ध समाज के साथ घुल-मिल जाने का स्वागत करें| दूसरी और उनकी ऐसी दुर्गति इस मायने में बनी हुई है कि वे आर्थिक विकास और राष्ट्रीय सुरक्षा के लक्ष्यों में अड़चन डालने वालों के तौर पर देखे जाते हैं|"4** जब सरकार ने उनसे विकास के नाम पर उनके घर, जमीन, जंगल सब कुछ छीन लिया है, तो ऐसे में उनके सामने भूख का संकट है तो वह सभ्य कैसे लग

सकते हैं| आदिवासी समुदाय के लिए जंगल, जमीन, प्रकृति केवल संसाधन नहीं बल्कि उनके जीवन, भोजन व संस्कृति के आधार है| लेखिका और टी० टी० के बीच हुई आदिवासियों के विषय में बातचीत पर जब लेखिका उन्हें जंगली कहती है, तो वह कहता है **"ये लोग जंगली नहीं हैं| जीने की कला इन्हें खूब आती है| हम सभ्य लोगों से कहीं ज्यादा सभ्य है ये लोग|... अब ये जीने के लिए जद्दोजहद कर रहे हैं बस|"5** यह लोग बेवजह किसी को नुकसान नहीं पहुँचाते| भले ही यह लोग दिखने में सुंदर न हो लेकिन यह लोग बहुत ही मासूम होते हैं ।बहारी दुनिया के छल-कपट, दिखावे से इनका कोई वास्ता नहीं है| गरीबी और भूख से व्याकुल यह तो केवल अपने जीवन के लिए संघर्ष कर रहे हैं|

अब इन लोगों के पास न खाने के लिए कुछ है न कमाने के लिए| इनसे इनके रोजगार छीन लिए गए हैं| कहानी में जब एक हँडिया बेचने वाली औरत ट्रेन के फर्स्ट क्लास डिब्बे में चढ़ जाती है तो सभी पैसेंजर उसे नफरत भरी नजरों से देखते हैं, अपने नाक को किसी कपड़े से ढक लेते हैं| तब लेखिका हँडिया बेचने वाली औरत को कहती है कि तुम कोई दूसरा रोजगार क्यों नहीं करती| वह कहती है कि गाँव में अब कौन से रोजगार बचे हैं| सरकार ने सभी रोजगार कब्जा कर लिए हैं| अब उनके पास न घर है न खाने के लिए संसाधन और नहीं रोजगार| **"पूरान बख्त में तो हमनी सब परिवार बढ़लै पर जंगल की ज़मीन जोत फोड़ के खेतवा बना लेत रहे, अब तो उन पर भी रोक लगा देलै है सरकार| सभै चीज़ खातिर शहर में आए पड़े, बीहन (बीज) खातिर भी, खाद खातिर भी बेचे खातिर भी बाजार करे खातिर भी और रोज़गार खोजें खातिर भी अब तो जहान से सभै जंगल उजड़ले जाते हैं|6** इस तरह सरकार ने न केवल उनके खेत छीन लिए हैं बल्कि वहाँ औद्योगीकरण के नाम पर उनके घर रूपी जंगल भी नष्ट कर दिए हैं| उनके खाने, रहने व रोजगार की किसी को भी कोई चिंता नहीं है| सरकार, ठेकेदार, अधिकारी उनसे जितना फायदा होता है लूट लेते हैं| इस तरह हो रही लूट और सरकारी कानून के विषय में हँडिया बेचने वाली कहती है **"सरकार तो नयका-नयका (नया-नया) कानून गढ़ देयल है| दारू-पीना, महुआ चुआना बेचना बंद कर के गरीबन के जिंदा जी मर (मार) देयल है| भला हमनी सब कैसन जीबैय (जिएँ)?"7**इस कहानी में वह यह भी बताती है कि जिस प्रकृति जंगल महुआ पर उनका अधिकार था अब पूरी तरह सरकार या अधिकारियों ने उस पर अपना कब्जा जमा लिया है| वह बताती है कि उसने और उसके बच्चों ने पूरी रात महुआ इकट्ठा किया और तेरह टोकरी भरी| उसमें से उसे केवल एक ही टोकरी प्राप्त हुई| बाकी बारह टोकरियां सरकारी अधिकारी ने ले ली| जंगल सिपाही ने जोर जबरदस्ती महुआ के गाछ उनसे ले लिए हैं| जब लेखिका उससे कहती है कि तुम गाँव में महुआ, दारू या हँडिया क्यों नहीं बेचती तो वह यहाँ की गरीबी के विषय में बताती है कि गाँव में किसी के पास भी पैसा नहीं है| जिसके पास था वह शहर चले गए| अब केवल वही लोग गाँव में रहते हैं, जो रोज कमाते और खाते हैं| फिर वह कहती है कि जो अमीर होगा वह अंग्रेजी पिएगा हँडिया या महुआ नहीं| इस तरह उनका शोषण होने के साथ-साथ विस्थापन को भी वे मजबूर हो गए हैं| इन आदिवासियों ने अपने मनोरंजन के लिए जंगल नहीं छोड़े हैं बल्कि बाहरी दुनिया में उन्हें छोड़ने के लिए मजबूर किया|

यह लोग मासूम है, बहारी दुनिया से भिन्न है, इनके कायदे अलग हैं, इनकी सोच-विचार भिन्न है| यह लोग शिक्षित नहीं है इसलिए इनके पास केवल भूख की बातें हैं, संघर्ष, मजबूरी की बातें हैं इंसाफ या अधिकार की नहीं| **"जंगल से लकड़ी काटना, कोलियरी से कोयला चुराना महुआ चुआना, हँडिया बेचना घूस देकर बिना टिकट जाना और कोड़ी के माल अपना सम्मान बाजार में बेचकर आना, उनके जीने की मजबूरी है|"8** इनके रोजगार, शिक्षा, अधिकार, समानता व भूख की किसी को कोई फिक्र नहीं| पहले ये लोग चोरी जैसे कार्य को बुरा समझते थे| यह लोग ऐसा करने से भी डरते थे, लेकिन अब यह लोग संगठित हो गए हैं, विद्रोह करते हैं| यह परिवर्तन उनके संघर्षों और समस्याओं का परिणाम है| आदिवासी साहित्य आदिवासियों की अस्मिता और

समस्याओं के खिलाफ प्रतिरोध करने को उनके साथ खड़ा है| गंगा सहाय मीणा आदिवासी विमर्श में सही कहती हैं कि **"यह उस परिवर्तनकामी चेतना का रचनात्मक हस्तक्षेप है, जो देश के मूल निवासियों के वंशजों के प्रति किसी भी प्रकार के भेदभाव का पुरजोर विरोध करती है तथा उनके जल, जंगल, जमीन और जीवन को बचाने के हक में उनके 'आत्मनिर्णय' के अधिकार के साथ खड़ी होती है|"9** अनेक शोधों और पुस्तकों से ज्ञात होता है कि आदिवासियों का जीवन बहुत ही संघर्षमयी है|

ये लोग बड़ी मुश्किल से अपना गुजर-बसर कर पाते हैं यदि उसमें भी बाधा उत्पन्न हो तो ये लोग हिंसात्मक आंदोलन पर उतारू हो जाते हैं| इस कहानी में आदिवासियों के विद्रोह के विषय में संकेत दिए गए हैं| इस कहानी में जब टी० टी० आदिवासियों को ट्रेन से उतारना चाहता है तब एक आदिवासी बुढ़िया ने उससे कहा **"देख टी० टी० बाबू ये पुलसिया के रोक दे| ज्यादा चर-चर करी तो अभिए इंकलाब बोल देव हमनो सब| नारा लगा जइब| देख हमनी सब के डर नहीं खे| रेजर-फरेस्टर मिल के हमने सब के पिछले साल गाड़ी भर के जेल भेज ढेले| का बिगाड़ लेले हमार? तोर पत्थल ढेला खाप के मन हो तो बोल, तुरैतै चल जैंते पत्थल? फिर हमर के दोषन देबै के|"10** यह लोग असभ्य, जंगली दिखते हैं, विद्रोह करते हैं, जान से मार देते हैं, मृत्यु से घबराते नहीं है| यह लोग ऐसा करते हैं क्योंकि उनके सामने अन्य कोई विकल्प मौजूद नहीं है| यह केवल उनकी अपनी पहचान और अस्तित्व को समाज से बचाने के लिए जद्दोजहद है| बाहरी समाज ने उनके समाज में घुसने की न केवल कोशिश की है बल्कि उनके अस्तित्व को समाप्त करने का कार्य भी किया है| अब यह लोग स्वयं को बचाए रखने के लिए मजबूर हैं|

अत: यह कहानी आदिवासियों के जीवन के लिए संघर्ष, पहचान व अधिकार की कहानी है, जो आर्थिक पक्ष ही नहीं दिखाती बल्कि सामाजिक,सांस्कृतिक व राजनीतिक पक्ष को भी उजागर करती है| यह कहानी पाठकों को सोचने के लिए प्रेरित करती है कि देश का विकास तभी सार्थक है जब इस समुदाय की गरिमा, संस्कृति, अधिकार भी सुरक्षित रहे| यह मासूम आदिवासी भी हमारे ही देश का हिस्सा है| आज जब कुछ पावरफुल लोग या सरकार या अधिकारी आदिवासियों के घर, जमीन, जंगलों व रोजगार पर कब्जा कर रहे हैं तो ऐसे में रमणिका गुप्ता जैसे लेखिका और भी प्रासंगिक बनती हैं| यह कहानी हमें बताती है कि विकास का अर्थ विस्थापन नहीं बल्कि सह-अस्तित्व है|

संदर्भ ग्रंथ:-

1. 1 डॉ. मनोज पांडेय -आदिवासी विमर्श परंपरा के पुनर्पाठ की जरूरत, देशबंधु, 15 जुलाई 2012
2. सं० रमणिका गुप्ता, आदिवासी कौन, पृष्ठ संख्या 29
3. सं. डॉ. मोहन चव्हाण, आदिवासी साहित्य विमर्श, पृष्ठ संख्या 197
4. सं०गंगा सहाय मीणा, आदिवासी और हिंदी उपन्यास(अस्मिता और अस्तित्व का संघर्ष), पृष्ठ संख्या 34
5. रमणिका गुप्ता, बहु-जुठाई, पृष्ठ संख्या 121
6. वही, पृष्ठ संख्या 123-124
7. वही, पृष्ठ संख्या 123
8. वही, पृष्ठ संख्या 118
9. संपादक की कलम से, आदिवासी साहित्य विमर्श गंगा सहाय मीणा, पृष्ठ संख्या 9
10. वही, पृष्ठ संख्या 120

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 56-60
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Idea‟s of the Guru Nanak Dev Ji for Human Rights: Relevance in Democracy

RUPINDER SINGH
ASSISTANT PROFESSOR,
DEPARTMENT POLITICAL SCIENCE, DAV COLLEGE BATHINDA

Abstract
Human rights have an important place in the society. They have provided the opportunities to people, protect his freedom. The Human rights are highly influence within international law and regional institutions. The Sikhism is scientific religion in the world. The history of Sikhism all gurus have fact long time struggle for human rights. The movement was started for providing the rights to people time the birth of Shri Guru Nanak Dev Ji. During the time of Sikh gurus, Human rights had crushed by the Muslim rulers. At this time, Shri Guru Nanak Dev raised his voice against injustice, inequality, exploitation of women, degradation of human values and religious repression. This paper work is an analysis of the Guru Nanak Dev contribution in the human rights to the people and our society development. His idea‟s have significant role played in the growth of the Democracy at present. Moreover, Guru Nanak Dev was a social reformer and political thinker. His ideas were more impacted in the human life. His struggle for securing basic Rights of the people is very significant.

Introduction

The concept of the human rights is very important in the modern democratic period. In Ancient times, it‟s known as a natural right of man like liberty, the right of life and pursuit of happiness. Human rights have come into being since the advent of civilization. Now before understanding the Human Rights the words Human and Right are needed to be understood. The word „Human‟ means belonging to the nature of man or mankind. The word „Right‟ denotes the freedom. Human rights are unthinkable and meaningless without the society. These rights are essential for the development of the human personality and human happiness. The development of civilization, Human rights is integral part of the democratic society (Davidson, T. (1999). Their number of causes and factors are responsible for development the human rights like social, economic and political. The number of documents on human rights, such as the Magna Carta (1215), the English Bill of Rights (1689), the

French Declaration on the Rights of Man and Citizen (1789), and the US Constitution and Bill of Rights (1791) are the written. However, these documents are excluded the women, economic, political and other oppressed class people. This causes, they have demanded to the freedom and self-determination (Soni, k. S, (2014).

In 1469 the birth time of Guru Nanak dev, Lodis dynasty was ruling in all northern India. This is very critical situation in Punjab. Corruption, murders, robberies and injustice were the order of the day. The ruling class Muslim was a lot of influence on other community people. The caste system was played very dangerous role in the human life. The lower-class people were kept from the common wells, education and temples. Ramanand and Kabir criticized of this situation. Namdev had protested against the discrimination with the lower-class people. The people were lost, his freedom, his time. They were poor, ignorant and illiterate and fed on superstition (Mukherjee, R. N (1988). They were ill-treated by their rulers and had completely lost their sense of self-respect. While giving the description of both societies of Hindus and Muslims Bhai Gurdas says, The Hindus have four castes and the Muslims were divided into four sects with jealousy, arrogance and vanity. The Hindu and Muslims were divided into different-different castes. The Hindus caste worshipped the Ganga and Benaras Maa. Another side the Muslim believed into Mecca-Kaaba. Guru Nanak Dev strong advocated human rights for human beings. He is protesting against the Hindu and Muslim castes (Ibid).

The idea's of Guru Nanak for Human beings Gender Equality

Women have played vital role in society and family life. She is an integral part of the society. The women have reflected the cultural, social and spiritual level of the society. The gender inequality has always discrimination with the women. First time Guru Nanak raised voice against the gender inequality. He has favoured in the women‟s rights. Justice, according to Guru Nanak lies in equal rights for both men and women. According to the idea of the guru Nanak gender equality has played a vital role for women to develop his ability in social and economic order. Gender equality is change picture of the society. At present, women have enjoyed equal rights of the men (Kohli, S. S, (1999).

Against Caste system:

Guru Nanak was strongly support the equality for all caste people. The Muslim and Hindu caste people are discriminated with the lower caste people. In 14 century, the Hindu caste system in high level in India. Brahamins believe in the caste system. The Hindu people considered themselves of the high-class. They were never touched the lower caste peoples. Sikh Gurus preached to "Recognize the Lord's Light (Spirit) within all, and do not consider social class or status; there are no classes or castes in the world hereafter." First time Guru Nanak dev established the Langer, a free for all community peoples. Langer is totally free food service in all Gurudwara Sahib. Langer is prepared by the Sikh Sangat and then consumed by them and their guests are sitting at the same level on the floor next to each other since there is nothing lower than the floor. All community people are eating the same food at the same level. Langer is served in all Gurdwara Sahib around the globe twenty-four hours a day. Guru Nanak started Sangat and Pangat system for reducing the caste system. Sikhism is considered all human people equal, caste, religion, color, gender and wealth (Singh, A. Singh, R. (2001).

Against Rituals/Superstitions

The idea of Guru Nanak has totally against superstitions, false rituals, worship of demi-gods and goddesses. He has more stressed only one god, is to be glorified. In this way, he has shown the path of god and truth.

Goodwill for all humanity: SARBAT DAA BHALAA

Guru Nanak dev passed the message of universal brotherhood. He said all people are equal. Guru Nanak dev ji is a strong theme written in the Gurbani as universal brotherhood. In our prayer, we say this line towards the end of daily Ardass," – "Nanak Naam Chardi Kala Tere Bhane Sarbat da bhala", which can be translated as "Nanak asks for „Naam‟ (name of God) with which comes well being, happiness and positive spirit and with your blessings, Lord may everyone in the world prosper and be in peace".

The idea's of the Guru Nanak relevance in Democracy

Guru Nanak dev ji always supports the human rights. He has an emphasis on the sovereignty, freedom, equality and justice for all people. His ideas are more relevant into the modern democracy. In 21 century democracy is the most popular system in the world as it is based on the will of the people. Most of idea is added into the Indian constitution. The Fundamental rights are meant for promoting the welfare state. They have protected the liberty and freedom of the all people. The Fundamental rights are added in the Indian constitution part III and total number of six

Right to Equality (Articles 14-18)

Article 14: Equality before law and Equal protection of laws

This article says that the state shall not deny to any person equality before the law or equal protection of the laws.

Article 15: Prohibition of Discrimination on Certain Grounds

This article defined that the state shall not discriminate against any citizen on grounds only of caste, sex, religion or place of birth.

No citizen shall, on grounds of religion, race, caste, sex, place of birth or any of them, be subject to any disability, liability restriction or condition with regard to: (a) Public restaurants, hotels, access to shops, places of public entertainment.

(b) The use of wells, tanks, bathing ghats, roads and places of public resort maintained wholly or partly out of state funds or dedicated to the use of the general public.

The state is permitted to make any special pro-vision for women and children (Diwan, P. Rajput,

P. (1998).

Article 16: Equality of opportunity in public employment

This article says that the state provides the equal opportunity for all peoples in the matter of appointment to any office. The state has not discriminated with the citizens, on grounds of religion, race, caste, sex, and place of birth or any of them in respect of public employment or office under the state.

Article 17: Abolition of Untouchability

The article of the constitution defined, "Untouchability is abolished in the ground level and its practice in any form is forbidden. The citizens have not right to discrimination with other persons. The enforcement of any disability arising out of Untouchability shall be offence punishment according into the Indian law" (Ibid).

Article 18: Abolition of Title

Right to Freedom (Articles 19-22)

Article 19: This article has guarantees the six fundamental rights for all citizens.

(a) Right to freedom speech and freedom
(b) To assembly peaceably and without arms
(c) To create associations or unions
(d) Right to move freely through-out territory of India
(e) To reside and settlement in any of India.
(f) To practice any profession or to carry on occupation, trade and business

Article 20: Protection in respect of conviction for offences

Article 21: Protection of Life and Personal Liberty

This article has declares that, "No person shall be deprived of his life or personal liberty except according to procedure established by law".

Article 22: Protection against Arrest and Detention **(**Laximikanth, M, (2016).

Right against exploitation (Articles 23-24)

Article 23: Prohibition of traffic in human beings and forced labour **Article 24:** Prohibition of employment of Children in factories **Right to freedom of religion (Articles 25-28)**

Article 25: says that, "all persons are equally entitled to freedom of conscience and free profession, practice and propagation of Religion".

Article 26: of the constitution every person has freedom to manage religious affairs.

Article 27: Freedom from taxation for promotion of a Religion

Article 28: Freedom as to attendance at religious instruction or religious worship in certain educational institutions.

Cultural and Educational Rights (Articles 29-30)

Article 29: Protection of interest of Minorities

Article 30: Right of minorities to establish and administer educational institutions

Right to constitutional Remedies (Article 32) (Ibid).

Relevance:

After this study, Guru Nanak Dev ji idea's more relevant in the modern society. His ideas are also speaking of human beings. In this birth time ruler had discrimination with the people. Guru Nanak dev first time start the movement against rulers and they have demanded give the full rights to people. Present time all world countries have given the full rights to people like freedom, right to speak, right to education, the right to vote and etc.

Conclusion:

In 21 century human rights is a very important play role in developing the society. But in the ancient time people do not enjoy the full rights because the caste system was very high level in this time period. A woman is the major part of the society and family. Another side his condition is very bad. The gender inequality has always discrimination with the women. Guru Nanak Dev ji is a born on 1469. Brahmins believe in the caste system. They have discrimination with the lower level community peoples. But Guru Nanak Dev ji raised the voice against caste system. He has favoured in the women‟s rights. They have played a major role to establish the welfare society. His ideas are more relevant in the modern democracy. All his ideas are mentioned in the Indian constitution and people are enjoying the freedom, justice, equality and more rights

References

1. Davidson, T. (1999). Chamber‟s Twentieth Century dictionary- A to D, p. 468. Soni, k. S, (2014). Human Rights: Concept, Issues, Emerging Problems, p.14. Mukherjee, R. N (1988). A History of Social Thought**,** p.19.
2. Kohli, S. S, (1999). Sikh Ethics, p.55.
3. Singh, A. Singh, R. (2001), Glimpses of Sikh Religion, pp.7-8.
4. Diwan, P. Rajput, P. (1998). Constitution of India, p.78. Laxmikanth, M, (2016). Indian Polity, p. 7.5

CONTACT 9988773785
EMAIL. RUPINDER15POL@GMAIL.COM

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 61-63
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

जीवन मूल्य के सन्दर्भ में ज्ञानप्रकाश विवेक की कहानी 'शिकारगाह' का अध्ययन

डॉ. सुदेश कुमारी
सहायक प्रोफेसर हिंदी,
राजकीय स्नातकोत्तर नेहरू महाविद्यालय झज्जर

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। मनुष्य ने अपने आप को नियंत्रित एवं सुव्यवस्थित रखने हेतु एक संस्था का निर्माण किया। इस संस्था को ही समाज कहा गया।समाज शब्द को परिभाषित करते हुए डॉ.एम.एम. लावनिया ने कहा है "जीवन को व्यवस्थित रूप देने तथा लोगों के पारस्परिक संपर्क से प्रभावित सामाजिक संबंधों की व्यवस्था से ही समाज की उत्पत्ति संभव हुई"1

जीवन मूल्य वे बुनियादी सिद्धांत और आदर्श हैं, जो हमारे आचरण, निर्णयों और समाज के साथ हमारे संबंधों को दिशा देते हैं। जीवन के साथ जुडा शब्द है 'मूल्य' । मूल्य मानव जीवन में जन्मजात होते है। उनका स्वरूप प्रकट करना बड़ा ही दुलर्भ कार्य है। मूल्य शब्द का तात्पर्य है- जीवन मूल्य अर्थात् जीवन के मानदण्ड। मूल्य मानव समाज की सभ्यता एवं संस्कृति के परिचालक तत्व हैं। समाज की उन्नति मानवीय मूल्यों पर ही आधारित होती है। व्यक्ति की प्रतिष्ठा का आकलन उसके जीवन-मूल्यों से किया जाता है। जीवन-मूल्य सफलता के लिए ज़रूरी हैं। संक्षेप में गुणों को मूल्य कह सकते है।

मूल्य की परिभाषा:-

1. **अर्बन** – ''ऐसी कोई भी वस्तू मूल्य हो सकती है जो जीवन को आगे बढाती है और सुरक्षित करती है। ''2

2. **रामधारी सिंह दिनकर के अनुसार**- 'मूल्य आचरण के सिद्धांतों को कहते हैं मूल्य वे मान्यताएं हैं जिन्हें मार्गदर्शक ज्योति मानकर सभ्यता चलती है वह जिनकी उपेक्षा करने वालों को परंपरा अनैतिक या बागी कहती है किंतु कभी-कभी ऐसा होता है कि पुराने मूल्यों की प्रतिष्ठा करने वाले व्यक्ति भगवान बन जाते हैं। अतएव साहित्य में मूल्य का विवेचन असल में नैतिकता और परंपरा का विवेचन बन जाता है"3

प्रत्येक युग के अपने मूल्य होते हैं। मूल्य व्यक्ति के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मूल्यहीन समाज व मूल्यहीन व्यक्ति कभी विकास नहीं कर सकते। मूल्यों की सार्थकता मानवीय व्यवहार और उसके कल्याण में निहित हैं। हम मानव जीवन और व्यवहार के संदर्भ में ही प्रत्येक वस्तु का मूल्यांकन करते हैं। भौतिकवादी संस्कृति

के मोह में मनुष्य अपने कर्तव्य को भुला बैठा है। मूल्य मानव के विवेक को जागृत करते हुए उसे कर्तव्य के प्रति सचेत करते हैं।

हमारा साहित्य भले ही किसी भी भाषा में हो उसमें मूल्यों के दर्शन होते है। साहित्य और मूल्यों का अटूट रिश्ता है। साहित्य में प्राचीन काल से ही मूल्यों का विवरण हम देखते है। प्राचीन काल के साहित्य में हमें भगवान श्रीकृष्ण या आदर्शोन्मुख राम का गुण वर्णन दिखाई देता है। इन रुपों द्वारा आदर्श व्यक्तित्व में धैर्य, नीति, बुद्धि आदि शाश्वत' मूल्य दर्शाये गये है।

मूल्यों में परिवर्तन स्वतंत्रता के बाद की कहानियों में प्रारंभ हो गया था। स्वतंत्रता के बाद व्यक्ति की स्थिति ऐसे व्यक्ति की थी जो एक चौराहे पर खड़ा था और यह नहीं जानता हो कि किधर जाना है। ज्ञानप्रकाश विवेक समाज को साथ लेकर चलने वाले लेखक है। इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है उनकी कहानी शिकारगाह। शिकारगाह कहानी में लेखक जहां स्वस्थ सामाजिक मूल्यों को चित्रित किया है वहीं मूल्यों के परिवर्तन के कारणों पर भी प्रकाश डाला है । "शिकारगाह एक मध्यम वर्गीय परिवार की कहानी है। माता-पिता और तीन भाई। तीनों भाई एक दूसरे से प्रेम करते हैं। हर छोटी-छोटी चीज को मिल बांट कर खाते हैं। जब हम छोटे थे तीनों भाई बाजार जाते, गज्जक खरीदते, बांटते खाते,झगड़ते पड़ते,रूठ जाते।कोई मनाता तो कोई मान जाते। माँ से शिकायत करते। माँ हँस पड़ती। हम भी हँस पड़ते"4

जमीन के भाव में आए उछाल ने एक प्रेम पूर्ण परिवार को बर्बाद कर दिया। कहानी का पात्र जीके इस विषय में कहता है "पिता ने मुझे जमीन जायदाद के बिजनेस में डाल दिया था। ये तब की बात है जब जमीन के रेट बेतहाशा बढ़ने लगे थे।डीडीए ने कई कालोनियां बसाई थीं। करीब एक किला जमीन थी हमारी नई कालोनियों की बगल में गांव के आखिरी छोर पर ऐन सड़क से सटी हुई। पिता चालाक थे। वे जमीन को बेच सकते थे पर उन्होंने इंतजार किया। मेरे दो छोटे भाई चाहते थे जमीन बिक जाये। पिता ने हम तीनों को बुलाकर समझाया,अब जमीन के बेशक चार लाख मिल जाएंगे लेकिन कोई फायदा नहीं होगा। मैं चाहता हूं जमीन सोने के भाव बिके। मैं यहाँ मार्किट बनाऊंगा। बीस- तीस दुकाने बेचूंगा। पचास लाख का धंधा होगा"5

एक पिता और उसकी धन कमाने की लालसा रखने वाली औलाद के कारण रिश्ते टूटते हैं। परिवार जो प्रेम से बंधा था। अब उसके सदस्यों में प्रतिस्पर्धा उभरने लगी थी। 'शिकारगाह' कहानी के दो बेटे पिता से अपना हिस्सा लेकर बर्बाद करते हैं। जीके अपने भाइयों के विषय में कहता है "जमीन का एक- तिहाई टुकड़ा लेकर उन्होंने उसके प्लाट काटे। चार दुकानों की जगह बेची। छ: लड़ाइयां की। दो रिवाल्वर, दो मारुतियां खरीदी। उनकी हेकड़ी में इजाफा हो गया।"6

पैसा संबंधों को बिगाड़ने का कारण बनता है। यह संबंधों के मायने बदलने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।'शिकारगाह' कहानी में टूटते मूल्यों की पराकाष्ठा है। पैसे के लिए एक पिता के दो बेटे उसकी कनपटी पर रिवाल्वर रख देते हैं।पहला जब रिवाल्वर रखता है तो जीके कहता है, "छोटे भाई ने पिता की कनपटी पर रिवाल्वर खेल- तमाशे के लिए नहीं रखा था। सौदेबाजी की थी।बाप के साथ सौदेबाजी। सौदेबाजी में धमकी चार लाख मेज पर रख दे नहीं तो गोली मगज के पार उतार दूंगा..... समझौता एक लाख पर हुआ।"7

इसी प्रकार मझँला भाई भी पैसे प्राप्त करने की कोशिश करता है। जीके उसके विषय में बताता है "अपने देसी कट्टे में गोलियां भरकर बाप श्री की छाती पर रिवाल्वर की नोक रखते हुए बोला सुण या तो छह लाख दे नहीं तो रिवाल्वर का उद्घाटन आज ही हो जाएगा गिनती। गिनती दस तक गिनूंगा।"8

एक परिवार का प्रेम, सहयोग, विश्वास और सम्मान सब टूट कर बिखर जाता है। पिता को बेटों द्वारा मारने की धमकी दी जाती है। उन बेटों को बेटा कहना बेटे शब्द का ही अपमान होगा। वस्तुतः यही आज के समाज का सच है। बेटे पिता को मारने की धमकी ही नहीं देते उसे मारते भी हैं। जब बेटा मारने की धमकी देता है

तो दूसरा सुनता रहता है। वह भी चाहता था कि बाप मर जाये। जीके कहता है कि "मैं चाहता था, गोली चल जाये और गोली चल गयी थी। बाप वहीं ढेर हो गया था।"9

मां-बाप घर की बुनियाद होते हैं। मां-बाप का मरना घर का मरना होता है। किसी घर के मरने और जीने में पैसे की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। घर में सब मेहनत से पैसे कमाते हैं तो सब सुखी रहते हैं। लेकिन बिना मेहनत के आया पैसा झगड़े को न्योता देता है। यह पैसा घर के सदस्यों के साथ घर को भी बर्बाद कर देता है। जीके कहता है कि यहीं से"हां, बाप की मौत से ही हमारे घर ने भी मरना शुरू कर दिया है। मैं शायद गलत कह रहा हूं। हमारे घर ने तब से मरना शुरू कर दिया था, जब हमारे पास भी बिना मशक्कत के अपार पैसा आने लगा था। मां मरते-मरते कह गई थी कि इससे अच्छे होता, तुम दोनों भिखारी होते। यह बैर तो न होता।"10

एक समय था जब भाई-भाई के चेहरे से उसकी स्थिति समझ जाता था। लेकिन अब एक भाई के दुख दूसरे भाई को नौटंकी लगते हैं। भाई का मांगना गुनाह लगता है। यह समय मूल्य के अपकर्ष का समय है। भाई का भाई के ऊपर अधिकार नहीं, विश्वास भी समाप्त हो गया है।

पैसे के कारण एक हंसता खेलता परिवार समाप्त हो जाता है। रिश्तों की मर्यादा बिखर जाती है। एक बाई पिता का हत्यारा बन जाता है तो दूसरा छोटा भाई के पागलपन का कारण। जीके उसे स्वीकार करता है, "हां, वह पागल हो गया था। हो ही नहीं गया था मैंने उसे पागल कर दिया था। अपने सगे, छोटे भाई को वह न मुझे पहचानता था, न अपने आपको लेकिन कुछ चीजें उसके दिमाग में बैठ गई थीं। वह मुझसे खौफ खाने लगा था। अचानक उसने कई सारी चीजें इकट्ठी की। कंघी, शीशा, धूप का चश्मा, एस्ट्रे। उन सब चीजों को उठाकर वह मेरे पास आया, बोला ले, तू ले ले, सब तू ले ले दोस्तों। छोटे भाई के इन आधे अधूरे शब्दों को सुनकर मैं फूट-फूटकर रोया। खूब रोया। वह मुझे हैरान होकर देखता रहा। उसे नहीं मालूम था कि मैं क्यों रो रहा हूं। मैं रो रहा था। आठ सालों में बाप मरा, भाई को उम्रकैद हुई फिर मां मरी। मैं नहीं रोया बिल्कुल भी नहीं। पागल भाई के टूटे-फूटे वाक्य ने मुझे रुला दिया था।"11

वस्तुतः 'शिकारगाह' कहानी के माध्यम से ज्ञानप्रकाश विवेक ने आधुनिक समाज को उसके संपूर्ण महता के साथ चित्रित किया है।आज रिश्तो में सूनापन है। रिश्ते महज औपचारिकता बनकर रह गये हैं। आज का युवा पैसे के पीछे बेतहाशा भाग रहा है जिसका परिणाम है कि रिश्तो का, भावनाओं का,और मूल्यों का पतन हो रहा है।

संदर्भ –

1. डॉ. एम.एम. लावनिया, शशि के. जैन, समाजशास्त्र के सिद्धांत, पृष्ठ संख्या 35
2. अविनाश महाजन,उषा प्रियंवदा की कहानियों में टूटते जीवन मूल्यों का यथार्थ चित्रण,पृ. 34
3. रामधारी सिंह दिनकर, आधुनिक बोध, पृ. 57
4. ज्ञानप्रकाश विवेक, शिकारगाह, पृष्ठ संख्या 146
5. वही, पृष्ठ संख्या 147
6. वही, पृष्ठ संख्या 147
7. वही, पृष्ठ संख्या 150
8. वही, पृष्ठ संख्या 151
9. वही, पृष्ठ संख्या 152
10. वही, पृष्ठ संख्या 151
11. वही, पृष्ठ संख्या 158

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 64-67
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

गिरीश कारनाड के नाटक 'पुष्प' में मिथकीय प्रयोग : भक्ति, कामना और आधुनिक चेतना

राहुल
शोधार्थी,
हिंदी विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय

भारतीय साहित्य और संस्कृति में मिथक केवल देवताओं तथा अलौकिक घटनाओं की कथा नहीं है। वह किसी समाज की सामूहिक स्मृति, आस्था और सांस्कृतिक अनुभव का भी प्रतिनिधित्व करता है। आधुनिक साहित्यकारों ने मिथक को उसके पारंपरिक अर्थ में स्वीकार करने के बजाय उसके भीतर छिपे प्रश्नों को वर्तमान जीवन के संदर्भ में देखने का प्रयास किया है। गिरीश कारनाड इसी परंपरा के महत्त्वपूर्ण नाटककार हैं। उनके नाटकों में मिथक और इतिहास वर्तमान मनुष्य की समस्याओं को समझने के उपकरण बन जाते हैं। 'पुष्प' इसी प्रक्रिया का उल्लेखनीय उदाहरण है। यह नाटक कर्नाटक में प्रचलित वीरन्ना की लोककथा से प्रेरित है। कारनाड ने इस लोककथा को एक नाटकीय एकालाप का रूप दिया और कथा के चमत्कारिक पक्ष से अधिक उसके मानवीय तथा मनोवैज्ञानिक पक्ष को महत्त्व दिया।[1] नाटक का पुजारी शिव का अनन्य भक्त है। वह शिवलिंग को फूलों से सजाता है और पूजा को केवल धार्मिक कर्तव्य नहीं, बल्कि व्यक्तिगत अनुराग के रूप में अनुभव करता है। चंद्रावती के आगमन के बाद उसके जीवन में कामना प्रवेश करती है। इसके परिणामस्वरूप उसका धार्मिक विश्वास, वैवाहिक संबंध और सामाजिक प्रतिष्ठा एक-दूसरे से टकराने लगते हैं। यही टकराव नाटक के मिथकीय अर्थ को निर्मित करता है।

मिर्चिया एलिएदे ने मिथक को पवित्र घटना के आख्यान के रूप में देखा है। मिथक मनुष्य को उस पवित्र समय से जोड़ता है जिसमें देवता या दैवी शक्ति किसी निर्णायक कार्य का संपादन करती है।[2] 'पुष्प' में शिवलिंग के प्रति पुजारी की आस्था इसी पवित्र चेतना पर आधारित है। उसके लिए शिव केवल मंदिर की मूर्ति नहीं हैं, बल्कि जीवंत उपस्थिति हैं। रोलां बार्थ के अनुसार मिथक सामान्य संकेतों को एक दूसरे स्तर का अर्थ प्रदान करता है।[3] इस दृष्टि से 'पुष्प' में फूल का रूपांतरण अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। आरंभ में फूल पूजा की वस्तु है, बाद में वही प्रेम और देह का अलंकरण बनता है और अंततः धार्मिक संकट का प्रमाण बन जाता है। वस्तु वही रहती है, लेकिन उसका अर्थ बदल जाता है। नॉर्थ्रोप फ्राय ने साहित्य में मिथकीय संरचनाओं और आद्यरूपों की पुनरावृत्ति पर बल दिया है।[4] 'पुष्प' में भक्त और देवता, निषिद्ध इच्छा, संकट, परीक्षा तथा चमत्कार जैसी संरचनाएँ मौजूद हैं, लेकिन

कारनाड उन्हें आधुनिक मनोवैज्ञानिक संघर्ष से जोड़ देते हैं। इस प्रकार मिथकीय ढाँचा आधुनिक संवेदना का माध्यम बन जाता है।

'पुष्प' की कथा का आधार वीरन्ना की लोककथा है। कर्नाटक की लोकपरंपरा में प्रचलित इस कथा में मंदिर के पुजारी, गणिका, राजा और शिवलिंग से संबंधित चमत्कार प्रमुख हैं। आलोचनात्मक अध्ययनों में यह भी बताया गया है कि टी. आर. सुब्बन्ना के उपन्यास हंसगीत में वीरन्ना की कथा को साहित्यिक रूप दिया गया था।[5] कारनाड इस लोककथा को आधुनिक रंगमंच के लिए पुनर्गठित करते हैं। उनका उद्देश्य लोकविश्वास की सत्यता सिद्ध करना नहीं है। वे यह दिखाते हैं कि लोकविश्वास मनुष्य के जीवन में किस प्रकार नैतिक और मनोवैज्ञानिक शक्ति प्राप्त करता है। पुजारी का संकट इसी विश्वास से उत्पन्न होता है। वह शिव को बचाने के लिए नहीं, अंततः अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा बचाने के लिए भी संघर्ष करता है। इस प्रकार लोककथा का चमत्कार आधुनिक मनुष्य के अपराध-बोध और आत्मसंघर्ष का रूप ग्रहण करता है। कारनाड की मौलिकता यहीं दिखाई देती है कि वे लोककथा को उसके बाहरी चमत्कार से हटाकर उसके भीतर छिपे मनुष्य तक पहुँचते हैं।

पुजारी नाटक का सबसे जटिल पात्र है। शिव के प्रति उसकी भक्ति गहरी और आत्मीय है। वह शिवलिंग को फूलों से सजाने में आनंद अनुभव करता है। लेकिन चंद्रावती के सौंदर्य के संपर्क में आने के बाद वही सौंदर्यबोध कामना में बदल जाता है। चंद्रावती जब पुजारी से अपने शरीर को फूलों से सजाने के लिए कहती है, तब नाटक में एक महत्त्वपूर्ण अर्थ-परिवर्तन घटित होता है। जिस कला का प्रयोग पुजारी देवता की सेवा में करता था, वही अब स्त्री के शरीर के लिए प्रयुक्त होती है। यहाँ धार्मिक और लौकिक सौंदर्य के बीच की सीमा धुँधली हो जाती है। प्रफुल्ल डी. कुलकर्णी ने 'पुष्प' में भक्ति, यौन इच्छा और पारिवारिक दायित्व के संघर्ष को महत्त्वपूर्ण माना [२] तथा नाटक के चमत्कारिक पक्ष को जादुई यथार्थ की दृष्टि से देखा है।[6] मेरी दृष्टि में पुजारी का संकट केवल धर्म बनाम कामना का संकट नहीं है। उसकी वास्तविक समस्या अपनी दो अलग पहचान—भक्त और मनुष्य—को एक साथ स्वीकार करने की असमर्थता है।

चंद्रावती को केवल गणिका के रूप में देखना नाटक के अर्थ को सीमित कर देता है। वह पुजारी की इच्छा की निष्क्रिय वस्तु नहीं है। वह स्वयं अपनी इच्छा व्यक्त करती है और पुजारी की धार्मिक कला को अपने शरीर के सौंदर्य से जोड़ती है। उसका पुजारी से अपने शरीर को फूलों से सजाने का आग्रह नाटक के सबसे अर्थपूर्ण प्रसंगों में है। यहाँ शिवलिंग और स्त्री-देह के बीच एक अप्रत्यक्ष समानता निर्मित होती है। दोनों को वही फूल सजाते हैं। यह समानता धार्मिक व्यवस्था की उस धारणा को चुनौती देती है जिसमें देवता के लिए प्रयुक्त वस्तु को पवित्र और देह को सांसारिक माना जाता है।

कारनाड इस स्थिति का कोई नैतिक निर्णय नहीं देते। वे केवल यह दिखाते हैं कि मनुष्य की सौंदर्य-दृष्टि और धार्मिक चेतना हमेशा अलग-अलग खानों में नहीं रहतीं। यही मिश्रण पुजारी के चरित्र को त्रासद बनाता है।

'पुष्प' का शीर्षक स्वयं नाटक की प्रतीकात्मक संरचना की ओर संकेत करता है। फूल यहाँ केवल सजावट की वस्तु नहीं हैं। वे नाटक के विभिन्न स्तरों को जोड़ने वाला केंद्रीय प्रतीक हैं। पुजारी फूलों को शिव को अर्पित करता है। चंद्रावती उन्हीं फूलों के माध्यम से अपने शरीर को सजवाती है। इसके बाद वही फूल फिर शिवलिंग पर पहुँचते हैं। इस पूरी प्रक्रिया में फूल पवित्रता और कामना के बीच यात्रा करते हैं। इसीलिए उनका अर्थ किसी एक स्थिर श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। फूल का यह अर्थ-परिवर्तन बार्थ की मिथक संबंधी अवधारणा से जोड़ा जा सकता है। सामान्य वस्तु सांस्कृतिक अर्थ ग्रहण करके मिथकीय संकेत बन जाती है।[7] 'पुष्प' में फूल पुजारी के भीतर चल रहे संघर्ष का बाहरी प्रतीक भी है। वह जिस वस्तु से देवता की सेवा करता है, वही वस्तु उसके निजी अपराध को भी सामने लाती है।

पुजारी की पत्नी का चरित्र नाटक के नैतिक पक्ष को समझने में महत्त्वपूर्ण है। वह पति के शिव के प्रति अत्यधिक समर्पण को अपने वैवाहिक अधिकारों के विरुद्ध अनुभव करती है। गणिका चली गई थी उसकी जगह शिवजी ने ले ली थी।[8] यह कथन नाटक के भीतर गहरी विडंबना पैदा करता है। इसके भीतर पत्नी की उपेक्षा और असुरक्षा छिपी है। पुजारी के लिए शिव आराध्य हैं, लेकिन पत्नी की दृष्टि से वही आराध्य उसके पति के जीवन में उसके स्थान को कम कर रहा है।

बाद में जब चंद्रावती से जुड़े फूल शिवलिंग पर चढ़ते हैं, तब धार्मिक पवित्रता और वैवाहिक नैतिकता दोनों संकट में पड़ जाते हैं। इस प्रसंग से कारनाड यह संकेत देते हैं कि पवित्रता कोई पूर्ण और स्थिर अवधारणा नहीं है; उसका अर्थ व्यक्ति की स्थिति और दृष्टिकोण के अनुसार बदल सकता है।

राजा, बाल और मिथक की परीक्षा

नाटक का चरम तब आता है जब राजा को दिए गए फूलों में एक लंबा बाल दिखाई देता है। राजा का प्रश्न है—

"मुझे पता नहीं था कि प्रभु के लंबे बाल हैं!" [9]

यह प्रश्न पुजारी के लिए संकट का कारण बन जाता है। वह जानता है कि बाल चंद्रावती से संबंधित है, लेकिन अपनी प्रतिष्ठा बचाने के लिए उत्तर देता है—

"अगर हम श्रद्धा से मानें कि प्रभु के लंबे बाल हैं, तो उनके लंबे बाल होंगे।" [10]

यही संवाद नाटक की मिथकीय संरचना की कुंजी है। पुजारी का कथन प्रारंभ में आत्मरक्षा के लिए कहा गया असत्य है, लेकिन बाद में वही कथन चमत्कार के रूप में सत्य सिद्ध होता है।

यहाँ कारनाड मिथक को सत्य और असत्य के बीच के किसी सरल विभाजन में नहीं रखते। मिथक का सत्य वैज्ञानिक प्रमाण का सत्य नहीं है, लेकिन वह मनुष्य और समुदाय के विश्वास में वास्तविक प्रभाव उत्पन्न करता है। पुजारी का कथन इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि विश्वास केवल किसी सत्य को स्वीकार नहीं करता, बल्कि कई बार सत्य का अनुभव भी निर्मित करता है।

पुजारी के कथन के बाद शिवलिंग पर लंबे बाल दिखाई देते हैं। इस घटना के साथ नाटक अचानक अलौकिक क्षेत्र में प्रवेश करता है। किंतु कारनाड इसे किसी अलग काल्पनिक संसार में नहीं रखते। मंदिर, राजा, पत्नी और पुजारी सभी अपने सामान्य सामाजिक संदर्भ में ही उपस्थित रहते हैं।

कुलकर्णी ने इसी सम्मिश्रण को जादुई यथार्थ के संदर्भ में समझने का प्रयास किया है।[6] मेरी दृष्टि में इस चमत्कार की वास्तविक शक्ति इस बात में है कि वह दर्शक को निश्चित निष्कर्ष तक पहुँचने नहीं देता। क्या शिव ने पुजारी की रक्षा की? क्या यह आस्था का चमत्कार है? क्या मिथक ने स्वयं अपने लिए प्रमाण निर्मित कर लिया? नाटक इन प्रश्नों का अंतिम उत्तर नहीं देता।

चमत्कार पुजारी को सामाजिक रूप से बचा लेता है, लेकिन उसके भीतर का अपराध-बोध समाप्त नहीं करता। यही 'पुष्प' की सबसे गहरी विडंबना है। समाज के लिए वह भक्त और चमत्कार का पात्र बन सकता है, लेकिन अपने भीतर वह अपनी इच्छा और कर्म से जूझता रहता है। 'पुष्प' में गिरीश कारनाड का मिथकीय प्रयोग मूलतः आधुनिक मनुष्य की खोज है। लोककथा को आधार बनाकर वे धर्म, देह, इच्छा, विवाह, सामाजिक प्रतिष्ठा और व्यक्तिगत नैतिकता के प्रश्नों को एक ही नाटकीय संरचना में समेटते हैं।

फूल इस संरचना का केंद्रीय प्रतीक है। वह शिव की पूजा से चंद्रावती के शरीर तक और वहाँ से फिर शिवलिंग तक पहुँचता है। इस यात्रा में वह पवित्रता और अपवित्रता की स्थापित सीमाओं को चुनौती देता है। पुजारी का चरित्र इसी द्वंद्व का मानवीय रूप है। वह भक्त है, लेकिन इच्छा से मुक्त नहीं; वह पति है, लेकिन प्रेम और कामना के सामने

अस्थिर हो जाता है। राजा और पुजारी के संवाद में मिथक का दार्शनिक अर्थ सबसे स्पष्ट होता है। "अगर हम श्रद्धा से मानें कि प्रभु के लंबे बाल हैं, तो उनके लंबे बाल होंगे। यह कथन केवल संकट से बचने का उपाय नहीं, बल्कि पूरे नाटक की वैचारिक धुरी है। मिथक यहाँ किसी पुराने विश्वास की पुनरावृत्ति नहीं, बल्कि विश्वास द्वारा निर्मित अर्थ का रूप है।

इस प्रकार 'पुष्प' में कारनाड मिथक को आधुनिक जीवन से जोड़ते हुए यह स्थापित करते हैं कि मनुष्य की आस्था, इच्छा और नैतिकता अलग-अलग संसार नहीं हैं। वे एक-दूसरे को लगातार प्रभावित करती हैं। इसी कारण 'पुष्प' का मिथकीय संसार अतीत में बंद नहीं रहता, बल्कि आधुनिक मनुष्य की चेतना में प्रवेश करता है। यही इसकी साहित्यिक और नाटकीय सार्थकता है।

संदर्भ

1. कारनाड , गिरीश, अनु. पद्मावती राव, बिखरे भीम और पुष्प, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2020
2. एलिएदे, मिर्चिया, मिथक और यथार्थ, न्यूयॉर्क : हार्पर एंड रो, 1963
3. बार्थ, रोलां, मिथकशास्त्र, ऐनेट लेवर्स द्वारा अनूदित, लंदन : जोनाथन केप, 1972
4. फ्राय, नॉर्थ्रॉप, आलोचना का शरीर-विज्ञान : चार निबंध। प्रिंसटन : प्रिंसटन विश्वविद्यालय प्रेस, 1957
5. धरवाड़कर, अपर्णा भार्गव, "भूमिका।" गिरीश कारनाड , संकलित नाटक, खंड 2 नई दिल्ली : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2005
6. कुलकर्णी, प्रफुल्ल डी. "पुष्प में जादुई यथार्थ : कारनाड की उत्तर-आधुनिक लोक-फैंटेसी की दुनिया।" शानलैक्स इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंग्लिश, खंड 8, अंक 3, 2020, पृ. 26-30
7. बार्थ, रोलां, मिथकशास्त्र, उपर्युक्त; कारनाड , गिरीश, संकलित नाटक, खंड 2, पुष्प, पृ. 243-260
8. कारनाड , गिरीश, अनु. पद्मावती राव, बिखरे भीम और पुष्प, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2020, पृ. 82
9. कारनाड , गिरीश, अनु. पद्मावती राव, बिखरे भीम और पुष्प, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2020, पृ. 79
10. कारनाड , गिरीश, अनु. पद्मावती राव, बिखरे भीम और पुष्प, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2020, पृ. 79

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 68-72
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

झारखण्ड के विद्यालयों में शारीरिक शिक्षा एवं खेल सुविधाओं की उपलब्धता, उपयोगिता एवं चुनौतियों का अध्ययन

रंजन तिग्गा

सहायक प्राध्यापक,

फातमा टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज दुबलिया, चंदवे, काँके, राँची

सारांश:

शारीरिक शिक्षा एवं खेल शिक्षा विद्यालयी शिक्षा का अभिन्न अंग है। इसका उद्देश्य विद्यार्थियों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, भावनात्मक एवं नैतिक विकास को बढ़ावा देना है। खेलों के माध्यम से अनुशासन, नेतृत्व, सहयोग, आत्मविश्वास, निर्णय क्षमता तथा टीम भावना जैसे गुणों का विकास होता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने भी समग्र एवं विद्यार्थी-केंद्रित शिक्षा में खेल एवं शारीरिक गतिविधियों के महत्व को स्वीकार किया है। झारखण्ड प्राकृतिक, सांस्कृतिक एवं जनजातीय विविधता से समृद्ध राज्य है। यहाँ अनेक विद्यार्थी ग्रामीण एवं आर्थिक रूप से कमजोर पृष्ठभूमि से आते हैं। उनके सर्वांगीण विकास के लिए विद्यालयों में खेल मैदान, खेल सामग्री, प्रशिक्षित शारीरिक शिक्षा शिक्षक, योग एवं व्यायाम की सुविधाएँ तथा सुरक्षित खेल वातावरण आवश्यक हैं। किंतु कई विद्यालयों में सीमित खेल मैदान, उपकरणों की कमी, प्रशिक्षित शिक्षकों का अभाव, रखरखाव की समस्या, आर्थिक सीमाएँ तथा खेल गतिविधियों के लिए अपर्याप्त समय जैसी चुनौतियाँ मौजूद हैं।

प्रस्तुत अध्ययन में झारखण्ड के विद्यालयों में शारीरिक शिक्षा एवं खेल सुविधाओं की उपलब्धता, उपयोगिता तथा प्रमुख चुनौतियों का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, संबंधित नीतिगत दस्तावेजों, साहित्य एवं द्वितीयक स्रोतों को आधार बनाया गया है। अध्ययन से स्पष्ट है कि केवल सुविधाओं की उपलब्धता पर्याप्त नहीं, बल्कि उनका नियमित, सुरक्षित, समावेशी एवं उद्देश्यपूर्ण उपयोग आवश्यक है। अंत में खेल सुविधाओं के विकास एवं प्रभावी उपयोग हेतु सुझाव प्रस्तुत किए गए हैं।

मुख्य शब्द: शारीरिक शिक्षा, खेल सुविधाएँ, समग्र विकास, खेल शिक्षा ।

प्रस्तावना:

शिक्षा का उद्देश्य केवल पाठ्यपुस्तकीय ज्ञान प्रदान करना नहीं, बल्कि विद्यार्थियों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, भावनात्मक, नैतिक एवं सृजनात्मक विकास को सुनिश्चित करना है। इस दृष्टि से शारीरिक शिक्षा एवं खेल विद्यालयी शिक्षा के महत्वपूर्ण अंग हैं। शारीरिक शिक्षा एक नियोजित प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से व्यायाम,

योग, खेल एवं अन्य शारीरिक गतिविधियों द्वारा विद्यार्थियों के स्वास्थ्य और व्यक्तित्व का विकास किया जाता है। खेलों से अनुशासन, सहयोग, नेतृत्व, आत्मविश्वास, सामाजिक समायोजन तथा स्वस्थ प्रतिस्पर्धा की भावना विकसित होती है। वर्तमान समय में मोबाइल, इंटरनेट, टेलीविजन तथा लंबे समय तक बैठकर अध्ययन करने के कारण बच्चों में शारीरिक निष्क्रियता बढ़ रही है। इसलिए विद्यालयों में नियमित खेल गतिविधियों की आवश्यकता और अधिक बढ़ गई है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने भी खेल, कला एवं अन्य सह-पाठ्यचर्या गतिविधियों को समग्र शिक्षा का हिस्सा बनाने पर बल दिया है। झारखण्ड में तीरंदाजी, कबड्डी, फुटबॉल, हॉकी, खो-खो तथा विभिन्न स्थानीय खेलों की समृद्ध परंपरा है। उचित सुविधाएँ, प्रशिक्षित शिक्षक, खेल उपकरण, मैदान, प्रशिक्षण और प्रतियोगिताएँ उपलब्ध कराकर विद्यार्थियों की खेल प्रतिभा को विकसित किया जा सकता है। अतः झारखण्ड के विद्यालयों में खेल सुविधाओं की उपलब्धता एवं उपयोगिता का अध्ययन शैक्षिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

अध्ययन की पृष्ठभूमि:

शारीरिक शिक्षा मानव सभ्यता से जुड़ी हुई है। प्राचीन समय में इसका उपयोग स्वास्थ्य, सुरक्षा एवं जीवन-यापन के लिए किया जाता था, जबकि आधुनिक शिक्षा में यह एक महत्वपूर्ण शैक्षिक विषय बन गया है। विद्यालयी शारीरिक शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों के शारीरिक स्वास्थ्य, मोटर कौशल, मानसिक संतुलन, सामाजिक व्यवहार एवं स्वस्थ जीवनशैली का विकास करना है। खेलों के माध्यम से अनुशासन, निर्णय क्षमता, सहयोग, नियमों का पालन तथा जीत-हार को स्वीकार करने की भावना विकसित होती है।

विद्यालयी खेल सुविधाओं में खेल मैदान, उपकरण, योग एवं व्यायाम स्थल, प्रशिक्षित शिक्षक तथा नियमित खेल गतिविधियाँ शामिल हैं। केवल सुविधाओं की उपलब्धता पर्याप्त नहीं है; उनका सुरक्षित, नियमित एवं प्रभावी उपयोग भी आवश्यक है। अतः प्रस्तुत अध्ययन में उपलब्धता के साथ खेल सुविधाओं की उपयोगिता एवं उनसे संबंधित चुनौतियों को भी ध्यान में रखा गया है।

झारखण्ड में शारीरिक शिक्षा एवं खेल का संदर्भ:

झारखण्ड की सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना खेल एवं शारीरिक गतिविधियों के लिए विशेष अवसर प्रदान करती है। विभिन्न जनजातीय एवं गैर-जनजातीय समुदायों की जीवनशैली में शारीरिक श्रम, नृत्य, पारंपरिक खेल और सामुदायिक गतिविधियों का महत्वपूर्ण स्थान है। ग्रामीण क्षेत्रों में फुटबॉल, कबड्डी, खो-खो, वॉलीबॉल, तीरंदाजी तथा स्थानीय खेल लोकप्रिय हैं। विद्यालयों में स्थानीय खेलों को औपचारिक शिक्षा से जोड़ने से विद्यार्थियों की रुचि बढ़ाने और सांस्कृतिक संरक्षण में सहायता मिल सकती है। हालांकि शहरी और ग्रामीण विद्यालयों में खेल सुविधाओं की उपलब्धता में असमानता है। दूरस्थ क्षेत्रों में मैदान, उपकरण और प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी हो सकती है। अतः क्षेत्रीय आवश्यकताओं के अनुसार खेल सुविधाओं का विकास आवश्यक है।

अध्ययन के उद्देश्य:

1. झारखण्ड के विद्यालयों में उपलब्ध शारीरिक शिक्षा एवं खेल सुविधाओं की स्थिति का अध्ययन करना।
2. विद्यार्थियों के शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक विकास में खेल सुविधाओं की उपयोगिता का विश्लेषण करना।
3. विद्यालयों में प्रशिक्षित शारीरिक शिक्षा शिक्षकों एवं खेल प्रशिक्षकों की उपलब्धता तथा उनकी भूमिका का अध्ययन करना।
4. विद्यालयों में खेल सुविधाओं के उपयोग में आने वाली प्रमुख चुनौतियों की पहचान कर उनके प्रभावी उपयोग हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध प्रश्न :

1. झारखण्ड के विद्यालयों में कौन-कौन सी शारीरिक शिक्षा एवं खेल सुविधाएँ उपलब्ध हैं तथा उनकी स्थिति कैसी है?
2. खेल सुविधाएँ विद्यार्थियों के शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक विकास में किस प्रकार योगदान देती हैं?
3. प्रशिक्षित शारीरिक शिक्षा शिक्षकों एवं खेल प्रशिक्षकों की उपलब्धता खेल गतिविधियों के संचालन को किस प्रकार प्रभावित करती है?
4. विद्यालयों में खेल सुविधाओं के प्रभावी उपयोग में कौन-कौन सी प्रमुख चुनौतियाँ बाधक हैं तथा उनके समाधान के लिए क्या उपाय किए जा सकते हैं?

अध्ययन का महत्व:

शारीरिक शिक्षा एवं खेल विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। नियमित खेल गतिविधियाँ विद्यार्थियों की शारीरिक दक्षता, मोटर कौशल, संतुलन एवं समन्वय को विकसित करने के साथ-साथ आत्मविश्वास, अनुशासन, नेतृत्व, सहयोग और टीम भावना जैसी सामाजिक एवं भावनात्मक क्षमताओं को बढ़ावा देती हैं। प्रस्तुत अध्ययन शिक्षकों के लिए भी उपयोगी है, क्योंकि इसके माध्यम से वे खेल एवं शारीरिक गतिविधियों को केवल वार्षिक खेलकूद कार्यक्रम तक सीमित न रखकर नियमित शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का हिस्सा बनाने के उपाय समझ सकते हैं। विद्यालय प्रशासन को खेल मैदान, उपकरण, सुरक्षित वातावरण तथा खेल गतिविधियों के लिए उचित समय-सारणी एवं संसाधन व्यवस्था विकसित करने में सहायता मिल सकती है। नीति-निर्माताओं के लिए अध्ययन के निष्कर्ष विद्यालयी खेल सुविधाओं के विकास, संसाधनों के उचित वितरण तथा विशेष रूप से ग्रामीण विद्यालयों के लिए प्रभावी योजनाएँ बनाने में सहायक हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त, विद्यालय एवं स्थानीय समुदाय के सहयोग से उपलब्ध मैदानों और संसाधनों का बेहतर उपयोग किया जा सकता है। इस प्रकार अध्ययन विद्यार्थियों, शिक्षकों, विद्यालय प्रशासन, नीति-निर्माताओं एवं समुदाय के लिए उपयोगी आधार प्रदान करता है।

शारीरिक शिक्षा की अवधारणा:

शारीरिक शिक्षा केवल व्यायाम या खेल तक सीमित नहीं, बल्कि एक व्यापक शैक्षिक प्रक्रिया है, जो शारीरिक गतिविधियों के माध्यम से विद्यार्थियों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं भावनात्मक विकास को बढ़ावा देती है। इसका उद्देश्य शारीरिक फिटनेस, स्वास्थ्य जागरूकता, दक्षता और स्वस्थ जीवनशैली विकसित करना है। इसमें योग, एथलेटिक्स, टीम एवं व्यक्तिगत खेल, मनोरंजक गतिविधियाँ तथा मोटर कौशलों का विकास शामिल है। नियमित गतिविधियों से शक्ति, लचीलापन, संतुलन, समन्वय और कार्यक्षमता में सुधार होता है। साथ ही खेल अनुशासन, आत्मविश्वास, सहयोग, नेतृत्व, निर्णय क्षमता और सकारात्मक सोच विकसित करते हैं। अतः शारीरिक शिक्षा विद्यार्थियों के समग्र व्यक्तित्व विकास का महत्वपूर्ण माध्यम है।

खेल सुविधाओं की उपयोगिता :

खेल सुविधाओं की उपयोगिता का मूल्यांकन उनकी उनके प्रभावी उपयोग और परिणामों के आधार पर किया जाना चाहिए। नियमित खेल गतिविधियाँ विद्यार्थियों के शारीरिक विकास में शक्ति, गति, लचीलापन, सहनशक्ति और समन्वय को बढ़ाती हैं। खेलों से निर्णय लेने, रणनीति बनाने और समस्या समाधान जैसे मानसिक कौशल विकसित होते हैं। टीम खेल सहयोग, संवाद, नेतृत्व और सामूहिक जिम्मेदारी की भावना विकसित करते हैं। खेल सफलता और असफलता का अनुभव देकर भावनात्मक नियंत्रण, धैर्य और आत्मविश्वास बढ़ाते हैं। नियमों का पालन विद्यार्थियों में अनुशासन और समयबद्धता की भावना विकसित करता है। साथ ही, टीम नेतृत्व और प्रतियोगिताओं में भागीदारी से नेतृत्व क्षमता तथा व्यक्तित्व विकास को प्रोत्साहन मिलता है।

प्रमुख चुनौतियाँ:

विद्यालयों में शारीरिक शिक्षा के प्रभावी संचालन में कई चुनौतियाँ हैं। पर्याप्त खेल मैदान और खेल उपकरणों की कमी के कारण सभी विद्यार्थियों को अभ्यास का उचित अवसर नहीं मिल पाता। प्रशिक्षित शारीरिक शिक्षा शिक्षकों की कमी से खेल प्रशिक्षण, फिटनेस परीक्षण और प्रतिभा पहचान प्रभावित हो सकती है। विद्यालयी समय-सारणी में अकादमिक विषयों को अधिक प्राथमिकता मिलने से खेल के लिए पर्याप्त समय नहीं मिल पाता। मैदान और उपकरणों के रखरखाव की कमी से सुरक्षा संबंधी समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं। ग्रामीण और शहरी विद्यालयों में संसाधनों की असमानता भी खेल विकास को प्रभावित करती है। सीमित आर्थिक संसाधनों के कारण प्रशिक्षण और प्रतियोगिताओं में भागीदारी कठिन हो सकती है। इसके अतिरिक्त, प्रतियोगिताओं के सीमित अवसर तथा प्राथमिक उपचार और सुरक्षित खेल व्यवस्था का अभाव भी विद्यार्थियों की खेल प्रतिभा के विकास में बाधा बन सकता है।

समावेशी शारीरिक शिक्षा की आवश्यकता:

प्रत्येक विद्यालय में वार्षिक खेल योजना, पर्याप्त खेल मैदान, आवश्यक उपकरण, प्राथमिक उपचार और पेयजल की व्यवस्था होनी चाहिए। प्रशिक्षित शारीरिक शिक्षा शिक्षकों की नियुक्ति आवश्यक है। स्थानीय खेलों को बढ़ावा देने के साथ बालिकाओं और विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिए समावेशी वातावरण बनाया जाए। खेल सामग्री का रखरखाव, सामुदायिक सहयोग और नियमित प्रतियोगिताएँ खेल विकास को प्रभावी बनाएँगी।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और शारीरिक शिक्षा:

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 शिक्षा को समग्र एवं बहुआयामी बनाने पर बल देती है। इसमें खेल, कला, व्यावसायिक शिक्षा तथा अन्य गतिविधियों को शिक्षा की मुख्य धारा से जोड़ने की दृष्टि दिखाई देती है।
इस दृष्टिकोण के अनुसार विद्यार्थी की शिक्षा केवल परीक्षा और अंक प्राप्त करने तक सीमित नहीं होनी चाहिए। शारीरिक गतिविधि, स्वास्थ्य, रचनात्मकता, सामाजिक कौशल तथा जीवन कौशल भी शिक्षा का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। झारखण्ड में NEP 2020 के व्यापक उद्देश्यों को प्रभावी रूप से लागू करने के लिए विद्यालयों में खेल सुविधाओं का विकास तथा उनका नियमित उपयोग आवश्यक है। स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप खेल शिक्षा की योजना बनाई जानी चाहिए।

सुझाव:

प्रत्येक विद्यालय में वार्षिक खेल योजना बनाकर खेल अवधि, गतिविधियाँ, प्रतियोगिताएँ और फिटनेस कार्यक्रम शामिल किए जाने चाहिए। सुरक्षित खेल मैदान, आवश्यक उपकरण, प्राथमिक उपचार और पेयजल की व्यवस्था सुनिश्चित हो। प्रशिक्षित शारीरिक शिक्षा शिक्षकों की नियुक्ति तथा छोटे विद्यालयों में साझा प्रशिक्षक की व्यवस्था उपयोगी होगी। स्थानीय खेलों को बढ़ावा देने के साथ बालिकाओं और विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिए समावेशी वातावरण बनाया जाए। खेल सामग्री का रखरखाव, सामुदायिक सहयोग, नियमित प्रतियोगिताएँ तथा डिजिटल तकनीक का सहायक उपयोग खेल विकास को प्रभावी बना सकता है।

निष्कर्ष :

शारीरिक शिक्षा एवं खेल विद्यार्थियों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, भावनात्मक और नैतिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। खेलों से अनुशासन, सहयोग, नेतृत्व, आत्मविश्वास और स्वस्थ प्रतिस्पर्धा जैसे गुण विकसित होते हैं। झारखण्ड में स्थानीय खेल परंपराओं, ग्रामीण परिवेश और युवाओं की खेल रुचि के कारण खेल विकास की व्यापक संभावनाएँ हैं। इसके लिए पर्याप्त खेल मैदान, उपकरण, प्रशिक्षित शिक्षक, नियमित खेल अवधि, सुरक्षित वातावरण और प्रतियोगिताओं के अवसर आवश्यक हैं। खेल सुविधाओं की उपलब्धता के साथ उनका

प्रभावी, नियमित और समावेशी उपयोग भी जरूरी है। अतः विद्यालय, सरकार, पंचायत, अभिभावक और समुदाय के सहयोग से खेल व्यवस्था को मजबूत करना गुणवत्तापूर्ण एवं समग्र शिक्षा के लिए आवश्यक है।

संदर्भ सूची:

1. कुमार, ए., एवं शर्मा, पी. (2021). भारत के ग्रामीण विद्यालयों में शारीरिक शिक्षा की अवसंरचनात्मक चुनौतियाँ: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन. भारतीय शिक्षा एवं खेल विज्ञान पत्रिका 15(2), 45–58.
2. गुप्ता, आर. के., एवं उरांव, एस. (2023).झारखण्ड के जनजातीय बहुल जिलों में खेल सुविधाओं की स्थिति और बालिकाओं की भागीदारी. सामाजिक विकास एवं शिक्षा समीक्षा, 8(1), 112–125.
3. दुबे, एस. एन. (2020).विद्यालयी शिक्षा में शारीरिक शिक्षा और खेल नीति: सिद्धांत एवं व्यावहारिक धरातल. ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
4. पांडेय, वी., एवं महतो, बी. (2022).राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और खेल-एकीकृत अधिगम: झारखण्ड के प्राथमिक विद्यालयों के विशेष संदर्भ में.शैक्षणिक चिंतन, 19(3), 89–101.
5. प्रसाद, एम. (2021).झारखण्ड के कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों (KGBV) में खेल अवसंरचना एवं लैंगिक समानता का अध्ययन.झारखण्ड शोध जर्नल, 12(4), 33–47.
6. सिंह, के. पी., एवं टोप्पो, एम. (2019).विद्यालयी स्तर पर खेल प्रतिभाओं की खोज: झारखण्ड की खेल अकादमियों और सरकारी तंत्र की भूमिका. खेल मनोविज्ञान एवं मानव गतिविज्ञान पत्रिका, 11(2), 201–214.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 73-77
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

हरियाणा के लोक साहित्य में सांस्कृतिक चेतना

डॉ0 सतकुमार
एसोसिएट–प्रोफेसर (हिन्दी–विभाग),
छोटू राम किसान, महाविद्यालय, जीन्द, हरियाणा

हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य यहाँ के मेलों और महोत्सवों की भांति बड़ा समृद्ध एंव बहुरंगी है। इसका पल्लवन अनेक काव्य विद्याओं तथा रूपों में वृक्ष की शाखा तथा उपशाखाओं की भांति संसर्ग हुआ है। लोकगीत, लोक कथा, लोकोक्ति तथा मुहावरों आदि बड़ी–बड़ी विद्याओं में यह साहित्य जनपद के प्रत्येक कोने–कोने में फैला हुआ है। हरियाणा की लोकधारा, लोककथाओं में लोकोक्तियों का विशेष महत्त्व है। यहाँ पानी व वाणी के लिए भी कहावतें प्रसिद्ध है। बारा कोस प बदले वाणी, चार कोस प पानी की हरियाणवीं लोकोक्ति के अनुसार इस साहित्य की रंगत भी क्षेत्र परिवर्तन के कारण बदलती रहती है। किन्तु पाणी व वाणी के प्रवाह की भांति इसकी धारा भी अजस्र रूप से बहती रही। कबीर जी ने भी भाषा को बहता नीर कहा है। हरियाणा के खादर, नमक, देस, बाँगर, राठ, बागड़, डाबर आदि भूखण्ड़ों में प्राकृतिक सामाजिक ढाँचे के अनुरूप जहाँ–तहाँ इसके रूप ध्वनि और लहजे में पहचान–योग्य विशिष्टता उत्पन्न होती जाती है और प्रत्येक भूखण्ड में प्राप्य यह तनिक विभिन्नता प्रायः पारस्परिक सम्प्रेषणीयता की सीमा से बाहर नहीं जाती। यहाँ की बोली पंचमुखी का मिश्रण है – ब्रज, राजस्थानी, पंजाबी, कौरवी तथा बांगरू। मध्यकाल में इस प्रान्त की ऊसरता तथा सूखे को देखकर किसी फकीर ने ठीक ही कहा था :–

कंटक देस, कठोर नर, भैसमूत्र को नीर।
कारमाँ का मार्या फिरै, बाँगर बीच फकीर।।

दोहे में बांगरू भाषा की दक्षता व साधु महात्माओं के पर्यटन और आवास को इस भूमि की विशेषता कहा गया है। यद्यपि हरियाणा के लोक साहित्य में सर्वत्र प्रकृति की तरह रोमांचकारी परिदृश्य दिखाई पड़ता है। यद्यपि इसमें दो मोतियों की आभा सबसे निराली व मनमाहेक है। पहली मोती है लोक कंठ से झरती हुई गीत माला का और दूसरा मोती है सामाजिक जीवन की खीर के थाल में रसभरी किशमियों की तरह तैरती हुई लोक कथा परम्परा का प्रचलन रहा है।

लोकगीतों में इतिहास एंव कल्पना :–

हरियाणा के लोकगीतों का धरातल बड़ा रंग बिरंगा है। ऋतुओं के साथ–साथ लोकगीतों में भी बदलाव आता है। इतिहास, पुराण, कथा और कल्पना, प्राकृतिक तथा सामाजिक जीवन सन्दर्भ, तीज, त्यौहार उत्सव संस्कारों का चित्रण इन गीतों में बड़ी मीन मेख के साथ किया गया है। नीति, भक्ति, महापुरूषों के जीवन आदर्श, तथा शूरवीरों को स्तवन करने वाले गीतों की गिनती भी कम नहीं है। हरिश्चन्द्र जैसे सत्यवीरों,

हकिकतराय जैसे धर्मवीरों, मोरध्वज तथा कर्ण जैसे दानवीरों, गांधी जैसे कर्मवीर, अल्हा ऊदल, भूराबादल, राणा प्रताप, जवाहर सिंह, रावतुलाराम जैसे रणवीरों की प्रशस्तियाँ भी इन गीतों के अनमोल बोलो में गूँज उठी है। नारी के श्रृंगार, मान–विरह, आशा–आकांक्षा, हाव–भाव, राग–द्वेष वस्त्रांलकार आदि के जीवन्त प्रसंग भी इन गीतों में गाय के हरे गोबर से लिपी पुती हुई शाला में बिखरे ताजा फूलों की भांति संशोभन तथा गृहद्वारों पर चित्रित गैरिक चित्रों के सदृश विचित्र सुख प्रदान करने लगते है।

लोकगीतों में मनोभाव की व्यापकता :–

हरियाणा के लोकगीतों में सावन व फागुन के गीत क्रमशः अपनी प्यारी संगीतमय झंकार तथा नाटकीय लोचलचक के कारण बड़े ही मनभावने तथा लोक लीला के केन्द्र बन पड़े है। समसायपिक जीवन को लेकर चलने वाले नवजागरण से सम्बधित राष्ट्रीय एंव सुधारमूलक गीत तथा जिन्दगी में रोजमर्रा उत्पन्न, शिशुओं के लघु क्रिड़ा–कन्दुकों के समान धागे से गुंथी–गढ़ी उलझनों से अविद्ध गीत भी क्रमशः अपनी उत्साह तरंग तथा अनुभूति की यथार्थ अभिव्यक्ति के कारण बड़े बेजोड़ लगते है। श्लील–अश्लील की भावना भी इसमें बदल जाती है यहां मनोभावों की गोपनीयता अथवा उनका दुराव–छिपाव अश्लीलता की कसौटी माना गया है। सावन व फागुन के गीतों में प्रायः महिलाओं के कण्ठाहार है। सावन के गोतों में हिंडोरा राग का उतार–चढ़ाव तथा मेघ मलार जैसे गंभीर रागात्मकता अन्यत्र कहीं नहीं है। बारहमासिया गीत विशेषतः विरहिणियों का गीत है। जो सावन में गाया जाता है। इस ऋतु में हरीतिम वर्षा की रिमझिम बूंदे तथा 'बरसे रहे की बात' मिलकर मानव व प्रकृति के सांमरस्य को घनीभूत बना देती है। सावन में अक्षय तृतीय अथवा तीज का त्यौहार हरियाणा का सर्वाधिक उल्लासजनक तथा मनचाहा पर्व है। यह पर्व नहीं बल्कि पर्व स्रष्टा पर्व है – 'आई तीज बो गई बीज', 'आई होली भर ले गई झोली' उक्ति के अनुसार तीज पर्वों का आरम्भ और होली उनका अवसान है। भाद्रपद में गूगानवमी के अवसर पर ग्रामों में मृदंग घोष के साथ दिन में मल्लयुद्ध – प्रदर्शन तथा रात्रीकाल में भक्त डमरू बजाकर 'रतजगा' करते है। बागड़ वाले पीर की वन्दना स्तुति करते–करते भावावेश मूर्च्छित हो जाते है। श्रादपक्ष की मान्यता भी अब तब बनी है।

आए कनागत फूले कांस।
ब्राह्मण कूदै नौ नौ बांस।।

आश्विन में सांझी देवी जो दुर्गा का प्रतीक है, उसकी पूजा संध्या समय आरती उतार कर कन्याएँ करती है। विजय दशमी को अश्वारोह तथा क्षात्रधर्म का पर्व माना जाता है।

लोकगीतों की धार्मिकता :–

हरियाणा के लोकगीत प्रायः धर्म का प्रतीक माने जाते है। दिपावली का भी धार्मिक दृष्टि से विशेष महत्त्व है। यह त्योहार वैश्वों के लिए विशेष महत्व रखता है। घर आंगन में दीप, लक्ष्मीपूजन तथा गोपूजन – गोसंवर्धन इसके विशेष माहात्म्य का प्रतिपादन करने वाले मांगलिक कृत्य है। शरत् पूर्णिमा गंगा स्नान के विशाल मेले का पूण्यपर्व है जो स्थाण्वीश्वर सम्राट हर्ष के काल से अब तक अविच्छिन क्रम से चला आ रहा है। मकर संक्रान्ति में सूर्योदय से पूर्व स्नान करके चावल – शक्कर का भोजन करने, दान देने, भूखों को अन्न व वस्त्र बांटने तथा नव–विवाहितों द्वारा ऊनी वस्त्रादि की भेट देकर मनाने का रिवाज है। फिर मधुमास का आगमन होता है। प्रकृति में सर्वत्र उल्लास तथा नवीन आच्छादन की छटा ..... तितलियों का नाच, मयुरों का नृत्योंन्माद, भ्रमरों की मंजुल तान, वन उपवन की मनोहर छटा देखकर फाग में कौन निश्चेष्ट रह सकता है। ऐसे क्षणों में प्राकृतिक आनन्द की हिलोर से अधीन होकर एक ग्रामबाला वीणादायक नाथ – सपेरे से लोक लाज को खूंटी पर लटकाकर कहने लगती है। सपेल्ले बीन बजा दे रे, चाल्लूँगी तेरे साथ। दूसरी सुन्दरी अपने सौन्दर्य पर स्वर मुग्ध होकर पुकार उठी –

मेरे गोरे बदन पै रंग बरसै।
हे री बागाँ मैं जाऊँ तो माली ललचै।
औह तै पत्ते पै .....2 पत्ते पै पड़या पड़या नींबू मटकै।

और तीसरी कामार्त्त होकर ससुर से विनय करती है –

'कहिए हो उस ससुर मेरे नैं, मन्नै बिन्न घाल्ले ऐ ले जा फागुण में फागुन के दिन लीला के दिन है जिन्हे वह ससुराल में बिताना चाहती है। खेल – कूद व रंग – उमंग मे तिथि का निर्धरण (ठीक करना) भी अशुभ लगता है। कबीर कह गए है 'जब आवै प्रेममन कौन गनैतिथि बार।

सावन व फागुन के लोक गीतों की लोकप्रियता :–

हरियाण्वी संस्कृति में फागुन व सावन के गीत भी लोकप्रिय है। विषय की दृष्टि से लगभग दोनों समान है यदि सावन में संगीत की प्रधानता है तो फागुन में नृत्य, अभिनय और नाटकीयता की बहुलता है दोनों की भाव अभिव्यंजना की शैली भी विभिन्न है। यह तथ्य भी ध्यान देने योग्य है कि फाग के गीतों में मातृ सम्बोधन की जगह भ्रातृ सम्बोधन भी पर्याप्त है जबकि सावन में मातृ सम्बोधन की महिमा अधिक है। इसका कारण यह जान पड़ता है कि फाग में ससुराल में वास करने वाली भाई को बुलाना चाहती है तथा सावन में बेटी माँ के घर होती है। यहाँ राधा कृष्ण के पौराणिक मान तथा साधारण दम्पत्ति के मनमुटाव का सुन्दर हल प्रस्तुत करने वाले गीत की कुछेक कड़िया उद्धत हैं। गीत के बोल है –

ए जी एक चणा होय दाल, दाले पाच्छै नां मिलै जी भगवान।
ए जी ऐ दही दूजा दूध, पाटै पाच्छै नां मिलै जी भगवान।
ए जी एक पुरूष दूजी नार, लड़ें पाच्छै नां मिलै जी भगवान।
ए जी एक चणा दूजी दाल, पिसे पाच्छै रलमिलै जी भगवान।

कहते है पास–पास रखे बर्तन भी खड़कते है जहाँ पति–पत्नी में प्रेम होता है वहीं मनमुटाव होना स्वभाविक है किन्तु मानिनी प्रिया को मनाने से दाम्पत्य प्रेम में अधिक वृद्धि होती है और सदा पति को झुकना पड़ता है। क्योंकि सभी जगह पर समझदार को झुकना पड़ता है। पति का रूठना साक्षात घर का नाश माना गया है और पत्नी का रूठना कल्याण का प्रतीक माना गया है मान–विरह पुरूषों के लिए अशोभनीय है और नारियों की सुन्दरता है। हरियाणवीं लोकगीतों की ख्याति, संगीत तथा धुनों ने फिल्मी जगत को भी प्रभावित किया है। चांदनी चौंक, फिल्म की धुने 'नजर लागी राजा तेरे बंगले पै तथा झुमका गिरा रे बरैली के बाजार में' आदि कितने गीतों का भाव शब्दावली और संगीत पर हरियाणवीं गीतों का पानी पड़ा है।

हरियाणवीं गीतों में पूजा पाठ का महत्त्व :–

हरियाणा प्रदेश की संस्कृति में पूजा पाठ, भजन और इबाबत का बड़ा दौर दौरा रहा है। नाथों, सूफियों, संतों तथा वैष्णवों, आर्य समाज का यहाँ अमिट प्रभाव देखने को मिलता है। इनके मठ मन्दिर मढ़ी गद्धी और आश्रम सर्वत्र दिखाई देते है। इस प्रदेश को लोकगीतों में 'रामभजनिया' का देश तथा कहावतों में 'देस्सां मैं देश हरियाणा, जित दूध दही का खाणा' कहकर इसकी वैष्णव धर्म भावना पर प्रकाश डाला गया है। हरियाणा गंगा, सरस्वती तथा यमुना का प्राचीनतम जनपद है। इसका द्वार हरिद्वार है। इसका हृदय धर्मक्षेत्र कुरूक्षेत्र है कार्तिक स्नान यहाँ की कुमारियों का महाव्रत है प्रतिदिन जब कन्याएँ इस मास में प्रभातबेला में गीतों के साथ–साथ स्नान करती है। इसके पश्चात गंगा स्नान के गढ़ मुक्तेश्वर की और नर–नारी प्रस्थान करते है। गंगा स्नान का महात्म्य बाग–बगीचा लगाने तथा कूप सरोवरों के निर्माण की भांति अचूक माना गया है। राजस्थान में जो महत्ता रणगौर को, पंजाब में बैसाखी को प्राप्त है, वहीं हरियाणा में गढगंगा स्नान के मेले की है किंन्तु मेलों की उपलब्धि के विषय में यह सूत्र हरियाणा में प्रचलित है।

' मेला मेली का, धक्कापेल्ली का, रूपया धेली का'

जाटनी के गंगा स्नान तथा जाट द्वारा जाटनी के वस्त्र धारण कर हाथ्यल भैंस दूहने, मूछों को देखकर भैंस का दूध न देने तथा नारी वेश में जाट द्वारा भैंस का पीछा करने वाली व्यंग्य कथा को कौन नहीं जानता, मुनीराम नाई द्वारा गंगास्थान के पड़ाव की कथा सुनाने की प्रथांए प्रचलित है। शिव पूजन की प्रथा द्वारा पोषित महादेव–पार्वती की अनुकम्पा तथा चिपक जादू की कथाओं की कई दर्जन लम्बी श्रृंखला हरियाणा के हर अंचल में लोक विश्रुत है।

वैदिक आर्यों की भांति उत्तर–पूर्व भारत के समकालीन जीवन में भी ऋतञ्च का प्रभाव पग–पग पर देखने में आता है। सत्य यदि हमारे जीवन की नैतिक तथा आध्यात्मिक सुधा है तो ऋत हमारे सामाजिक जीवन तथा

प्राकृतिक वातावरण के सुखद सांमजस्य से अनुस्यूत संमजन का नाम है। अवसरानुकूल आत्माभिव्यक्ति के सन्दर्भ में हरियाणा में प्रचलित कहावत इस प्रकार है :–

भजन पसन्दों में गाओं, अर सोरठ गाओ आधी रात।
अल्हा–पेवाश उस दिन गाओ, जिस दिन भारी हो बरसात।।

उक्त अल्हा तर्ज में सोरठ अथवा संगीत का समय रात्री का कहा गया है। रात–रात भर अभिनीत लोकनाट्य की नौंटकी एंव कीर्तन वाली संगीत शैली भी हरियाणा प्रदेश की लोकसंस्कृति का अभिन्न अंग है। राजस्थान तथा पंजाब में भी हरियाणा के लोकगीतों की सांस्कृति धूम मची हुई है।

संगीत सम्राट प0 लख्मीचन्द के सांगों का महत्त्व भी हरियाणवीं संस्कृति की देन है। हरियाणा के गंधर्व सभा (1962ई0) के पुरोधा संगीत–शिरोमणि पं0 मांगेराम पाणिची ने 125 वर्ष पूर्व यमुना पार निवासी किशनलाल भाट को हरियाणा की वर्तमान संगीत परम्परा का जनक घोषित किया है। उसके एक सौ सत्तर वर्ष बाद दीपचन्द सेरी खांडा निवासी (जिला रोहतक) की संगीत कला का स्वरूप निदेशक प्रतिभाशाली कलाकार बताया है :–

हरियाणें की कहानी सुणल्यों दो सौ साल की।
कई किस्म की चाल्यी नई साल की।।
माँगे राम पाणची वाला मन मैं करै विचार,
घाघरी के मारे मरग्ये मूरख मूढ़ गंवार,
सीस पैर दुपट्टा जम्फर पाया में सलवार,
इब तैं आगै देख लियो क्ये चौथा चलै त्यौहार,
ज्यब छोहरा पहरै घाघरी किसी बात कमाल की।

लख्मीचन्द मानसिंह जोगी का शिष्य था। उसकी प्रतिभा के विकास में रागनियों की गायन शैली का चमत्कार था। आलाप और स्वरमाधुरी पर उसने पर्याप्त बल दिया। सरस्वती के इस पुत्र ने अपने कंठ के सुरीलेपन तथा लोचकचक द्वारा रागिनी को नाना रंगतों में सजाया। वार्ता कौशल, मंच व्यवस्था और रंग शिल्प में भी इनकी गति थी। पात्रोचित परिधान को अपनाकर साड़ी की वेशभूषा में ग्रहण किया। इनके संगीत में सांकेतिकता, विदग्धता, वक्रोक्ति, नवीनता आदि का गहरा पुट है। इनकी आंरम्भिक ख्याति 'शाही लकड़हारे' नौंटंकी के कारण जमी थी। लख्मीचंद ने 80 के लगभग विषयों पर संगीत रचना की। ज्ञान, भक्ति, नीति, श्रृगांर, फिल्म–कथा, इतिहास, पुराण, सभी कुछ इनके संगीत पुराण में सुलभ है। इनके सबसे योग्य शिष्य थे पं0 माँगेराम पाणची। इनका स्वर्गवास 1968 में हुआ। ये कवि के हदृय संगीतकार थे। पं0 जवाहरलाल नेहरू भी इनकी संगीत कला को देखकर विस्मय–विमुग्ध हो गए थे। इन्होने चालीस सांगों का प्रणयन किया। इनके संगीत का विधान पं0 लख्मीचंद को भी पीछे छोड़ गया। ये सही अर्थो में लख्मीचन्द के चन्दन चेले थे।

लोकोक्तियों और कहावतों में तो मानों सांस्कृतिक बिम्बों के चौमुख दीपक से जल उठते है।

हरियाणा की मिसाल संस्कृति के प्रतीक के रूप में :–

हरियाणवीं 'मिसाल' में भी हरियाणा की जन संस्कृति का यथार्थ चित्र सामने आता है। धर्मभावना, दर्शन और जीवन पर प्राकश डालने वाली लोक्कोक्तियाँ हैं :– तू ही तू (तत्त्वमसि) आत्मा सो परमात्मा (वेदान्त) कर ले सो काम, भज ले सो राम, धर्म की जड़ सदा हरि, कुणबा खीर खां और देवता भला मानै, इसी ऐ नकटी देवी और इसे ऐ ऊत पुजारी, आप्पा मारै बिना सुरग नहीं दिखता, भजन–भोजन एकान्त में, बावन बरस की राम–राम और दो दिन की अल्ला–अल्ला इत्यादि में अस्तिकता, धर्म–कर्म में रूचि तथा धार्मिक आदान–प्रदान का परिचय मिलता है। मनुष्यों की महत्ता, पारिवारिक सामाजिक सम्बधों की स्थिति, भाग्यवाद, लोकव्यवहार तथा नीति, सास बहू की कटुतापूर्ण–उक्तियाँ यहाँ की लोक संस्कृति की विशेषता को प्रकट करने से न ही चूकती जैसे आंधे की माखी राम उड़ावै, रूप रोवै करम खा, लाचारी परबत तै भारी, बन्दे की बसाती कोन्या जब हर की माया फिर ज्या, काणी के ब्याह में सौ जोखम, होत की बाहण अणहोत का भाई। घर में साला, भीत में आला आच्छे नहीं। पुत्री की मृत्यु पर जमाई (दामाद) से सम्बंध विच्छेद का प्रकाशन निम्न दृष्टान्त गर्भित सूक्ति में देखिए :–

धी मरी जमैया चोर
टूटग्यी डाल्ही उड़ गया मोर

हरियाणवीं लोकोक्तियों में नाटकीयता :–

हरियाणावीं लोकोक्तियों में नाटकीयता के दर्शन भी होते है। आ हे लाँडी आराँ मैं पूछड़ कित तुड़ाई? नाई के मेरे बाल कौड–कौड, जजमान तेरे आगै ए आवैगें (अन्योक्ति) माँ री मेरा मामा आया, आण दे भाई तै मेरा ऐ सै। हरियाणा में मरोड़ व स्वाभिमान को सब से ऊपर रखा गया है। यहाँ के लोग नौकरी पेशे की बजाय परम्परागत धन्धों में विश्वास रखते है। ऐसे प्रसंग 'उत्तम खेती मध्यम व्यापार, चाहे तनखा के आने चार कर दे पर नाम थानेदार कर दे इत्यादि में मिलते है। इन लोगों का दृष्टिकोण मानवतावादी है। यहाँ की लोग मांस, शाराब व चाय का पान करना पाप समझते है। 'दुध ऐसा बेचा जैसा पूत बेचा' की स्थिति में अब व्यवसाय ही बदल गया है।

निष्कर्ष :– इस प्राकर लोक साहित्य व संस्कृति में क्रमशः वही संबंध प्रकट होता है जो मिट्टी व घड़े में होता है। हरियाणा के निर्माण में यहाँ की संस्कृति की अह्म् भूमिका है। यहाँ के रीति रिवाज व लोक कथाएँ नैतिकता पूर्ण है। प्रत्येक लोकोक्ति सार गर्भित जान पड़ती है। हरियाणवीं संस्कृति के रचना तन्त्र के लिए संस्कृति मूल उपादान का कार्य करती है और साहित्य उसकी चरम रचना धर्मिता का ही अवदान है।

सन्दर्भ ग्रन्थ :–

1. अभिज्ञान शाकुन्तलम् — कालिदास
2. कादम्बरी — बाणभट्ट
3. दशरूपक — धनजंय
4. नाट्यशास्त्र — भरतमुनि
5. पद्मावत (जायसी) — डा0 वासुदेव शरण अग्रवाल
6. हरियाणा लोक गीत संग्रह — नादान हरियाणवीं

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 78-86
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

हाशिए से केंद्र तक : दलित साहित्य की वैचारिक यात्रा एवं ओमप्रकाश वाल्मीकि का कथा साहित्य

मंजीत कुमार
शोधार्थी
हिंदी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
आर्य कन्या महाविद्यालय, हरदोई, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, उ०प्र०

प्रस्तावना

हिंदी साहित्य की परंपरा में दलित साहित्य का उदय केवल एक नई साहित्यिक धारा के रूप में नहीं, बल्कि एक गहरे सामाजिक हस्तक्षेप के रूप में हुआ है। सदियों से भारतीय समाज जाति-आधारित ऊँच-नीच, छुआछूत और बहिष्कार की संरचना पर टिका रहा है, जिसमें दलित समुदाय को शिक्षा, संपत्ति, सम्मान और अभिव्यक्ति के अधिकार से वंचित रखा गया। ऐसे सामाजिक यथार्थ में यदि साहित्य केवल सौंदर्य, प्रेम या कल्पना तक सीमित रह जाए, तो वह अधूरा और एकांगी बन जाता है। इसी ऐतिहासिक आवश्यकता से दलित साहित्य का जन्म हुआ।

दलित साहित्य पीड़ा का मात्र विवरण नहीं है, बल्कि वह पीड़ा के विरुद्ध खड़े होने की चेतना है। यह साहित्य शोषित वर्ग के आत्मसम्मान, अस्मिता और मुक्ति की आकांक्षा को स्वर देता है। डॉ. भीमराव आंबेडकर के विचारों से प्रेरित होकर दलित साहित्य ने यह स्पष्ट किया कि साहित्य का मूल्यांकन केवल उसकी कलात्मकता से नहीं, बल्कि उसके सामाजिक सरोकारों से होना चाहिए। इस दृष्टि से दलित साहित्य भारतीय लोकतंत्र की अधूरी परियोजना को पूरा करने का सांस्कृतिक एवं साहित्यिक माध्यम बनता है।

हिंदी दलित साहित्य के विकास में अनेक रचनाकारों का योगदान रहा है, किंतु ओमप्रकाश वाल्मीकि का स्थान विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने अपने आत्मकथात्मक लेखन, कविताओं, कहानियों और आलोचनात्मक कृतियों के माध्यम से दलित जीवन के भोगे हुए यथार्थ को साहित्य के केंद्र में स्थापित किया। उनकी रचनाएँ यह सिद्ध करती हैं कि अनुभवजन्य यथार्थ साहित्य को नई दिशा और नई वैचारिक ऊर्जा प्रदान कर सकता है।

दलित साहित्य : अर्थ और अवधारणा

"*दलित* शब्द का अर्थ है- जिसका दलन और दमन हुआ है, दबाया गया है, उत्पीड़ित, शोषित, सताया हुआ, उपेक्षित, घृणित, रौंदा हुआ, मसला हुआ, कुचला हुआ, विनिष्ट, मर्दित, पस्त-हिम्मत, हतोत्साहित, वंचित आदि।"(ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, 2022, पृ. 13)। सामाजिक संदर्भ में इसका प्रयोग उन वर्गों के लिए किया जाता है जिन्हें पारंपरिक जाति-व्यवस्था में अस्पृश्य, निम्न अथवा हीन माना गया। साहित्यिक संदर्भ में दलित साहित्य वह लेखन है जो इन वर्गों के जीवनानुभवों, संघर्षों, पीड़ाओं और आकांक्षाओं को उनकी अपनी दृष्टि से अभिव्यक्त करता है। डॉ. भीमराव आंबेडकर के अनुसार दलित वह वर्ग है जो जाति-आधारित सामाजिक व्यवस्था में संरचनात्मक रूप से शोषित, वंचित और बहिष्कृत रहा है। दलित केवल आर्थिक रूप से गरीब नहीं, बल्कि सामाजिक सम्मान और अधिकारों से वंचित समुदाय है।

दलित साहित्य को केवल 'दलित द्वारा लिखा गया साहित्य' कहना पर्याप्त नहीं है। यह मूलतः एक वैचारिक साहित्य है, जिसकी केंद्रीय चिंता सामाजिक न्याय, समानता और मानवीय गरिमा है। इसमें लेखक स्वयं भुक्तभोगी होता है, इसलिए उसका लेखन कल्पना-प्रधान न होकर अनुभव-प्रधान होता है। यही कारण है कि दलित साहित्य में यथार्थ की तीव्रता, ईमानदारी और आत्मस्वीकृति दिखाई देती है।

दलित साहित्य की अवधारणा पारंपरिक साहित्यिक मूल्यों को चुनौती देती है। यह सौंदर्य को 'सुंदर' के स्थान पर 'सत्य' से जोड़ता है। ओमप्रकाश वाल्मीकि के अनुसार, जिस समाज में पीड़ा और अन्याय व्याप्त हो, वहाँ साहित्य का सौंदर्य उसी पीड़ा की सच्ची अभिव्यक्ति में निहित होता है। इस प्रकार दलित साहित्य एक वैकल्पिक सौंदर्यशास्त्र की स्थापना करता है, जो अनुभव, संघर्ष और सामाजिक प्रतिबद्धता पर आधारित है।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य : वैचारिक यात्रा

साहित्य में अन्याय, अत्याचार व असमानता के विरुद्ध प्रतिरोध की अनादिकालीन सतत् परम्परा रही है। वैदिक ऋृषि कावषेय, कवष ऐलूष, शम्बूक आदि ने असमानता पर आधारित वैदिक वर्ण-व्यवस्था का घोर विरोध किया। इस कारण शम्बूक को अपना सिर तक कलम करवाना पड़ा। चार्वाक व आजीवक मक्खलि गौशाल ने वैदिक कर्मकाण्डों की भर्त्सना कर मनुष्य की समानता की बात की। दया व करुणा के साक्षात् स्वरूप महात्मा गौतम बुद्ध ने न केवल ऊँच-नीच व असमानता पर आधारित वर्ण व्यवस्था की कटू निन्दा की अपितु अपने संघ में दलित व्यक्तियों को प्रवेश देकर यथार्थ रूप में मानवतावाद को प्रतिस्थापित किया। "बुद्ध के निर्वाण के बाद करीब 600 सौ वर्ष के पश्चात बुद्ध चरित के रचनाकार अश्वघोष पहले संस्कृत कवि थे, जिन्होंने ब्राह्मणी वर्ण व्यवस्था पर आक्रमण करते हुए वज्रसूची नामक काव्य संग्रह की रचना की।" (डॉ. पाण्डुरंग वैजनाथ महालिंगे, दलित अवधारणा एवं ओमप्रकाश वाल्मीकि का साहित्य में उद्धत डॉ. तुलसीराम के विचार) इस रचना में दलितों की स्थिति का बहुत ही कारुणिक व घृणास्पद चित्रण है। बौद्ध दर्शन को ही अपनाकर आगे चलकर सिद्धों ने न केवल जातिवाद पर प्रहार किया अपितु वर्ण-व्यवस्था जातिवाद को सिरे से खारिज कर तत्त्वचिन्तन के द्वार सबके लिए खोल दिए। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि चौरासी सिद्धों में से अधिकतर सिद्ध दलित जातियों से थे। सरहपा ने तो जन्मतः ब्राह्मण होते हुए भी ब्राह्मणवादी व्यवस्था को नकारा।कँवल भारती का मत है कि "सिद्ध साहित्य में संस्कृति के मूल्य बुद्ध की परम्परा से आते हैं, जिन्होंने मूल निवासियों या शूद्रों को प्रभावित किया था। दूसरी यह कि सिद्धों में तीन दर्जन से ज्यादा सिद्ध शूद्र और निम्न जातियों से आए हैं। सिद्धों के साहित्य में हम 'श्रम' को संस्कृति के मूल तत्व के रूप में देखते हैं। अधिकांश सिद्ध किसी न किसी श्रम से जुड़े हैं। श्रम की स्वीकृति का मुख्य कारण भी यह सांस्कृतिक समानता ही प्रतीत होती है। सिद्धों में गुरू का अपार महत्त्व है। हम देखते हैं कि आधुनिक

काव्य धारा भी गुरू की महिमा को स्वीकार करती है। यह दलित संस्कृति का नैतिक मूल्य है, जिसने साहित्य का भी मार्ग प्रशस्त किया है।" (दलित साहित्य, 2001 पृ. 15)

कालान्तर में नाथपन्थी योगियों ने भी सामाजिक समरसता दिखाते हुए इसके प्रणेता गोरखनाथ के नेतृत्व में असमानता के विरुद्ध अलख जगाई। हिन्दी साहित्य के मध्यकाल के आरम्भिक वर्षों में भक्ति की सरिता प्रवाहित हुई, जिसका प्रमुख स्वर 'जाति-पाँति पूछे न कोई, हरि को भजे सौ हरि को होई'था। भक्ति चेतना की निर्गुण धारा के कवियों ने सामाजिक चेतना पैदा कर वर्ण-व्यवस्था व जातिवाद पर प्रहार किया। महात्मा कबीर व सन्त रैदास ने स्थान-स्थान पर अपने पदों में सामाजिक विभेद को अमानवीय व मनुष्य निर्मित बताया है। उनकी कविता का प्रतिरोधी स्वर ही आधुनिककालीन दलित चेतना का मुख्य प्रेरणा स्रोत है। ओमप्रकाश वाल्मीकि ने लिखा है, "हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल में रैदास और कबीर जहाँ एक ओर वर्ण-व्यवस्था के विरूद्ध खड़े दिखाई पड़ते हैं और सामाजिक बदलाव के लिए संघर्ष करते हैं, वहीं वे आध्यात्मिक दलदल में फँसकर उसी सामंती व्यवस्था में विलीन हो जाते हैं, जिसने वर्ण-व्यवस्था को पुख्ता किया हो।" (ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ. 73)महाराष्ट्र में पैदा हुए सन्त नामदेव, तुकाराम आदि ने भी सामाजिक चेतना का अलख जगाया। इसी प्रकार धन्ना, पीपा, नानक, दादू, जाम्भोजी, जसनाथ आदि कवियों ने अपने पदों द्वारा दलित चेतना को वाणी दी। वस्तुतः प्रतिरोध की इसी सतत्परम्परा ने दलित साहित्य की पृष्ठभूमि तैयार की।

दलित साहित्य आधुनिक काल में हीरा डोम और अछूतानन्द 'हरिहर' को अपनी परम्परा में शामिल करता हैं तथा संपूर्ण छायावादी कविता को निरस्त करते हुए प्रगतिवाद के दौर में निरंकार देव सेवक को महत्त्वपूर्ण रचनाकार घोषित करता है। कँवल भारती ने एक लेख में 'हिन्दी दलित साहित्य का संक्षिप्त इतिहास' लिखा है। अछूतानन्द के काल में 'पं. बख्शीदास, बंसीराम मुसाफिर, स्वामी शंकरानन्द केवलानन्द, अयोध्यानाथ दण्डी, मोजीलाल मौर्य और जनकवि बिहारी लाल हरित के नामों को कँवल भारती ने उल्लेखनीय माना है।

इसके बाद के काल को भारती जी अम्बेडरवादी धारा का नाम देते हैं। इसे वे दो भागों में बाँटते हैं, पहली 1950 से 1975 तक के काल की धारा है, और दूसरी उसके बाद विकसित हुई धारा है। हिन्दी में डॉ. अम्बेडकर के साहित्य के प्रकाशन के बाद यह धारा सामने आई और इसका श्रेय पं. चन्द्रिका प्रसाद जिज्ञासु को देते हैं। ये प्रकाश लखनवी के नाम से कविताएँ लिखते थे। इस युग के दलित साहित्यकारों का रचना कार्य दो प्रवृत्तियों पर आधारित था। एक वे डॉ. अम्बेडकर की प्रशंसा में काव्य और महाकाव्य लिख रहे थे, ईश्वर और मसीहा के रूप में उनका चित्रण कर रहे थे। दूसरे वे दलित जीवन की कटु सच्चाइयों का वर्णन कर रहे थे और सामाजिक परिवर्तन की परिकल्पनाएँ प्रस्तुत कर रहे थे।

कँवल भारती का मत है कि दलित साहित्य से अभिप्राय उस साहित्य से है, जिसमें दलितों ने स्वयं अपनी पीड़ा को रूपायित किया है। अपने जीवन संघर्ष में दलितों ने जिस यथार्थ को भोगा है, दलित साहित्य उन्हीं के द्वारा उसी की अभिव्यक्ति का साहित्य है। (ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ. 14)

इसका अर्थ ये है कि गैर दलित लेखकों की रचनाओं को दलित साहित्य के अन्तर्गत नहीं माना जा सकता। इसके साथ ही दलित आलोचकों ने गैर दलित साहित्य से अपनी असहमति को रेखांकित किया है। जयप्रकाश कर्दम ने लिखा है "सही मायने में देखें तो भारतीय साहित्य विशेषतः हिन्दी साहित्य हिन्दू (सवर्ण) समाज का प्रतिनिधित्व करने वाला, इनके हित-चिन्तन का संवाहक या सीधे-सीधे कहें तो हिन्दू साहित्य ही रहा । कम से कम दलितों का प्रतिनिधित्व वह नहीं हो सका। दलित के अंदर की कुलबुलाहट, आक्रोश, स्वाभिमान से जीने की उसकी छटपटाहट को कभी साहित्य में अभिव्यक्ति नहीं मिली ।" (जयप्रकाश कर्दम, कथाक्रम, दलित विशेषांक, पृ. 85)

हिन्दी में दलित साहित्य का विकसित स्वरूप सही मायने में सन् 1990 से माना जा सकता है। जब जूठन, छप्पर जैसी रचनाएँ प्रकाशित हुई तथा दर्जन भर से अधिक लेखक हिन्दी में रचनात्मक रूप से सक्रिय हुए, इनकी कविताएँ और कहानियाँ प्रकाशित होने लगी। 1975 में कमलेश्वर के सम्पादन में प्रकाशित पत्रिका सारिका ने दलित साहित्य के दो विशेषांक प्रकाशित किये। फिर महीपसिंह ने संचेतना पत्रिका का विशेषांक प्रकाशित किया। दलित लेखकों की अपनी पत्रिकाएँ प्रकाशित होने लगी। इस क्रम में सन् 1993 में नागपुर में 'हिन्दी दलित साहित्यकार सम्मेलन' आयोजित किया गया, जिसकी अध्यक्षता ओमप्रकाश वाल्मीकि ने की।

ओमप्रकाश वाल्मीकि : जीवन परिचय

"दलित साहित्य सहानुभूति का नहीं, बल्कि भोगे हुए यथार्थ का साहित्य है।"

- ओमप्रकाश वाल्मीकि (दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र)

ओमप्रकाश वाल्मीकि हिंदी दलित साहित्य के सबसे सशक्त और प्रभावशाली रचनाकारों में से एक हैं। उनका जन्म 30 जून 1950 को उत्तर प्रदेश के मुज़फ्फरनगर ज़िले के बरला गाँव में हुआ था। वे वाल्मीकि (चूहड़ा) जाति से संबंधित थे, जिसे समाज में अत्यंत निम्न स्थान प्राप्त था। उनका बचपन घोर गरीबी, सामाजिक बहिष्कार और अपमान के वातावरण में बीता।

बाल्यावस्था में ही उन्हें जातिगत भेदभाव का सामना करना पड़ा। विद्यालय में उन्हें अलग बैठाया जाता था और उनसे झाड़ू लगवाने, मैदान साफ़ कराने जैसे कार्य कराए जाते थे। शिक्षकों और सहपाठियों द्वारा किया गया यह भेदभाव उनके मन पर गहरी छाप छोड़ गया, जो आगे चलकर उनके साहित्य का केंद्रीय विषय बना।

कठिन परिस्थितियों के बावजूद वाल्मीकि ने शिक्षा प्राप्त की और साहित्य के क्षेत्र में अपनी अलग पहचान बनाई। उनका जीवन स्वयं एक संघर्ष-कथा है, जिसमें व्यक्तिगत पीड़ा सामूहिक अनुभव में बदल जाती है। यही कारण है कि उनका लेखन केवल आत्मकथात्मक न होकर पूरे दलित समाज की आवाज़ बन जाता है। ओमप्रकाश वाल्मीकि का जीवन और व्यक्तित्व यह सिद्ध करता है कि संघर्ष, चेतना और लेखन मिलकर सामाजिक परिवर्तन का सशक्त माध्यम बन सकते हैं।

साहित्यिक योगदान : ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियों में दलित आत्मसंघर्ष

ओमप्रकाश वाल्मीकि के अनुसार, "दलित चेतना वह वैचारिक दृष्टि है जो दलितों से जुड़ी सांस्कृतिक, सामाजिक और ऐतिहासिक भ्रांतियों को तोड़ती है। जो व्यक्ति मानवीय अधिकारों से वंचित होकर समाज द्वारा तिरस्कृत किया गया है, वही दलित है, और इस यथार्थ की अनुभूति ही दलित चेतना का सार है।" (ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, पृ. 29)

ओमप्रकाश वाल्मीकि का साहित्यिक योगदान हिंदी दलित साहित्य को वैचारिक, संवेदनात्मक और सौंदर्यात्मक—तीनों स्तरों पर समृद्ध करता है। उनका लेखन दलित जीवन के भोगे हुए यथार्थ से उपजा है और इसी कारण उसमें प्रामाणिकता, आक्रोश तथा परिवर्तन की चेतना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। वाल्मीकि ने आत्मकथा, कहानी, कविता, आलोचना और नाटक विधाओं में सशक्त लेखन कर दलित साहित्य को एक ठोस वैचारिक आधार प्रदान किया।

कहानी-संग्रह - 'सलाम'

ओमप्रकाश वाल्मीकि का कहानी-संग्रह 'सलाम' दलित जीवन की सामाजिक, मानसिक और सांस्कृतिक गुलामी का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इस कहानी संग्रह में 14 कहानियां संकलित है। 'सलाम' यहाँ केवल अभिवादन नहीं, बल्कि सत्ता और जातिगत व्यवस्था के सामने आत्मसम्मान के निरंतर समर्पण का प्रतीक है। सलाम कहानी का

पात्र हरिश कहता है कि- "आप चाहे जो समझें…मैं इस रिवाज को आत्मविश्वास तोड़ने की साजिश मानता हूँ। यह 'सलाम' की रस्म बंद होनी चाहिए।"(ओमप्रकाश वाल्मीकि, 'सलाम' कहानी-संग्रह, पृ. 17)। इस संग्रह की कहानियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि जाति-आधारित भेदभाव केवल आर्थिक या सामाजिक स्तर तक सीमित नहीं है, बल्कि वह व्यक्ति की चेतना और आत्मछवि को भी प्रभावित करता है।

"सलाम" एक सामाजिक शिष्टाचार नहीं, बल्कि जाति-आधारित सत्ता को स्वीकार करने की बाध्यकारी प्रक्रिया है।"

सलाम कहानी संग्रह का प्रमुख विश्लेषणात्मक पक्ष यह है कि इसमें वाल्मीकि शोषण को केवल बाहरी घटना के रूप में नहीं दिखाते, बल्कि उसके मनोवैज्ञानिक प्रभावों को भी उजागर करते हैं। पात्र बार-बार अपमान सहते हुए भी व्यवस्था के प्रति प्रश्न उठाने लगते हैं। यही प्रश्नवाचक दृष्टि 'सलाम' को करुणा-प्रधान साहित्य से अलग करती है। लेखक दलित समाज को दया का पात्र न बनाकर संघर्षशील सामाजिक इकाई के रूप में प्रस्तुत करता है।

इस कहानी संग्रह की भाषा-शैली विश्लेषण की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। वाल्मीकि की भाषा अलंकारहीन, सीधी और यथार्थवादी है, जो सामाजिक विद्रूपताओं को बिना किसी भावुकता के सामने रखती है। इससे पाठक घटनाओं को संवेदनात्मक ही नहीं, वैचारिक स्तर पर भी समझ पाता है।

'सलाम' की कहानियाँ सामाजिक संरचना की आलोचना करते हुए यह संकेत देती हैं कि जब तक जाति-आधारित श्रेष्ठता की मानसिकता समाप्त नहीं होगी, तब तक सामाजिक समानता का दावा खोखला रहेगा। इस प्रकार 'सलाम' दलित साहित्य को प्रतिरोध और आत्मसम्मान की वैचारिक भूमि प्रदान करता है।(वाल्मीकि, 2023)

<u>कहानी-संग्रह - 'घुसपैठिये'</u>

घुसपैठिये कहानी-संग्रह में ओमप्रकाश वाल्मीकि दलित समाज की उस स्थिति का विश्लेषण करते हैं, जहाँ संवैधानिक अधिकार मिलने के बावजूद सामाजिक स्वीकृति नहीं मिलती। घुसपैठिये कहानी संग्रह में 12 कहानियां संकलित है। 'घुसपैठिये' शब्द एक गहरे प्रतीक के रूप में सामने आता है, जो यह दर्शाता है कि दलित जब शिक्षा, प्रशासन या बौद्धिक क्षेत्र में प्रवेश करता है, तो उसे अब भी संदेह और विरोध की दृष्टि से देखा जाता है। लेकिन-

"यह कहानी घुसपैठ की नहीं, बल्कि यह तय करने की कहानी है कि ' हम' कौन हैं और 'वे' कौन।"

इस संग्रह की कहानियाँ यह उजागर करती हैं कि आधुनिकता और लोकतंत्र के दावे सामाजिक व्यवहार में कितने सीमित हैं। वाल्मीकि व्यवस्था की उस मानसिकता पर प्रहार करते हैं, जो अवसरों पर एकाधिकार बनाए रखना चाहती है। विश्लेषणात्मक दृष्टि से यह संग्रह बताता है कि भेदभाव का स्वरूप बदला है, समाप्त नहीं हुआ है—वह अब खुले अत्याचार के बजाय सूक्ष्म बहिष्कार के रूप में उपस्थित है।

पात्रों की आंतरिक संघर्ष-स्थिति इस संग्रह की बड़ी विशेषता है। वे अपनी योग्यता सिद्ध करने के बावजूद "अयोग्य" ठहराए जाते हैं। यह मानसिक द्वंद्व पाठक को सामाजिक न्याय की वास्तविक स्थिति पर पुनर्विचार करने के लिए विवश करता है।

भाषा तार्किक, व्यंग्यात्मक और वैचारिक है। लेखक भावुकता से बचते हुए तथ्य और अनुभव के माध्यम से सामाजिक पाखंड को उजागर करता है। 'घुसपैठिये' यह स्पष्ट करता है कि सामाजिक परिवर्तन केवल कानून से नहीं, बल्कि सोच के परिवर्तन से संभव है। यह संग्रह दलित साहित्य को सामाजिक विश्लेषण का सशक्त माध्यम बनाता है।(वाल्मीकि, 2021)

दलित विमर्श : 'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र'

ओमप्रकाश वाल्मीकि की आलोचनात्मक कृति **'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र'** दलित साहित्य के सैद्धांतिक विमर्श की एक आधारभूत रचना मानी जाती है। इस पुस्तक में वाल्मीकि पारंपरिक साहित्यिक सौंदर्यबोध की आलोचना करते हुए उस दृष्टि को अस्वीकार करते हैं, जो साहित्य के सौंदर्य को कल्पनाशील अलंकारों, शिल्प-सौंदर्य और भावुकता तक सीमित कर देती है। उनके अनुसार,

"जिस साहित्य का संबंध जीवन की वास्तविक परिस्थितियों से नहीं है, वह केवल मनोरंजन का साधन बनकर रह जाता है।"

वाल्मीकि यह स्पष्ट करते हैं कि दलित समाज का जीवन पीड़ा, अपमान, संघर्ष और अन्याय से निर्मित है; इसलिए ऐसे समाज का साहित्य भी उसी यथार्थ से उपजा होना चाहिए। वे लिखते हैं—"दलित साहित्य का सौंदर्य कल्पना में नहीं, भोगे हुए यथार्थ की सच्ची अभिव्यक्ति में निहित है"। इस कथन के माध्यम से वे अनुभव-आधारित सौंदर्यशास्त्र की स्थापना करते हैं, जिसमें सत्य, प्रतिरोध और सामाजिक चेतना को केंद्रीय स्थान प्राप्त है।

उनके अनुसार, दलित साहित्य का उद्देश्य करुणा या सहानुभूति अर्जित करना नहीं, बल्कि व्यवस्था की अमानवीयता को उजागर करना है। इसी संदर्भ में वे कहते हैं—"दलित साहित्य का सौंदर्य पाठक को झकझोरता है, क्योंकि वह सामाजिक अन्याय के विरुद्ध खड़ा होता है"। यह दृष्टि दलित साहित्य को भावात्मक अभिव्यक्ति से आगे बढ़ाकर एक सशक्त वैचारिक हस्तक्षेप बनाती है। इस प्रकार, 'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र' दलित साहित्य को एक वैचारिक, आलोचनात्मक और परिवर्तनकारी साहित्यिक आंदोलन के रूप में स्थापित करती है, जहाँ सौंदर्य का संबंध सत्य, संघर्ष और सामाजिक न्याय से जुड़ जाता है (वाल्मीकि, 2003)।

ओमप्रकाश वाल्मीकि का दलित साहित्य : सामाजिक प्रभाव और समकालीन प्रासंगिकता

ओमप्रकाश वाल्मीकि का साहित्य केवल साहित्यिक जगत तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उसने भारतीय समाज में दलित चेतना, सामाजिक विमर्श और वैचारिक संघर्ष को व्यापक स्तर पर प्रभावित किया है। उनके लेखन ने दलित समाज के अनुभवों को केंद्र में लाकर मुख्यधारा साहित्य और समाज दोनों को आत्ममंथन के लिए विवश किया।

- **दलित अस्मिता और आत्मसम्मान का सुदृढ़ीकरण**

वाल्मीकि जी कहते हैं कि- "दलितों की सबसे प्राथमिक आवश्यकता अपनी अस्मिता की तलाश है, जो हजारों साल के इतिहास में दबा दी गई है।"(वाल्मीकि, दलित साहित्य: अनुभव, संघर्ष एवं यथार्थ, 2020, पृ. 07)। वाल्मीकि की रचनाओं ने दलित समाज में आत्मसम्मान और अस्मिता-बोध को गहराई से सुदृढ़ किया है। *जूठन* और *सलाम* जैसी कृतियाँ दलित जीवन की दबी-कुचली पीड़ाओं को सार्वजनिक विमर्श का हिस्सा बनाती हैं, जिससे निजी अनुभव सामाजिक सत्य में रूपांतरित होते हैं। यह साहित्य केवल दुःख का बयान नहीं, बल्कि ऐतिहासिक अन्याय के विरुद्ध चेतना और प्रतिरोध की भाषा है। जहां सदियों से दलितों को नीच और अछूत बताकर उनमें हीनता का बोध भरा गया वही वाल्मीकि के लेखन ने दलित समुदाय को अपने अनुभवों को अभिव्यक्त करने, उन्हें वैध ठहराने और सामाजिक संरचनाओं पर प्रश्न उठाने का बौद्धिक साहस प्रदान किया है, जिससे सामूहिक आत्मविश्वास और सामाजिक पहचान को नई शक्ति मिलती है।

- **मुख्यधारा साहित्य और आलोचना का प्रभाव**

वाल्मीकि के लेखन ने हिंदी साहित्य की पारंपरिक आलोचनात्मक दृष्टि को चुनौती दी। उनके हस्तक्षेप के बाद साहित्यिक आलोचना में जाति, श्रम और सामाजिक असमानता जैसे प्रश्न केंद्रीय विषय बने।

"मुख्यधारा का साहित्य दलित जीवन को हाशिये से देखने का आदी रहा है इस वर्चस्वशाली साहित्यिक दृष्टि ने सामाजिक यथार्थ को विकृत किया है।"

यह विचार मुख्यधारा साहित्य की वर्ग–जाति आधारित संरचना को उजागर करता है और यह भी दिखाता है कि तथाकथित 'तटस्थ' साहित्यिक दृष्टि वास्तव में वर्चस्वशाली सामाजिक शक्तियों से संचालित होती रही है। मुख्यधारा और दलित साहित्य जैसे लेखों ने यह स्थापित किया कि जिस साहित्य में दलित जीवन की वास्तविक पीड़ा और संघर्ष के लिए स्थान नहीं है, वह समग्र साहित्य होने का दावा नहीं कर सकता। साहित्य का मूल्यांकन केवल कलात्मक मानकों से नहीं, बल्कि उसके सामाजिक सरोकारों से भी होना चाहिए। (वाल्मीकि, 2023)

- **सामाजिक आंदोलनों और वैचारिक विमर्श में भूमिका**

ओमप्रकाश वाल्मीकि का साहित्य दलित आंदोलन और आंबेडकरवादी विमर्श का अभिन्न हिस्सा रहा है। उनकी कविताएँ और नाटक सामाजिक आंदोलनों में प्रतिरोध की भाषा बने। *सफाई देवता* जैसे विमर्श ने सफाईकर्मियों की अमानवीय स्थिति को उजागर कर श्रम और जाति के प्रश्न को सार्वजनिक बहस का विषय बनाया। इस प्रकार उनका साहित्य सामाजिक चेतना को सक्रिय करता है। *सलाम*, *घुसपैठिये* और *जूठन* जैसे लेखन दलित अस्मिता, प्रतिरोध और सामूहिक चेतना को संगठित करते हैं। इस प्रकार वाल्मीकि का साहित्य सामाजिक आंदोलनों को वैचारिक दिशा और नैतिक ऊर्जा प्रदान करता है।

- **शिक्षा, पाठ्यक्रम और अकादमिक जगत में प्रासंगिकता**

आज ओमप्रकाश वाल्मीकि की रचनाएँ विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में शामिल हैं। यह तथ्य दर्शाता है कि उनका साहित्य केवल वैकल्पिक नहीं, बल्कि अकादमिक रूप से भी मान्य और आवश्यक है। दलित अध्ययन, सामाजिक न्याय और मानवाधिकार से जुड़े पाठ्यक्रमों में उनकी रचनाएँ विद्यार्थियों को जाति-व्यवस्था की वास्तविकताओं से परिचित कराती हैं।

समकालीन भारत में, जहाँ जातिगत भेदभाव, सामाजिक बहिष्कार और असमानता के प्रश्न आज भी विद्यमान हैं, वाल्मीकि का साहित्य अत्यंत प्रासंगिक है। उनका लेखन यह स्मरण कराता है कि संवैधानिक समानता के बावजूद सामाजिक स्तर पर समानता की लड़ाई अभी अधूरी है। इस संदर्भ में वाल्मीकि का साहित्य आंबेडकरवादी चेतना को जीवंत बनाए रखने का कार्य करता है। इस प्रकार ओमप्रकाश वाल्मीकि का साहित्य सामाजिक हस्तक्षेप, वैचारिक प्रतिरोध और समकालीन चेतना का सशक्त माध्यम बनकर उभरता है।

निष्कर्ष

कितने सवाल खड़े हैं
कितनों के दोगे तुम उत्तर
मैं शोषित, पीड़ित हूँ
अन्त नहीं मेरी पीड़ा का
जब तक तुम बैठे हो
काले नाग बने फन फैलाये

मेरी सम्पत्ति पर।

(वाल्मीकि, सदियों का संताप, संपूर्ण कविताएँ, 2024, पृ. 33)

ओमप्रकाश वाल्मीकि का साहित्य हिंदी दलित साहित्य की यात्रा में एक निर्णायक और परिवर्तनकारी हस्तक्षेप के रूप में सामने आता है। वाल्मीकि ने अपनी कृतियों के माध्यम से बताया की दलित साहित्य मात्र दलितों का नहीं बल्कि पूरे मानव समाज का साहित्य है। उनका लेखन न केवल दलित समाज के भोगे हुए यथार्थ को स्वर देता है, बल्कि उस यथार्थ को वैचारिक चेतना, प्रतिरोध और सामाजिक परिवर्तन की दिशा में रूपांतरित भी करता है।

सामाजिक प्रभाव के स्तर पर वाल्मीकि का साहित्य दलित अस्मिता, आत्मसम्मान और सामूहिक चेतना को सुदृढ़ करता है। उनके लेखन ने मुख्यधारा के साहित्य और आलोचना को जाति, श्रम और वंचना जैसे प्रश्नों से रूबरू कराया तथा दलित अनुभवों को साहित्यिक वैधता प्रदान की। उनकी कृतियाँ दलितों को मुख्यधारा (केन्द्र) में अपना हक और अधिकार दिलाने, उनसे रुबरु कराने के साथ ही यह सवाल करने की भी शक्ति देती है कि अभी भी मुख्याधारा में हमारी स्थिति क्या है? हम मुख्यधारा में क्या स्थान रखते है?, हमारी अपनी ही चीजों में हमारा हक और हिस्सा कितना है? वाल्मीकि दलित साहित्य की प्रासंगिकता बताते हुए कहते है कि यह साहित्य इस लिए जरूरी है क्योंकि ये दलितों पर विचार-विमर्श करने, उन्हें अपने हक के लिए लड़ने और आन्दोलन करने को प्रेरित करती हैं। दलित जातियों का आंदोलन एवं दलित-विमर्श का मुद्दा सीधे तौर पर 'मुक्ति' से जुड़ा है। समकालीन भारत में, जहाँ संवैधानिक समानता के बावजूद सामाजिक असमानता और भेदभाव की समस्याएँ बनी हुई हैं, वाल्मीकि का साहित्य आज भी उतना ही प्रासंगिक और आवश्यक है।

अंततः कहा जा सकता है कि ओमप्रकाश वाल्मीकि का साहित्य केवल अतीत के दु:खों का संस्मरण नहीं, बल्कि भविष्य के लिए सामाजिक न्याय, समानता और मानवीय गरिमा की आकांक्षा का घोष है। उनके साहित्यिक लेखन ने हाशिये के लोगों और उनके द्वारा लिखे अनुभवजन्य साहित्य की ओर मुख्यधारा के साहित्य का ध्यान आकृष्ट किया और उसे मुख्यधारा में लाने का सफल एवं सशक्त माध्यम बना। उनका रचनात्मक अवदान हिंदी दलित साहित्य को न केवल दिशा देता है, बल्कि उसे सामाजिक परिवर्तन की एक सशक्त वैचारिक शक्ति के रूप में स्थापित करता है।

संदर्भ सूची –

1. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. (2021). *घुसपैठिये*. (कहानी-संग्रह). (द्वितीय संस्करण). नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन।
2. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. (2023). *सलाम*. (कहानी-संग्रह). (षष्ठ संस्करण). नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन।
3. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. (2022). *जूठन: एक दलित की आत्मकथा*. (नवम संस्करण). नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन।
4. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. (2022). *दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र*. (चतुर्थ संस्करण). नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन।
5. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. (2023). *मुख्यधारा और दलित साहित्य*. (प्रथम संस्करण). नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन।
6. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. (2024). सदियों का संताप**.** *संपूर्ण कविताएँ* (प्रथम संस्करण). नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन।

7. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. (2020). दलित साहित्य: अनुभव, संघर्ष एवं यथार्थ (द्वितीय संस्करण). नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन।
8. गुरु, जी. (2009). *दलित चिंतन और सामाजिक न्याय*. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
9. रेगे, शरद पाटिल. (2013). *दलित स्त्रीवाद और सामाजिक परिवर्तन*. नई दिल्ली: सेज प्रकाशन।
10. कर्दम, जयप्रकाश (2009). दलित विमर्श: साहित्य के आइने में. गाज़ियाबाद: साहित्य संस्थान।
11. भारती, कँवल (2004). दलित विमर्श की भूमिका. (तृतीय संस्करण), इलाहाबाद: इतिहासबोध प्रकाशन।
12. महालिंगे, डॉ. पांडुरंग वैजनाथ. (2010). दलित अवधारणा एवं ओमप्रकाश वाल्मीकि का साहित्य (प्रथम संस्करण). दिल्ली: गौतम बुक सेंटर।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 87-91
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

डिजिटल मार्केटिंग का आधुनिक व्यवसाय एवं उपभोक्ता व्यवहार पर प्रभाव: एक अध्ययन

भारत सिंह जामोद
सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य)
वीर बलिदानी खाज्या नायक शास. स्नातकोत्तर महाविधालय सेंधवा बड़वानी (म.प्र.) 451666

सारांश (Abstract)
वर्तमान डिजिटल युग में इंटरनेट, स्मार्टफोन और सोशल मीडिया के तीव्र विस्तार ने विपणन की पारंपरिक अवधारणाओं में महत्वपूर्ण परिवर्तन किया है। आज व्यवसाय केवल समाचार-पत्र, टेलीविजन, रेडियो और होर्डिंग जैसे पारंपरिक माध्यमों पर निर्भर नहीं हैं, बल्कि ग्राहकों तक पहुँचने के लिए सोशल मीडिया, सर्च इंजन, ई-मेल, वेबसाइट, मोबाइल एप्लीकेशन, वीडियो कंटेंट तथा इन्फ्लुएंसर मार्केटिंग जैसे डिजिटल माध्यमों का उपयोग कर रहे हैं। डिजिटल मार्केटिंग ने व्यवसायों को कम लागत में बड़े और लक्षित ग्राहक समूह तक पहुँचने का अवसर प्रदान किया है। भारत में इंटरनेट और सोशल मीडिया के बढ़ते उपयोग ने डिजिटल मार्केटिंग के महत्व को और अधिक बढ़ा दिया है। उपलब्ध आँकड़ों के अनुसार 2025 की शुरुआत में भारत में लगभग 806 मिलियन इंटरनेट उपयोगकर्ता तथा 491 मिलियन सोशल मीडिया user identities थीं।
इस शोध-पत्र का उद्देश्य डिजिटल मार्केटिंग की अवधारणा, प्रमुख माध्यमों, व्यवसायों पर इसके प्रभाव तथा उपभोक्ता व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन करना है। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि डिजिटल मार्केटिंग ने व्यवसायों के लिए ग्राहक तक पहुँचने, ब्रांड जागरूकता बढ़ाने, बिक्री में वृद्धि करने और ग्राहकों के साथ प्रत्यक्ष संवाद स्थापित करने के नए अवसर पैदा किए हैं। साथ ही, डेटा गोपनीयता, साइबर सुरक्षा, गलत सूचना और डिजिटल प्रतिस्पर्धा जैसी चुनौतियाँ भी सामने आई हैं।
मुख्य शब्द: डिजिटल मार्केटिंग, सोशल मीडिया मार्केटिंग, उपभोक्ता व्यवहार, ई-कॉमर्स, डिजिटल विज्ञापन, ऑनलाइन खरीदारी।

1. प्रस्तावना

मार्केटिंग किसी भी व्यवसाय की सफलता का महत्वपूर्ण आधार है। पारंपरिक रूप से कंपनियाँ अपने उत्पादों और सेवाओं के प्रचार के लिए समाचार-पत्र, रेडियो, टेलीविजन, पोस्टर, बैनर और प्रत्यक्ष बिक्री जैसे माध्यमों का

उपयोग करती थीं। इंटरनेट और डिजिटल तकनीक के विकास के साथ मार्केटिंग का स्वरूप तेजी से बदल गया है। डिजिटल मार्केटिंग इसी परिवर्तन का परिणाम है।

डिजिटल मार्केटिंग का अर्थ डिजिटल माध्यमों और इंटरनेट आधारित तकनीकों का प्रयोग करके उत्पादों, सेवाओं और ब्रांड का प्रचार-प्रसार करना है। इसमें वेबसाइट, सर्च इंजन, सोशल मीडिया, ई-मेल, मोबाइल एप्लीकेशन, ऑनलाइन विज्ञापन, वीडियो तथा अन्य डिजिटल प्लेटफॉर्म शामिल हैं।

भारत में डिजिटल अर्थव्यवस्था का विस्तार डिजिटल मार्केटिंग के लिए विशेष अवसर पैदा कर रहा है। डाटा रिपोर्टल के अनुसार 2025 की शुरुआत में भारत में 806 मिलियन इंटरनेट उपयोगकर्ता थे और इंटरनेट पेनेट्रेशन 55.3 प्रतिशत था। उसी समय सोशल मीडिया उपयोगकर्ता की संख्या 491 मिलियन थी। बाद के 2026 India report में 2025 के अंत तक इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या लगभग 1.03 बिलियन बताई गई है। इससे पता चलता है कि भारत डिजिटल व्यवसाय के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण बाजार बन चुका है।

2. अध्ययन के उद्देश्य

इस शोध-पत्र के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

1. डिजिटल मार्केटिंग की अवधारणा एवं प्रकृति को समझना।
2. डिजिटल मार्केटिंग के प्रमुख माध्यमों का अध्ययन करना।
3. डिजिटल मार्केटिंग का उपभोक्ता व्यवहार पर प्रभाव जानना।
4. व्यवसायों के लिए डिजिटल मार्केटिंग के लाभों का अध्ययन करना।
5. डिजिटल मार्केटिंग से संबंधित प्रमुख चुनौतियों की पहचान करना
6. भारत में डिजिटल मार्केटिंग की संभावनाओं का विश्लेषण करना।

3. शोध पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन मुख्यतः **द्वितीयक आँकड़ों (Secondary Data)** पर आधारित वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन है। इसके लिए प्रकाशित शोध-पत्रों, डिजिटल रिपोर्टों तथा उपलब्ध ऑनलाइन शोध-सामग्री का उपयोग किया गया है। भारत के डिजिटल उपयोग से संबंधित आँकड़ों के लिए डाटा रिपोर्टल की रिपोर्ट तथा डिजिटल मार्केटिंग और उपभोक्ता व्यवहार से संबंधित प्रकाशित शोध-अध्ययनों को संदर्भ के रूप में लिया गया है।

इस अध्ययन में डिजिटल मार्केटिंग के विभिन्न माध्यमों और उनके व्यवसाय तथा उपभोक्ताओं पर प्रभाव का वैचारिक विश्लेषण किया गया है।

4. डिजिटल मार्केटिंग के प्रमुख माध्यम

4.1 सर्च इंजन ऑप्टिमाइजेशन (SEO)

SEO के माध्यम से वेबसाइट को इस प्रकार तैयार किया जाता है कि वह Google जैसे सर्च इंजन के परिणामों में बेहतर स्थान प्राप्त कर सके। इससे व्यवसाय बिना हर बार भुगतान किए संभावित ग्राहकों तक पहुँच सकता है। सही keywords, गुणवत्तापूर्ण content और तकनीकी रूप से बेहतर वेबसाइट SEO के महत्वपूर्ण तत्व हैं।

4.2 सोशल मीडिया मार्केटिंग

Facebook, Instagram, YouTube, LinkedIn आदि प्लेटफॉर्म व्यवसायों को सीधे उपभोक्ताओं से जुड़ने का अवसर देते हैं। सोशल मीडिया पर फोटो, वीडियो, reels, stories और informative content के माध्यम से ब्रांड को लोकप्रिय बनाया जा सकता है।

भारत में सोशल मीडिया का विशाल आधार डिजिटल मार्केटिंग की संभावनाओं को बढ़ाता है। 2025 की शुरुआत में भारत में 491 मिलियन social media user identities दर्ज की गई थीं।

4.3 कंटेंट मार्केटिंग

कंटेंट मार्केटिंग में ग्राहकों को आकर्षित करने के लिए उपयोगी और प्रासंगिक सामग्री तैयार की जाती है। इसमें ब्लॉग, वीडियो, ई-बुक, इन्फोग्राफिक, educational posts और podcasts शामिल हो सकते हैं। अच्छी सामग्री ग्राहक के विश्वास को बढ़ाने में सहायक होती है।

4.4 ई-मेल मार्केटिंग

ई-मेल मार्केटिंग के माध्यम से कंपनियाँ ग्राहकों को नए उत्पादों, ऑफर, छूट और सेवाओं की जानकारी सीधे भेज सकती हैं। यह विशेष रूप से उन व्यवसायों के लिए उपयोगी है जिनके पास ग्राहकों का व्यवस्थित database है।

4.5 इन्फ्लुएंसर मार्केटिंग

आज सोशल मीडिया influencers किसी उत्पाद या सेवा की लोकप्रियता को प्रभावित कर सकते हैं। 2024 में प्रकाशित एक भारतीय अध्ययन ने Instagram सहित influencer-based digital advertising और online buying behaviour के संबंध का अध्ययन किया तथा influencers, social media और consumer psychology को महत्वपूर्ण variables के रूप में देखा।

4.6 ऑनलाइन विज्ञापन

Google Ads, social media advertisements और अन्य digital advertising platforms के माध्यम से कंपनियाँ अपने विज्ञापन विशेष आयु, स्थान, रुचि या व्यवहार वाले लोगों तक पहुँचा सकती हैं। इस कारण डिजिटल विज्ञापन पारंपरिक विज्ञापन की तुलना में अधिक targeted हो सकता है।

5. डिजिटल मार्केटिंग का उपभोक्ता व्यवहार पर प्रभाव

डिजिटल मार्केटिंग ने उपभोक्ता के खरीदारी व्यवहार में महत्वपूर्ण बदलाव किए हैं। पहले ग्राहक उत्पाद खरीदने से पहले सीमित स्रोतों से जानकारी प्राप्त करते थे, जबकि आज वे किसी भी उत्पाद की कीमत, गुणवत्ता, reviews और alternatives की जानकारी कुछ ही मिनटों में प्राप्त कर सकते हैं।

सोशल मीडिया marketing उपभोक्ता की पसंद और खरीद निर्णय को प्रभावित कर सकती है। 2024 के एक अध्ययन में social media marketing और consumer behaviour के संबंध का अध्ययन किया गया तथा यह बताया गया कि डिजिटल प्लेटफॉर्म आधुनिक व्यवसायों के marketing goals प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

डिजिटल मार्केटिंग का एक महत्वपूर्ण प्रभाव **customer reviews और ratings** के रूप में देखा जाता है। खरीदारी से पहले ग्राहक दूसरे लोगों की प्रतिक्रियाएँ पढ़ता है। सकारात्मक reviews उत्पाद की बिक्री को बढ़ा सकते हैं, जबकि नकारात्मक reviews ग्राहक को खरीदारी से रोक सकते हैं।

इसके अतिरिक्त personalized advertising भी उपभोक्ता व्यवहार को प्रभावित करती है। जब ग्राहक किसी वेबसाइट या सोशल मीडिया पर किसी उत्पाद को देखने के बाद उसी प्रकार के विज्ञापन अन्य डिजिटल प्लेटफॉर्म पर देखता है, तो उसके खरीद निर्णय पर प्रभाव पड़ सकता है।

6. व्यवसायों के लिए डिजिटल मार्केटिंग के लाभ

डिजिटल मार्केटिंग का सबसे बड़ा लाभ इसकी **व्यापक पहुँच** है। एक छोटा व्यवसाय भी सोशल मीडिया या वेबसाइट के माध्यम से अपने स्थानीय क्षेत्र से बाहर के ग्राहकों तक पहुँच सकता है।

दूसरा प्रमुख लाभ **कम लागत में प्रचार** है। छोटे व्यवसायों के लिए पारंपरिक टेलीविजन या बड़े समाचार-पत्रों में विज्ञापन देना महँगा हो सकता है, जबकि डिजिटल प्लेटफॉर्म पर सीमित बजट से भी अभियान शुरू किया जा सकता है।

तीसरा लाभ **लक्षित विज्ञापन** है। व्यवसाय अपने संभावित ग्राहकों की रुचि, आयु, स्थान और अन्य उपलब्ध संकेतों के आधार पर विज्ञापन अभियान तैयार कर सकते हैं।

चौथा लाभ **मापन एवं विश्लेषण** है। डिजिटल marketing campaign में views, clicks, engagement, conversion और अन्य metrics को मापा जा सकता है। इससे व्यवसाय यह समझ सकता है कि कौन-सा अभियान प्रभावी रहा और कहाँ सुधार की आवश्यकता है।

पाँचवाँ लाभ **ग्राहक संबंध** है। सोशल मीडिया और messaging platforms के माध्यम से ग्राहक सीधे कंपनी से प्रश्न पूछ सकते हैं। इससे व्यवसाय और ग्राहक के बीच संबंध मजबूत हो सकते हैं।

7. डिजिटल मार्केटिंग की प्रमुख चुनौतियाँ

डिजिटल मार्केटिंग के अनेक लाभों के बावजूद कुछ महत्वपूर्ण चुनौतियाँ भी हैं। सबसे पहली चुनौती **डेटा गोपनीयता** है। कंपनियों द्वारा ग्राहकों के डेटा के उपयोग में पारदर्शिता और सुरक्षा अत्यंत आवश्यक है।

दूसरी चुनौती **साइबर सुरक्षा** है। ऑनलाइन व्यवसायों को hacking, phishing, fraud और डाटा चोरी जैसे खतरों से सावधान रहना पड़ता है।

तीसरी चुनौती **अत्यधिक प्रतिस्पर्धा** है। डिजिटल प्लेटफॉर्म पर लगभग हर व्यवसाय उपस्थित है। इसलिए ग्राहक का ध्यान आकर्षित करना कठिन होता जा रहा है।

चौथी चुनौती **गलत सूचना और fake reviews** है। गलत जानकारी या नकली reviews उपभोक्ता के निर्णय को प्रभावित कर सकते हैं।

पाँचवीं चुनौती **digital divide** है। भारत में इंटरनेट उपयोग तेजी से बढ़ रहा है, लेकिन अभी भी बड़ी संख्या में लोग इंटरनेट से बाहर हैं। 2025 की शुरुआत में लगभग 652 मिलियन लोग भारत में इंटरनेट का उपयोग नहीं कर रहे थे, डाटा रिपोर्टल के अनुमान के अनुसार। इसलिए केवल डिजिटल माध्यमों पर निर्भर marketing strategy हर ग्राहक तक नहीं पहुँच सकती।

8. भारत में डिजिटल मार्केटिंग की संभावनाएँ

भारत में डिजिटल मार्केटिंग का भविष्य अत्यंत व्यापक दिखाई देता है। स्मार्टफोन, सस्ती इंटरनेट सेवाओं, डिजिटल भुगतान और ई-कॉमर्स के विस्तार ने डिजिटल व्यवसाय को बढ़ावा दिया है।

छोटे शहरों और ग्रामीण क्षेत्रों में भी इंटरनेट का विस्तार व्यवसायों के लिए नए बाजार खोल रहा है। स्थानीय दुकानदार, छोटे निर्माता, coaching institutes, restaurants, fashion businesses और service providers सोशल मीडिया तथा अन्य digital platforms के माध्यम से अपने ग्राहकों तक पहुँच सकते हैं।

विशेष रूप से short-video content, influencer marketing, artificial intelligence आधारित personalization, voice search और mobile marketing भविष्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। व्यवसायों को केवल विज्ञापन पर निर्भर रहने के बजाय उपयोगी content, customer experience और विश्वास पर ध्यान देना होगा।

9. निष्कर्ष

अध्ययन से स्पष्ट होता है कि डिजिटल मार्केटिंग आधुनिक व्यवसाय व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुकी है। इंटरनेट और सोशल मीडिया के बढ़ते उपयोग ने कंपनियों को ग्राहकों तक तेजी से और लक्षित तरीके

से पहुँचने का अवसर दिया है। डिजिटल मार्केटिंग ने न केवल विज्ञापन के स्वरूप को बदला है, बल्कि उपभोक्ता के सूचना प्राप्त करने, उत्पादों की तुलना करने और खरीदारी करने के तरीके को भी बदल दिया है।

भारत में इंटरनेट उपयोगकर्ताओं और सोशल मीडिया audience का विस्तार डिजिटल मार्केटिंग के लिए विशाल संभावनाएँ प्रस्तुत करता है। हालांकि डेटा सुरक्षा, साइबर अपराध, fake reviews, privacy और digital divide जैसी चुनौतियों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता।

अतः आधुनिक व्यवसायों के लिए आवश्यक है कि वे डिजिटल मार्केटिंग को केवल बिक्री का माध्यम न मानकर **ग्राहक संबंध, ब्रांड निर्माण, सूचना प्रदान करने और दीर्घकालीन व्यवसाय विकास की रणनीति** के रूप में अपनाएँ। भविष्य में वही व्यवसाय अधिक सफल होंगे जो तकनीक के साथ-साथ ग्राहक की आवश्यकताओं, विश्वास और अनुभव को प्राथमिकता देंगे।

संदर्भ (References)

1. डाटा रिपोर्टल. *Digital 2025: India*. India digital and social media statistics.
2. डाटा रिपोर्टल. *Digital 2026: India*. India digital adoption and internet statistics.
3. Jhinkwan, M., Upadhyay, A., & Bhatt, C. (2024). *Impact of Digital Advertising by the Influencers on Consumers' Online Buying Behaviour (Special Reference to Instagram).* Indian Journal of Mass Communication and Journalism.
4. Shetty, H. K. (2024). *Impact of social media marketing on consumer behavior: A comparative study of traditional marketing channels and digital platforms.* BOHR International Journal of Advances in Management Research.
5. Kaurabhatti, C. P., & Shrivastava, M. (2024). *Online Consumer Behavior and Social Media Marketing Impact.* ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts.

मो. न. 9617287440 Email ID bharatsinghjamod@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 92-96
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

"अग्निदेव का त्रिविध स्वरुप"
गृह्य, दाक्षिणात्य एवं आहवनीय का शास्त्रीय विवेचन

संदीप उपाध्याय
शोधार्थी,
डी.ए.वी.पी.जी. कॉलेज लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

वैदिक परंपरा में अग्निदेव का स्थान अत्यंत केन्द्रीय और मुख्य माना गया है | सम्पूर्ण वैदिक धर्म की सरंचना यज्ञ पर आधारित है, और यज्ञ की आत्मा के रूप में अग्नि को प्रतिष्ठित किया गया है | अग्निदेव को समर्पित ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र अग्नि की स्तुति से प्रारम्भ होता है –

अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवम् ऋत्विजम् |

(ऋग्वेद १.१.१.)

ऋग्वेद के इस प्रथम मन्त्र में अग्नि को **'पुरोहित' 'ऋत्विज'** तथा **'देव'** इन तीनों नामो से सम्बोधित किया गया है, ऋग्वेद में लगभग २०० सूक्तों में अग्निदेवता का वर्णन है, जिससे स्पष्ट होता है कि अग्निदेवता केवल एक प्राकृतिक तत्व नहीं, अपितु यह देव एवं मनुष्य के मध्य सेतु का कार्य करने वाला दिव्य तत्व है |

वेद के अन्य ब्राह्मण ग्रंथो में भी अग्नि का वर्णन प्राप्त होता है, ब्राह्मण ग्रंथो में अग्नि को यज्ञ का मुख भी कहा जाता है | क्योंकि समस्त हवि अग्नि के माध्यम से देवतावों तक पहुँचती है | इस प्रकार अग्नि वैदिक धर्म में केवल अनुष्ठानिक साधन न होकर, सम्पूर्ण कर्मकाण्डीय संरचना का मूल आधार है |

वैदिक परंपरा में अग्निदेव का स्वरूप एकरूप न होकर त्रिविध माना गया है, जिसे गृह्य अग्नि, दाक्षिणात्य अग्नि और आहवनीय अग्नि के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। यह त्रिविधता केवल यज्ञीय व्यवस्था की तकनीकी रचना नहीं, बल्कि भारतीय दार्शनिक चिंतन में मानव जीवन, चेतना और ब्रह्म-साधना की एक गहन प्रतीकात्मक संरचना को व्यक्त करती है। ब्राह्मण ग्रंथों में अग्नि को यज्ञ का प्राण और देवताओं का मुख कहा गया है, किंतु उसी अग्नि के भीतर ये तीन स्वरूप मानव अस्तित्व के तीन आयामों को प्रकट करते हैं।

गृह्य अग्नि वैदिक जीवन की मूल और आधारभूत अग्नि है। यह गृहस्थाश्रम में स्थापित होकर जीवनपर्यन्त प्रज्वलित रहती है और समस्त संस्कारों तथा नित्य कर्मों की साक्षी बनती है। शास्त्रीय दृष्टि से गृह्य अग्नि स्थायित्व,

निरंतरता और परंपरा का प्रतीक है। यह मनुष्य के भीतर स्थित प्राणाग्नि के समान है, जो जीवन-शक्ति को सक्रिय रखती है और उसे सामाजिक तथा नैतिक कर्तव्यों से जोड़ती है। गृह्य अग्नि के माध्यम से वैदिक दर्शन यह संकेत करता है कि धर्म केवल आध्यात्मिक साधना नहीं, बल्कि गृहस्थ जीवन में कर्तव्य और उत्तरदायित्व के सम्यक् निर्वाह का मार्ग है।

दाक्षिणात्य अग्नि का स्वरूप गृह्य अग्नि से भिन्न और अधिक गूढ़ है। इसका संबंध दक्षिण दिशा से है, जिसे शास्त्रों में पितृलोक और यमलोक का मार्ग माना गया है। यह अग्नि पितृयज्ञ, श्राद्ध और मृत्यु-संस्कारों में प्रयुक्त होती है और मनुष्य को पूर्वजों की स्मृति तथा मृत्यु-बोध से जोड़ती है। दाक्षिणात्य अग्नि दार्शनिक दृष्टि से जीवन के संक्रमण का प्रतीक है। यह स्मरण कराती है कि अस्तित्व केवल वर्तमान क्षण में सीमित नहीं, बल्कि अतीत, वंश और परंपरा की निरंतर धारा है। इस अग्नि के माध्यम से वैदिक चिंतन मृत्यु को अंत नहीं, बल्कि चेतना के रूपांतरण के रूप में देखता है, जहाँ आत्मा स्थूल शरीर त्यागकर सूक्ष्म लोक में प्रवेश करती है।

आहवनीय अग्नि त्रिविध अग्नि का सर्वोच्च और सर्वाधिक पवित्र स्वरूप है। यह पूर्व दिशा में स्थापित होती है और देवताओं के आह्वान का माध्यम मानी जाती है। समस्त प्रमुख यज्ञों में हवि का अर्पण इसी अग्नि में किया जाता है। आहवनीय अग्नि का दार्शनिक अर्थ केवल देव-पूजा तक सीमित नहीं, बल्कि यह मानव चेतना के उत्कर्ष और मोक्ष-साधना का प्रतीक है। उपनिषदों के आलोक में यह अग्नि उस ज्ञान-ज्वाला का संकेत करती है, जो कामनाओं को भस्म कर आत्मा को ब्रह्मचेतना से जोड़ती है। इस प्रकार आहवनीय अग्नि लौकिक अस्तित्व से पार जाकर आध्यात्मिक पूर्णता की ओर ले जाने वाली साधना-अग्नि है।

इन तीनों अग्नियों का समन्वित स्वरूप वैदिक दर्शन में मानव जीवन की संपूर्ण यात्रा को रूपायित करता है। गृह्य अग्नि जीवन और कर्म का आधार है, दाक्षिणात्य अग्नि स्मृति और मृत्यु का बोध कराती है, और आहवनीय अग्नि साधना और मोक्ष की दिशा में अग्रसर करती है। इस दृष्टि से त्रिविध अग्नि केवल यज्ञ की व्यवस्था नहीं, बल्कि भारतीय दार्शनिक परंपरा में अस्तित्व, चेतना और ब्रह्मत्व की एक समग्र प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति है, जिसमें मानव जीवन स्वयं एक निरंतर यज्ञ के रूप में प्रतिष्ठित हो जाता है।

वैदिक ग्रंथो में अग्निदेव का स्वरुप त्रिविध रूप में प्रतिष्ठित किया गया है |

१. **गार्ह्यपत्य अग्नि |**
२. **दक्षिणाग्नि |**
३. **आहवनीय अग्नि |**

इन त्रिविध अग्नियों की स्थापना, उपयोग कई संकेतो से भिन्न-भिन्न हैं | यह अग्नियों का त्रिस्तरीय स्वरुप भारतीय दार्शनिक दृष्टि में मानव जीवन के- जीवन, मृत्यु, मोक्ष, का प्रतीकात्मक निरूपण भी है |

अग्नि का दार्शनिक आधार-

वैदिक दर्शन में अग्नि एक देव नहीं अपितु अग्नि एक मौलिक तत्त्व के रूप में अग्नि को प्रतिष्ठित किया गया है | अग्नि प्राकृतिक रूप से आरम्भ होकर आध्यात्मिक चेतना तक विस्तृत होता है | वेदों अग्नि में केवल लौ नहीं यह एक आत्मा का जागृत शक्ति है, यह अग्नि अज्ञान को भष्म कर ज्ञान की शक्ति को प्रकाशित करती है |

अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्- तैत्तिरीय उपनिषद्

तैत्तिरीय उपनिषद् में वर्णन आता है, अन्न का पाचन अग्नि के द्वारा होता है | जिससे स्पष्ट होता है कि अग्नि जैविक स्तर पर भी चेतना का आधार है |

दार्शनिक दृष्टि से अग्नि को परिवर्तन तत्व माना जाता है, जो कुछ भी अग्नि को समर्पित किया जाता है, वह अपने स्थूल को त्यागकर सूक्ष्म रूप में परिवर्तित हो जाता है | यही कारण है यज्ञ में डाले गए आहुतियों को अग्नि में अर्पित करने से देवत्व को प्राप्त होता है |

अग्निर्वै देवानां मुखम् – शतपथ ब्राह्मण |

शतपथ ब्राह्मण में वर्णन है-देवताओं तक पदार्थों का पहुंचना एकमात्र माध्यम अग्नि है |

अग्नि को चेतना की वह ज्वाला कहा जाता है, जो मानव को जड़ता से गति अज्ञान से ज्ञान तथा मृत्यु से अमृतत्व की ओर ले जाती है |

१. गाह्र्यपत्य अग्नि ,

वैदिक परंपरा में गृह्य अग्नि को प्रथम स्थान दिया गया है , गृह्य अग्नि अर्हात-गृहस्थ जीवन की मूल अग्नि | यह अग्नि गृहस्थ आश्रम के साथ स्थापित की जाती है |

गृह्य: प्रथामोऽग्नि: सर्वकर्मसु प्रतिष्ठित: - शतपथ ब्राह्मण २.१.४.२.

गृह्य अग्नि सभी यज्ञीय क्रियायों की आधारशिला है | अन्य दो अग्नियाँ भी इसी गृह्य अग्नि के द्वारा ही प्रज्वलित किया जाता है |

गार्हपत्याग्नि को त्रेताग्नि की मूल तथा आधारभूत अग्नि माना गया है। इसकी स्थापना यज्ञशाला के पश्चिमी भाग में गोलाकार वेदी पर की जाती है। यह अग्नि सामान्यतः गृहस्थ जीवन के आरम्भ में स्थापित की जाती है और जीवनपर्यन्त निरंतर जलती रहती है।

गृह्य अग्नि की स्थापना मूलतः गोलाकार की एक वेदी निर्माण किया जाता है | जो पृथ्वी तत्त्व का प्रतिक माना जाता है | गृह्य अग्नि का स्थान यज्ञमंडप के पश्चिम भाग में होता है , जिसका संकेत स्थिरता स्थापित करना होता है |

दार्शनिक दृष्टि से गृह्य अग्नि जीवन की निरंतरता का प्रतिक है | गृह्य अग्नि मनुष्य के भीतर स्थिर प्राणाग्नि से सम्बंधित है, जो भोजन को पाचन अनुभवों का आत्मसात कराती है |

२. दाक्षिणात्य अग्नि ,

वैदिक यज्ञ-प्रणाली में दाक्षिणात्य अग्नि को दक्षिण दिशा में स्थापित किया जाता है | दक्षिण दिशा का सम्बन्ध पितृलोक एवं यमलोक से माना गया है , इसलिए इस अग्नि का प्रमुख सम्बन्ध पितृकार्यों तथा मृत्यु संस्कार में किया जाता है |

दक्षिणा पितृलोकस्य द्वारम्- तैत्तिरीय आरण्यक

दक्षिणात्य अग्नि की स्थापना मुख्यत: अर्धचंद्राकार की वेदी में निर्माण किया जाता है, जो अपूर्णता तथा संक्रमण का प्रतिक माना जाता है | यह अग्नि गृह्य अग्नि से प्रज्वलित होती है |

आहवनीयाग्नि यज्ञ की सर्वाधिक प्रमुख और पवित्र अग्नि मानी जाती है। इसकी स्थापना यज्ञशाला के पूर्वी भाग में आयताकार वेदी पर की जाती है। यह गार्हपत्याग्नि से ही उत्पन्न होती है और यज्ञ की मुख्य आहुतियाँ इसी अग्नि में समर्पित की जाती हैं।

दाक्षिणात्य अग्नि का प्रयोग मुख्यत: श्राद्ध कर्म, पिण्डदान, में किया जाता है | शतपथ ब्राह्मण के अनुसार पितरों के लिए समर्पित हवि का उन तक जाने का एक माध्यम है |

३. आहवनीय अग्नि,

आहवनीय अग्नि को सर्वाधिक पवित्र एवं प्रधान अग्नि माना जता है | आहवनीय शब्द का अर्थ है – जिसके माध्यम से देवताओं का आवाहन किया जाए | आहवनीय अग्नि यज्ञमंडप के पूर्व भाग में स्थापित की जाती है | यह पूर्व दिशा देवताओ का दिशा माना जाता है |

आह्वानियात् देवा: प्रीयन्ते – शतपथ ब्राह्मण २.१.४.३. |

अर्थात् देवता आहवनीय द्वारा ही प्रसन्न होते हैं | समस्त प्रमुख हवि – घृत, सोम, यव, टिल, आदि- इसी अग्नि में समर्पित किये जाते हैं| आहवनीय अग्नि की वेदी सामान्यत: वर्गाकार की होती है |

यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते कामा येऽस्य हृदि श्रिता: | अथ मर्त्योऽमृता भवति |

कठोपनिषद |

अर्थात् – यह अवस्था वाही है जिसे आहवनीय अग्नि प्रतिक रूप में दर्शाति है, जहाँ कामनायें अग्नि में भष्म होकर चेतना शुद्ध होती है और मनुष्य अमृतत्व की ओर अग्रसर होती है |

आहवनीयाग्नि यज्ञ की सर्वाधिक प्रमुख और पवित्र अग्नि मानी जाती है। इसकी स्थापना यज्ञशाला के पूर्वी भाग में आयताकार वेदी पर की जाती है। यह गार्हपत्याग्नि से ही उत्पन्न होती है और यज्ञ की मुख्य आहुतियाँ इसी अग्नि में समर्पित की जाती हैं।

“मानव जीवन स्वयं एक यज्ञ है – जिसमे गृह्य से जन्म , दक्षिणात्य से संक्रमण, और आहवनीय से मोक्ष प्राप्त होता है”

त्रय एते अग्नय: यज्ञस्य प्राणा इव (शतपथ ब्राह्मण 2.1.4.1)

अर्थात् ये तीनों अग्नियाँ यज्ञ के प्राण के समान हैं।

अग्निदेव के त्रिविध स्वरूप—गृह्य, दाक्षिणात्य और आहवनीय—का यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि वैदिक परंपरा में अग्नि केवल एक देवता अथवा अनुष्ठानिक उपकरण नहीं, बल्कि सम्पूर्ण जीवन-दर्शन का प्रतीक है। इन तीनों अग्नियों के माध्यम से वैदिक चिंतन मानव जीवन के त्रिस्तरीय स्वरूप—जीवन, मृत्यु और मोक्ष—को अत्यंत सूक्ष्म रूप में निरूपित करता है।

गृह्य अग्नि जीवन की निरंतरता, स्थायित्व और सामाजिक उत्तरदायित्व का प्रतीक है। यह मनुष्य को संसार में सक्रिय रहकर धर्म, अर्थ और काम के सम्यक् पालन की प्रेरणा देती है। दाक्षिणात्य अग्नि स्मृति और संक्रमण का तत्त्व है, जो मनुष्य को अपने पूर्वजों, परंपरा और मृत्यु-बोध से जोड़ती है। यह अग्नि यह स्मरण कराती है कि जीवन केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि वंश और संस्कृति की निरंतर धारा है। आहवनीय अग्नि साधना, उत्कर्ष और मोक्ष का प्रतीक है, जो मनुष्य को लौकिक बंधनों से ऊपर उठकर ब्रह्मचेतना की ओर उन्मुख करती है।

इस प्रकार त्रिविध अग्नि का स्वरूप केवल यज्ञीय तकनीक नहीं, बल्कि भारतीय दार्शनिक परंपरा में एक गहन प्रतीकात्मक संरचना है, जिसमें कर्म, स्मृति और साधना का समन्वय दिखाई देता है। आधुनिक युग में, जब कर्मकाण्ड को प्रायः यांत्रिक परंपरा के रूप में देखा जाता है, यह अध्ययन यह संकेत देता है कि वैदिक अनुष्ठान मूलतः एक जीवंत दार्शनिक प्रक्रिया है, जिसका उद्देश्य मनुष्य को आत्मबोध और मोक्ष की दिशा में प्रेरित करना है।

अतः कहा जा सकता है कि अग्निदेव का त्रिविध स्वरूप भारतीय संस्कृति में केवल धार्मिक कर्मकाण्ड का आधार नहीं, बल्कि मानव अस्तित्व की संपूर्ण यात्रा—जन्म से ब्रह्मत्व तक—का प्रतीकात्मक दर्शन प्रस्तुत करता है।

सन्दर्भ सूचि –

1. ऋग्वेद – मण्डल 1, सूक्त 1, मन्त्र 1; मण्डल 10, सूक्त 51–53 (अग्नि-सूक्त)।
2. शतपथ ब्राह्मण – काण्ड 2, ब्राह्मण 1, अध्याय 4; काण्ड 3, ब्राह्मण 2; काण्ड 11 (अग्नि एवं यज्ञ-विधान)।
3. तैत्तिरीय संहिता – कृष्ण यजुर्वेद, काण्ड 1–2 (अग्नि-प्रकरण)।
4. तैत्तिरीय ब्राह्मण – प्रथम काण्ड (अग्नि-स्वरूप एवं यज्ञ-संरचना)।
5. तैत्तिरीय आरण्यक – प्रथम प्रपाठक (दक्षिण दिशा एवं पितृलोक सम्बन्ध)।
6. कठोपनिषद – द्वितीय अध्याय (कामनाक्षय एवं अमृतत्व का दार्शनिक विवेचन)।
7. बृहदारण्यक उपनिषद – प्रथम अध्याय (अग्नि को प्राण एवं ब्रह्मतत्त्व के रूप में निरूपण)।
8. छान्दोग्य उपनिषद – पंचम अध्याय (वैश्वानर अग्नि और ब्रह्म-चिन्तन)।
9. मनुस्मृति – तृतीय अध्याय (गृहस्थ धर्म एवं गृह्य अग्नि का विधान)।
10. आपस्तम्ब गृह्यसूत्र – प्रथम प्रश्न (गृह्य अग्नि की स्थापना एवं त्रेताग्नि-विधान)।
11. बौधायन गृह्यसूत्र – गृह्य कर्मकाण्ड (आहवनीय एवं दक्षिणाग्नि का प्रयोग)।
12. शाङ्खायन गृह्यसूत्र – अग्नि-प्रकरण (त्रिविध अग्नि की व्याख्या)।

ईमेल. Vnsbhu1990@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 97-99
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

चित्रा मुद्गल के कालातीत नारीवादी उपन्यास "आवा"

फातिमा हेन्ना
शोधार्थी,
हिंदी विभाग महाराजास कॉलेज एर्नाकुलम 682011

साहित्य और समाज का घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। साहित्यकार समाज में रहते हुए ही अपने साहित्य का सृजन करता है। एक साहित्यकार समाज में विशेष परिवेश में रहकर समाज में क्या घटित हो रहा है, वह सब अपनी रचनाओं में व्यक्त करता है। साहित्य के जिन व्यक्तिक सुख दुःख, राग - विराग, हास - विलास एवं सफलता असफलता आदि का चित्रण होता है। वे सब समाज से ही पनपे हैं। स्त्री विमर्श स्त्रियों के उपर सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक रूप से थोपी गयी मान्यताओं और रूढ़ियों के विरोध में उभरा वैचारिक आन्दोलन है। नारी समाज की अभिन्न अंग है, जब से सृष्टि में नर और नारी का सर्जन हुआ है तब से वर्तमान आधुनिकीकरण और वैश्वीकरण के परिवेश में नारी विमर्श एक महत्वपूर्ण विषय बना हुआ है। समय परिवर्तन के साथ-साथ नारी विमर्श के संदर्भ में भी भिन्नता पायी जाती है और समय के साथ उसमें परिवर्तन भी आता है।

स्त्री विमर्श पर आधारित चित्रा मुद्गल का प्रसिद्ध उपन्यास है आवा| इस उपन्यास में स्त्री विमर्श के साथ ही साथ दलित विमर्श, हिंदू - मुस्लिम संघर्ष, मजदूर का संघर्ष, आदि विषय दिखाया गया है| "ट्रेड यूनियन" के मजदूरों को ध्यान में रखकर लिखी हुई इस उपन्यास में उनके ऊपर होने वाले आर्थिक, मानसिक, और शारीरिक शोषण देख सकते हैं| "आवां "उपन्यास के प्रमुख नारी पात्र नमिता इस उपन्यास की मूल संवेदना को सूक्ष्म रूप से हम तक पहुँचाने में सफल हुए हैं। नमिता मध्यवर्ग की लड़की है, शहर के वातावरण से डर लगता है| लेखिका लिखती है"भीड़ उसे ढेला खाए सैकड़ों-हजारों मधुमक्खियों के छत्तों-सी लगती जो मौके की ताड़ में स्वयं ढेले लिए बैठी स्त्रियां देखते ही अपने ऊपर फेंक लेतीं। भीड़ से उसकी मुलाकात जब भी होती, उसके धड़ से उसे सिर गायब मिलता और उसके संभलते, न संभलते वह धड़ अचानक कोंचती कुहनियों, सरसराती उंगलियों, लोलुप कनखियों, सिसकारी भरती छुअन में तब्दील हो अपने करीब दबोचते- चांपते संभोग को उद्दीप्त होने लगता। मुक्ति की छटपटाहट उसकी थर्राती रथों से रिसती परनालों-सी उफनने लगती और वह पाती कि उसके देह पर चढ़े कपड़े अचानक देह की चमड़ी हो गए हैं...."1 यह समस्या न केवल नमिता का है बल्कि हमारे समाज के हर स्त्री का है जो स्वतंत्र होकर अपनी जिंदगी में आगे बढ़ती है|

नमिता पांडे एक मजदूर नेता देवी शंकर पांडे की बेटी है| पिता का बीमारी के कारण घर का खर्च नमिता के सिर पर आ जाता है। पिता के मित्र अन्ना साहब की कृपा से उसे नौकरी मिल जाता है| अन्ना साहब को वह अपनी पिता जैसे मानते हैं लेकिन वह नमिता को गलत दृष्टि से देखती है और शारीरिक शोषण करती है| अन्ना साहब निदा से कहते हैं- "देखो, दोस्त की बेटी हो तुम, बेटी नहीं हो मेरी। पिता समान हूं मैं तुम्हारे, पिता नहीं हूं। रिश्ते की इस गहन अंतसूक्ष्मता को महसूस कर लोगी तो संबंध से स्वयं को शोषित अनुभव नहीं करोगी"।2 इस बात से स्पष्ट हो रहा है कि अकेले स्त्री को देखकर पुरुष कैसे उसकी अकेलेपन की फायदा उठाती है, यहां अन्ना साहब अपनी ही बेटी की उम्र की लड़की का शोषण करते हैं, अन्ना साहब जैसे मर्दों का कारण आज भी लड़कियां सुरक्षित नहीं है। इसी कारण नमिता उस नौकरी छोड़ देती है| आज के समाज में भी अन्ना साहब जैसे हजारों मर्दों को देखा जा सकता है| जब भी स्त्रीयाँ स्वतंत्र रूप से काम करना शुरू करते है तो पुरुषवर्चस्व समाज उसके आगे के रास्ते में रुकावट पैदा करते हैं|

इस उपन्यास में देखे तो संजय नामक व्यक्ति नमिता पर झूठा प्यार दिखा कर उसे गर्भवती बनाता है| संजय विवाहित है पर नि संतान है| नमिता गर्भपात करना चाहती है पर संजय उसे गर्भपात नहीं करवाना देता है| लेकिन गलती से नमिता का गर्भपात हो जाता है, उस समय संजय कहता है कि "झूठी.... प्राण ले लूंगा मैं तुम्हारे..... मुझे मेरा बच्चा चाहिए ..... बच्चा !"जानती हो? बाप बनने के लिए मैंने तुम्हारे ऊपर कितना खर्च किया? उस मामूली औरत अंजना वासवानी की औकात है कि तुम्हारे ऊपर पैसा पानी की तरह बहा सके? उसका जिम्मा सिर्फ इतना भर था कि वह मेरे पिता बनने में मेरी मदद करे और सौदे के मुताबिक अपना कमीशन खाए। वह ऐसी पचासों लड़कियों को परोस सकती थी, जो मुझसे यौन-संबंध कायमकर केवल पचहत्तर हजार में मुझेबाप बना सकती थीं....."मैं रंडियों से बाप नहीं बनना चाहता था, जिनके लिए बच्चा पैदा करना महज सौदा भर हो और जो अनेकों से सौदा कर चुकी हों- मुझे नहीं गवारा थी ऐसी किराये की कोख ! मुझे सिर्फ उस लड़की से औलाद चाहिए थी जो पेशेवर न हो..... पवित्र हो, जो मुझ से प्रेम कर सके। सिर्फ मेरे लिए मां बने ! सिर्फ मुझसे सहवास करे.... हमारा मिशन सफल रहा..... तेरह वर्ष बाद में बाप बना.... अपने बच्चे का बाप उस औरत से जिसे मैं सचमुच प्यार करने लगा ! उसी ने....उसी ने मुझे धोखा दिया? मेरे बच्चे की जान ले ली!"3 यहाँ से स्पष्ट हो जाता है कि मर्द अपना ही फायदा के लिए स्त्री को एक उपकरण जैसा इस्तेमाल करता है| इस उपन्यास में तो नमिता शारीरिक और मानसिक रूप से पूरी तरह टूट चुकी है। आज भी नमिता जैसे लाकों औरतें पुरुषों की जाल में फंस जाती है|

इस उपन्यास में नमिता के मुख्य कथा के साथ-साथ कई उपकथाएँ भी है जो समाज की सच्चाइयों का पर्दाफाश करते हैं| पहली उपकथा सुनीता की है जो एक साहसिक लड़की है| स्मिता और नमिता के व्यवहार में जमीन आसमान का फर्क है, स्मिता अपनी जिंदगी स्वतंत्र रूप से जीना चाहती है| स्मिता कि पिता रोज पीकर उसकी और उसकी मां बहन पर अत्याचार करता है| अपने पिता पर नफरत करती है, बाप को राक्षस कहती है - "उसके मारे हम रोज-रोज मरते रहे। उसके मरे पर हम सब नई जिन्दगी जिएँगे..... खुलकर साँस लेंगे घर में रहते हुए दडवे में दुबके नहीं रहेंगे। कीड़े- मकोड़ों की भाँति फडफडाते। "4 अपने पिता के अन्याय के खिलाफ आवाज उठाती स्मिता हिम्मत और संघर्षशील नारी का नमूना पेश करती है| दूसरी उपकथा है सुनंदा की| इसमें हमको हिंदू मुस्लिम सांप्रदायिकता विमर्श, और नारी विमर्श को देख सकते हैं| सुनंदा एक मुसलमान लड़के सुहेल से प्रेम करती है, और गर्भवती हो जाती है| सुहेल की मां चाहती है कि सुनंदा इस्लाम धर्म स्वीकार कर ले तो उसकी शादी सुहेल के साथ हो जाए और सुनंदा अपने हिंदू धर्म को छोड़ना नहीं चाहती| सुनंदा कहती है "सुहैल ने प्रेम करने के समय तो कोई शर्त नहीं रखी? व्याह करना होगा तो उससे नहीं, इस्लाम से करना होगा..... या उसे हिंदुत्व से? "5 यहां देखे तो सुनंदा कुंवारी मां

बन जाते हैं, अविवाहित मां होने के कारण हिन्दू समाज उसे कोसते है| यहां भी स्त्री होने के कारण समाज की गलत दृष्टियां सुनंदा के ऊपर ही पढ़ते हैं|

तीसरी उपकथा है गौतमी की| उसका पति शराबी व्यभिचारी और अत्याचारी पुलिस अधिकारी थी| इसी कारण गौतमी की मां ने उसकी दूसरी शादी एक विधुर से करवाती है वह एक प्रसिद्ध कलाकार था और उसके दो नवयुवक बैठे थे| बड़े बेटे ने गौतमी से जबरदस्त शारीरिक संबंध बनाता है, जिसके कारण वह गर्भवती हो जाती है| वह गर्भपात करके जिंदगी में आगे बढ़ते हैं| चित्रा मुद्गल ने गौतमी के माध्यम से नारी के स्वतंत्र जीवन का अद्भुत रूप उजागर किया है| आवा उपन्यास के संबंध में सुप्रसिद्ध आलोचक एवं उपन्यासकार शिवकुमार मित्र लिखते हैं," आवा औरत के वजूद से जुड़े सवालों का दहकता सुलगता दस्तावेज और एक बड़े आकार का विचारोत्तेजक उपन्यास कहा है। ' आगे फिर वह कहते हैं, "चित्रा जी ने स्त्री देह से ऊपर उठाकर पहचान ने की बात की है। और इस उपन्यास में उसे एक संकल्प और प्रतिज्ञा के रूप में फिर से उस पुरुष समाज के सामने रखने का दायित्व ओढा है, जिसके लिए औरत परम्परा से मोहक और लुभावने विशेषणों में पुकारे जाने के बावजूद मूलतः देह ही रही है। "6
चित्रा मुद्गल के उपन्यासों का यदि गहराई से अध्ययन किया जाय तो यह स्पष्ट है कि जिस गहराई से उन्होनें महिला के अन्तर्संबन्ध को, उसकी पीड़ा को वाणी दी है, वह कोई महिला उपन्यासकार ही कर सकती| चित्रा मुद्गल ने अपने उपन्यासों में मंडे नारी की नयी जीवन दृष्टि को अभिव्यक्ति दी आज महिला अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील दिखाई पड़ती है| ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो महिला यह कह रही है,बस बहुत हो चुका,जुल्म अब और नहीं सहेंगे | सदियों से सहते _सहते उसके सब्र का बांध अब टूट चुका है |अब शोषण के प्रति वह अस्वीकार की मुद्रा में है | उपन्यास में सभी पात्र महिला होने का गर्व महसूस करती है | और पुरुषों से चोट खाकर भी अपराधबोध की जगह प्रतिशोध की भावना ही प्रबल करती है| वे स्वाभिमान से जीती है| उपन्यास में महिलाओं को उसके शोषण,अत्याचार के प्रतिक्रिया स्वरूप आत्मनिर्भरता तथा पुरुषों के सत्ता के समानंतर स्वयं को सिद्ध करने के लिए संघर्ष का चित्रण किया गया| हमारे समाज में महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियां भिन्न हैआवा उपन्यास में स्त्रियों पर होने वाली शारीरिक और मानसिक शोषण प्रस्तुत किया है |आज का समय में भी समाज में स्मिता,गौतमी,सुनंदा,नमिता जैसे लाखों औरतें देखा जा सकते हैं| इस समय हम युव पीढ़ीयों को समाज में बदलाव लाना चाहिए |डी. एच. लॉरेंस का कथन है _"औरत ना मनोरंजन का साधन है और ना पुरुष की वासना का शिकार |वह व्यक्ति की चाह की वस्तु नहीं, बल्कि वह तो पुरुष का दूसरा ध्रुव है| उसका अस्तित्व पुरुष का अनिवार्य पूरक है|"

मूल ग्रन्थ

1. चित्रा मुद्गल, आवा, पृ. 13
2. वही, पृ. 136
3. वही, पृ. 539
4. वही, पृ. 371
5. वही, पृ. 112
6. चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य में नारी-विमर्श - डॉ राजेंद्र बविस्कार, रोली प्रकाशन

Email: fathimahenna1997@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 100-104
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਦੀ ਸਿਰਜਣ ਵਿਧੀ

ਡਾ. ਲਖਵਿੰਦਰ ਕੌਰ
ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ
ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ, ਡੀ. ਏ. ਵੀ ਕਾਲਜ ਬਠਿੰਡਾ

ਮਨੁੱਖ ਆਦਿ ਕਾਲ ਤੋਂ ਹੀ ਕੁੱਝ ਨਾ ਕੁੱਝ ਨਵਾਂ ਸਿਰਜਦਾ ਆ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਬਾਕੀ ਸਿਰਜਨਾਵਾਂ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਆਪਣੇ ਸੁਹਜ ਦੇ ਆਨੰਦ ਲਈ ਮਨੁੱਖ ਨੇ ਕਈ ਸਾਹਿਤਕ ਸਿਰਜਨਾਵਾਂ ਵੀ ਕੀਤੀਆਂ। ਇਸ ਵਿੱਚ ਉਸ ਦੀਆਂ ਭਾਵਨਾਤਮਕ, ਅਨੁਸ਼ਠਾਨਿਕ,ਮਨੋਰੰਜਕ ਅਤੇ ਕਾਰਜਕਾਰੀ ਬਿਰਤੀਆਂ ਕੰਮ ਕਰਦੀਆਂ ਹਨ। ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਅਜਿਹੇ ਸੁਭਾਅ ਵਿੱਚੋਂ ਹੀ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਨੇ ਜਨਮ ਲਿਆ। ਅਸਲ ਵਿੱਚ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਲੋਕ ਜੀਵਨ ਦੀ ਹੀ ਅਭਿਵਿਅਕਤੀ ਹੈ। ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਸਿਰਜਿਆ ਹੀ ਲੋਕ ਮਨਾਂ ਦੇ ਧਰਾਤਲ ਉੱਪਰ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਪੀੜ੍ਹੀ ਦਰ ਪੀੜ੍ਹੀ ਮੌਖਿਕ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਸਫ਼ਰ ਕਰਦਾ ਇੱਕ ਪੀੜ੍ਹੀ ਤੋਂ ਦੂਸਰੀ ਪੀੜ੍ਹੀ ਤੱਕ ਕੁੱਝ ਥੋੜ੍ਹੇ ਬਹੁਤੇ ਪਰਿਵਰਤਨਾਂ ਸਮੇਤ ਸਫ਼ਰ ਕਰਦਾ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ। ਹਰੇਕ ਪੀੜ੍ਹੀ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਨੂੰ ਸੰਵਾਰਦੀ, ਮਾਂਜਦੀ ਅਤੇ ਪੁਨਰ ਸੁਰਜੀਤ ਕਰਦੀ ਹੈ।

ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਸਾਡੇ ਲੋਕ ਸਾਹਿਤ ਦਾ ਅਟੁੱਟ ਅੰਗ ਹੈ। ਇਸ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਲੋਕ ਸਾਹਿਤ ਦੀ ਕਲਪਨਾ ਵੀ ਨਹੀਂ ਕੀਤੀ ਜਾ ਸਕਦੀ। " ਲੋਕ-ਕਾਵਿ ਸਮੂਹਿਕ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਸਿਰਜਤ,ਪ੍ਰਵਾਨਿਤ ਅਤੇ ਪ੍ਰਚਲਿਤ ਲੋਕ ਅਨੁਭਵ ਦਾ ਉਹ ਸੱਚ ਹੈ,ਜਿਹੜਾ ਮੂਲ ਮਾਨਵੀ ਸੰਕਟਾਂ,ਲੋਚਾਂ, ਸਥਿਤੀਆਂ,ਪ੍ਰਤਿ ਮਨੁੱਖੀ ਮਨ ਦਾ ਸਹਜ,ਤਟ-ਫਟ ਅਤੇ ਕਲਾਤਮਕ ਹੁੰਗਾਰਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਸੱਭਿਆਚਾਰਕ ਪ੍ਰਸੰਗ ਵਿੱਚ ਆਪਣੀਆਂ ਮੂਲ ਮਾਨਵੀ ਅਸਤਿਤਵਿਕ ਸਥਿਤੀਆਂ ਸਨਮੁਖ ਮਨੁੱਖੀਕਰਣ ਦਾ ਜੀਵੰਤ ਹੁੰਗਾਰਾ ਹੈ। ਇਸ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖੀ ਕਿਰਤ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਦਾ ਅਮਲ ਅਤੇ ਪ੍ਰਤਿਕਰਮ ਭਾਰੂ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਗੁੰਮਨਾਮ ਸੰਵੇਦਨਸ਼ੀਲ ਪ੍ਰਤਿਭਾ ਦੀ ਅਜਿਹੀ ਸਿਰਜਣਾ ਹੈ,ਜਿਹੜੀ ਸਮੂਹ ਦਾ ਸਹਿਜ ਅੰਗ ਬਣ ਕੇ ਮੌਖਿਕ ਸੰਚਾਰਿਤ ਹੁੰਦੀ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ। ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਸੱਭਿਆਚਾਰਕ ਸਥਿਤੀ- ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ, ਪ੍ਰਸੰਗ, ਕਾਵਿਕ ਬਣਤਰ ਅਤੇ ਬੁਣਤਰ ਇਸ ਦੇ ਤਿੰਨ ਅਹਿਮ ਪਹਿਲੂ ਹਨ।"[1]

Standard Dictionary of Folklore ਵਿੱਚ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਦੀ ਪਰਿਭਾਸ਼ਾ ਇਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦਿੱਤੀ ਗਈ ਹੈ:

"Folk song comprises the poetry and music of groups whose literature is perpetuated not by writing and print, but through oral tradition. These groups,
primarily rural, are better able to preserve some of the older culture of the national unit of which they form a part, then the population of the cities with its more sophisticated, more international civilization.Which is subject to faster changes and fluctuations of fashion, Folk song is thus part of folk culture, which is distinct from that of the cities and represents only certain facts of the culture of the nation."[2]

ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਲੋਕ ਸਾਹਿਤ ਦਾ ਅਟੁੱਟ ਅੰਗ ਹੈ। ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਪੀੜ੍ਹੀ ਦਰ ਪੀੜ੍ਹੀ ਮੌਖਿਕ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਚਲਿਆ ਆ ਰਿਹਾ ਹੈ ਅਤੇ ਇਸ ਵਿੱਚ ਸਮੂਹ ਦੀ ਪ੍ਰਵਾਨਗੀ ਸ਼ਾਮਿਲ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਮਨ ਵਿੱਚ ਵਸਿਆ, ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਦਿਲਾਂ ਵਿੱਚ ਧੜਕਦਾ ਅਤੇ ਹਮੇਸ਼ਾ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਬੁੱਲਾਂ ਉੱਪਰ ਸਫ਼ਰ ਕਰਦਾ ਹੈ।

ਸਮਕਾਲੀ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਦੀਆਂ ਪ੍ਰਵਿਰਤੀਆਂ :-

ਲੋਕ ਮਨ ਕਦੀ ਵੀ ਇੱਕ ਵਰਗਾ ਨਹੀਂ ਰਹਿੰਦਾ। ਇਹ ਸਮਾਜਿਕ,ਆਰਥਿਕ, ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਅਤੇ ਸਭਿਆਚਾਰਿਕ ਕਾਰਨਾਂ ਕਰਕੇ ਹਮੇਸ਼ਾ ਤਬਦੀਲ ਹੁੰਦਾ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ। ਸਮਕਾਲੀ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਨਵੀਆਂ ਤਕਨੀਕਾਂ ਅਤੇ ਤੇਜ਼ ਸੋਸ਼ਲ ਮੀਡੀਏ ਦਾ ਪ੍ਰਭਾਵ ਲੋਕਾਂ ਉੱਪਰ ਬਹੁਤ ਜ਼ਿਆਦਾ ਪੈ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਇਸ ਆਧੁਨਿਕਤਾ ਨੇ ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕ ਮਨ ਨੂੰ ਪਦਾਰਥਿਕ ਜਗਤ ਵਿੱਚ ਉਲਝਾ ਕੇ ਰੱਖ ਦਿੱਤਾ ਹੈ। ਮੀਡੀਆ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਸਦਕਾ ਲੋਕ ਮਨ ਆਧੁਨਿਕ ਜ਼ਰੂਰ ਹੋ ਗਿਆ ਹੈ ਪਰੰਤੂ ਇਸ ਵਿੱਚ ਮੁੱਲਵਾਨ ਸੱਭਿਆਚਾਰਿਕ ਵਿਰਾਸਤ ਹਮੇਸ਼ਾ ਹੀ ਵਿਦਮਾਨ ਰਹੀ ਹੈ। ਸਾਡਾ ਲੋਕ ਮਨ ਇਸ ਤੇਜ਼ ਤਕਨੀਕ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਵੀ ਪਰੰਪਰਾਗਤ ਰੰਗ ਵਿੱਚ ਬੱਝਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਬਹੁਤ ਵਿਦਵਾਨ ਲੋਕਧਾਰਾ ਅਤੇ ਲੋਕਧਾਰਾਈ ਸਿਰਜਨਾਵਾਂ ਵਿੱਚ ਖੜੋਤ ਆਉਣ ਦਾ ਅੰਦਾਜ਼ਾ ਅਤੇ ਇਸ ਦੇ ਬਿਲਕੁਲ ਖ਼ਤਮ ਹੋਣ ਦਾ ਡਰ ਜ਼ਾਹਿਰ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਪਰੰਤੂ ਇਹ ਗੱਲ ਬਿੱਲਕੁਲ ਸਪੱਸ਼ਟ ਹੈ ਕਿ ਲੋਕਧਾਰਾ ਅਤੇ ਇਸਦੀਆਂ ਸਿਰਜਨਾਵਾਂ ਨਾ ਕਦੇ ਰੁਕੀਆਂ ਹਨ ਅਤੇ ਨਾ ਹੀ ਇਹ ਕਦੇ ਖ਼ਤਮ ਹੋ ਸਕਦੀਆਂ ਹਨ। ਪਰੰਤੂ ਸਮੇਂ ਦੇ ਬਦਲਣ ਨਾਲ ਇਸ ਵਿੱਚ ਹਮੇਸ਼ਾ ਕੁੱਝ ਨਾ ਕੁੱਝ ਨਵਾਂ ਵਾਪਰ ਰਿਹਾ ਹੈ ਅਤੇ ਇਹ ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਵਾਪਰਦਾ ਰਹੇਗਾ।ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕਧਾਰਾ ਹਮੇਸ਼ਾ ਰੂਪਾਂਤਰਣ ਦੀ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਵਿੱਚ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ। ਦੂਸਰੀਆਂ ਲੋਕਧਾਰਾਈ ਸਿਰਜਨਾਵਾਂ ਵਾਂਗ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਪਰੰਪਰਾ ਵੀ ਕਦੇ ਸਥਿਰ ਨਹੀਂ ਰਹਿੰਦੀ।ਇਹ ਵੀ ਹਮੇਸ਼ਾ ਰਪਾਂਤਰਣ ਵਿੱਚੋਂ ਗੁਜ਼ਰਦੀ ਅਤੇ ਨਿਖਰਦੀ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ।

ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਦੇ ਸਮਕਾਲੀ ਰੂਪਾਂਤਰਣ ਨੂੰ ਡਾ. ਨਾਹਰ ਸਿੰਘ ਬੁਰਜਵਾਦੀ ਮੰਡੀ ਦੀ ਗੁਲਾਮ ਵਸਤੂ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਵੇਖਦੇ ਹਨ।ਪਰੰਤੂ ਇਹ ਵੀ ਸੱਚਾਈ ਹੈ ਕਿ ਸਮਕਾਲੀ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਅਜਿਹੀ ਸਥਿਤੀ ਦੇ ਸਮਾਨੰਤਰ ਚੰਗੀ ਸਿਰਜਣਾ ਵੀ ਹੋ ਰਹੀ ਹੈ। ਇਹ ਅਟੱਲ ਸੱਚਾਈ ਹੈ ਕਿ ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਹਰੇਕ ਵਸਤੂ ਵਪਾਰਕ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਤੋਂ ਪੇਸ਼ ਹੋ ਰਹੀ ਹੈ। ਪਰ ਇਸ ਦਾ ਮਤਲਬ ਇਹ ਨਹੀਂ ਕਿ ਸਹੀ ਅਤੇ ਸੱਚੇ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਦੇ ਅਨੁਕੂਲ ਮਾਹੌਲ ਨਹੀਂ ਰਿਹਾ। ਭਾਵੇਂ ਸਮਕਾਲੀ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਲੋਕਧਾਰਾਈ ਰੂਪਾਂ ਦਾ ਤਕਨੀਕੀ ਸੰਚਾਰ ਹੋ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਪਰੰਤੂ ਇਸ ਤਕਨੀਕ ਦੇ ਡਿਜ਼ੀਟਲ ਰੂਪਾਂ ਦੁਆਰਾ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਪਰੰਪਰਾਗਤ ਲੋਕਧਾਰਾਈ ਰੂਪ ਨੂੰ ਆਉਣ ਵਾਲੀਆਂ ਪੀੜ੍ਹੀਆਂ ਲਈ ਸਾਂਭਿਆ ਵੀ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਚੰਗਾ ਅਤੇ ਮਾੜਾ ਪੱਖ ਹਮੇਸ਼ਾ ਇਕੱਠੇ ਹੀ ਚਲਦੇ ਰਹਿੰਦੇ ਹਨ। ਪਰੰਪਰਾ ਤੋਂ ਹੀ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਵਿੱਚ ਇਹ ਦੋਵੇਂ ਪੱਖ ਵੇਖਣ ਨੂੰ ਮਿਲਦੇ ਹਨ। ਅਸਲੀ ਦੇ ਨਾਲ- ਨਾਲ ਨਕਲੀ ਕਾਵਿ ਸਿਰਜ ਕੇ ਇਸ ਦੇ 'ਲੋਕ' ਹੋਣ ਦਾ

ਭਰਮ ਹਮੇਸ਼ਾ ਹੀ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦਾ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਲੋਕਧਾਰਾ ਹਮੇਸ਼ਾ ਹੀ ਰੂਪਾਂਤਰਨ ਤੇ ਸਿਰਜਣ ਦੇ ਅਮਲ ਵਿੱਚ ਕਰਜਸ਼ੀਲ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ। ਇਸੇ ਕਰਕੇ ਹੀ ਅੱਜ ਵੀ ਬਹੁਤ ਸਾਰੀਆਂ ਲੋਕਧਾਰਾਈ ਸਿਰਜਨਾਵਾਂ ਵਿੱਚ ਨਵਾਂ ਕੁੱਝ ਵੇਖਣ ਨੂੰ ਮਿਲ ਰਿਹਾ ਹੈ।

" ਵੰਡ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਭਾਰਤੀ ਪੰਜਾਬ ਵਿੱਚ ਤੇਜ਼ੀ ਨਾਲ ਹੋਏ ਮਸ਼ੀਨੀਕਰਨ, ਆਵਾਜਾਈ ਤੇ ਸੰਚਾਰ ਦੇ ਸਾਧਨਾਂ ਵਿੱਚ ਹੋਈ ਵਾਧੇ,ਵਿੱਦਿਆ ਦੇ ਫੈਲਾਅ, ਸ਼ਹਿਰਾਂ ਦੇ ਪਸਾਰ, ਨਵੇਂ ਉਦਯੋਗਾਂ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ, ਰਾਜ ਮਸ਼ੀਨਰੀ ਵਿੱਚ ਪਰਿਵਰਤਨ, ਨਵੀਂ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਚੇਤਨਤਾ ਦਾ ਪਾਸਾਰ ਅਤੇ ਹੋਰ ਅਨੇਕਾਂ ਆਰਥਿਕ ਪਰਿਵਰਤਨਾਂ ਸਦਕਾ ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਪੇਂਡੂ ਸਮਾਜਿਕ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਵਿੱਚ ਇਕਦਮ ਤਬਦੀਲੀ ਆਈ ਹੈ। ਸਦੀਆਂ ਪੁਰਾਣੇ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਸਥਾਪਿਤ ਦਾਇਰੇ ਟੁੱਟੇ ਹਨ। ਲੋਕ ਗੀਤ ਪ੍ਰਤੀ ਸਮੁੱਚੇ 'ਮਲਵਈ ਲੋਕ' ਦੇ ਵਤੀਰੇ ਤੇ ਵਰਤਾਰੇ ਵਿੱਚ ਪਰਿਵਰਤਨ ਆਇਆ ਹੈ। ਨਵੇਂ ਸਮਾਜਿਕ ਜੀਵਨ ਨੇ 'ਲੋਕ' ਦੇ ਨਵੇਂ ਦਾਇਰਿਆਂ ਨੂੰ ਜਨਮ ਦਿੱਤਾ ਹੈ, ਸਿੱਟੇ ਵਜੋਂ ਡਰਾਈਵਰਾਂ, ਕੰਡਕਟਰਾਂ,ਕਾਲਜੀਏਟਾਂ ਦੀ ਲੋਕਧਾਰਾ ਜਨਮੀ ਹੈ। ਪਰ ਸਮੁੱਚੇ ਲੋਕ ਗੀਤ ਦੇ ਦਾਇਰੇ ਮਕਾਬਲਤਨ ਸੁੰਗੜੇ ਹਨ। ਜਿੱਥੇ ਜਿੱਥੇ ਪਰੰਪਰਕ ਰਿਸ਼ਤੇ ਬਣ ਰਹੇ ਹਨ, ਉਹਨਾਂ ਸਨਅਤੀ ਪੱਖ ਤੋਂ ਪੱਛੜੇ ਹੋਏ ਇਲਾਕਿਆਂ ਵਿੱਚ ਲੋਕ ਗੀਤ ਹਾਲੇ ਵੀ ਜੀਵਤ ਹਨ, ਪਰ ਬਾਕੀ ਖੇਤਰਾਂ ਵਿੱਚ ਲੋਕ ਗੀਤ ਹੌਲੇ-ਹੌਲੇ ਅਲੋਪ ਹੋ ਰਹੇ ਹਨ ।"[3]

ਸਮਕਾਲੀ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਦੇ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਸੱਭਿਆਚਾਰਿਕ ਮੌਕੇ ਅਲੋਪ ਹੋ ਗਏ ਹਨ ਅਤੇ ਬਹੁਤ ਹੀ ਰੂਪਾਂਤਰਿਤ ਹੋ ਗਏ ਹਨ। ਪਹਿਲੇ ਸਾਮਿਆਂ ਵਿੱਚ ਜਿੱਥੇ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਵਿੱਚ ਰਿਸ਼ਤੇਦਾਰੀ,ਨਾਤੇਦਾਰੀ, ਆਪਸੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰਿਕ ਸੰਬੰਧ, ਵਹਿਮ ਭਰਮ, ਰੀਤੀ ਰਿਵਾਜ਼,ਲੋਕ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਅਤੇ ਮਨੋਰੰਜਨ ਆਦਿ ਮੁੱਖ ਸੱਭਿਆਚਾਰਿਕ ਕੇਂਦਰ ਬਿੰਦੂ ਸਨ,ਪਰੰਤੂ ਸਮਕਾਲੀ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਰਿਸ਼ਤੇਦਾਰੀ ਦਾ ਦੌਰ ਖ਼ਤਮ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਅਤੇ ਇਕਹਿਰੇ ਪਰਿਵਾਰਾਂ ਦੀ ਰੁਚੀ ਅਗ੍ਰਭੂਮ ਹੋ ਗਈ ਹੈ। ਸਮਾਜਿਕ ਪ੍ਰਬੰਧ ਵੀ ਬਿੱਲਕੁੱਲ ਬਦਲ ਗਿਆ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਸਾਡੇ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਵਿੱਚ ਵੀ ਨਵੀਂ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀ ਤਬਦੀਲੀ ਵਾਪਰੀ ਹੈ। ਅਜਿਹੇ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਸੱਭਿਆਚਾਰਿਕ ਮੌਕਿਆਂ ਦੇ ਵਿੱਚ ਪਰੰਪਰਾਗਤ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਦੇ ਉਹੀ ਰੂਪ ਜਿਉਂਦਾ ਰਹੇ ਹਨ ਜੋ ਸਮਕਾਲੀ ਸਮਿਆਂ ਦੇ ਅਨੁਸਾਰੀ ਹਨ। ਪਰੰਪਰਾਗਤ ਪੰਜਾਬੀ ਸਮਾਜ ਦੇ ਮੁਕਾਬਲੇ ਵਿੱਚ ਸਮਕਾਲੀ ਪੰਜਾਬੀ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਵਹਿਮ- ਭਰਮ, ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਅਤੇ ਰੀਤੀ- ਰਿਵਾਜ ਬਹੁਤ ਹੀ ਘੱਟ ਗਏ ਹਨ। ਸਮਕਾਲੀ ਸਮਾਜ ਦੇ ਤਰਕਸ਼ੀਲ ਹੋਣ ਨਾਲ ਲੋਕ ਮਨ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਵਹਿਮਾਂ ਭਰਮਾਂ, ਵਿਸ਼ਵਾਸਾਂ ਅਤੇ ਅਨੁਸ਼ਠਾਨਾਂ ਤੋਂ ਆਜ਼ਾਦ ਹੋ ਗਿਆ ਹੈ। ਸਮਕਾਲੀ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਨਵੇਂ ਸੱਭਿਆਚਾਰਿਕ ਮੌਕਿਆਂ ਅਨੁਸਾਰ ਲੋਕਾਂ ਦੀਆਂ ਨਵੀਆਂ ਤਕਨੀਕੀ ਲੋੜਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਜਨਮ ਲੈਂਦਾ ਹੈ।

ਇਸ ਦੀ ਮਿਸਾਲ ਇਸ ਬੋਲੀ ਵਿੱਚੋਂ ਦੇਖੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ:-

ਅੱਜ ਕੱਲ ਦੀ ਪੜ੍ਹਾਈ ਦੇਖਲੋ
ਫੈਸ਼ਨ ਬਣ ਕੇ ਰਹਿਗੀ
ਮੁੰਡੇ ਬਣੇ ਨੇ ਭਈਏ ਫਿਰਦੇ
ਪੱਗ ਹਰੇਕ ਦੇ ਸਿਰ ਤੋਂ ਲਹਿਗੀ
ਗੁੱਤ ਕਾਲੇ ਨਾਗ ਵਰਗੀ
ਨਵੇਂ ਬਣੇ ਸਲੂਨਾ ਤੇ ਰਹਿਗੀ -2

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਨਵੇਂ ਸੱਭਿਆਚਾਰਿਕ ਰੁਝਾਨਾਂ ਤੇ ਮੌਕਿਆਂ ਵਿੱਚ ਨਵੀਂ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਸਾਹਮਣੇ ਆ ਰਹੀ ਹੈ।

ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਦਾ ਪਾਠ ਵੀ ਬੱਝਵਾਂ ਨਹੀਂ ਰਿਹਾ। ਇਹ ਸਮੇਂ ਦੇ ਨਾਲ ਬਦਲਦਾ ਰਿਹਾ ਹੈ ਪਰੰਤੂ ਇਸ ਵਿੱਚ ਲੈਅ ਅਤੇ ਧੁਨੀ ਦਾ ਮੇਲ ਹਮੇਸ਼ਾ ਕਾਇਮ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਟੱਪਾ,ਬੋਲੀ,ਸੁਹਾਗ,ਘੋੜੀਆਂ, ਸਿੱਠਣੀਆਂ ਆਦਿ ਵਿੱਚ ਵੇਖਣ ਨੂੰ ਮਿਲਦਾ ਹੈ। ਅੱਜ ਕੱਲ੍ਹ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਦੇ ਪਰੰਪਰਾਗਤ ਰੂਪ ਖਾਸ ਕਰਕੇ ਲੰਮੇ ਰੂਪਾਕਾਰਾਂ ਦੀ ਬਹੁਤ ਘੱਟ ਰਚਨਾ ਵੇਖਣ ਨੂੰ ਮਿਲਦੀ ਹੈ। ਕਾਵਿ ਪਾਠ ਦੇ ਭਾਵ, ਰੂਪਾਂਤਰਣ, ਵਰਤਾਰੇ ਤੇ ਸਰੋਕਾਰਾਂ ਵਿੱਚ ਹੁੰਦਾ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ।ਪਰੰਤੂ ਪਾਠ ਦੀ ਬੁਣਤਰ ਹਮੇਸ਼ਾ ਇੱਕੋ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ। ਇਸੇ ਹੀ ਬਣਤਰ ਵਿੱਚ ਵਿਸ਼ੇ ਤਾਂ ਬਦਲ ਗਏ ਹਨ ਪਰੰਤੂ ਇਸ ਦੀ ਬਾਹਰੀ ਸਰੰਚਨਾ ਉਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਹੀ ਕਾਇਮ ਰਹੀ ਹੈ ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਪਰੰਪਰਾ ਵਿੱਚ ਟੱਪਿਆਂ ਦੀ ਬਣਤਰ ਦੋ ਸਤਰਾਂ, ਨਿੱਕੀ ਬੋਲੀਆਂ ਦੀ ਦੀਆਂ ਦੋ ਸਤਰਾਂ, ਸਿੱਠਣੀਆਂ ਦੀਆਂ ਦੋ ਲਾਈਨਾਂ ਹਨ। ਪਰੰਤੂ ਸਮਕਾਲੀ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਦੇ ਪ੍ਰਸੰਗ ਵਿੱਚ ਬਹੁਤ ਜ਼ਿਆਦਾ ਬਦਲਾਅ ਆਇਆ ਹੈ।ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਪ੍ਰਸੰਗ ਵਿੱਚ ਰਚਿਆ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਸਮਕਾਲੀ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਆਪਣੀ ਅਹਿਮੀਅਤ ਘਟਾਉਂਦਾ ਨਜ਼ਰੀਂ ਆਇਆ ਹੈ। ਸਮਕਾਲ ਵਿੱਚ ਇਸ ਨੂੰ ਨਵੇਂ ਪ੍ਰਸੰਗ ਵਿੱਚ ਢਾਲ ਕੇ ਰੂਪਾਂਤਰਿਤ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਅਜਿਹਾ ਕਰਨ ਨਾਲ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਸਮਕਾਲੀ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਆਪਣੀ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ਤਾ ਬਰਕਰਾਰ ਰੱਖ ਸਕਿਆ ਹੈ। ਜਿਸ ਦੀਆਂ ਬਹੁਤ ਸਾਰੀਆਂ ਉਦਾਹਰਨਾਂ ਸਮਕਾਲੀ ਗੀਤਾਂ ਅਤੇ ਫਿਲਮਾਂ ਵਿੱਚ ਦੇਖੀਆਂ ਜਾ ਸਕਦੀਆਂ ਹਨ। ਜਿਸ ਵਿੱਚ 'ਮਿਰਜ਼ਾ ਸਾਹਿਬਾਂ' ਲੋਕ ਗਾਥਾ ਦਾ ਸਮਕਾਲੀ ਗਾਇਨ ਅਤੇ ਸਤਿੰਦਰ ਸਰਤਾਜ ਦੇ ਗੀਤ 'ਆਰਸੀ' ਵਿੱਚ ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕ ਬੋਲੀਆਂ ਅਤੇ ਟੱਪਿਆਂ ਦੇ ਆਧੁਨਿਕ ਪ੍ਰਸੰਗ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਦੇਖੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ। ਸਮਕਾਲੀ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਕੁੱਝ ਕੁ ਪਛਾਣਾਂ ਨੂੰ ਛੱਡ ਕੇ ਆਪਣੀ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਪਹਿਚਾਣ ਨਾਲੋਂ ਲਗਭਗ ਟੁੱਟ ਚੁੱਕਾ ਹੈ। ਸਮਕਾਲੀ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਪਰੰਪਰਾ ਵਾਂਗੂ ਵਿਆਹ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਸ਼ਰੀਕੇ ਦੀਆਂ ਔਰਤਾਂ ਇਕੱਠੀਆਂ ਹੋ ਕੇ ਵਿਆਹ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਕਈ ਦਿਨ ਘੋੜੀਆਂ, ਸੁਹਾਗ ਨਹੀਂ ਗਾਉਂਦੀਆਂ ਬਲਕਿ ਅੱਜ ਕੱਲ੍ਹ ਤਾਂ ਇਹ ਸਭ ਕੁਝ 'ਲੇਡੀਜ਼ ਸੰਗੀਤ' ਤੱਕ ਸਿਮਟ ਕੇ ਰਹਿ ਗਿਆ ਹੈ। ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਜਾਂ ਤਾਂ ਡੀ.ਜੇ ਉੱਪਰ ਬੋਲੀਆਂ ਜਾਂ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਬੋਲੀਆਂ ਪਾਉਣ ਵਾਲੀ ਟੋਲੀ ਦੁਆਰਾ ਪਰਿਵਾਰਿਕ ਮੈਂਬਰ ਅਤੇ ਰਿਸ਼ਤੇਦਾਰ ਬੋਲੀਆਂ ਅਤੇ ਗੀਤ ਗਾਉਂਦੇ ਹਨ।'ਲੇਡੀ ਸੰਗੀਤ' ਨੇ ਆਧੁਨਿਕ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਆਪਣੀ ਅਲੱਗ ਪਹਿਚਾਣ ਬਣਾ ਲਈ ਹੈ।ਟੀ.ਵੀ ਅਤੇ ਸੋਸ਼ਲ ਮੀਡੀਆ ਉੱਪਰ ਵੀ ਆਧੁਨਿਕ ਸਮੇਂ ਦੀ ਮੰਗ ਅਤੇ ਲੋੜ ਅਨੁਸਾਰ ਹੀ ਪਰੰਪਰਾਗਤ ਮਾਹੌਲ ਸਿਰਜ ਕੇ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਬੱਚਿਆਂ ਦੀ ਗੀਤਾਂ ਅਤੇ ਲੋਰੀਆਂ ਨੂੰ ਐਨੀਮੇਸ਼ਨ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਵੇਖਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।

ਸਮਕਾਲੀ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਸੋਸ਼ਲ ਮੀਡੀਆ ਆਪਣੇ ਪੂਰੇ ਜੋਬਨ ਉੱਪਰ ਹੈ। ਹਰੇਕ ਵਸਤੂ, ਵਰਤਾਰਾ, ਦ੍ਰਿਸ਼, ਘਟਨਾ ਇਸ ਤੋਂ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਹੈ। ਅਜੋਕਾ ਮੰਡੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਸੋਸ਼ਲ ਮੀਡੀਆ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਹਿੱਤਾਂ ਲਈ ਪ੍ਰਯੋਗ ਕਰ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਇਹ ਮੀਡੀਆ ਆਪ ਵੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਇਸ ਤਰੀਕੇ ਨਾਲ ਕਰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਲੋਕ ਮਨ ਇਸ ਤੋਂ ਸਿੱਧਾ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਹੋ ਸਕੇ। ਇਸ ਲਈ ਅਜੋਕੇ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕ ਮਨ ਬਿੱਲਕੁਲ ਇਸ ਦੇ ਕਬਜ਼ੇ ਵਿੱਚ ਹੈ।ਜਿੱਥੇ ਇਹ ਮੀਡੀਆ ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕਧਾਰਾ ਦੇ ਹੋਰਨਾਂ ਰੂਪਾਂ ਨੂੰ ਤੋੜ ਮਰੋੜ ਕੇ ਪੇਸ਼ ਕਰ ਰਿਹਾ ਹੈ,ਉੱਥੇ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਵੀ ਇਸ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਤੋਂ ਬਚ ਨਹੀਂ ਸਕਿਆ। ਸਮਕਾਲੀ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਕੋਈ ਵੀ ਪੇਸ਼ੇਵਰ ਗਾਇਕ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਨੂੰ ਆਪਣੀਆਂ ਲੋੜਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਨਵੀਂ ਰੰਗਣ ਵਿੱਚ ਢਾਲ ਕੇ ਪੇਸ਼ ਕਰ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਜਿਹਨਾਂ ਦਾ ਮੁੱਖ ਮੁੱਦਾ ਮਨੁੱਖੀ ਮਨ ਦੀਆਂ ਅਮੋੜ ਲੱਚਰ ਖਾਹਿਸਾਂ ਨੂੰ ਉਭਾਰ ਕੇ ਪੈਸਾ ਅਤੇ ਪ੍ਰਸਿੱਧੀ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰਨਾ ਹੈ। ਸਮਕਾਲੀ ਪੰਜਾਬੀ ਗਾਇਕੀ ਵਿੱਚ ਇਹ ਰੁਝਾਨ ਬਹੁਤ ਭਾਰੂ ਹੈ,ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਫੁਕਰੇ ਗਾਇਕ ਅਜਿਹੇ ਗੀਤ ਗਾਉਂਦੇ ਹਨ ਜਿਹਨਾਂ ਵਿੱਚ ਹਥਿਆਰਾਂ,ਗੱਡੀਆਂ, ਗੈਂਗਸਟਰ, ਹਿੰਸਾ ਫੁਕਰਾਪਣ ਅਤੇ ਨਸ਼ਿਆਂ ਦਾ ਭਰਪੂਰ ਪ੍ਰਚਾਰ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਜਿਵੇਂ ਤੀਜਾ ਪੈੱਗ ਲਾ ਕੇ ਤੇਰੀ ਬਾਂਹ ਫੜਨੀ, ਚੱਕ ਲੋ ਰਵਾਲਵਰ ਰਫਲਾਂ ਤੇ ਕਬਜ਼ਾ

ਲੈਣਾ ਏ, ਲੋਕੀਂ ਤਾਂ ਮੰਗਾਉਂਦੇ ਅਫਗਾਨ ਤੋਂ ਅਫੀਮ ਅਸੀਂ ਬੂਟੇ ਕੈਲੀਫੋਰਨੀਆ ਲਾਏ ਨੇ,ਪਿੰਡ ਤੇਰਾ ਸਾਰਾ ਗੈਂਗਲੈਂਡ ਬਣਿਆ ਆਦਿ ਅਜਿਹੇ ਅਣਗਿਣਤ ਗੀਤ ਹਨ ਜੋ ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕ ਮਨ ਨੂੰ ਕੁਰਾਹੇ ਪਾ ਕੇ ਆਪਣਾ ਮਤਲਬ ਸਿੱਧ ਕਰ ਰਹੇ ਹਨ ਅਤੇ ਸਾਡੀ ਵਿਰਾਸਤੀ ਲੋਕਧਾਰਾ ਦਾ ਮਖੌਲ ਉਡਾ ਰਹੇ ਹਨ। ਸਮਕਾਲੀ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਦੇ ਬਹੁਤੇ ਰੂਪ ਜਿਵੇਂ ਟੱਪੇ,ਲੋਰੀਆਂ, ਸਿੱਠਣੀਆਂ, ਬੋਲੀਆਂ,ਸੁਹਾਗ, ਘੋੜੀਆਂ ਆਦਿ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਸੋਸ਼ਲ ਮੀਡੀਆ ਦੇ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਪਲੇਟਫਾਰਮਾਂ ਉੱਪਰ ਵੇਖੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ। ਇਹਨਾਂ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀਆਂ ਵਿੱਚ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਦੇ ਪਰੰਪਰਾਗਤ ਪ੍ਰਸੰਗ ਨੂੰ ਫਿਲਮਾਇਆ ਗਿਆ ਹੈ। ਚਾਹੇ ਇਹਨਾਂ ਵਿੱਚ ਪਰੰਪਰਾ ਦੇ ਕਈ ਰੂਪ ਗੈਰ ਹਾਜ਼ਰ ਹਨ ਪਰ ਇਹ ਡਿਜੀਟਲ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀਆਂ ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕਾਂ ਕਾਵਿ ਦੀ ਸਾਂਭ ਸੰਭਾਲ ਅਤੇ ਨਵੀਂ ਪੀੜ੍ਹੀ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਵਿਰਸੇ ਨਾਲ ਜੋੜੀ ਰੱਖਣ ਵਿੱਚ ਅਹਿਮ ਭੂਮਿਕਾ ਨਿਭਾਉਂਦੀਆਂ ਹਨ।

ਹਵਾਲੇ

1.ਡਾ. ਜਸਵਿੰਦਰ ਸਿੰਘ, ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕ ਸਾਹਿਤ ਸ਼ਾਸਤਰ, ਪਬਲੀਕੇਸ਼ਨ ਬਿਊਰੋ, ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਪਟਿਆਲਾ, ਦੂਜਾ ਸੰਸਕਰਣ, 2003,ਪੰਨਾ-44

2.Maria Leach (Ed). Standard Dictionary of Folklore, Mythology and legend, Harper Raw Publishers. Son Francisco 1984.p1032-1033.

3.ਡਾ. ਨਾਹਰ ਸਿੰਘ, ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਦੀ ਸਿਰਜਣ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ, ਲੋਕ ਗੀਤ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, ਚੰਡੀਗੜ੍ਹ, 2006,ਪੰਨਾ-27

ਮੋ 9464212113

lakhwinderbrar5775@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 105-109
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भारत–अमेरिका सामरिक साझेदारी और भारत–रूस संबंधों के बीच संतुलनः बदलती वैश्विक राजनीति का अध्ययन

डॉ0 अमित कुमार
सहायक आचार्य,
राजनीति विज्ञान विभाग, के0 बी0 पी0 जी0 कालेज मिर्जापुर

सारांश

21वीं सदी की वैश्विक राजनीति में शक्ति–संतुलन की प्रकृति तेजी से परिवर्तित हो रही है। शीतयुद्धोत्तर एकध्रुवीय व्यवस्था के स्थान पर बहुध्रुवीयता, रणनीतिक प्रतिस्पर्धा, आर्थिक परस्पर निर्भरता तथा नए शक्ति–केंद्रों का उदय अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था की प्रमुख विशेषताएँ बन गई हैं। इस परिवर्तित वैश्विक परिवेश में भारत की विदेश नीति के सामने एक महत्वपूर्ण चुनौती यह है कि वह संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ विकसित हो रही अपनी सामरिक साझेदारी को मजबूत करते हुए रूस के साथ अपने दीर्घकालीन और बहुआयामी संबंधों को भी बनाए रखे। भारत–अमेरिका संबंध वर्तमान समय में रक्षा, उच्च प्रौद्योगिकी, व्यापार, ऊर्जा, अंतरिक्ष, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, समुद्री सुरक्षा तथा हिंद–प्रशांत क्षेत्र जैसे अनेक क्षेत्रों में व्यापक होते जा रहे हैं। दूसरी ओर भारत–रूस संबंधों की आधारभूमि रक्षा सहयोग, ऊर्जा सुरक्षा, परमाणु ऊर्जा, अंतरिक्ष, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी तथा बहुपक्षीय कूटनीति में दिखाई देती है।

रूस–यूक्रेन संघर्ष के बाद भारत के लिए अमेरिका और रूस के बीच संबंधों को संतुलित रखना और अधिक चुनौतीपूर्ण हो गया है। अमेरिका तथा उसके सहयोगी देशों द्वारा रूस पर लगाए गए प्रतिबंधों के बावजूद भारत ने रूस के साथ ऊर्जा और अन्य रणनीतिक संबंधों को बनाए रखा। साथ ही भारत ने अमेरिका के साथ अपने संबंधों को भी निरंतर विस्तार दिया। इससे स्पष्ट होता है कि भारत की विदेश नीति किसी पारंपरिक गुटीय व्यवस्था में शामिल होने के बजाय अपने राष्ट्रीय हितों के आधार पर स्वतंत्र निर्णय लेने की दिशा में अग्रसर है। भारत–अमेरिका संबंधों में बढ़ती निकटता का एक महत्वपूर्ण कारण हिंद–प्रशांत क्षेत्र में चीन की बढ़ती सामरिक एवं आर्थिक सक्रियता भी है। क्वाड जैसे मंचों के माध्यम से भारत अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया के साथ समुद्री सुरक्षा, आपूर्ति–श्रृंखला, प्रौद्योगिकी तथा क्षेत्रीय स्थिरता के विषयों पर सहयोग कर रहा है। दूसरी ओर रूस भारत के लिए अभी भी रक्षा उपकरणों, ऊर्जा तथा यूरेशियाई क्षेत्र में रणनीतिक सहयोग का महत्वपूर्ण स्रोत है। इस प्रकार दोनों देशों के साथ भारत के संबंधों की प्रकृति और उपयोगिता अलग–अलग है।

इस अध्ययन का केंद्रीय तर्क यह है कि भारत अमेरिका और रूस के बीच किसी एक पक्ष का चुनाव करने के बजाय रणनीतिक स्वायत्तता और बहु–संरेखण की नीति अपना रहा है। भारत अमेरिका के साथ आधुनिक तकनीक, रक्षा सहयोग, निवेश और हिंद–प्रशांत क्षेत्र में साझेदारी को आगे बढ़ाते हुए

रूस के साथ ऊर्जा, रक्षा और रणनीतिक सहयोग को बनाए रखना चाहता है। इसलिए भारत की वर्तमान विदेश नीति को अमेरिका–रूस संबंधों के बीच केवल 'संतुलन' की नीति के रूप में देखना पर्याप्त नहीं है। इसे बदलती वैश्विक राजनीति में भारत के राष्ट्रीय हितों की रक्षा करने तथा अपने रणनीतिक विकल्पों को अधिकतम करने की व्यापक नीति के रूप में समझना अधिक उचित होगा।

मुख्य शब्द :– भारत–अमेरिका संबंध, भारत–रूस संबंध, सामरिक साझेदारी, रणनीतिक स्वायत्तता, बहु–संरेखण, बहुध्रुवीय विश्व, हिंद–प्रशांत, रक्षा सहयोग, ऊर्जा सुरक्षा, वैश्विक राजनीति।

प्रस्तावना

बदलती वैश्विक व्यवस्था और भारत की बढ़ती सामरिक भूमिका–

21वीं सदी की वैश्विक राजनीति तीव्र परिवर्तन, शक्ति–संतुलन के पुनर्गठन और अंतरराष्ट्रीय संबंधों की बदलती प्राथमिकताओं के दौर से गुजर रही है। शीतयुद्ध की समाप्ति के बाद कुछ समय तक संयुक्त राज्य अमेरिका के नेतृत्व में एकध्रुवीय व्यवस्था का प्रभाव रहा, किंतु 21वीं सदी के आरंभ से ही अंतरराष्ट्रीय शक्ति–संरचना में महत्वपूर्ण परिवर्तन दिखाई देने लगे। चीन के तीव्र आर्थिक एवं सैन्य उदय, रूस की पुनर्सक्रिय सामरिक भूमिका, यूरोपीय शक्तियों की बदलती स्थिति तथा जापान और भारत जैसी उभरती शक्तियों की बढ़ती क्षमताओं ने विश्व व्यवस्था को बहुध्रुवीयता की दिशा में अग्रसर किया है। वर्तमान समय में राष्ट्रीय शक्ति का निर्धारण केवल सैन्य क्षमता से नहीं होता, बल्कि आर्थिक सामर्थ्य, ऊर्जा संसाधनों, तकनीकी दक्षता, साइबर एवं अंतरिक्ष क्षमताओं, समुद्री शक्ति, आपूर्ति–श्रृंखलाओं तथा कूटनीतिक प्रभाव से भी होता है।

समकालीन अंतरराष्ट्रीय राजनीति में अमेरिका–चीन प्रतिस्पर्धा इसका प्रमुख उदाहरण है। व्यापार, उन्नत तकनीक, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, सेमीकंडक्टर, समुद्री सुरक्षा और वैश्विक प्रभाव के क्षेत्रों में दोनों देशों के बीच प्रतिस्पर्धा विश्व शक्ति–संतुलन को प्रभावित कर रही है। दूसरी ओर रूस–यूक्रेन संघर्ष ने यूरोपीय सुरक्षा व्यवस्था, ऊर्जा राजनीति तथा रूस–पश्चिम संबंधों को नई दिशा दी है। पश्चिम एशिया की अस्थिरता, ऊर्जा आपूर्ति की अनिश्चितता और वैश्विक आपूर्ति–श्रृंखलाओं में व्यवधान ने भी अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था को अधिक जटिल बनाया है। ऐसी परिस्थितियों में प्रमुख राष्ट्र अपनी विदेश नीतियों को बदलती शक्ति–संरचना के अनुरूप पुनर्गठित कर रहे हैं।

इस बदलते वैश्विक परिदृश्य में भारत की भूमिका विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो गई है। भारत एक बड़ी अर्थव्यवस्था, परमाणु शक्ति, विशाल घरेलू बाजार, महत्वपूर्ण सैन्य क्षमता, विकसित वैज्ञानिक एवं तकनीकी आधार तथा हिंद महासागर में रणनीतिक भौगोलिक स्थिति वाला देश है। वैश्विक दक्षिण के संदर्भ में भी भारत की भूमिका मजबूत हुई है। जलवायु परिवर्तन, खाद्य एवं ऊर्जा सुरक्षा, महामारी तथा विकासशील देशों की समस्याओं जैसे विषयों पर भारत ने स्वतंत्र और संतुलित दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। हिंद महासागर की स्थिति भारत को पश्चिम एशिया, मध्य एशिया, दक्षिण–पूर्व एशिया और व्यापक हिंद–प्रशांत क्षेत्र से जोड़ती है। चीन की बढ़ती समुद्री उपस्थिति ने भारत की सुरक्षा चिंताओं को और बढ़ाया है तथा समुद्री क्षमता एवं रणनीतिक साझेदारियों को सुदृढ़ करने की आवश्यकता उत्पन्न की है।

भारत की विदेश नीति की प्रमुख विशेषता परिस्थितियों के अनुरूप परिवर्तन करते हुए ''रणनीतिक स्वायत्तता'' को बनाए रखना रही है। शीतयुद्ध के दौरान भारत ने गुटनिरपेक्षता के माध्यम से स्वतंत्र विदेश नीति अपनाई थी, जबकि वर्तमान परिस्थितियों में उसका दृष्टिकोण बहु–संरेखण और हित–आधारित साझेदारियों की ओर विकसित हुआ है। इसी संदर्भ में भारत–अमेरिका और भारत–रूस संबंधों का विशेष महत्व है। अमेरिका के साथ भारत का सहयोग रक्षा आधुनिकीकरण, उन्नत प्रौद्योगिकी, निवेश, व्यापार, हिंद–प्रशांत सुरक्षा और वैश्विक रणनीतिक मुद्दों पर केंद्रित है। दूसरी ओर रूस के साथ संबंध रक्षा, ऊर्जा, परमाणु सहयोग, अंतरिक्ष, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी तथा यूरेशियाई हितों पर आधारित हैं। अतः भारत के लिए अमेरिका और रूस में से किसी एक का चयन करना उद्देश्य नहीं हैय बल्कि दोनों के साथ अपने अलग–अलग सामरिक हितों को सुरक्षित रखते हुए ''रणनीतिक विकल्पों को अधिकतम करना और स्वतंत्र विदेश नीति बनाए रखना'' उसकी वर्तमान कूटनीतिक रणनीति की प्रमुख विशेषता है।

भारत–अमेरिका सामरिक साझेदारी और भारत–रूस संबंधों का विकास–

भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका के संबंधों का इतिहास अनेक उतार–चढ़ावों से होकर गुजरा है। शीतयुद्ध के दौरान भारत की गुटनिरपेक्ष विदेश नीति तथा सोवियत संघ के साथ उसकी निकटता के कारण भारत–अमेरिका संबंधों में अपेक्षित रणनीतिक निकटता विकसित नहीं हो सकी। दूसरी ओर, अमेरिका के पाकिस्तान के साथ सामरिक संबंधों ने भी दक्षिण एशिया में दोनों देशों की प्राथमिकताओं के बीच दूरी बनाए रखी। किंतु सोवियत संघ के विघटन, शीतयुद्ध की समाप्ति तथा भारत में 1991 के आर्थिक उदारीकरण के बाद दोनों देशों के संबंधों में क्रमिक परिवर्तन प्रारंभ हुआ। 21वीं सदी में यह संबंध एक व्यापक रणनीतिक साझेदारी में परिवर्तित हुआ। भारत–अमेरिका असैन्य परमाणु सहयोग समझौता इस परिवर्तन का महत्वपूर्ण पड़ाव रहा, जिसने राजनीतिक विश्वास को मजबूत करने के साथ रक्षा, उच्च प्रौद्योगिकी और आर्थिक सहयोग के नए अवसर खोले। इसके बाद रक्षा व्यापार, संयुक्त सैन्य अभ्यास, आतंकवाद–रोधी सहयोग, समुद्री सुरक्षा और उन्नत रक्षा तकनीक में उल्लेखनीय विस्तार हुआ। भारत को प्रमुख रक्षा साझेदार का दर्जा मिलने से इस सहयोग को अधिक संस्थागत आधार प्राप्त हुआ।

समकालीन दौर में भारत–अमेरिका साझेदारी रक्षा क्षेत्र से आगे बढ़कर कृत्रिम बुद्धिमत्ता, सेमीकंडक्टर, अंतरिक्ष, क्वांटम तकनीक, साइबर सुरक्षा, महत्वपूर्ण खनिज और स्वच्छ ऊर्जा जैसे क्षेत्रों तक विस्तृत हो चुकी है। हिंद–प्रशांत इसका प्रमुख आधार है, जहाँ चीन की बढ़ती आर्थिक एवं सैन्य सक्रियता ने दोनों देशों के बीच समुद्री सुरक्षा और क्षेत्रीय स्थिरता को लेकर रणनीतिक अभिसरण बढ़ाया है। क्वाड के माध्यम से भारत, अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया समुद्री सुरक्षा, आपदा राहत, आपूर्ति–श्रृंखला, प्रौद्योगिकी और क्षेत्रीय सहयोग को आगे बढ़ा रहे हैं। फिर भी भारत इसे औपचारिक सैन्य गठबंधन के बजाय अपने सामरिक हितों और क्षेत्रीय शक्ति–संतुलन को मजबूत करने के साधन के रूप में देखता है। इसके विपरीत भारत–रूस संबंध ऐतिहासिक विश्वास और दीर्घकालीन सहयोग पर आधारित हैं। स्वतंत्रता के बाद सोवियत संघ ने भारत के औद्योगिकीकरण, भारी उद्योग, रक्षा, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। 1971 की भारत–सोवियत शांति एवं मैत्री संधि ने राजनीतिक विश्वास को और मजबूत किया। सोवियत संघ के विघटन के बाद भी रूस ने भारत के साथ रक्षा, परमाणु ऊर्जा, अंतरिक्ष और ऊर्जा सहयोग को बनाए रखा। हाल के वर्षों में, विशेषकर रूस–यूक्रेन संघर्ष के बाद, ऊर्जा सहयोग का महत्व और बढ़ा है।

रूस–यूक्रेन संघर्ष ने भारत के सामने अमेरिका और रूस के साथ संबंधों को संतुलित रखने की चुनौती को जटिल बनाया। पश्चिमी प्रतिबंधों के बावजूद भारत ने रूस के साथ अपने आवश्यक रणनीतिक एवं ऊर्जा संबंध बनाए रखे और साथ ही अमेरिका के साथ रक्षा, प्रौद्योगिकी, क्वाड तथा हिंद–प्रशांत सहयोग को आगे बढ़ाया। इससे स्पष्ट होता है कि भारत की विदेश नीति किसी एक शक्ति–गुट के साथ पूर्ण संरेखण पर आधारित नहीं है, बल्कि ''रणनीतिक स्वायत्तता, बहु–संरेखण और राष्ट्रीय हित–आधारित कूटनीति'' पर आधारित है। इस प्रकार भारत अमेरिका और रूस दोनों के साथ उनके विशिष्ट महत्व के अनुसार संबंध बनाए रखते हुए बदलती वैश्विक शक्ति–संरचना में अपने रणनीतिक विकल्पों का विस्तार कर रहा है।

रणनीतिक स्वायत्तता, बहु–संरेखण और अमेरिका–रूस के बीच भारत की संतुलनकारी नीति–

भारत–अमेरिका सामरिक साझेदारी और भारत–रूस संबंधों के बीच संतुलन वर्तमान भारतीय विदेश नीति का महत्वपूर्ण पक्ष है। अमेरिका के साथ भारत की बढ़ती निकटता को कभी–कभी रूस से दूरी के संकेत के रूप में देखा जाता है, जबकि रूस के साथ भारत के परंपरागत रक्षा एवं ऊर्जा संबंधों को अमेरिकी साझेदारी के संदर्भ में चुनौती माना जाता है। किंतु भारत की विदेश नीति इससे अधिक व्यावहारिक और बहुआयामी है। भारत दोनों शक्तियों के साथ उनके अलग–अलग सामरिक महत्व और राष्ट्रीय हितों के आधार पर संबंध बनाए रखता है। इसका उद्देश्य किसी एक शक्ति का पक्ष लेना नहीं, बल्कि सुरक्षा, आर्थिक विकास और वैश्विक प्रभाव के लिए अपने रणनीतिक विकल्पों को सुरक्षित रखना है।

भारतीय विदेश नीति में ''रणनीतिक स्वायत्तता'' का अर्थ बाहरी शक्तियों से दूरी नहीं, बल्कि राष्ट्रीय हितों से जुड़े निर्णयों को स्वतंत्र रूप से लेने की क्षमता है। वर्तमान समय में इसका स्वरूप बहु–संरेखण में दिखाई देता है। भारत अमेरिका के साथ क्वाड, रक्षा प्रौद्योगिकी, उच्च तकनीक और हिंद–प्रशांत सहयोग में सक्रिय है, जबकि रूस के साथ रक्षा, ऊर्जा तथा यूरेशियाई सहयोग को बनाए

रखता है। इसके साथ भारत ब्रिक्स, शंघाई सहयोग संगठन तथा फ्रांस, जापान, ऑस्ट्रेलिया और पश्चिम एशियाई देशों के साथ भी संबंधों को सुदृढ़ कर रहा है। इस नीति का उद्देश्य विभिन्न शक्ति–केंद्रों से अपने हितों के अनुरूप सहयोग प्राप्त करना तथा किसी एक देश पर अत्यधिक निर्भरता से बचना है।

चीन का बढ़ता प्रभाव भारत की रणनीतिक नीति को प्रभावित करने वाला महत्वपूर्ण कारक है। भारत–चीन सीमा विवाद तथा हिंद महासागर में चीन की बढ़ती सक्रियता के कारण अमेरिका के साथ भारत का रक्षा एवं समुद्री सहयोग महत्वपूर्ण हुआ है। फिर भी भारत चीन के विरुद्ध किसी औपचारिक सैन्य गठबंधन से बचता है। दूसरी ओर रूस यूरेशियाई शक्ति–संरचना में महत्वपूर्ण स्थान रखने के साथ भारत का दीर्घकालीन रक्षा और ऊर्जा साझेदार बना हुआ है। इसलिए रूस के साथ संबंध बनाए रखना भारत की व्यापक सामरिक आवश्यकताओं का हिस्सा है। रक्षा क्षेत्र में भारत ने विविधीकरण की नीति अपनाई है। रूस पर पारंपरिक निर्भरता के साथ अमेरिका, फ्रांस और इजराइल से भी रक्षा सहयोग बढ़ाया गया है तथा स्वदेशी रक्षा उत्पादन पर जोर दिया जा रहा है। इसी प्रकार ऊर्जा क्षेत्र में रूस के साथ संबंध रखते हुए भारत पश्चिम एशिया, अमेरिका और अन्य देशों से भी ऊर्जा स्रोतों का विस्तार कर रहा है। इससे संभावित संकटों के समय वैकल्पिक विकल्प उपलब्ध होते हैं।

रूस–यूक्रेन संघर्ष ने इस संतुलन की उपयोगिता को और स्पष्ट किया। पश्चिमी प्रतिबंधों के बावजूद भारत ने रूस के साथ आवश्यक ऊर्जा एवं रणनीतिक संबंध बनाए रखे, जबकि अमेरिका के साथ रक्षा, तकनीक और हिंद–प्रशांत सहयोग को भी आगे बढ़ाया। इससे स्पष्ट है कि भारत की विदेश नीति किसी एक शक्ति–गुट के स्थायी संरेखण के बजाय ''राष्ट्रीय हित, रणनीतिक स्वायत्तता और कूटनीतिक लचीलेपन'' पर आधारित है। अतः भारत–अमेरिका और भारत–रूस संबंधों के बीच संतुलन को कमजोरी नहीं, बल्कि भारत की रणनीतिक क्षमता के रूप में समझना अधिक उचित है। दोनों शक्तियों के साथ अलग–अलग क्षेत्रों में सहयोग बनाए रखते हुए भारत बदलती बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था में अपनी सुरक्षा, आर्थिक विकास और वैश्विक प्रभाव को मजबूत कर सकता है।

निष्कर्ष

भारत–अमेरिका सामरिक साझेदारी और भारत–रूस संबंधों का तुलनात्मक अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि समकालीन भारतीय विदेश नीति किसी एक शक्ति–केंद्र के साथ स्थायी रूप से जुड़ने के बजाय ''राष्ट्रीय हित, रणनीतिक स्वायत्तता और बहु–संरेखण'' के सिद्धांतों पर आधारित है। दोनों देशों का भारत के लिए अलग–अलग सामरिक महत्व है। अमेरिका आधुनिक रक्षा प्रौद्योगिकी, निवेश, उच्च तकनीक, आर्थिक सहयोग और हिंद–प्रशांत क्षेत्र में रणनीतिक साझेदारी का महत्वपूर्ण आधार है, जबकि रूस रक्षा उपकरणों, ऊर्जा सुरक्षा, परमाणु ऊर्जा, अंतरिक्ष, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी तथा यूरेशियाई भू–राजनीति में भारत का दीर्घकालीन साझेदार बना हुआ है।

रूस–यूक्रेन संघर्ष ने भारत के सामने अमेरिका और रूस के साथ संबंधों के संतुलन को अधिक चुनौतीपूर्ण बनाया, किंतु भारत ने अपने राष्ट्रीय हितों के अनुरूप दोनों देशों के साथ संबंधों को जारी रखा। इससे स्पष्ट होता है कि भारत की विदेश नीति परंपरागत गुटीय राजनीति के बजाय स्वतंत्र निर्णय–क्षमता और रणनीतिक लचीलेपन को प्राथमिकता देती है। भारत अमेरिका के साथ क्वाड, रक्षा सहयोग और उन्नत प्रौद्योगिकी में साझेदारी बढ़ाते हुए रूस के साथ रक्षा एवं ऊर्जा संबंधों को भी बनाए हुए है। अतः भारत–अमेरिका और भारत–रूस संबंधों को परस्पर विरोधी विकल्पों के रूप में देखना उचित नहीं है। ये भारत की व्यापक विदेश नीति के ''अलग–अलग किंतु पूरक आयाम'' हैं। रक्षा आत्मनिर्भरता, ऊर्जा स्रोतों का विविधीकरण, तकनीकी क्षमता, आर्थिक शक्ति और बहुपक्षीय कूटनीति को मजबूत करके भारत अपनी रणनीतिक स्वायत्तता को सुरक्षित रखते हुए बदलती बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था में एक ''स्वतंत्र, प्रभावशाली और निर्णायक शक्ति–केंद्र'' के रूप में अपनी स्थिति और मजबूत कर सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भाटिया, विजय कुमार। (2019)। भारत की विदेश नीति। एकेडमिक पब्लिकेशन।
2. अग्रवाल, रमेश चंद्र। (2018)। अंतरराष्ट्रीय राजनीति एवं भारत की विदेश नीति। एस. चंद एंड कंपनी।
3. घई, यू. आर. (2017)। अंतरराष्ट्रीय संबंध एवं विश्व राजनीति। न्यू एकेडमिक पब्लिकेशन।
4. सिंह, जे. आर. (2016)। भारत की विदेश नीतिः समकालीन परिप्रेक्ष्य। प्रकाशन संस्थान।

5. कपूर, हर्ष वी. (2018)। भारत की विदेश नीति और सामरिक संबंध। ज्ञान पब्लिशिंग हाउस।
6. जयशंकर, एस. (2020)। भारत मार्गः अनिश्चित विश्व के लिए रणनीतियाँ । हार्पर कॉलिन्स इंडिया।
7. मेनन, शिवशंकर। (2016)। चॉइसिजः भारतीय विदेश नीति के निर्माण के भीतर पेंगुइन रैंडम हाउस इंडिया।
8. Jaishankar, S. (2020). *The India way: Strategies for an uncertain world*. HarperCollins India.
9. Menon, S. (2016). *Choices: Inside the making of Indian foreign policy*. Allen Lane.
10. Mohan, C. R. (2003). *Crossing the Rubicon: The shaping of India's new foreign policy*. Viking/Penguin Books India.
11. Malone, D. M., Mohan, C. R., & Raghavan, S. (Eds.). (2015). *The Oxford handbook of Indian foreign policy*. Oxford University Press.
12. Mohan, C. R. (2012). *Samudra manthan: Sino-Indian rivalry in the Indo-Pacific*. Carnegie Endowment for International Peace.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 110-114
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भारत की 'Neighbourhood First' नीति का दक्षिण एशिया की क्षेत्रीय सुरक्षा एवं आर्थिक एकीकरण पर प्रभाव : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ0 योगेश कुमार कनौजिया,
सहायक आचार्य,
अखिलभाग्य स्नातकोत्तर महाविद्यालय रानापार, गोरखपुर

सारांश
दक्षिण एशिया भौगोलिक निकटता, ऐतिहासिक–सांस्कृतिक समानता और आर्थिक संभावनाओं के बावजूद राजनीतिक अविश्वास, सीमा विवाद, आतंकवाद, आर्थिक असमानता, व्यापारिक बाधाओं तथा कमजोर क्षेत्रीय संपर्क जैसी चुनौतियों से प्रभावित है। इस संदर्भ में भारत की '''पड़ोसी प्रथम' (Neighbourhood First)'' नीति क्षेत्रीय सुरक्षा, आर्थिक सहयोग और एकीकरण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य यह विश्लेषण करना है कि इस नीति ने पड़ोसी देशों के साथ राजनीतिक विश्वास, सुरक्षा सहयोग, आर्थिक परस्पर निर्भरता, कनेक्टिविटी, ऊर्जा साझेदारी और विकास सहयोग को किस प्रकार प्रभावित किया है। अध्ययन में 'Neighbourhood First' को केवल कूटनीतिक प्राथमिकता न मानकर ''रणनीतिक, आर्थिक और विकासात्मक दृष्टिकोण'' के रूप में देखा गया है। इसके अंतर्गत भारत ने राजनीतिक संवाद, विकास सहायता, सड़क एवं रेल संपर्क, ऊर्जा परियोजनाओं, व्यापार, डिजिटल कनेक्टिविटी, स्वास्थ्य तथा आपदा राहत को बढ़ावा दिया है। बांग्लादेश के साथ परिवहन एवं ऊर्जा सहयोग, नेपाल और भूटान के साथ संपर्क एवं जलविद्युत तथा श्रीलंका और मालदीव के साथ समुद्री एवं मानवीय सहयोग इसके प्रमुख उदाहरण हैं। अध्ययन का केंद्रीय तर्क है कि ''क्षेत्रीय सुरक्षा और आर्थिक एकीकरण परस्पर पूरक हैं।'' सुरक्षित क्षेत्रीय वातावरण व्यापार और निवेश को प्रोत्साहित करता है, जबकि आर्थिक परस्पर निर्भरता सहयोग को मजबूत कर सकती है। फिर भी भारत–पाकिस्तान तनाव, चीन की बढ़ती उपस्थिति, व्यापारिक बाधाएँ और कमजोर क्षेत्रीय संस्थाएँ प्रमुख चुनौतियाँ हैं। अतः भारत को साझा विकास, पारस्परिक लाभ और क्षमता निर्माण पर बल देना होगा।

मुख्य शब्दः- 'Neighbourhood First' नीति, दक्षिण एशिया, क्षेत्रीय सुरक्षा, आर्थिक एकीकरण, क्षेत्रीय सहयोग, भारत की विदेश नीति, कनेक्टिविटी, आर्थिक परस्पर निर्भरता, ऊर्जा सहयोग, विकास साझेदारी, समुद्री सुरक्षा, BIMSTEC, BBIN, SAARC, हिंद महासागर।

प्रस्तावना

1. दक्षिण एशिया का भू–राजनीतिक, सामरिक एवं आर्थिक परिप्रेक्ष्य

इक्कीसवीं सदी की अंतरराष्ट्रीय राजनीति में क्षेत्रीय सहयोग, आर्थिक परस्पर निर्भरता, कनेक्टिविटी और सामूहिक सुरक्षा का महत्व बढ़ा है। वैश्वीकरण और तकनीकी विकास ने देशों के बीच आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक संबंधों को अधिक घनिष्ठ बनाया है। इसलिए किसी देश की सुरक्षा और

आर्थिक प्रगति को केवल उसकी सीमाओं तक सीमित करके नहीं समझा जा सकता। विशेष रूप से दक्षिण एशिया जैसे क्षेत्र में, जहाँ ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और भौगोलिक निकटता गहरी है, पड़ोसी देशों की स्थिरता सीधे भारत के राष्ट्रीय हितों को प्रभावित करती है। दक्षिण एशिया में भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, श्रीलंका, मालदीव और अफगानिस्तान प्रमुख देश हैं, जबकि व्यापक पड़ोसी संदर्भ में म्यांमार भी भारत के लिए महत्वपूर्ण है। इसी संदर्भ में भारत की '''Neighbourhood First' अर्थात 'पड़ोसी प्रथम' नीति'' का महत्व सामने आता है। इसका उद्देश्य पड़ोसी देशों के साथ राजनीतिक संवाद, भौतिक एवं डिजिटल कनेक्टिविटी, व्यापार, निवेश, ऊर्जा तथा विकास सहयोग को मजबूत करना है। इस नीति के माध्यम से भारत अपने पड़ोस को केवल सुरक्षा की दृष्टि से नहीं, बल्कि साझा विकास और समृद्धि के क्षेत्र के रूप में देखता है।

दक्षिण एशिया का महत्व इसकी विशाल जनसंख्या, आर्थिक संभावनाओं तथा हिंद महासागर, बंगाल की खाड़ी और अरब सागर से जुड़ी भौगोलिक स्थिति के कारण भी है। श्रीलंका और मालदीव भारत की समुद्री सुरक्षा तथा ऊर्जा हितों के लिए महत्वपूर्ण हैं, जबकि नेपाल और भूटान भारत की उत्तरी सुरक्षा, जल संसाधनों और हिमालयी पर्यावरण से जुड़े हैं। बांग्लादेश भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र तथा बंगाल की खाड़ी के बीच महत्वपूर्ण संपर्क का माध्यम है। इस प्रकार पड़ोसी देशों के साथ भारत के संबंधों का प्रभाव व्यापक क्षेत्रीय स्थिरता पर पड़ता है। इसके बावजूद दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय आर्थिक एकीकरण अपेक्षित स्तर तक विकसित नहीं हो सका है। राजनीतिक मतभेद, भारत–पाकिस्तान तनाव, व्यापारिक एवं गैर–शुल्क बाधाएँ, कमजोर सीमा–पार अवसंरचना और अपर्याप्त क्षेत्रीय संपर्क प्रमुख समस्याएँ हैं। SAARC की सीमित प्रभावशीलता ने भी क्षेत्रीय सहयोग की गति को प्रभावित किया है। इसके साथ चीन की बढ़ती आर्थिक एवं सामरिक उपस्थिति ने क्षेत्रीय शक्ति–संतुलन को और जटिल बनाया है।

वर्तमान समय में सुरक्षा की अवधारणा भी व्यापक हुई है। आतंकवाद, सीमा–पार अपराध, साइबर सुरक्षा, ऊर्जा एवं खाद्य सुरक्षा, स्वास्थ्य संकट, जलवायु परिवर्तन और प्राकृतिक आपदाएँ क्षेत्रीय स्थिरता के महत्वपूर्ण प्रश्न बन चुके हैं। इसलिए सुरक्षा को केवल सैन्य शक्ति के आधार पर देखना पर्याप्त नहीं है। आर्थिक विकास, कनेक्टिविटी, ऊर्जा सहयोग और मानवीय सुरक्षा भी स्थायी क्षेत्रीय शांति के आवश्यक आधार हैं। अतः 'Neighbourhood First' नीति भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा, आर्थिक विकास और क्षेत्रीय सहयोग को परस्पर जोड़ने वाली व्यापक रणनीति'' के रूप में उभरती है। यदि इसे समानता, पारस्परिक सम्मान, साझा हित और विश्वसनीय विकास साझेदारी के आधार पर आगे बढ़ाया जाता है, तो यह दक्षिण एशिया को अधिक सुरक्षित, स्थिर, संपर्क–संपन्न और आर्थिक रूप से परस्पर निर्भर क्षेत्र बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है।

2. भारत की विदेश नीति में 'Neighbourhood First' की अवधारणा और विकास

स्वतंत्रता के बाद से ही भारत की विदेश नीति में पड़ोसी देशों को विशेष महत्व प्राप्त रहा है। जवाहरलाल नेहरू ने शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व, संप्रभु समानता और पारस्परिक सम्मान को विदेश नीति के प्रमुख सिद्धांत बनाया। भारत ने गुटनिरपेक्षता तथा उपनिवेशवाद–विरोधी दृष्टिकोण के माध्यम से विकासशील देशों के साथ संबंध मजबूत किए और दक्षिण एशिया की शांति एवं स्थिरता को अपने राष्ट्रीय हितों से जोड़ा। भारत–पाकिस्तान संघर्ष, चीन के साथ सीमा विवाद, बांग्लादेश का निर्माण, श्रीलंका का जातीय संघर्ष तथा नेपाल की राजनीतिक अस्थिरता ने भारत की पड़ोसी नीति में सुरक्षा संबंधी चिंताओं को प्रमुख बनाए रखा। 1991 के आर्थिक उदारीकरण के बाद भारत की विदेश नीति में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया। वैश्विक अर्थव्यवस्था से भारत का जुड़ाव बढ़ा और व्यापार, निवेश, ऊर्जा, तकनीक तथा बाजार तक पहुँच राष्ट्रीय विकास के प्रमुख साधन बने। इससे यह समझ विकसित हुई कि भारत की आर्थिक प्रगति और सुरक्षा पड़ोसी देशों की स्थिरता एवं समृद्धि से जुड़ी है। इक्कीसवीं सदी में चीन का आर्थिक उदय, हिंद महासागर की बढ़ती सामरिक महत्ता, आतंकवाद और ऊर्जा सुरक्षा ने इस नीति के महत्व को और बढ़ाया। वर्ष 2014 के बाद 'Neighbourhood First' अर्थात 'पड़ोसी प्रथम' नीति'' भारत की विदेश नीति की स्पष्ट प्राथमिकता के रूप में उभरी। इसका उद्देश्य पड़ोसी देशों के साथ राजनीतिक संपर्क, कनेक्टिविटी, व्यापार, ऊर्जा, स्वास्थ्य, शिक्षा और सुरक्षा सहयोग को मजबूत करना है।

इस नीति का प्रमुख आयाम ''विकास साझेदारी'' है। भारत ऋण सुविधा, अनुदान, तकनीकी सहयोग, क्षमता निर्माण, आपदा राहत और मानवीय सहायता के माध्यम से पड़ोसी देशों के साथ संबंध मजबूत करता है। बांग्लादेश, नेपाल, श्रीलंका और मालदीव में सड़क, रेल, विद्युत, जलविद्युत तथा स्वास्थ्य संबंधी परियोजनाएँ इसके उदाहरण हैं। अतः 'Neighbourhood First' केवल राजनीतिक संपर्क की नीति नहीं, बल्कि ''विकास, आर्थिक सहयोग और सुरक्षा को जोड़ने वाली व्यापक रणनीति'' है। इसे राजनीतिक विश्वास, आर्थिक परस्पर निर्भरता और साझा सुरक्षा के तीन प्रमुख आयामों से समझा जा सकता है। इसका व्यापक उद्देश्य भारत के लिए एक ''स्थिर, सुरक्षित, समृद्ध और परस्पर जुड़ा हुआ पड़ोस'' विकसित करना है।

3. क्षेत्रीय सुरक्षा पर 'Neighbourhood First' का प्रभाव

दक्षिण एशिया की क्षेत्रीय सुरक्षा बहुआयामी है। भारत–पाकिस्तान तनाव, सीमा–पार आतंकवाद, उग्रवाद, संगठित अपराध और सीमा विवाद प्रमुख पारंपरिक चुनौतियाँ हैं। इनके साथ हिंद महासागर की समुद्री सुरक्षा, चीन की बढ़ती उपस्थिति, साइबर अपराध, जलवायु परिवर्तन, ऊर्जा सुरक्षा तथा स्वास्थ्य संकट जैसी गैर–पारंपरिक समस्याएँ भी क्षेत्रीय स्थिरता को प्रभावित करती हैं। इसलिए सुरक्षा को केवल सैन्य शक्ति और सीमा–सुरक्षा तक सीमित करना उचित नहीं है। भारत की ''Neighbourhood First' अर्थात 'पड़ोसी प्रथम' नीति'' में सुरक्षा सहयोग को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इसका उद्देश्य आतंकवाद, सीमा–पार अपराध, मानव एवं मादक पदार्थों की तस्करी तथा अवैध गतिविधियों के विरुद्ध सहयोग बढ़ाना है। इसके लिए खुफिया सूचनाओं का आदान–प्रदान, प्रभावी सीमा प्रबंधन और कानून–प्रवर्तन संस्थाओं के बीच समन्वय आवश्यक है। बांग्लादेश के साथ भारत का सुरक्षा सहयोग इस दिशा में महत्वपूर्ण उदाहरण है। बेहतर द्विपक्षीय संबंधों ने सीमा–पार उग्रवाद और अपराध से निपटने की संभावनाओं को मजबूत किया है। नेपाल के साथ खुली सीमा व्यापार, रोजगार और सामाजिक संपर्क को बढ़ावा देती है, लेकिन तस्करी तथा अन्य सीमा–पार अपराधों की चुनौतियाँ भी उत्पन्न करती है। अतः सहयोगात्मक सीमा प्रबंधन आवश्यक है। भूटान भारत की हिमालयी सुरक्षा और क्षेत्रीय स्थिरता के लिए महत्वपूर्ण है। वहीं श्रीलंका और मालदीव हिंद महासागर की समुद्री सुरक्षा, व्यापार तथा ऊर्जा हितों से जुड़े हैं। समुद्री डकैती, अवैध मत्स्यन और तस्करी जैसी चुनौतियों से निपटने के लिए क्षेत्रीय सहयोग आवश्यक है।

'Neighbourhood First' का सुरक्षा आयाम भारत की ''SAGAR—Security and Growth for All in the Region'' की दृष्टि से भी जुड़ा है। इसमें समुद्री सुरक्षा, क्षमता निर्माण, मानवीय सहायता और आपदा राहत को महत्व दिया जाता है। दक्षिण एशिया प्राकृतिक आपदाओं के प्रति संवेदनशील है, इसलिए बाढ़, चक्रवात, भूकंप और भूस्खलन के समय भारत की मानवीय सहायता क्षेत्रीय सहयोग को मजबूत करती है। ऊर्जा और जलवायु सुरक्षा भी महत्वपूर्ण हैं। नेपाल और भूटान की जलविद्युत क्षमता को भारत की ऊर्जा आवश्यकताओं से जोड़कर क्षेत्रीय ऊर्जा सहयोग बढ़ाया जा सकता है। चीन की बढ़ती उपस्थिति के बीच भारत के लिए आवश्यक है कि वह केवल प्रतिस्पर्धा पर ध्यान न देकर पड़ोसी देशों को ''विश्वसनीय विकास, सुरक्षा और कनेक्टिविटी साझेदारी'' प्रदान करे। अतः 'Neighbourhood First' की सफलता सुरक्षा सहयोग, साझा विकास, पारस्परिक विश्वास, संप्रभुता के सम्मान और सहयोगात्मक दृष्टिकोण पर निर्भर करेगी।

4. क्षेत्रीय आर्थिक एकीकरण, कनेक्टिविटी एवं विकास पर प्रभाव

दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय आर्थिक एकीकरण की पर्याप्त संभावनाएँ हैं, किंतु राजनीतिक अविश्वास, व्यापारिक बाधाएँ, कमजोर कनेक्टिविटी और अपर्याप्त अवसंरचना इसके प्रमुख अवरोध बने हुए हैं। भारत का विशाल बाजार, बांग्लादेश की विनिर्माण क्षमता, नेपाल और भूटान की जलविद्युत क्षमता तथा श्रीलंका और मालदीव की समुद्री एवं पर्यटन संभावनाएँ क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग का मजबूत आधार बन सकती हैं। विश्व बैंक के अनुसार दक्षिण एशिया के कुल व्यापार में अंतर–क्षेत्रीय व्यापार की हिस्सेदारी लगभग 5 प्रतिशत है, जो क्षेत्र की वास्तविक आर्थिक क्षमता की तुलना में काफी कम है। इसलिए क्षेत्रीय व्यापार और संपर्क को बढ़ाना आवश्यक है।

इस दिशा में ''कनेक्टिविटी'' की महत्वपूर्ण भूमिका है। सड़क, रेल, जलमार्ग, बंदरगाह तथा डिजिटल नेटवर्क परिवहन लागत को कम करने के साथ उत्पादन केंद्रों, बाजारों और आपूर्ति शृंखलाओं को जोड़ते हैं। भारत ने पड़ोसी देशों के साथ सीमा–पार संपर्क को मजबूत करने पर विशेष ध्यान दिया

है। बांग्लादेश के साथ सड़क, रेल और जलमार्ग संपर्क भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र के लिए महत्वपूर्ण है। इससे व्यापार के नए मार्ग विकसित हो सकते हैं और दोनों देशों की आर्थिक परस्पर निर्भरता बढ़ सकती है। नेपाल के लिए भारत के साथ सड़क, रेल तथा बंदरगाह संपर्क आवश्यक हैं, जबकि भूटान के साथ जलविद्युत सहयोग आर्थिक एवं ऊर्जा संबंधों को मजबूत करता है। श्रीलंका और मालदीव के साथ समुद्री संपर्क, पर्यटन, व्यापार तथा ऊर्जा सहयोग महत्वपूर्ण हैं। श्रीलंका का कोलंबो बंदरगाह क्षेत्रीय समुद्री व्यापार में उपयोगी भूमिका निभाता है। ''ऊर्जा सहयोग'' के अंतर्गत नेपाल और भूटान की जलविद्युत क्षमता को भारत और बांग्लादेश की ऊर्जा आवश्यकताओं से जोड़कर सीमा–पार विद्युत व्यापार बढ़ाया जा सकता है। BBIN परिवहन, व्यापार और ऊर्जा सहयोग का महत्वपूर्ण उप–क्षेत्रीय माध्यम है, जबकि BIMSTEC दक्षिण एशिया और दक्षिण–पूर्व एशिया के बीच संपर्क को बढ़ाकर भारत की 'Neighbourhood First' तथा 'Act East' नीतियों के बीच सेतु का कार्य करता है।

वर्तमान समय में ''डिजिटल कनेक्टिविटी'' भी आर्थिक एकीकरण का नया आयाम है। डिजिटल भुगतान, ई–कॉमर्स और डिजिटल सेवाएँ व्यापार एवं जन–से–जन संपर्क को बढ़ावा दे सकती हैं। आर्थिक एकीकरण से रोजगार, सीमावर्ती क्षेत्रों का विकास और स्थानीय उद्योगों के लिए नए बाजार उपलब्ध हो सकते हैं। फिर भी गैर–शुल्क बाधाएँ, जटिल सीमा प्रक्रियाएँ, कमजोर अवसंरचना और राजनीतिक अविश्वास प्रमुख चुनौतियाँ हैं। अतः सीमा शुल्क सुधार, व्यापार प्रक्रियाओं का सरलीकरण, मानकों का समन्वय तथा छोटे उद्यमों को क्षेत्रीय आपूर्ति शृंखलाओं से जोड़ना आवश्यक है। ''साझा विकास, पारस्परिक लाभ और विश्वसनीय कनेक्टिविटी'' पर आधारित दृष्टिकोण 'Neighbourhood First' नीति को दक्षिण एशिया में अधिक प्रभावी क्षेत्रीय आर्थिक एकीकरण का आधार बना सकता है।

5. प्रमुख पड़ोसी देशों के संदर्भ में नीति की भूमिका एवं समग्र मूल्यांकन

'Neighbourhood First' नीति की वास्तविक प्रकृति को समझने के लिए भारत के प्रमुख पड़ोसी देशों के साथ उसके संबंधों का अध्ययन आवश्यक है। बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, श्रीलंका और मालदीव के साथ भारत के संबंधों में आर्थिक, सामरिक, सुरक्षा और मानवीय सहयोग के विभिन्न आयाम दिखाई देते हैं। बांग्लादेश के साथ व्यापार, ऊर्जा, रेल, सड़क, जलमार्ग और सुरक्षा सहयोग बढ़ा है। नेपाल के साथ ऐतिहासिक एवं सामाजिक निकटता, खुली सीमा तथा जन–से–जन संपर्क महत्वपूर्ण हैं, जबकि विकास एवं ऊर्जा सहयोग ने संबंधों को मजबूत किया है। भूटान के साथ जलविद्युत और विकास साझेदारी तथा श्रीलंका और मालदीव के साथ समुद्री सुरक्षा, अवसंरचना एवं मानवीय सहयोग उल्लेखनीय हैं।

इसके विपरीत पाकिस्तान 'Neighbourhood First' के सामने सबसे जटिल चुनौती है। आतंकवाद, सीमा विवाद और राजनीतिक अविश्वास ने द्विपक्षीय संबंधों के साथ ''SAARC'' की प्रभावशीलता को भी प्रभावित किया है। अफगानिस्तान में राजनीतिक अस्थिरता और मानवीय संकट का प्रभाव पूरे क्षेत्र पर पड़ सकता है, इसलिए भारत की विकास एवं मानवीय सहायता महत्वपूर्ण है। दूसरी ओर चीन की बढ़ती आर्थिक और सामरिक उपस्थिति ने क्षेत्रीय प्रतिस्पर्धा को बढ़ाया है। भारत के लिए केवल प्रतिस्पर्धा पर्याप्त नहीं, बल्कि विश्वसनीय विकास साझेदारी और बेहतर कनेक्टिविटी आवश्यक है। SAARC की सीमित प्रभावशीलता के बावजूद ''BIMSTEC और BBIN'' जैसे मंच व्यावहारिक सहयोग के नए अवसर प्रदान करते हैं। 'Neighbourhood First' की सफलता का मूल्यांकन केवल परियोजनाओं की संख्या से नहीं, बल्कि व्यापारिक लागत में कमी, सुगम आवागमन, ऊर्जा एवं परिवहन संपर्क, संस्थागत सुरक्षा सहयोग और पड़ोसी देशों में भारत के प्रति विश्वास से किया जाना चाहिए। अतः यह नीति ''राष्ट्रीय हित और क्षेत्रीय हित को जोड़ने वाली व्यापक रणनीति'' है, जो साझा विकास, सुरक्षा और क्षेत्रीय एकीकरण को मजबूत कर सकती है।

निष्कर्षः–

भारत की '''Neighbourhood First' (पड़ोसी प्रथम)'' नीति दक्षिण एशिया में राजनीतिक विश्वास, आर्थिक सहयोग, कनेक्टिविटी और क्षेत्रीय सुरक्षा को मजबूत करने वाली व्यापक रणनीति के रूप में विकसित हुई है। इसके माध्यम से भारत ने पड़ोसी देशों के साथ आतंकवाद–रोधी सहयोग, सीमा प्रबंधन, समुद्री सुरक्षा, ऊर्जा साझेदारी, विकास सहायता, स्वास्थ्य, आपदा राहत तथा जन–से–जन संपर्क को बढ़ावा दिया है। बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, श्रीलंका और मालदीव के साथ सहयोग इसके महत्वपूर्ण उदाहरण हैं। आर्थिक दृष्टि से सड़क, रेल, जलमार्ग, ऊर्जा और डिजिटल संपर्क ने क्षेत्रीय

परस्पर निर्भरता बढ़ाने की संभावनाएँ मजबूत की हैं। BBIN और BIMSTEC जैसे मंच भी उप–क्षेत्रीय सहयोग को गति दे सकते हैं। हालांकि भारत–पाकिस्तान तनाव, राजनीतिक अविश्वास, व्यापारिक एवं गैर–शुल्क बाधाएँ, कमजोर क्षेत्रीय संस्थाएँ तथा चीन की बढ़ती आर्थिक और सामरिक उपस्थिति महत्वपूर्ण चुनौतियाँ बनी हुई हैं।

अध्ययन से स्पष्ट है कि ''क्षेत्रीय सुरक्षा और आर्थिक एकीकरण परस्पर पूरक हैं।'' स्थिर वातावरण व्यापार और निवेश को बढ़ावा देता है, जबकि आर्थिक परस्पर निर्भरता सहयोग की संभावनाओं को मजबूत करती है। अतः भारत को अपनी आर्थिक एवं सामरिक क्षमता का उपयोग साझा विकास, पारस्परिक लाभ और क्षेत्रीय सार्वजनिक वस्तुओं के निर्माण के लिए करना होगा। ''विश्वास, समानता, संप्रभुता के सम्मान और निरंतर कनेक्टिविटी'' पर आधारित 'Neighbourhood First' नीति दक्षिण एशिया को अधिक सुरक्षित, स्थिर, संपर्क–संपन्न और आर्थिक रूप से परस्पर निर्भर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. खन्ना, वी. एन., अरोड़ा, लिपाक्षी, एवं कुमार, लेस्ली. (2019). भारत की विदेश नीति (5वाँ संस्करण). विकास पब्लिशिंग हाउस।
2. पंत, पुष्पेश. (2021). अंतरराष्ट्रीय संबंध. मैक्ग्रॉ हिल एजुकेशन।
3. पंत, पुष्पेश. (2020). भारत और विश्व राजनीति. मैक्ग्रॉ हिल एजुकेशन।
4. सिंह, रईस. (2021). भारतीय विदेश नीति. प्रभात प्रकाशन।
5. दीक्षित, जे. एन. (2023). भारतीय विदेश नीतिः भारत की विदेश नीति के परिप्रेक्ष्य. प्रभात प्रकाशन।
6. Bajpai, K. P., & Pant, H. V. (Eds.). (2013). *India's foreign policy: A reader*. Oxford University Press.
7. Chawla, S. (Ed.). (2024). *India's neighbourhood: Challenges and opportunities*. Routledge.
8. Dixit, J. N. (2004). *India's foreign policy and its neighbours*. Gyan Publishing House.
9. Ganguly, S. (2012). *India's foreign policy: Retrospect and prospect*. Oxford University Press.
10. Hagerty, D. T. (Ed.). (2005). *South Asia in world politics*. Rowman & Littlefield.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 115-121
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

'वर्किंग विमेंस हॉस्टल' की कविताओं में स्त्री प्रतिरोध के विविध आयाम

डॉ.उषस .पी .एस
सहायक प्राध्यापक
पी.जी विभाग,द.भा.हिंदी प्रचार सभा,एर्णाकुलम,केरलम

समकालीन कवयित्री अनामिका की कविताएँ विविध जीवनानुभवों का सशक्त लेखा जोखा प्रस्तुत करती है। उनकी कविताओं का केंद्र मुख्यतः स्त्री-जीवन से जुडी संवेदनाएं, संघर्ष और उसके स्वत्व बोध से उपजी हैं। वर्तमान में समाज के प्रत्येक क्षेत्र में स्त्री अपनी सक्रिय भागीदारी निभा रही है। फिर भी पुरुषसत्तात्मक समाज की मानसिकता, लैंगिक भेद भाव , रूढ़ सामाजिक मान्यताएँ ,अमानवीय व्यवस्थाएं ,ये सब उसके समक्ष अनेक चुनौतियाँ उपस्थित करती हैं। ऐसी परिस्थितियों में स्त्री अपनी स्वतंत्र अस्मिता, अधिकार और स्वतंत्र पहचान की स्थापना के लिए निरंतर प्रतिरोध करती है। इस आलेख में अनामिका के कविता संकलन ' वर्किंग विमेंस हॉस्टल और अन्य कविताएं' में संकलित ' वर्किंग विमेंस हॉस्टल' खंड की चयनित कविताओं को अध्ययन का आधार बनाया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि कवयित्री अनामिका ने विभिन्न ऐतिहासिक ,देवी पात्रों की प्रतिरोधी चेतना को वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में व्याख्यायित किया है। इन कविताओं में ध्वनित प्रतिरोधी चेतना केवल स्त्री विद्रोह को स्वर प्रदान नहीं करती है, बल्कि पुरुषसत्तात्मक समाज की बंदिशों के विरुद्ध आत्मसम्मान, पहचान, शिक्षा, श्रम, समानता और मानवीय मूल्यों की स्थापना का सृजनात्मक माध्यम है। इस प्रकार अनामिका स्त्री-प्रतिरोध को समकालीन सामाजिक यथार्थ से जोड़ते हुए उसकी नई व्याख्या प्रस्तुत करती हैं।

मुख्य शब्द
पुरुषसत्तात्मक समाज,प्रतिरोध,पुनर्पाठ,समानता ,नारी मुक्ति,आत्मसम्मान,मानव मूल्य,

प्रस्तावना

स्त्री-विमर्श की अवधारणा स्त्री को समान अधिकारों से संपन्न कराने तथा उसे एक स्वतंत्र इकाई के रूप में समाज में विशिष्ट पहचान देने से उत्भूत हुई है। स्त्री-विमर्श का सैद्धांतिक विकास सिमोन द बोउवार की प्रसिद्ध कृति सन् 1949 में प्रकाशित द सेकेंड सेक्स से माना जाता है। उस कृति में उन्होंने अपने मंतव्य को यों व्यक्त किया है कि "One is not born, but rather becomes, a woman."1 इससे स्पष्ट होता है कि पितृसत्तात्मक समाज की मानसिकता ने स्त्री को हमेशा दबाकर और नियंत्रित रखने का प्रयास किया है। तथा उसे उसके अधिकारों और स्वतंत्र अस्तित्व से वंचित रखा। इसका परिणाम यह हुआ कि स्त्री समाज की रूढमूलक मान्यताओं और बंधनों के भीतर सीमित होने के लिए अभिशप्त हो गयी। इस संदर्भ में श्री भरत प्रसाद का मत भी इस बात की पुष्टि करता है। उनका कहना

है कि " बचपन से ही स्त्री को लिंग भेद के आधार पर अलग कर देना और कर्म -व्यवहार,विचार और प्रवृत्ति के क्षेत्र में अपने पसंदीदा नियमों एवं मर्यादाओं का पहरा बिठा देना स्त्री के मात्र स्त्री रह जाने का प्रमुख कारण है "। 2 किंतु शिक्षा के माध्यम से उसने अपनी क्षमता को पहचाना तथा अपने भविष्य के विकास को अवरुद्ध करने वाले प्रत्येक सामाजिक, सांस्कृतिक और वैचारिक बाधाओं के विरुद्ध प्रतिरोध का स्वर दिया।

कवयित्री अनामिका का वर्ष 2022 में प्रकाशित काव्य संकलन है "वर्किंग विमेंस हॉस्टल और अन्य कविताएं "। इस आलेख में पांच उपशीर्षको--'भाषा घर ',' ध से धरम और धमाका' ,'गगन में गैब निसार उरै',' देखी तुम्हारी दुनिया साधों','वर्किंग विमेंस हॉस्टल'-- में विभाजित संकलन की कविताओं में से 'वर्किंग विमेंस हॉस्टल ' की कविताओं में अभिव्यक्त स्त्री प्रतिरोध के विभिन्न आयामों को परखने का प्रयास है। इन कविताओं में कवयित्री ने परंपरागत स्त्री चेतना के साथ वर्तमान समय के साथ परिवर्तित स्त्री चेतना को भी अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है।उनकी कविताओं में स्त्री प्रतिरोध केवल विद्रोह ही नहीं , मानवीय मूल्यों की स्थापना है।

सामाजिक और लैंगिक असमानताओं को प्रमुखता देने में पुरुषसत्तात्मक व्यवस्था का योगदान रहा है। इस पर रेखा सेठी का कहना है कि " पितृसत्तात्मक व्यवस्था की आधारभूमि वह पारिवारिक ढांचा है , जहां शील और संस्कारों की महीन बुनावट ,स्त्री को समझौते करना सिखाती है। उग्रता हटाकर मुलायम होना सिखाती है'।3 रेखा जी के इन विचारों से स्पष्ट होता है कि पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना स्त्रियों को ऐसे संस्कार प्रदान करती है, जिनसे वे अपने भीतर सहज रूप में निहित चेतना शक्ति और आत्मविश्वास से अनभिज्ञ रहती है। और पुरुष की तुलना में अपने को कमतर और कमज़ोर समझने लगती है। इस संदर्भ में कवयित्री अनामिका का नाम विशेष उल्लेखनीय है । वे अपनी कविताओं के माध्यम से स्त्री की इस परंपरागत सोच का प्रतिरोध करती है। वे स्त्री को अपने परंपरागत छवि से बाहर निकालती है और उसे उसके अंतर निहित चेतना की असीम शक्ति और आत्मविश्वास का एहसास कराती है।उनकी कविताएं स्त्रियों में नई चेतना जागृत कराने के साथ साथ उनमें स्वतंत्र अस्तित्व, अधिकार बोध,और प्रतिरोध की क्षमता प्रदान करती है। अत: वर्किंग विमेंस हॉस्टल की कविताओं में पुरुष वर्चस्ववादी व्यवस्था के विरुद्ध स्त्री का प्रतिरोध, परंपरा के विरुद्ध स्त्री की प्रतिरोधी चेतना,स्त्री के आध्यात्मिक – वैचारिक प्रतिरोध,शिक्षा के माध्यम से स्त्री की आत्मनिर्भरता और प्रतिरोध ,सत्ता के प्रति विद्रोह और मानवीयता की प्रतिष्ठा आदि स्पष्ट परिलक्षित होती है।

पुरुषवर्चस्ववादी व्यवस्था के विरुद्ध स्त्री का प्रतिरोध

पितृसत्तात्मक समाजिक व्यवस्था में, स्त्रियों की तुलना में, पुरुषों को परिवार और समाज में मुख्य निर्णय लेने का अधिकार प्राप्त है। इसलिए ही पुरुषों की अपेक्षा उन्हें समाज के हर क्षेत्र में कम अधिकार प्राप्त होता था। फलत: स्त्रियों को पुरुषों की मान्यताओं के अनुरूप उनकी कठपुतली बनकर जीवन जीना पडा। स्त्रियों को नियंत्रण में रखा गया। आज स्त्री अपने अधिकारों के प्रति सजग है। अधिकतर स्त्रियां पुरुष की सोच ,दृष्टिकोण और उनकी मानसिकता के खिलाफ प्रतिरोध करती है।

'काली कमरा संख्या 007' नामक कविता में कवयित्री ने पुरुष की इस मानसिकता के विरुद्ध स्त्री की अंतर्निहित चेतना के माध्यम से अपनी यथार्थ शक्ति को दिखाया है। कविता में स्त्री पात्र व्यवस्था और आर्थिक अभाव के कारण बस कंडेक्टर के साथ अपने देह का सौदा करने के लिए तैयार होती है।कंडेक्टर अपनी काम पिपासा का शमन करने के तुरंत बाद कहता है कि एक बस टिकेट के बराबर अब तुझमें बचा ही क्या? यहां स्त्री को नीचा दिखाने वाली पुरुष की मानसिकता के विरुद्ध स्त्री की प्रतिरोधी चेतना काली रूप धारण कर लेती है। वह कहती है-

"चल,चलता है कि नहीं ?

कुछ उसने ऐसे कहा
कि ड्राइवर डर गया "4(पृ.सं 102)

स्पष्ट है कि समय आने पर स्त्री की आंतरिक चेतना काली रूप में परिवर्तित होती है। और वह अपनी चेतना से काल को भी रोक सकती है।यहां कवयित्री स्त्री की देवी रुप दिखाकर समाज को उसकी क्षमता का एहसास कराने का प्रायास करती है।

अंडाल और अक्कमहादेवी जैसी भक्त कवयित्रियों के माध्यम से स्त्री की समय के साथ परिवर्तित स्त्री प्रतिरोधी चेतना को अभिव्यक्त करती है। अंडाल और अक्कमहादेवी ने पितृसत्तात्मक व्यवस्था के खिलाफ आवाज़ उठायी थी। डॉ.के एम मालती का कथन है कि "आठवीं शताब्दी में आंदाल और बारहवीं शताब्दी में अक्कमहादेवी की आवाज पुरुष की भोगासक्ति के खिलाफ, पुरुष सत्ता के खिलाफ उठी। दोनों ने परंपरागत सामाजिक रूढियों को ठुकरा कर स्वतंत्र राह अपना ली।"5 इससे स्पष्ट होता है कि आठवीं और बारहवीं शताब्दी में भी स्त्रियों ने अपने को तरह तरह के बेडियों में रोके रखने वाली पुरुष की मानसिकता के विरुद्ध आवाज़ उठाई है और अपनी स्वतंत्र पहचान बनाने का प्रयास किया है।

'अक्कमहादेवी: कमरा संख्या बी 22' में कवयित्री अनामिका कन्नड के संत कवयित्री अक्कमहादेवी के माध्यम से यह समझाती है कि पुरुषसत्तात्मक नीति तो हमेशा स्त्री को सामाजिक सभ्यता से प्राप्त पहचान के आधार पर देखता है। इसका प्रतिरोध करती हुई कवयित्री कहती है कि -

" जानेगा मुझको केवल वो !
और कोई देख भी नहीं पायेगा " 6 (अक्कमहादेवी : कमरा संख्या बी22-पृ.सं- 94)

यहां कवयित्री स्त्री की विशिष्ट शक्ति को स्पष्ट करती है।यहां स्त्री अपने आध्यात्मिक चेतना
को प्रतिरोध रूप में अभिव्यक्त किया है। और यह सिद्ध किया है कि स्त्री बाहरी दृष्टि से कमज़ोर दिखता है तो भी आंतरिक दृष्टि से मजबूत और निर्भीक है , जो उसे समय और परिस्थिति के अनुरूप निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करती है।डॉ मालती जी का कथन इस बात को रेखांकित करती है कि "अक्कमहादेवी का,पति के अत्याचार के खिलाफ केशांबरा होकर शिव भक्ति के मार्ग पर निकल पडना स्त्री को गुलाम बनाये रखनेवाले पुरुषवर्चस्व के प्रति विद्रोह था। अक्कमहादेवी ने स्त्री के स्वतंत्र अस्तित्व की खोज में परंपरागत सामाजिक मानसिकता को चुनौती दी।"7 अंत: यहां अक्कमहादेवी की स्त्री चेतना साफ दृष्टिगोचर होती है

'अण्डाल: कमरा संख्या डी 27' में कवयित्री स्त्री के रूप - रंग को उपभोग की वस्तु मानने वाले पुरुष मानसिकता के विरुद्ध प्रतिरोध करती है।अण्डाल कवि की नारी चेतना पर डॉ. मालती का कहना है कि " स्त्री केवल पुरुषों की वासनापूर्ति का साधन नहीं है।यहां वह मानती है कि किसी भी स्त्री का अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व है"।8 "अण्डाल पूर्ण रूप से अपने स्वामी रंगनाथ पर समर्पित भक्त कवि है। साथ ही वह अपने स्वत्व और रूप यौवन के प्रति सजग भी है। इसलिए ही वह कहती है कि-

"व्यर्थ है मेरा सिंगार ,रूप -यौवन
उस दूध की तरह
जो न दूहा गया ,न चूसा !
चुपुर- चुपुर बछडा ही पी जाता ,
या बाल्टी में भरा जाता
तो उसकी हो पाती कोई वकत!"9 (अण्डाल कमरा संख्या डी 27-पृ. सं- 93)

उसे मालूम है कि आम की पत्ते और मंजरियों की तरह उसका श्रृंगार भी व्यर्थ हो जायेगा। उसे जीवन की नश्वरता का बोध भी है ।साथ ही यहां अपने मन की इच्छा के अनुसार जीवन व्यतीत करने वाली,स्वतंत्र विचार रखनेवाली स्त्री की प्रतिरोधी चेतना भी स्पष्ट होती है ।अंत: यहां कवयित्री स्त्री को सीमित रखने की, पुरुष सोच का विरोध करती है।

परंपरा के विरुद्ध स्त्री की प्रतिरोधी चेतना

परंपरा ने स्त्री को कटु अनुभव दिया है। अनामिका की स्त्रियां परंपरा को उसी रूप में स्वीकारती नहीं ,न ही उसके सामने हार मानती है। वे परंपरा से प्राप्त अनुभवों को अपनी ताकत बनाती है और सडी गली मान्यताओं के विरुद्ध नई चेतना जगाने का प्रयास करती है।

'सीता: कमरा संख्या बी 55' और ' जनाबाई: कमरा संख्या बी 27' जैसी कविताओं में उक्त चेतना दृष्टिगोचर होती है। यहां कवयित्री ने सीता की परंपरागत सोच को आधुनिक ज्ञान संपन्न विकसित सोच में परिवर्तित करके आत्मनिर्भर नारी के रूप में अंकित किया है। साथ ही शिक्षा के कारण स्त्री में उभरी चेतना को रेखांकित करने का प्रयास किया है। साथ ही साथ समाज को भी ज्ञान देकर सामाजिक विकास के लिए उपयोगी चेतना को विकसित करती है तो'जनाबाई कमरा संख्या बी 27' कविता में जनाबाई कर्तव्यनिष्ठ स्वावलंबी और आत्मसम्मान के साथ आधुनिक व्यस्त जीवन काटने वाली नारी के रूप में सामने आती है।

" पूरी करनी है असाइनमेंट ,
कल बोर्ड मीटिंग भी है
ब्रीफ्केस में रखने है कपडे !"(जनाबाई: कमरा संख्या 27.पृ.92)

इससे स्पष्ट है कि जनाबाई श्रम को महत्व देती है ।और घरेलू कामों तक स्त्री को सीमित रखने वाले पुरुष के परंपरागत सोच के विरुद्ध सशक्त आवाज़ बनती है ।और लैंगिंक असमानता की वकालत करती है। इसलिए वह हर काम में अपने ईश्वर माधव को देखती है ।और उनसे आग्रह करती है कि-

" हाथ बंटा दो ज़रा -सा
या फिर तुम हेर दो जुएं ही ज़रा,
कुछ तो करो कुछ तो करो! ''11 (जनाबाई: कमरा संख्या बी 27 -पृ.सं- 92)

यह दर्शाती है कि कवयित्री श्रम को महत्व देने के साथ साथ घरेलू कामों में पुरुषों के सहयोग के पक्षधर है। लेकिन वह किसी के सामने हाथ जोडना नहीं चाहती ।इस प्रकार जनाबाई श्रम, समानता और आत्मनिर्भरता के प्रतिरोधी चेतना को अभिव्यक्त करती है।

स्त्री का आध्यात्मिक - वैचारिक प्रतिरोध

अनामिका की रचनाओं पर टिप्पणी करते हुए आराधना वर्मा का कहना है कि " अनामिका का लेखन स्त्री अनुभवों की वैचारिक पुनर्व्याख्या के लिए विशेष उल्लेखनीय है ।वे स्त्री के इतिहास, स्मृति और भाषा को पुनर्परिभाषित करती है। तथा यह स्थापित करती है कि स्त्री केवल साहित्य के विषयवस्तु नही, बल्कि एक वैचारिक दृष्टि भी है ।उनके लेखन में स्त्री की आवाज़ बहुस्तरीय है,जिसमें व्यक्तिगत अनुभव सांस्कृतिक संदर्भ और वैचारिक प्रतिरोध एक साथ उपस्थित रहते है।"12 अत: अनामिका ने स्त्री की आध्यात्मिक और वैचारिक चेतना को भी अपनी कविताओं में अभिव्यक्ति देने का प्रयास किया है।

भारतीय परंपरा में स्त्री महाशक्ति के रूप में प्रतिष्ठित है । किंतु पितृसत्तात्मक व्यवस्था द्वारा निर्मित सामाजिक मान्यताओं ने स्त्री को नियंत्रण में रखा। छिन्नमस्ता : कमरा संख्या ए 13, पीतांबरा : कमरा संख्या ए 14, भुवनेश्वरी : कमरा संख्या ए 11 और त्रिपुरसुंदरी :कमरा संख्या ए 10 जैसी कविताओं के माध्यम से अनामिका , देवी परंपरा का पुनर्पाठ करती है और स्त्री के आध्यात्मिक चेतना को वैचारिक चेतना का रूप देने की कोशिश करती है। यहां कवयित्री स्त्री को आधुनिक चेतना से परिपूर्ण महाशक्ति की अधिष्ठात्री के रूप में देखती है । जो ज्ञान शक्ति ,आत्मसम्मान और स्वतंत्र चेतना की प्रतिमूर्ति है ।इन शक्तियों के माध्यम से वह समाज के रूढमूल मान्यताओं ,बंधनों और नियत्रंणों से स्त्री को मुक्त करतीहै। ' त्रिपुरसुंदरी: कमरा संख्या ए 10 में त्रिपुरसुंदरी की देवी रूपी चेतना का पुनर्पाठ करती है और सारे के सारे मेहनतकश स्त्रियों में त्रिपुरसुंदरी की चेतना दिखाने का प्रयास करती है। वह कहती है कि-

" सर पर ईंटें और गोदी में बच्चा-सधे हुए कदमों से
नापती हुई रास्ता।
जहां जहां संतुलन था-
त्रिपुरसुंदरी का
वैभव वहीं था!'' 13 (पृ. सं- 109)

यहां कवयित्री ने साधारण मेहनतकश स्त्रियों में भी देवी जैसी शक्ति ,समानता और सम्मान देने का प्रयास किया है। इसी तरह भुवनेश्वरी देवी को तू तू- मैं मैं से परे यानी समस्त प्रकार के सामाजिक भेद भावों से परे दिखाया है

"मुक्ति है निस्सीमता ही
-तेरा- मेरा
तू-तू,मैं- मैं की हदबंदियां लाघती !'' 14 (भुव्नेश्वरी: कमरा संख्या ए 11)

अंत: कवयित्री भुवनेश्वरी की तरह असीमित मानवीय चेतना और बराबरी की आकांक्षी है।
मां दुर्गा का छठा रुप है छिन्नमस्ता देवी । जो सब प्रकार के अहंकार ,बंधनों के विरुद्ध प्रतिरोध करने की क्षमता रखती है। कविता में अनामिका कहती है कि छिन्नमस्ता ने अपने अहंकार रूपी सिर को निर्भीकता से अपने ही हाथों से काट लिया है। वह निरहंकार की देवी है उनमें आत्मविश्वास और निर्णय लेने की स्वतंत्रता कूट कूट कर भरी रहती है। कवयित्री आधुनिक नारी में इन सभी गुणों को ढूंढती है और कहती है कि –

"घर छोड वर का
वरण किया जिसने भी ,
वह स्त्री है छिन्नमस्ता ! 15(छिन्नमस्ता : कमरा संख्या ए 13- पृ .115)

तात्पर्य यह है कि छिन्नमस्ता की तरह आधुनिक नारी में सभी प्रकार के बंदिशों, सामाजिक भेद भावों को तोडने की आध्यात्मिक -वैचारिक शक्ति निहित हैं।

शिक्षा के माध्यम से स्त्री की आत्मनिर्भरता और प्रतिरोध

अनामिका ने अपनी कविताओं में स्त्री की आत्मनिर्भर होने की आवश्यकता पर विशेष बल दिया है। उनकी सीता : कमरा संख्या बी 55 (उत्तरकाण्ड),जनाबाई : कमरा संख्या बी 27, अण्डाल: कमरा संख्या डी-27 नामक कविताएं मनोबल से युक्त स्त्रियों के प्रतीक के रूप में उपस्थित होती है। एक ओर सीता ने परंपरा से प्राप्त जीवनानुभवों से आत्मशक्ति अर्जित किया है तो दूसरी ओर उसने शिक्षा के महत्व को जान लिया है। इस बात को वह इस प्रकार व्यक्त करती है –

"युद्ध में अनाथ हुए

दानव शिशुओं पर ममता बरसाती हुई कह रही है –
शिक्षा ही एक मात्र महासमर है,
दुर्वृत्तियां जीतने लायक , मुक्त तो वही है जो मुक्त करें''16
(सीता: कमरा संख्या बी 55(उत्तर काण्ड) पृ.सं- 98)

कवयित्री शिक्षा को समूचे स्त्री समुदाय के प्रतिरोधी अस्त्र सके रूप में प्रस्तुत करती है। सीता पुरानी सोच से ऊपर उठकर आधुनिक नारी तरह शिक्षा के माध्यम से आत्मनिर्भरता को प्राप्त करती है वह अपने पुत्रों(लव - कुश) के साथ साथ समाज के हर वर्ग के व्यक्तियों के मानसिक -वैचारिक विकास करने का भरसक प्रयास करती है। साथ ही वह पितृसत्तात्मक समाज की रूढमूल मान्यताओं ,अनैतिक व्यवस्थाओं को चुनौती देती है और हर कार्य में स्वयं निर्णय लेने की स्त्री की क्षमता को व्यक्त करती है। सीता की तरह 'जनाबाई' और 'अण्डाल' जैसी पात्रों को भी स्वावलंबी और आत्मनिर्भर स्त्री के रूप में चित्रित किया है।ये दोनों स्त्री पात्र अपनी आत्मशक्ति,अडिग विश्वास और श्रम के माध्यम से स्त्री मुक्ति का नया आधार भूमि तैयार करती है।

सत्ता के प्रति विद्रोह और मानवीयता की प्रतिष्ठा

कवयित्री कहती है कि हमारी परंपरा में विश्वविजय प्राप्त करने वाले अनेकों पौराणिक और ऐतिहासिक पात्र हुए हैं। किंतू सभी ने शोषण और अन्यायपूर्ण टेढे-मेढे रास्ते को अपनाकर ही सब कुछ प्राप्त किया है।सीधा रास्ता अपनाने वाले नगण्य हैं। उनका कहना है कि हम तो वैसा विश्वविजय प्राप्त करना नहीं चाहती है।क्योंकि असल में विश्वविजय प्राप्त करने का मतलब साधारण शोषित लोगों के दिलों में स्थान प्राप्त करने पर होता है।वह कहती है-

"हम तो भाई दिलों पर राज करने को/ दुनिया में आये,
आये जैसे आ जाती है हंसी
झुठलाती दुनिया की हर धमकी!17"
(महाश्वेता देवी : कमरा संख्या सी 155 पृ-100)

यहां कवयित्री का तात्पर्य शोषित और कमजोर वर्ग की आवाज़ को बुलंद करना तथा उनमें मानवीयता की प्रतिष्ठा रहा है। वह स्त्रियों में अडिग आत्मविश्वास की चेतना जगाने का प्रयास करती है।

निष्कर्ष

अनामिका ने "वर्किंग विमेंस हॉस्टल ' की कविताओं में स्त्री की परंपरागत देवी रूप का आधुनिक संदर्भों में पुनर्परिभाषित किया है।और प्रतिरोध के विविध आयामों पर प्रकाश डाला है।उनकी पक्षधरता स्त्री-पुरुष की समानता में निहित है। अनामिका की स्त्रियां सामाजिक उपक्षा के कारण टूटती नहीं है। वे अपने आंतरिक शक्ति से अपनी पहचान और आत्मसम्मान के लिए आवाज़ उठाती है। और अन्य हर स्तर -वर्ग की स्त्रियों के लिए प्रेरणा बनती है। स्त्रियों को केवल उपभोग की वस्तु मानने वाले और उनपर कई प्रकार के प्रतिबंध लगानेवाले पुरुष सत्तात्मक समाज के सामने उनकी स्त्रियां निडर होकर अपनी स्वतंत्र अस्मिता को प्रतिष्ठित करती हैं।साथ ही वे मानवीयता की पक्षधर हैं।कवयित्री ने प्रत्येक काल में उभरी स्त्री चेतना को दिखाकर समय-चेतना को सुरक्षित रखने का प्रयास किया है।साथ ही उनके हर नारी पात्र समय के बदलाव के साथ- साथ अपनी चेतना को परिवर्तित ,संवर्धित करने की क्षमता रखती है।समाज के विकास में बाधा बनने वाली व्यवस्था के अन्यायपूर्ण रवय्ये को चुनौती देती है। उन्होंने काली,सीता,त्रिपुरसुंदरी ,भुवनेश्वरी,पीतांबरा जैसी दश महाविद्या की देवी पात्रों के माध्यम से यह सिद्ध किया है कि समय के साथ स्त्री प्रतिरोधी चेतना का स्वर भी बदला है। अत: अनामिका की कविताएं मात्र प्रतिरोधी स्वर को शब्दबद्ध नहीं करती ,इसमें आध्यात्मिक चेतना ,सामाजिक परिवर्तन ,मानवीय संवेदना और स्त्री मुक्ति वैचारिक अभिव्यक्ति भी है।

संदर्भ ग्रंथसूची

1. डब्ल्यु विकीपीडिया डांट ओ आर जी
2. 2.प्रसाद,भरत-(2017)कविता की समकालीन संस्कृति -ज्ञानपीठ प्रकाशन-नई दिल्ली,पृ.226
3. सेठी, रेखा- (2019),स्त्री कविता पक्ष और परिप्रेक्ष्य-राजकमल प्रकाशन- नई दिल्ली पृ.29
4. अनामिका- (2022) वर्किंग विमेंस हॉस्टल और अन्य कविताएं ,वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली पृ.102
5. 5.डॉ.मालती,के.एम(2010)स्त्री विमर्श:भारतीय परिप्रेक्ष्य,वाणी प्रकाशन ,नई दिल्ली पृ.153
6. 6.अनामिका- (2022) वर्किंग विमेंस हॉस्टल और अन्य कविताएं ,वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली पृ.94
7. 7.डॉ.मालती,के.एम(2010)स्त्री विमर्श: भारतीय परिप्रेक्ष्य,वाणी प्रकाशन,नई दिल्ली,पृ.154
8. 8.डॉ.मालती,के.एम(2010)स्त्री विमर्श:भारतीय परिप्रेक्ष्य,वाणी प्रकाशन, नईदिल्ली. पृ.15
9. 9.अनामिका, (2022)वर्किंग विमेंस हॉस्टल और अन्य कविताएं,वाणी प्रकाशन,नईदिल्ली,
10. पृ.93
11. 10.अनामिका,(2022) वर्किंग विमेंस हॉस्टल और अन्य कविताएं ,पृ.सं 92
12. 11.अनामिका(2022) वर्किंग विमेंस हॉस्टल और अन्य कविताएं,पृ.सं 92
13. आराधना वर्मा -जनवरी-फर्वरी,(2022), कहानियों में स्त्री प्रतिरोध का मुखर स्वर-एक विश्लेषणात्मक अध्ययन -शोध शौर्यम इंटेर्नाशनल सैंटिफिक रेफेरीड रिसर्च जर्नल-ISSN-2581-60306-volume-5)
14. 13.अनामिका,(2022)वर्किंग विमेंस हॉस्टल और अन्य कविताएं,वाणी प्रकाशन ,नईदिल्ली,
15. पृ.सं109
16. अनामिका,(2022)वर्किंग विमेंस हॉस्टल और अन्य कविताएं, पृ.सं,11
17. 15.अनामिका,(2022),वर्किंग विमेंस हॉस्टल और अन्य कविताएं, पृ.सं 115
18. 16.अनामिका,(2022),वर्किंग विमेंस हॉस्टल और अन्य कविताएं पृ.सं 55
19. 17.अनामिका,(2022), वर्किंग विनेंस हॉस्टल और अन्य कविताएं,पृ.सं100

drushusps3@ gmail.com, मो. 8089457107

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 122-126
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Youth-Led Development in Chhattisgarh and the Viksit Bharat Vision: Demographic Dividend, Skills, and Civic Participation

Dr. Bhuneshwarlal Sahu
Assistant Professor,
School of Studies in Political Science,
Shaheed Mahendra Karma Vishwavidyalaya, Bastar, Jagdalpur, Chhattisgarh, India
Dr. Digeshwar Sahu
Assistant Professor,
School of Studies in Social Work,
Shaheed Mahendra Karma Vishwavidyalaya, Bastar, Jagdalpur, Chhattisgarh, India

Abstract
The Viksit Bharat @2047 vision positions India's youth among its four pillars alongside farmers, women, and the poor as primary agents of national transformation. Using secondary data, this paper examines demographic trends, education and skill outcomes, and civic participation in Chhattisgarh, where nearly 78% of the ~29 million population lives in rural areas and over one-third is Scheduled Tribe (Dost & Froerer, 2021) a critical test case for whether the demographic advantage translates into inclusive development. India's working-age share is projected to rise from 54.8% in 1961 to 65.2% by 2026 (Betageri, 2026), and the dependency ratio to fall below 48% by 2030 (Kumar, 2026), yet educated youth unemployment remains above the national average. Tribal students record 68.11% higher-secondary enrolment and an 84% Class X–XI transition rate (Kujur & Das, 2026), yet remain marginalised in employment and skill access (Rayappa., 2022). The dividend is conditional, not automatic: realising 'Developed Chhattisgarh – Developed India' requires sustained investment in education, skills, digital inclusion, entrepreneurship, and civic engagement.

1. Introduction

India possesses one of the youngest populations globally, with a median age of 29 years in 2020 against 40 years or more in the USA, Europe, and Japan (Jain & Goli, 2022). The working-age share (15–59 years) is projected to rise from 54.8% in 1961 to 65.2% by 2026, peaking at roughly 64% around 2035 before declining (Jain & Goli, 2022); by 2025, close to 68% of the

population falls in the 15–64 band, with the dependency ratio projected below 48% by 2030 (Kumar, 2026). The Government of India has formalised this optimism in the Viksit Bharat @2047 vision, built on four pillars farmers, women, the poor, and youth with the National Education Policy 2020, Skill India, and leadership pathways such as Agnipath and the National Cadet Corps as principal instruments (Betageri, 2026). The youth question carries particular weight in Chhattisgarh, where 40% of the population lives below the poverty line, nearly 78% is rural, and over one-third is adivasi dependent largely on subsistence agriculture and forest produce (Dost & Froerer, 2021). This paper consolidates demographic, educational, skilling, and civic-participation evidence to assess whether, and under what conditions, Chhattisgarh's youth can become the engine of state transformation within the 'Developed Chhattisgarh – Developed India' agenda.

2. Review and Analytical Framework

The demographic dividend thesis holds that a rising working-age share creates a growth window, but the advantage may become a liability without adequate jobs, skills, and institutional support: educated youth unemployment remains far above the national average, alongside skill mismatches, low female labour force participation, informality, and uneven regional development (Kumar, 2026). Tribal youth (18–35) remain among India's most marginalised groups Eklavya Model Residential Schools and the Skill India Mission have expanded access, yet cultural alienation, inadequate infrastructure, and implementation bottlenecks limit their transformative potential (Rayappa., 2022). In rural Chhattisgarh, young people's aspirations remain rooted in education as the pathway to 'forward movement' or naukri, even where schooling outcomes are uncertain (Dost & Froerer, 2021). Beyond the economy, the National Service Scheme (est. 1969) institutionalises civic participation, with special camps enhancing leadership, communication, teamwork, problem-solving, social responsibility, and cultural sensitivity among volunteers (Shinde & Malode, 2025). Existing literature is largely national; systematic state-specific analyses of Chhattisgarh's tribal and rural youth within the 'Developed Chhattisgarh – Developed India' framework are scarce this paper addresses that gap.

3. Methodology

A secondary data analysis design was adopted, combining statistical tabulation with thematic synthesis. Data were drawn from United Nations population estimates and projections, Census of India 2011, UDISE education statistics, RBI state-level poverty estimates, government policy documents (Skill India Mission, NEP 2020, National Youth Policy 2025, Chhattisgarh Kaushalya Vikas Mission), and peer-reviewed studies. Indicators were extracted across four thematic domains demographic structure; education and skills; employment and entrepreneurship; and civic participation tabulated with their sources and analysed thematically. The study relies on published secondary data of varying reference years and definitions, so figures are reported as per their original sources; state-level disaggregation for several youth indicators is limited, and the analysis is cross-sectional rather than longitudinal.

4. Results

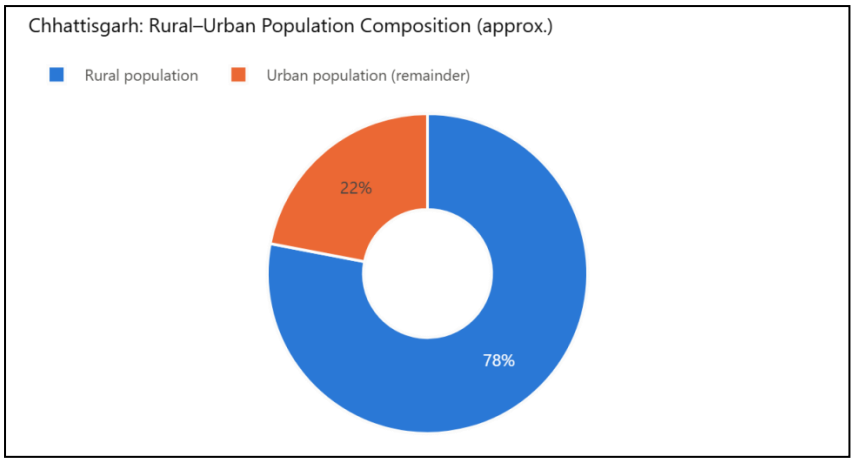
Demographic foundations. The window is real but time-bound: the working-age share rose from 54.8% in 1961 to an estimated 65.2% by 2026 (Betageri, 2026), peaking at ~64% around 2035 before declining (Jain & Goli, 2022). India has roughly a generation to convert its youth bulge into capital.

Chhattisgarh: poverty, education, tribal youth. The state is shaped by its rural–tribal character: 40% below the poverty line, nearly 78% rural, over one-third adivasi (Dost & Froerer,

2021). Education outcomes are comparatively strong ST enrolment in Classes XI–XII at 68.11%, dropout at 12.79%, and 84% transitioning from Class X to XI (vs 40% in Odisha), owing to colocated higher-secondary schooling (Kujur & Das, 2026). The Kaushalya Vikas Mission targets training 20 lakh youth, yet tribal youth remain marginalised in employment and skill access (Rayappa., 2022).

Table: Key Demographic and Development Indicators (as reported in cited sources)

Indicator	Value	Source
Working-age share (15–59), 1961 → projected 2026	54.8% → 65.2%	(Betageri, 2026)
Working-age share, projected peak ~2035	~64%	(Jain & Goli, 2022)
Median age, 2020	29 years	(Jain & Goli, 2022)
Dependency ratio, projected 2030	below 48%	(Kumar, 2026)
Chhattisgarh: rural population / ST share	~78% / over one-third	(Dost & Froerer, 2021)
ST enrolment in Classes XI–XII	68.11%	(Kujur & Das, 2026)
ST transition rate, Class X–XI	84% (vs 40% in Odisha)	(Kujur & Das, 2026)
NSS special camp outcomes	enhanced leadership, teamwork, problem-solving	(Shinde & Malode, 2025)



Civic participation. The National Service Scheme channels youth energy, with special camps fostering leadership, communication, teamwork, problem-solving, and gender-sensitive attitudes in volunteers (Shinde & Malode, 2025).

5. Discussion

The evidence confirms that the demographic dividend is a necessary but not sufficient condition for development: India's working-age share is projected to reach approximately 64% by 2035 before declining (Jain & Goli, 2022), and the dependency ratio is expected to fall below 48% by 2030 (Kumar, 2026), yet educated youth unemployment remains markedly above the national average, signalling that the supply of educated labour is outpacing the demand for skilled labour youth engagement must therefore be matched by employment-based growth (Betageri, 2026).

For Chhattisgarh, the analysis yields a mixed picture: tribal school-education outcomes are strong by national comparison higher-secondary enrolment of 68.11%, a low dropout rate of 12.79%, and an 84% Class X–XI transition rate suggest that institutional design, such as colocated schooling, can decisively improve tribal educational continuity (Kujur & Das, 2026) yet the state's poverty profile (40% BPL), rural concentration (78%), and the marginalisation of tribal youth in employment and skill access indicate that educational gains have not yet translated into economic inclusion (Rayappa., 2022), so state policy must simultaneously expand employment absorption and cultivate entrepreneurial pathways for a young population whose aspirations centre on education and secure work (Dost & Froerer, 2021). Civic participation constitutes a complementary front: structured volunteerism through the National Service Scheme offers a proven channel for building the leadership, teamwork, and social responsibility that national development agendas require (Shinde & Malode, 2025), and social workers in Chhattisgarh can bridge tribal communities and training institutions, co-design culturally responsive curricula, and support NSS-based engagement converting policy intent into youth agency on the ground.

6. Recommendations

1. **Outreach and counselling** Address information and aspiration gaps among tribal youth through outreach and counselling toward skill schemes and entrepreneurship.
2. **Culturally responsive capacity building** Design training that responds to cultural hurdles and access barriers in tribal skill programmes, building on indigenous knowledge (Rayappa., 2022).
3. **Civic engagement facilitation** Strengthen NSS and community volunteer structures to channel youth energy into rural and remote blocks (Shinde & Malode, 2025).
4. **Policy linkage** Connect youth to the Kaushalya Vikas Mission, DDU-GKY, and higher-education support schemes to ensure benefits reach marginalised households.
5. **Skilling and schooling** Scale Kaushalya Vikas Mission training with outcome-linked placement support and extend the colocated schooling model (84% tribal transition) to upper-secondary and vocational levels (Kujur & Das, 2026).
6. **Digital and entrepreneurial inclusion** Establish rural digital hubs, gender-responsive digital literacy, and accessible credit and incubation for women and tribal youth in Tier-2/3 locations.
7. **Youth voice in governance** Institutionalise youth participation in district planning through youth parliaments and advisory committees.
8. **Employment-linked national agenda** Link Skill India 2.0's 400-million-trainee goal to inclusive, employment-based growth (Betageri, 2026), strengthen NSS volunteerism as a civic pathway, and monitor demographic indicators annually as the dividend window closes after ~2035 (Jain & Goli, 2022).

7. Conclusion

The 'Developed Chhattisgarh – Developed India' vision rests on a demographic promise: a working-age population share rising to 65.2% by 2026 and a dependency ratio falling below 48% by 2030 (Betageri, 2026; Kumar, 2026). Chhattisgarh possesses identifiable strengths strong tribal school-education outcomes (Kujur & Das, 2026), an operational state skilling mission, and a young rural population alongside entrenched constraints of poverty, rurality, and tribal marginalisation (Dost & Froerer, 2021; Rayappa., 2022). The demographic dividend is earned, not automatic: it requires coordinated investment in culturally responsive education and skilling,

digital and entrepreneurial inclusion, civic participation, and social work-facilitated community engagement. Youth are not merely the beneficiaries of development in this vision they are its architects.

References

1. Betageri, S. B. (2026). Youth Participation in India's Journey Towards Viksit Bharat 2047. *Zenodo (CERN European Organization for Nuclear Research)*. https://doi.org/10.5281/zenodo.18655001
2. Dost, A. C., & Froerer, P. (2021). Education, Aspiration and aage badhna: The Role of Schooling in Facilitating 'Forward Movement' in Rural Chhattisgarh, India. *European Journal of Development Research*, *33*(1), 109–129. https://doi.org/10.1057/s41287-020-00339-z
3. Jain, N., & Goli, S. (2022). Potential demographic dividend for India, 2001 to 2061: a macro-simulation projection using the spectrum model. *SN Social Sciences*, *2*(9), 171. https://doi.org/10.1007/s43545-022-00462-0
4. Kujur, J., & Das, A. (2026). Barriers to school education of tribals in eastern India and implications for SDG 4. *Discover Global Society*, *4*(1). https://doi.org/10.1007/s44282-026-00346-1
5. Kumar, Dr. V. (2026). Demographic Dividend Vs. Demographic Burden: Can India Capitalize On Its Youth Bulge By 2030? *International Education and Research Journal*. https://doi.org/10.5281/zenodo.19254123

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 127-131
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

नाट्यशास्त्रानुसार नाटक व नाटक की विशिष्टता

डा० मुन्ना जोशी
असिस्टेण्ट प्रोफेसर
संस्कृत विभाग एम . बी . पी . जी .महाविद्यालय, हल्द्वानी

शास्त्रकारों एवं ग्रंथकारों ने नाट्यशास्त्र को नाट्यवेद और इसके रचयिता भरत मुनि के रूप में स्वीकार आदान-प्रदान किया है। कला की दृष्टि से नाट्यशास्त्र एक व्यापक ग्रन्थ है, जिसमें संगीत वास्तु, चित्र, मूर्ति कला एवं नृत्य आदि जितनी भी ललित कलाएं है, इन सभी का शास्त्रीय पक्ष इस ग्रन्थ में प्राप्त होता है

कलात्मक काव्य - नाटक संस्कृत साहित्य की एक गौरव पूर्ण विधा है । नाट्य साहित्य में संस्कृत साहित्य की कीर्तिकौमुदी सम्पूर्ण जगत मे व्याप्त दिखाई देती है और काव्यों में तो नाटक को श्रेष्ठ माना गया है । महाकवि कालिदास का 'अभिज्ञानशाकुन्तलम् " तो नाटक रत्न ही है इसकी रमणीयता तो अद्वितीय ही है । इस नाटक द्वारा कवि कालिदास की कीर्ति सम्पूर्ण भारत नहीं अपितु विदेशों में भी प्रसारित है। भारतीय नाट्यरचना का प्रयोजन नितान्त गम्भीर, व्यापक और सार्वभौम है। "प्रयोजनमनुद्दिश्य मन्दोऽपि न प्रवर्तते" उक्त उक्त्यानुसार प्रयोजन मूल ही सभी की प्रवृत्ति होती है। रसास्वादन और आनन्दानुभूति काव्यादि के अध्ययन का प्रयोजन होता है क्योंकि काव्य रसानन्द हेतु कवित्वमय वातावरण की महती आवश्यकता होती है। अतः केवल सहृदय मानव ही काव्यानन्दसन्दोह में निमज्जित हो सकता है उसके उपरान्त ही नाटक में वातावरण स्वयं ही उपस्थापित हो जाता है। इसी कारण से नाटक सर्वसाधारण हेतु बोधगम्य व प्रभावशाली होता है। वस्तुतः नाटक काव्य की चरमसीमा मानी जाती है कहते है- "नाटकान्तं कवित्वम्" । आचार्य भरत के मतानुसार नाटक में त्रैलोक्य की भावना का अनुकीर्तन प्राप्त होता है । त्रैलोकस्यास्य सर्वस्य नाट्यं भावानुकीर्तनम्

काव्य हमारे भावों का उत्सर्जन करता है । काव्य ही सुललितभाषा निबद्धता से, कल्पना प्रचूरता से, मनोभावाभिव्यञ्जकता से, प्रसाद-माधुर्यादि गुणों की समन्विता से, अलंकार की अलंकारिता से, रसप्रवाहपरीता से और कलात्मकता से सभी सुधी जनों के चित्त को आनन्दित व प्रफुल्लित करता है। मनुष्य चेतना सम्पन्न और संवेदनशील प्राणी है उसका मन शरीर को आधृत कर सुख, दुःख, प्रेम, दया, क्रोध, आशा और चलायमान होता है तथा प्रकृति के प्रतिक्षण परिवर्तन होने से सौम्य, मनोरम, और विविध रूपों के भावों को गृहण करता है। काव्य द्वारा मानव का भावात्मक विकास होता है । इति कलात्मक काव्य ।

सार्वजनिक मनोरञ्जन का साधन नाटक होता है यह सर्वविदित है और नाटक का निर्माण सर्वजनहिताय व सर्वजनसुखाय होता है। क्योंकि देवसमाजहित चिन्तन की इच्छा से ब्रह्मा जी ने नाटक की सृष्टि की -

क्रीडनीयकमिच्छामि दृश्यं श्रव्यं च यद् भवेत् ।
तस्मात् सृजापरं वेदं पञ्चमं सार्ववर्णिकम् ॥[1]

काव्य भेद- काव्य के दो भेद हैं लौकिक और वैदिक । वैदिक वेदब्राह्मणादि ईश्वर द्वारा कहा गया । लौकिक निरन्धित बुद्धि धारित आप्तजनों द्वारा अवलोकित रामायण महाभारतादि । गद्य पद्य के भेद से वह चार प्रकार से होता है।

वैदिकं लौकिकं चेति द्विविधं काव्यमुच्यते ।
गद्यपद्यविभेदेन तच्चतुर्धा व्यवस्थितम् ॥

लौकिक काव्य दो भाग में विभक्त है - दृश्य और श्रव्य । श्रवण योग्य काव्य श्रव्यकाव्य कहलाता है । जिसके काव्य- महाकाव्य- गीतिकाव्यादि अनेक भेद हैं । शैली के आधार पर काव्य को गद्य, पद्य, मिश्रकाव्य में विभक्त किया जाता है और दृश्य काव्य अभिनय से युक्त होता है जैसा कि आचार्य विश्वनाथ ने कहा है ।

दृश्यश्रव्यत्वभेदेन पुनः काव्यं द्विधा मतम् ।
दृश्यं तत्राभिनेयं तद्रूपारोपात्तु रूपकम् ॥[2]
अवस्थानुकृतिर्नाट्यम्। [3]

संस्कृत साहित्य में गद्य पद्य के अनन्तर रूपक का प्रमुख स्थान होता है । अवस्था विशेष का अनुकरण करके आनन्द और मनोरंजन ही नाटक कहलाता है। गद्यकाव्य, पद्यकाव्य और श्रव्यकाव्य इसके अन्तर्गत आते हैं। यथा- कथा, आख्यायिका आदि । किन्तु रूपक दृश्यकाव्य के अन्तर्गत आता है। श्रव्यकाव्य शिक्षण में श्रवण इन्द्रिय ही कार्य करती है। किन्तु दृश्य काव्य के शिक्षण में उभय- श्रवण व चक्षु इन्द्रियाँ कार्य करती हैं । अतः श्रव्य काव्य की अपेक्षा दृश्य काव्य की ही अत्यधिक प्रामुख्यता है । संस्कृत साहित्य में नाटक की विशेष भूमिका होती है । छात्र भी रूपक के अध्ययने में विशेष रुचि को ही प्रकट करते हैं। "नाटकम्" शब्द की सिद्धि नट् धातु से निष्पन्न होती है जिसका अर्थ- नृत्य, अभिनय व अनुकरण होता है । लोक में विद्यमान इतिवृत्त और घटनाओं का चित्र ही नाटक कहलाता है। कालिदास ने भी कहा है- नाट्यं भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाप्येकं समाराधनम् ।

नाटक की रम्यता- काव्य विधाओं में सर्वोत्कृष्ट नाटक को स्वीकारा गया है । किसी भी घटना या कथा का साक्षाद् दर्शन दृश्य से ही रम्य होता है, यह सर्व विदित ही है । संस्कृत साहित्य में अनेक नाटक निबद्ध हैं, उन सब में "अभिज्ञानशाकुन्तलम्" निर्विवाद रूप से उत्कृष्ट स्वीकारा गया विद्वानों द्वारा । परम्परानुसार सुना भी गया है किसी विद्वान् द्वारा अभिज्ञानशाकुन्तलम् की प्रशंसा में कि-

काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला ।
तत्रापि च चतुर्थोऽङ्कस्तत्र श्लोकचतुष्टयम् ॥

वस्तुतः यह नाटक प्रत्येक की दृष्टि में सफल व रमणीय है। इस नाटक में नैपुण्य वर्णन, घटना संयोजन, प्रसादगुण सम्पन्न वैदर्भी रीति, चरित्र चित्रण की चातुर्यता, प्रकृति वर्णन, स्वाभाविक चित्रण, अलंकार योजना, और रस परिपाक सभी सर्वातिशायित्व से विराजित है। नाटकों में तो अभिनयादि प्रदर्शन द्वारा वेशभूषादि अलंकार से, प्राकृतदृश्य संयोग

1 ना० शा० 1/1
2 सा० द० 6/1
3 दशरूपक 1/7

से, आ ङि गकवाचकादि अभिनय के सम्मिश्रण से और नृत्य गीत लास्य के विलास से न केवल चेतन युक्तों को ही रसास्वाद और मनसंतोष प्रदान करता है अपितु आबाल वृद्धों, शिक्षितों, अशिक्षितों, नर व नारियों को भी आनन्द व मनोरंजन की प्राप्ति होती है। मनुष्यों के सर्वाङ्गीण विकास में रूपक का महत्त्वपूर्ण योगदान दिखलाई देता है, मनुष्यों के चित्त को स्पर्श कर जाता है। रूपक शास्त्र की प्रशंसा करते हुए नाट्यशास्त्र लिखते हैं कि -

न तज्ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या न सा कला।
न स योगो न तत्कर्म नाट्येऽस्मिन् यन्न दृश्यते ॥[4]

नटराज शिव द्वारा रूपक सार्ववर्णिक लाभ हेतु रूपक का संसृजन व समभाव को धर्मनिरपेक्ष की भावना से स्थापित किया गया। इससे रूपक शिक्षण के सभी उद्देश्य और प्रयोजनों को साधा जा सकता है। जैसे नाट्यशास्त्रकार भरतमुनि ने सविस्तार व्याख्यायित किया है।

दुःखार्तानां श्रमार्तानां शोकार्तानां तपस्विनाम्।
विश्रान्तिर्यजननं काले नाट्यमेतद् भविष्यति ॥[5]
धर्म्यं यशस्यमायुष्यं हितं बुद्धिविवर्धनम्।
लोकोपदेशजननं नाट्यमेतद् भविष्यति ॥[6]

पद्यकाव्य के त्रिविध भेद- उत्तम, मध्यम, अधम के भेद से पद्यकाव्य के तीन भेद होते हैं। उक्त पद्य भेदों द्वारा नरों का हितोपदेश जनक, विश्रान्ति जनक, विनोद जनक कार्य होता है। जैसा कहा गया है नाट्यशास्त्र में-

उत्तमाधममध्यानां नराणां कर्मसंश्रयम्।
हितोपदेशजननं धृतिक्रीडा सुखादिकृत् ॥[7]

नाटकस्य स्वरूपम्- रूपयतीति रूपकम्। तद्रुपारोपात्तु रूपकम्। तद्रूपकमभेदो यः उपमा- उपमेययोः। उपमानोपमेययोः साम्यप्रदर्शनाय काल्पनिकोऽभेदारोपः रूपकम्। रूपक संस्कृतसाहित्य का एक गौरवपूर्ण अंग है। रूपक के प्रवर्त्तक भरतमुनि रूपक को सर्विवार्णिकपञ्चमवेदः ऐसा स्वीकारते है।

जग्राह पाठ्यं ऋग्वेदात् सामभ्यो गीतमेव च।
यजुर्वेदादभिनयान् रसानाथर्वणादपि ॥ (नाट्यशास्त्र)

इससे सिद्ध होता है कि नाट्याख्यं पञ्चमं वेदम् अर्थात् पञ्चम वेद नाट्यशास्त्र है। भारतीय परम्परा के अनुसार रूपक की उत्पत्ति त्रेतायुग में हुई। भरतमुनि के अनुसार देवों की प्रार्थना द्वारा भगवान ब्रह्मदेव ने ऋग्वेद से पाठ्य, यजुर्वेद से अभिनय, सामवेद से गीत और अथर्ववेद से रस को स्वीकार करके रूपक का प्रणयन किया ऐसा ज्ञात होता है। भारत के भू-भाग पर प्रथम बार इन्द्रध्वज महोत्सव में रूपक (नाटक) का अभिनय किया गया। अतः यह नाट्यशास्त्र वेदतुल्य ही है। अवस्थानुकृतिर्नाट्यम्। संस्कृत नाटक पद्य बहुल हुआ करते हैं और नाटक के अभिनय हेतु रंगमञ्च सज्जीकृत किया जाता है। पात्रधारी उचित वेशभूषा, हाव-भाव और क्रिया कलाप द्वारा अभिनय करने हैं। नाटक मे अभिनय के 4 भेद कहे गए हैं।

1- सात्विक

4 नाट्यशास्त्र 1/117
5 नाट्यशास्त्र 1/115
6 नाट्यशास्त्र 1/116
7 नाट्यशास्त्र 1/113

2- आङ्गिक
3- वाचिक
4- आहार्य।

रूपक का अभिनय छात्रों के मानसिक विकास का महत्त्वपूर्ण साधन होता है। उत्तम रूपकों में आदर्श पात्रों के अनुकरण से जनों के सच्चरित्र का सम्पादन समर्थ है। जिससे शब्दों के स्पष्टोच्चारण, आरोह अवरोह पूर्वकवर्णों के उच्चारण, प्रवाह रुपेण भाषण, भावग्रहण और भाव प्रकटन इत्यादि गुण सुलभतया ज्ञान सकते हैं।

नाटक के प्रयोजन- नाट्यशास्त्र में भरतमुनिना द्वारा नाटक के तीन प्रयोजन कहे गए हैं।

1- हितोपदेश जनक- दैनन्दिन, श्रामिक, कार्मिक, कर्षक ये जन जीवने में मानासिक आनन्द को प्राप्त करते है।

2- विश्रान्तिजनकम्- दुःखी जनों, श्रम कर्ताओं, शोक कर्ताओं और तपस्वियों हेतु विश्रान्ति की कल्पना की गई है।

3- विनोद जनक- जनानां मनोरञ्चनम्। मनोरञ्जन के साधनों में नाटक सबसे लोकप्रिय कहा गया है। छात्रों की शिक्षा हेतु और मानवों के उपदेश हेतु रूपक का प्रयोग किया जाता है। महाकवि कालिदास ने मालविकाग्निमित्र ग्रन्थ में कहा है "प्रयोगप्रधानं हि नाट्यशास्त्रं" रूपक प्रयोग प्रधान कला होती है।

संस्कृत साहित्य में रूपक के प्रकार- रूपक के दश भेद होते हैं। वे निम्न प्रकार से हैं

1- नाटक	6- डिम
2- प्रकरण	7- ईहामृग
3- भाण	8- अङ्क
4- व्यायोग	9- वीथी
5- समवकार	10-प्रहसन

इसी प्रकार से 18 उपरूपक हैं।

1- नाटिका	7- उल्लाप्य	13- शिल्पकम्
2- त्रोटक	8- काव्यम्	14- विलासिका
3- गोष्ठी	9- प्रेङ्खनम्	15- दुर्मल्लिका
4- सट्टकम्	10- रासकम्	16- प्रकरणी
5- नाट्यरासक	11- संलापकम्	17- हल्लीशः
6- प्रस्थान	12- श्रीगदितम्	18-भाणिका।

रूपक, नाटक का पर्याय पद नहीं हो सकता है यही इनके मध्य अन्तर है। रूपक अङ्गी और नाटक उसका अङ्ग होता है। संस्कृत रूपक साहित्य में नाटकाख्यरूपक विभाग का प्राथम्य है। काव्येषु नाटकं रम्यम् यह वाक्य दृढ़ करता है। "नाटकान्तं हि साहित्यम्" यह वचन रूपक के महत्त्व को आवेदित करता है। दशरूपकों में नाटक का प्रथम स्थान है।

संस्कृत साहित्य में नाटकों का महत्त्व- नाटक प्रत्येक व्यक्ति का मनोरञ्जन का साधन होता है। नाटक में कोई भी भाव व विषय शेष नहीं रह जाता है, इसमे सभी प्रकार के रस निबद्ध होते हैं। इसमें यथा स्थान पुरुषार्थ चतुष्टय व चारों वर्गों का संग्रहण किया जाता है। यथा नाट्यशास्त्र में कहा गया है।

क्वचिद् धर्मः क्वचित् क्रीडा क्वचिदर्थः क्वचिच्छमः।

क्वचिद् हास्यं क्वचिद् युद्धं क्वचित् कामः क्वचिद् वधः ।।[8]

नाटक शक्ति हीन हृदय में शक्ति का सञ्चार करता है और उत्साह वर्धन् व ज्ञान प्रदान करती है। नाटक लोकवृत्त का अनुकरण है।

नानाभावोपसम्पन्नं नानावस्थान्तरात्मकम् ।
लोकवृत्तानुकरणं नाट्यमेतन्मया कृतम् ।।[9]

नाट्यशास्त्र के प्रवर्तक आचार्य भरत मुनि द्वारा नाट्यशास्त्र में वैदिक षिक्षा, ऐतिहासिक, आख्यान्, आचारविचारषिक्षा और कर्तव्य उद्बोधन का समावेष किया गया है। यथा-

वेदविद्येतिहासानाम् आख्यानपरिकल्पनम्।
विनोदकरणं लोके नाट्यमेतद् भविष्यति।।[10]
श्रुतिस्मृतिसदाचार-परिशेषार्थ-कल्पनम्।
विनोदजननं लोके नाट्यमेतद् भविष्यति।।[11]

नाटक के महत्त्व विषय पर महाकविकालिदास ने मालविकाग्निमित्र में कहा है।

देवानामिदमामनन्ति मुनयः शान्तं क्रतुं चाक्षुषं।
इन्द्रेणेदमुमाकृतव्यतिकरे स्वाङ्गे विभक्तं द्विधा।।
त्रैगुण्योद्भवमत्र लोकचरितं नानारसं दृश्यते।
नाट्यं भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाऽप्येकं समाराधनम्।।[12]

निष्कर्षः- यह मानव जीवन सम-विषम सुख-दुःखादि अनुभूत प्रधान है और सभी दैनिक कार्य करने वाले श्रमिक, कार्मिक, कृषक आदि के जीवन में नाटक मानसिक आनन्द की अनुभूति को प्रदान करता है। साथ ही दुःखियों हेतु, श्रमकर्ताओं, शोककर्ताओं तपस्वियों हेतु नाट्यशास्त्र में विश्रान्ति की कल्पना की गई है जिससे सभी का मनोरंजन होता है। मनोरंजन के साधनों में नाटक को ही सर्वाधिक लोकप्रिय कहा गया है। किसी कवि ने नाटक की प्रशंसा में बहुत ही सुन्दर कहा है कि काव्येषु नाटकं रम्यम्।

सनदर्भग्रन्थसूची-

1. साहित्यदर्पण, आचार्य विश्वनाथ, चौखम्बा विद्या भवन, चौक वाराणसी, 1957
2. नाट्यशास्त्र, आचार्य भरतमुनि, चौकम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, सं-2040
3. दशरूपक, आचार्य धनञ्जय, साहित्य भण्डार प्रकाशन, प्रयागराज, सं-1986
4. अमरकोश, सिंह अमर, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1975

8 नाट्यशास्त्र- 1/1.8
9 नाट्यशास्त्र1/112
10 नाट्यशास्त्र- 1.122
11 नाट्यशास्त्र 1/123
12 मालविकाग्निमित्रम् 1.4

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 132-136
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भारत में समान आचार संहिता:अवधारणा, विवाद एवं समकालीन संभावनाएँ

डॉ. ममता गौतम
सहायक प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान),
राजकीय पीजी कॉलेज-नोएडा, गौतमबुद्ध नगर, उ. प्र.

शोध सार
भारतीय संविधान का अनुच्छेद 44 राज्य के नीति-निर्देशक तत्वों के अंतर्गत यह निर्देश देता है कि राज्य समस्त नागरिकों के लिए एक समान नागरिक संहिता (Uniform Civil Code - UCC) सुनिश्चित करने का प्रयास करेगा। यह शोध पत्र भारत में समान आचार संहिता की अवधारणा, ऐतिहासिक विकास, विभिन्न धर्म-समुदायों के व्यक्तिगत कानूनों, न्यायिक निर्णयों, राजनीतिक बहसों और समकालीन परिप्रेक्ष्य का एक समालोचनात्मक एवं गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। प्रस्तुत अध्ययन लैंगिक समानता, धर्मनिरपेक्षता और राष्ट्रीय एकता के संदर्भ में UCC की प्रासंगिकता और विधिक-सामाजिक चुनौतियों को रेखांकित करता है।

बीज शब्द: समान आचार संहिता, व्यक्तिगत कानून, धर्मनिरपेक्षता, लैंगिक समानता, अनुच्छेद 44, भारतीय न्यायपालिका, सामाजिक सुधार।

1. अध्ययन के उद्देश्य एवं शोध पद्धति : इस अध्ययन का उद्देश्य अनुच्छेद 44 तथा अनुच्छेद 25–28 में निहित धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकारों के मध्य संवैधानिक तनाव एवं संतुलन का परीक्षण करना है। इसके अंतर्गत हिंदू, मुस्लिम, ईसाई एवं पारसी व्यक्तिगत कानूनों में विद्यमान लैंगिक असमानताओं की तुलनात्मक समीक्षा की जाएगी। साथ ही, समान नागरिक संहिता से संबंधित उच्चतम न्यायालय के ऐतिहासिक निर्णयों के विकासक्रम का विधिक मूल्यांकन किया जाएगा। अंततः 21वें एवं 22वें विधि आयोग के परामर्शों तथा उत्तराखंड के हालिया विधायी प्रयासों के आलोक में समान नागरिक संहिता की समकालीन व्यवहार्यता एवं संभावनाओं का आकलन किया जाएगा।

यह एक गुणात्मक, विवरणात्मक और विश्लेषणात्मक शोध पत्र है। इसके अंतर्गत संविधान सभा की बहसों, विधि आयोग की रिपोर्टों, उच्चतम न्यायालय के निर्णयों और प्रासंगिक शैक्षणिक साहित्य का द्वितीयक स्रोतों के रूप में अध्ययन किया गया है। साथ ही फ्रांस एवं तुर्की के अंतरराष्ट्रीय विधिक मॉडलों का तुलनात्मक विश्लेषण शामिल है।

2. प्रस्तावना एवं पृष्ठभूमि

संविधान सभा (1946-49) में डॉ. भीमराव आंबेडकर ने व्यक्तिगत जीवन के मामलों (विवाह, तलाक, उत्तराधिकार, दत्तक-ग्रहण) को तर्कसंगत और धर्मनिरपेक्ष बनाने पर बल दिया था। उनका विचार था कि आधुनिक गणराज्य में व्यक्तिगत कानूनों का सुधार सामाजिक न्याय और महिलाओं के अधिकारों के लिए अनिवार्य है। परंतु तत्कालीन परिस्थितियों, देश के विभाजन की त्रासदी और अल्पसंख्यकों के मन में सुरक्षा की भावना बनाए रखने के उद्देश्य से इसे मौलिक अधिकारों (भाग III) में शामिल न करके राज्य के नीति-निर्देशक तत्वों (भाग IV, अनुच्छेद 44) में रखा गया। वर्तमान में भारत में विभिन्न धार्मिक समुदाय अपने अलग-अलग व्यक्तिगत कानूनों से संचालित होते हैं:

* अनुच्छेद 44 बनाम 25-28: जहाँ अनुच्छेद 44 विधिक एकरूपता की बात करता है, वहीं अनुच्छेद 25-28 प्रत्येक नागरिक को अंतःकरण की और धर्म को अबाध रूप से मानने, आचरण व प्रचार करने की स्वतंत्रता देता है। यह स्थिति एक सतत विधिक व सामाजिक द्वंद्व को जन्म देती है।

3. व्यक्तिगत कानूनों का तुलनात्मक परिदृश्य

* **हिन्दू कानून:** हिन्दू विवाह अधिनियम (1955) और हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम (1956) जैसे संहिताबद्ध अधिनियमों के माध्यम से बहुविवाह समाप्त किया गया और महिलाओं के संपत्ति अधिकारों में व्यापक सुधार किए गए। हालांकि, पैतृक संपत्ति व दत्तक-ग्रहण में व्यावहारिक विसंगतियों का निवारण अब भी शेष है।

* **मुस्लिम पर्सनल लॉ:** यह मुख्यतः अलिखित शरिया सिद्धांतों पर आधारित है। शाह बानो मामले (1985) के बाद 'मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकार संरक्षण) अधिनियम, 1986' लाया गया। वर्ष 2019 में तीन तलाक (तलाक-ए-बिद्दत) को असंवैधानिक और दंडनीय अपराध घोषित किया जाना इस दिशा में सुधार के महत्वपूर्ण विधिक कदम रहे हैं।

* **ईसाई एवं पारसी कानून:** ईसाई समुदाय 'ईसाई विवाह अधिनियम, 1872' तथा 'भारतीय तलाक अधिनियम' से शासित है, जबकि पारसी समुदाय 'पारसी विवाह और तलाक अधिनियम, 1936' तथा पारसी उत्तराधिकार नियमों के अधीन आता है। इन कानूनों में भी तलाक और पैतृक संपत्ति विभाजन के नियमों में लैंगिक समानता की दृष्टि से सुधार की आवश्यकता बनी हुई है।

4. न्यायपालिका की ऐतिहासिक भूमिका एवं प्रमुख निर्णय

भारतीय न्यायपालिका ने कई ऐतिहासिक निर्णयों के माध्यम से व्यक्तिगत कानूनों की विसंगतियों को दूर करने और UCC लागू करने के निर्देश दिए हैं: इसके अंतर्गत *प्रमुख निर्णय एवं विधिक निष्कर्ष-*

मोहम्मद अहमद खान बनाम शाह बानो बेगम (1985) - सर्वोच्च न्यायालय ने तलाकशुदा मुस्लिम महिला को दंड प्रक्रिया संहिता (CrPC) की धारा 125 के तहत गुजारा-भत्ता पाने का अधिकारी माना और राष्ट्रीय स्तर पर UCC की आवश्यकता बताई। |

सरला मुद्गल बनाम भारत संघ (1995) - पहले विवाह के कायम रहते केवल दूसरा विवाह करने के उद्देश्य से धर्म-परिवर्तन को अमान्य ठहराया गया; इसे राष्ट्रीय एकीकरण के लिए जरूरी कदम बताया गया। |

शायरा बानो बनाम भारत संघ (2017) - न्यायालय ने 'तीन तलाक' (तलाक-ए-बिद्दत) को मनमाना, असंवैधानिक और अनुच्छेद 14 (समानता का अधिकार) का उल्लंघन घोषित किया। |

जोसफ शाइन बनाम भारत संघ (2018)- व्यभिचार को अपराध की श्रेणी से बाहर करते हुए न्यायालय ने महिलाओं की व्यक्तिगत स्वायत्तता, गरिमा और लैंगिक समानता के संवैधानिक मूल्यों को सुदृढ़ किया। |

5. राजनीतिक विमर्श एवं दलों का दृष्टिकोण

समान आचार संहिता पर भारतीय राजनीतिक दलों का दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से विभाजित है। **भारतीय जनता पार्टी (भाजपा)** ने इसे अपने राजनीतिक एजेंडे का एक प्रमुख हिस्सा बनाया है और अपने चुनावी घोषणापत्रों में शामिल करके इसे लागू करने की पहल की वकालत की है। दूसरी ओर, **भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस** ने ऐतिहासिक रूप से सामाजिक सुधारों का समर्थन किया है, लेकिन देश की धार्मिक विविधता और अल्पसंख्यक हितों को ध्यान में रखते हुए इस मुद्दे पर एक सतर्क और संतुलित रुख अपनाया है। विभिन्न **क्षेत्रीय दल**, जैसे डीएमके, तृणमूल कांग्रेस, समाजवादी पार्टी और राष्ट्रीय जनता दल, अक्सर समान आचार संहिता का विरोध करते हैं, क्योंकि वे इसे धार्मिक स्वतंत्रता और अल्पसंख्यक अधिकारों में अनावश्यक हस्तक्षेप के रूप में देखते हैं। इसके विपरीत, अनेक महिला अधिकार संगठन और प्रगतिशील सामाजिक आंदोलन लैंगिक न्याय और समानता सुनिश्चित करने के साधन के रूप में समान आचार संहिता का दृढ़ता से समर्थन करते हैं।

6. समान आचार संहिता: लाभ, संभावनाएँ एवं विरोध के तर्क

प्रमुख लाभ एवं संभावनाएँ:

* लैंगिक समानता एवं न्याय: विवाह, तलाक, गुजारा-भत्ता, उत्तराधिकार और दत्तक-ग्रहण में सभी महिलाओं को समान अधिकार प्राप्त होंगे। इससे नागरिकों के बीच कानूनी समानता स्थापित होगी और धर्म के आधार पर भेदभाव समाप्त होगा।

* विधिक सरलीकरण: अनेक धार्मिक कानूनों के स्थान पर एक स्पष्ट संहिता होने से मुकदमों के निस्तारण में तेजी आएगी और न्यायपालिका की दक्षता बढ़ेगी। अदालतों को विभिन्न धार्मिक कानूनों की व्याख्या करने में आने वाली चुनौतियों और विवादों में कमी आएगी।

* धर्मनिरपेक्षता का सुदृढ़ीकरण: धर्म और नागरिक कानूनों का पृथक्करण राज्य के वास्तविक धर्मनिरपेक्ष स्वरूप को मजबूत करेगा। विभिन्न धर्मों के लिए अलग-अलग कानून होने से उत्पन्न होने वाली विभाजनकारी प्रवृत्तियों पर अंकुश लगेगा और राष्ट्रीय एकता को बल मिलेगा।

* सामाजिक एकीकरण: धर्म के आधार पर पृथक विधिक विशेषाधिकार समाप्त होने से सामाजिक बंधुत्व और राष्ट्रीय एकता का विकास होगा। यह संविधान के मूल्यों—न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व—को व्यावहारिक रूप में लागू करने में सहायक होगी।

विरोध के मुख्य आधार एवं चुनौतियाँ:

* धार्मिक स्वतंत्रता पर आशंका: विरोधियों का मत है कि यह अनुच्छेद 25-28 के अंतर्गत प्रदत्त धार्मिक अधिकारों का अतिक्रमण करता है।

* सांस्कृतिक विविधता का संरक्षण: भारत की भाषाई, जनजातीय और धार्मिक विविधता इतनी व्यापक है कि एकल कानूनी प्रारूप तैयार करना अत्यंत जटिल है।

* अल्पसंख्यक असुरक्षा: अल्पसंख्यकों में यह भय विद्यमान रहता है कि इसके माध्यम से बहुसंख्यक मान्यताओं को उन पर थोप दिया जाएगा।

* राजनीतिकरण: कई आलोचकों के अनुसार इसका उपयोग चुनावी ध्रुवीकरण के लिए किया जाता है, जिससे रचनात्मक और संतुलित विमर्श बाधित होता है।

चुनौतियाँ : समान आचार संहिता के क्रियान्वयन में भारत की सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक विविधता का सम्मान करना प्रमुख चुनौती है।

यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि किसी एक समुदाय की प्रथाएँ दूसरे समुदाय पर थोपी न जाएँ।
दूसरी चुनौती विभिन्न राजनीतिक दलों एवं सामाजिक समूहों के बीच व्यापक सहमति स्थापित करना है।
महिलाओं एवं अल्पसंख्यक समुदायों के अधिकारों और सुरक्षा संबंधी चिंताओं का समाधान भी आवश्यक है।
UCC को समानता**,** न्याय एवं धार्मिक स्वतंत्रता के बीच संतुलन स्थापित करना होगा।
अंततः**,** एक सरल**,** व्यावहारिक**,** समावेशी एवं सुलभ कानूनी ढाँचे का निर्माण इसकी सफलता के लिए आवश्यक है।

7. अंतरराष्ट्रीय अनुभव एवं समकालीन परिप्रेक्ष्य

समान आचार संहिता के संदर्भ में अंतरराष्ट्रीय अनुभव महत्वपूर्ण सबक प्रदान करते हैं-
तुर्की, एक मुस्लिम-बहुल देश होते हुए भी, 1926 में अतातुर्क के नेतृत्व में एक धर्मनिरपेक्ष नागरिक संहिता लागू करने में सफल रहा, जो एक बड़े सामाजिक-कानूनी परिवर्तन का उदाहरण है।
फ्रांस का 'नेपोलियनिक कोड' लंबे समय से सभी नागरिकों पर लागू एक समान नागरिक कानून का प्रतीक रहा है, जो धर्मनिरपेक्षता और कानूनी एकरूपता के आदर्श को दर्शाता है।
वहीं, ***पाकिस्तान और बांग्लादेश*** जैसे देशों में शरिया कानून का प्रभाव अधिक है, लेकिन वहाँ भी महिलाओं के अधिकारों से जुड़े कुछ कानूनी सुधारों के प्रयास हुए हैं। भारत इन विविध अंतरराष्ट्रीय मॉडलों से प्रेरणा लेते हुए अपनी सामाजिक-सांस्कृतिक विशिष्टताओं के अनुरूप एक संतुलित समान आचार संहिता विकसित कर सकता है।
समकालीन भारतीय परिप्रेक्ष्य में भारतीय विधि आयोग ने 2018 के परामर्श पत्र में उल्लेख किया था कि इस स्तर पर समान नागरिक संहिता न तो आवश्यक है और न ही वांछनीय; बल्कि व्यक्तिगत कानूनों के भेदभावों को दूर करना अधिक व्यावहारिक है। हालांकि, 22वें विधि आयोग (2023) ने इस पर पुनः राष्ट्रव्यापी विमर्श शुरू किया। उत्तराखंड राज्य द्वारा समान नागरिक संहिता विधेयक पारित किया जाना इस दिशा में एक पहला ठोस विधायी कदम है, जो राष्ट्रीय स्तर पर भावी विमर्श के लिए एक व्यावहारिक प्रारूप प्रस्तुत करता है।

निष्कर्ष:

समान आचार संहिता भारतीय लोकतंत्र में समानता, धर्मनिरपेक्षता और सामाजिक न्याय के आदर्शों को साकार करने की दिशा में एक ऐतिहासिक एवं परिवर्तनकारी कदम का प्रतिनिधित्व करती है। यह केवल एक कानूनी सुधार मात्र नहीं, बल्कि एक सामूहिक सामाजिक-नैतिक प्रतिबद्धता का प्रतीक है। हालाँकि, इसकी सफलता महज़ एक विधायी ढाँचे के निर्माण पर निर्भर नहीं है, बल्कि यह एक समावेशी सामाजिक सहमति, अटूट राजनीतिक इच्छाशक्ति और क्रमिक एवं संवेदनशील सुधार प्रक्रिया पर निर्भर करेगी।

भारत जैसे अद्वितीय सांस्कृतिक एवं धार्मिक बहुलता वाले समाज में एक समान संहिता का क्रियान्वयन निस्संदेह जटिल चुनौतियों से भरा है। फिर भी, एक प्रगतिशील राष्ट्र के रूप में हमारी यात्रा का एक अनिवार्य मोड़ यही प्रतीत होता है। यह वह पथ है जो व्यक्तिगत कानूनों में आवश्यक सुधारों के माध्यम से लैंगिक न्याय को सुनिश्चित करेगा, महिलाओं के अधिकारों का विस्तार करेगा और अंततः प्रत्येक नागरिक के लिए गरिमा और समानता के सिद्धांत को संस्थागत रूप देगा। इस प्रकार, समान आचार संहिता को एक अंतिम लक्ष्य के बजाय एक निरंतर विकसित होने वाली प्रक्रिया के रूप में देखा जाना चाहिए—एक ऐसी प्रक्रिया जो भारतीय संविधान के मूलभूत आदर्शों को हमारे निजी और सामाजिक जीवन में सार्थक रूप से उतारने का मार्ग प्रशस्त करे।

संदर्भ सूची (References)

- भारत का संविधान, अनुच्छेद 25–28, 44।

- भारत सरकार, विधि एवं न्याय मंत्रालय। (2018)। परिवार कानून में सुधार पर परामर्श पत्र। विधि आयोग भारत।
- भारत सरकार, विधि एवं न्याय मंत्रालय। (2023)। 22वीं रिपोर्ट। विधि आयोग भारत।
- भारतीय संविधान सभा की बहसें (आधिकारिक रिपोर्ट)। (1946–1949)। खंड VII एवं X।
- Mohd. Ahmed Khan v. Shah Bano Begum, (1985) 2 SCC 556।
- Sarla Mudgal v. Union of India, (1995) 3 SCC 635।
- Shayara Bano v. Union of India, (2017) 9 SCC 1।
- Joseph Shine v. Union of India, (2019) 3 SCC 39।
- Austin, G. (1999). The Indian Constitution: Cornerstone of a Nation. New Delhi: Oxford University Press।
- Noorani, A. G. (2001). The Uniform Civil Code and the Constitution. Economic and Political Weekly, 36(39), 3699–3702।
- The Hindu, (2023, december 15) Uttarakhand Panel Submits Draft Report on Uniform Civil Code, page 12 https://www.thehindu.com
- The Indian Express, (2024, January 10) Decoding the UCC Debate: Law, Politics and Gender Justice, page 8 https://indianexpress.com
- Times of India, (2024, March 5) Uniform Civil Code: A Long Road to Consensus, page. 15 https://timesofindia.indiatimes.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 137-145
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

साहित्य और संस्कृति के संवाहक के रूप में अनुवाद और तुलनात्मक अध्ययन का महत्व :मनोज दास की (ओड़िआ) कहानियों के संदर्भ में

चंद्रिका भोइ
शोधार्थी,
ओड़िशा केंद्रीय विश्वविद्यालय ,कोरापुट
डॉ.चक्रधर पधान
(सह आचार्य एवं विभागाध्यक्ष)
हिंदी विभाग, ओड़िशा केंद्रीय विश्वविद्यालय ,कोरापुट

"GREAT LITRATURE IS SIMPLY LANGUAGE CHARGED WITH MEANING TO UTMOST POSSIBLE DEGREE"[1]
-EZRA POUND

शोध सार
साहित्य के माध्यम से ही मनुष्य अपने मनोभावों को व्यक्त करता है, और यह अभिव्यक्ति उसकी व्यक्तिगत अभिव्यक्ति नहीं होती ,बल्कि सामूहिक रूप धारण कर लेती है,इससे पाठक वर्ग भी अपने आप को लेखक के शब्दों से स्वयं को जोड़ लेता है l
साहित्य अपने समाज को परिवर्तन की राह दिखाता है, वह न केवल वर्तमान को दर्शाता है,बल्कि भविष्य के लिए भी दिशा -निर्देश करता है l जब समाज में जड़ता और अन्याय बढ़ता है,तब साहित्य जागरण का काम करता है l साहित्य किसी एक उद्देश्य का द्योतक नहीं है l यह कहा जाता है कि साहित्य समाज का मार्गदर्शक है,इसमें कोई संदेह नहीं है l साहित्य को किसी उद्देश्य या समाज सुधारक के रूप में न देखा जाए तो सबसे पहले साहित्य का सांस्कृतिक स्वरूप हमारे समक्ष उभरता है l किसी क्षेत्रीय समाज के धरोहर को साहित्य ने संस्कृति के संवाहक रूप में धारण किया है और किसी रुचिसंपन्न पाठक को उस संस्कृति से परिचय करवाता है l
प्रत्येक संस्कृति में कुछ विशेष तत्व निश्चित रूप में विलय हो कर रहती है,जो उसे भिन्न बनाती है l किन्तु उस संस्कृति को किसी और एक भिन्न संस्कृति से पहचान कराना साहित्यिक अनुवाद का काम है l दो भिन्न भाषाओं

के साहित्य और संस्कृति को पारस्परिक परिचय कराने के लिए तथा एक साहित्यिक सवांद स्थापन करने के लिए अनुवाद की नितांत आवश्यकता है l साहित्य को एक दूसरे के साथ संपर्क स्थापन करने के लिए अनुवाद का योगदान निश्चय ही महत्वपूर्ण है l इस सन्दर्भ में मनोज दास की कहानियों का अध्ययन आवश्यक है l निश्चय ही मनोज दास ओड़िआ और अंग्रेजी भाषा के एक सुप्रसिद्ध साहित्यकार हैं l उनकी रचनाओं में ओड़िआ भाषा,उसकी लोक संस्कृति, उसकी परम्पराओं की झलक देखने को मिलती है l उनकी कहानियों में ओड़िशा की संस्कृति का एक जीवंत चित्रण देखने को मिलता है, जिसका विश्लेषण अन्य भाषा के साहित्य के साथ तुलनात्मक अध्ययन तथा अनुवाद के द्वारा किया जा सकता है l प्रस्तुत शोध आलेख का उद्देश्य भी यही है l

बीच शब्द : लोक संस्कृति ,मनोज दास ,अनुवाद, तुलनात्मक अध्ययन,सांस्कृतिक संवाहक l

मूल शोध

"संस्कृति मनुष्य की आत्म चेतना का प्रदर्शन नहीं ,उस सामूहिक मनीषा की उत्पत्ति है जो व्यक्ति को एक स्तर पर विश्व से जोड़ती है l"[2] -निर्मल वर्मा

संस्कृति किसी व्यक्ति विशेष की सोचने और कार्य करने के रीति तथा प्रणाली को भी तरासती है l संस्कृति के माध्यम से ही व्यक्ति अपने समाज की परम्पराओं ,भावनाओं तथा विश्वासों एवं जीवन के विभिन्न पक्ष से जुड़ता है l संस्कृति विहीन समाज का धरोहर के रूप में कुछ नहीं रहता l उनके विचारों में वो मार्मिकता नहीं होती जो कि एक संपन्न सांस्कृतिक समाज में दिखाई पड़ती है l संस्कृति केवल इतिहास या भूगोल तक सीमित नहीं है बल्कि इससे परे विश्वास ,पर्व ,पौराणिक गाथाओं,मिथकों आदि का भी एक सम्मिलित रूप है l

सांस्कृतिक अध्ययन को एक स्वतंत्र विषय के रूप में जब मैथु आरलैंड के द्वारा प्रारंभ किया गया वे तब अपने किताब CULTURE AND ANARCHY में लिखते हैं :-

"CULTURE IS HARMONIOUS PERFECTION, DEVELOPING ALL SIDES OF HUMANITYAS A GENERAL PERFECTION".[3]

आरलैंड संस्कृति को PERFECTION का अध्ययन मानते थे l

संस्कृति ही समाज को समाज बनाती है, नहीं तो केवल वह सभ्यता का एक हिस्सा मात्र बन कर रह जाता जिसका कोई इतिहास नहीं होता l एक समृद्ध समाज का एक समृद्ध सांस्कृतिक परिवेश भी रहता है l किसी भी समाज की संस्कृति अगर उसकी सामजिक व्यवस्था को प्रभावित करती है, तो उसके साहित्य को भी उतना ही प्रभावित करता है l समाज संस्कृति से परे केवल और केवल सभ्यता का अंग मात्र है l समाज का प्रतिफलन साहित्य के माध्यम से होता है, इसलिए साहित्य समाज का दर्पण है l भारत और उसकी सामाजिक परिस्थिति भी उसकी भाषा, साहित्य और संस्कृति से निर्मित हुई है l किसी समृद्ध भाषा का साहित्य भी उतना ही समृद्ध होता है इसलिए सम्पूर्ण भारतीय साहित्य का अध्ययन एक महत्वपूर्ण विषय है,किन्तु सम्पूर्ण भारतीय साहित्य को एक परिपाटी में हम सीमित नहीं कर सकते, इसलिए इसे क्षेत्र विशेष में विभाजन कर उसको अध्ययन करने का प्रयास किया जाता है l अनेक भाषा और बोलियाँ भारत में होने के कारण एवं भारत एक विशाल भूखंड होने के कारण साहित्य और उसके पाठक वर्ग में थोड़ी सी दूरियाँ हमेशा से रही है, भले ही वर्तमान में टेक्नॉलजी अग्रिम हो चुका है l विभिन्न भाषाओँ के आधार पर भारत में जातियों की जो पहचान की गयी है, उसका उल्लेख करते हुए डॉ.सुनीतिकुमार चटर्जी ने लिखा है, कि भारतीय जनता की रचना जिन लोगों को लेकर हुई है ,उनको मुख्यतः तीन भाषाओँ में विभक्त किये जा सकता है l जो कि औष्ट्रिक अथवा आग्नेय, द्राविड आदि है l वे लिखते है कि **"नीग्रो से लेकर**

आर्य तक जो भी जाति का भारत में आगमन हुआ वे सभी भारतीय संस्कृति का आधार को और भी विस्तृत और मजबूर किए हैं l

आर्यों ने भारत में जातियों और संस्कृतियों का जो समन्वय किया, उसी से हमारे हिन्दू-समाज और हिन्दू-संस्कृति का निर्माण हुआ। बाद को, मगोल, यूनानी, यूची, गक, आमीर, हुण और तुर्क, जो भी आये, उन्हें इस समन्वय में दस्तदाजी करने की हिम्मत नहीं हुई और वे, समर्पण के भाव से, इस समन्वय के सामने सिर झुकाते और उसमे विलीन होते चले गये l"

भारतवर्ष बहु भाषी और बहु संस्कृति का समन्वय करता आया है,किन्तु उसका प्रमाण केवल हमें इतिहास या भूगोल के पृष्ठों में नहीं अपितु साहित्य के सृजनात्मक दस्तावेजों में भी सज्जित होता दिखायी देता है l इसलिए विभिन्न भाषाओं के साहित्य को एक दूसरी भाषाओं के साहित्य के साथ तुलना कर साहित्य की परिधि को और भी विस्तृत किया जा रहा है l भिन्न भाषाओं के तुलना के समय न केवल दो लेखकों तथा उनके प्रवृत्ति,शैली,सवांद आदि तत्वों का भी विवेचन किया जाता है l भारत के प्रत्येक व्यक्ति अपने मातृभाषा के साथ – साथ निश्चित रूप से और एक भाषा का आंशिक रूप से हीं सही परन्तु उसे जरुर परिचित होता है l इसीलिए अंतर- साहित्यिक- अध्ययन के लिए विभिन्न भाषाओं के साहित्य का अनुवाद की आवश्यकता है, जिससे भाषाओं तथा साहित्य के अध्येताओं को सरलता का अनुभव हो सके l किसी भी संस्कृति का एक दूसरी संस्कृति से तारतम्य सम्पूर्ण रूप से नहीं बैठता है,जिसकी पूर्ति अनुवाद के द्वारा भी नहीं की जा सकती है l साहित्य को विस्तार देने का कार्य अनुवाद और तुलनात्मक अध्ययन द्वारा निश्चित रूप से संभव है l

साहित्य,संस्कृति और समाज ये तीन शब्द है जो अंग्रेजी के क्रमशः LITERATURE ,CULTURE ,SOCIETY का द्योतक हैं जो आपस में जुड़े हुए हैं l किसी भी समाज की संस्कृति उसके साहित्य में रिफलेक्ट जरुर होती है, इसीलिए किसी भी संस्कृति को समझने के लिए उसकी मूल भाषा का ज्ञान हासिल करना जरुरी है,जो साधरण पाठक के लिए संभव नहीं हो पाता,इसलिए अनुवाद की आवश्यकता साहित्य और संस्कृति को साँझा करने के लिए और भी ज़रूरी हो जाता है l

ओड़िआ भाषा एक शास्त्रीय भाषा है l संस्कृत के पश्चात इस भाषा की प्राचीन पांडुलिपियाँ सबसे अधिक उपलब्ध हैं l किन्तु उसके साहित्य आज तक एक छुपा हुआ साहित्य के रूप में है l यह ओड़िशा प्रान्त तक सीमित रह जाने के कारण आज अन्य भाषा -भाषी पाठकों तथा विश्व पटल पर उनता फैल नहीं पाया है, जितना उसको अभी तक होना चाहिए था l भारतीय पर्यटन योजना के तहत सभी प्रदेशों के लिए एक TAGLINE निश्चित किया गया है, जिसमें ओड़िशा के लिए INDIA's BEST KEPT SECRET दिया गया है l देखा जाये तो यह ओड़िआ साहित्य के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है l ओड़िआ साहित्य की विस्तृत धारा आज भी साहित्य की मुख्य धारा में मिल नहीं पाया है l उसे विश्व साहित्य -समुद्र में मिलने के लिए अभी भी समय शेष है l

ओड़िआ भाषा और साहित्य का इतिहास हिन्दी साहित्य से भी पुराना है l हिन्दी साहित्य जिस प्रकार समय और इतिहास को अपने आँचल में समेट कर रखा है उसी प्रकार ओड़िआ साहित्य का इतिहास भी उतना ही विस्तृत और समृद्ध है l भूगोल एवं इतिहास तो केवल दस्तावेज हैं ,किन्तु साहित्य समय का भावनात्मक अभिव्यक्ति है l साहित्य के जरिए तत्कालीन तथा समकालीन लोगों की मनोभावों को समझा जा सकता है l ओड़िआ साहित्य की मूल भित्ति उतना ही ससक्त है जितना कि किसी और भाषा की साहित्य l ओड़िशा ने भी इतिहास में अनेक बाह्य आक्रमणों को सामना किया है उसी का लेख जोखा साहित्य में हमें निश्चित रूप में देखने को मिलता है,उसी के साथ-साथ सम्पूर्ण ओड़िआ भक्ति साहित्य भी भक्तों और संतों के रचनाओं से भरा है l उसी प्रकार आधुनिक साहित्य भी

स्वतंत्रता संग्राम से लेकर समकालीन साहित्य तक ओड़िआ साहित्य अत्यंत जागरूक एवं प्रभावोत्पादक साहित्य है l

ओड़िशा एक शांति प्रिय और विनम्रशील राज्य है l यह कृषि प्रधान राज्य बाह्यडंबर से हमेशा दूर रहा हैl इसने कभी भी मुख्यधारा तथा सुर्खियों में रहने का प्रयास नहीं किया है l इसका साहित्य जितना गंभीर है उतना ही प्रेरणादायक l बहुत सारे एसे तत्व हैं जो पाश्चात्य जगत से भारतीय साहित्य में समाहित हुआ है सारे तत्व ओड़िआ के लेखक भी अपनी रचनाओं में 19 वी सदी से रचना करते आए हैं l किन्तु कभी उसको प्रदर्शित करने का प्रयास नहीं किया गया l

ओड़िआ साहित्य की सभी विधाओं में एक परिवर्तनशील प्रयास देखने को मिलता है l भले ही वह कहानी ,कविता ,उपन्यास ,यात्रावृतांत तथा अन्य कोई विधा क्यों न हो l इसी आलेख में कहानियों पर विशेष बल दिया गया है l क्योंकि प्राचीन काल से ओड़िआ साहित्य में लोक कथा से लेकर वर्तमान दौर की कहानियों तक कलात्मक नवीनता दिखाई पड़ती है l

1934 में ओड़िशा के बालेश्वर जिले में जन्में हुए मनोज दास एक अप्रतिम प्रतिभाशाली लेखक के रूप में ओड़िआ भाषा के साथ अंग्रेजी भाषा में भी प्रतिष्ठित हैं l बचपन से विभिन्न पत्रिकाओं का संपादन करते हुए रेवेंशा विश्वविद्यालय में पठन-पाठन तथा वे एक समाज सुधारक के रूप में भी जाने जाते हैं l भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने के पश्चात उनके अंतर मन में एक परिवर्तन हुआ जो उनको अरविंद -दर्शन की तरफ ले चला l श्री अरविंद दर्शन से प्रभावित होते हुए आजीवन पांडिचेरी आश्रम में अध्यापन का कार्य करने के साथ-साथ साहित्य-साधना भी करते रहे l उनका साहित्य न केवल ओड़िशा को पूरे भारत में प्रदर्शित करता है, बल्कि संपूर्ण विश्व में भी उनकी रचना शैली और प्रतिभा का स्मारक रूप में आज सब जानते हैं l लेकिन उनके साहित्य को भारतीय साहित्य में एक अंग के रूप में स्थापित करने के लिए अनुवाद होना जरूरी है l बहुत ऐसी कहानियाँ हैं जो पहले उन्होंने ओड़िआ में लिखी और उसके पश्चात उसका अंग्रेजी में स्वयं अनुवाद किया है l उनकी कहानियां ओड़िशा की लोक परम्पराओं से प्रभावित होते हुए हमें देखने को मिलती हैं l जहां पर एक ओड़िआ ही उस संस्कृति को (जो उसको अनुभूत किया हो) वह समझने में सक्षम हो पाता है l मनोज दास ने अपनी कहानियों के माध्यम से व्यंग्यात्मक शैली में अंतर जगत से होते हुए बाह्य जगत को किस प्रकार उसमें घोलकर समाहित किया है वो प्रशंसनीय है l अरविंद दर्शन का चित्रण उनकी कहानियों में देखने को मिलती है जहाँ उनके चरित्र अपने आप की खोज में निकलते हैं l वह उनके अंग्रेजी साहित्य के माध्यम से संपूर्ण विश्व के पाठक वर्ग को अध्ययन करने को मिला है ,उसके लिए अनुवाद ही कारण है l मनोज दास की बहुत कम कहानियाँ हिंदी में अनुदित हुई हैं l हालांकि उनको साहित्य अकादमी जैसे पुरस्कारों से नवाजा भी गया है, लेकिन उनकी रचनाओं के ज्यादातर ओड़िआ और अंग्रेजी पाठक हैं l उनका हिंदी पाठक बहुत ही कम है l तो एक वर्ग जो छूट जा रहा है,ओड़िआ वर्ग और अंग्रेजी वर्ग के बीच में हिंदी पाठक वर्ग, उनको मनोज दास के साहित्य से और अधिक समाहित करना प्रस्तुत आलेख का प्रयास है ।

मनोज दास ने अनेक कहानियाँ लिखी हैं l उनके कहानी- संग्रह हैं :- **‘धूमाभ दिगंत’, ‘आरण्यक’, ‘शेष वसंत र चिठि’ , ‘अवोलकरा ओ अनन्य काहाणी’ ,’मनोज दास कथा ओ काहाणी’, ‘मनोज पंचविंशती’ ।**

मनोज दास की **‘कथा ओ काहाणी’** उनका एक उत्कृष्ट कहानी संग्रह है, जिसमें **‘अपहृत टोपी र रहस्य’ ,’बिलेइ’,’रायसिंह र डायरी’,’तृतीय पुरुष’,’अदृष्ट मुहूर्त्त’,’शेष वसंत र चिठि’,’प्रत्यागत र काहाणी’** आदि कहानियाँ संग्रहित है l प्रस्तुत शोध आलेख में मनोज दास की कथा ओ काहाणी संग्रह में संकलित कहानियों की आलोचना की गई है l

'अपहृत टोपी र रहस्य' कहानी: यह राजनैतिक व्यंग्यात्मक शैली की कहानी है l महाराणा बाबू मान्यवर मंत्री हैं l गाँव में बस उन्हीं का घर दो मंजिला है ,यहाँ गाँव में अमीर और गरीब के बीच का जो लंबा अंतराल है उसको दर्शाया गया है l गाँव में उन्हें एक विवेकशील एवं भद्र व्यक्ति के रूप में सब जानते हैं l स्वाधीनता के बाद भारत में विभिन्न वर्ग -जाति के इतर और एक वर्ग का जन्म हुआ जिसे लेखक मनोज दास देश -प्रेमी वर्ग के रूप में अभिहित किए हैं l यहाँ लेखक यह दर्शाने के प्रयास कर रहे हैं कि देश प्रेम एक सार्वजनिक विषय है, सत्ता और राजनीति के कारण यह केवल एक विशिष्ट वर्ग के अधिकार के रूप में देखा गया जो लोग संभ्रांत वर्ग के थे वही लोग राजनीति को अपने अधिकार में लेते हैं l उनकी आर्थिक और सामाजिक स्थिति में सुधार देखने को मिला जब पदोन्नति हुई। महाराणा बाबू भी राजनीति में अपने देशप्रेमी होने का लाभ उठाए l उन्हें भी मंत्री मण्डल में स्थान देने के लिए अनेक प्रयास हुए l गाँव में मंत्रिमंडल से वीरबाबू आए ,प्राथमिक विद्यालय में उनका संभाषण हुआ इससे गाँव के लोगों में यह आशा जागी कि रास्ते पक्के होंगे ,हाईस्कूल खोले जायेंगे कितने सपने पूरे–होते नज़र आये किन्तु महाराणा बाबू को तो सच्चाई मालूम है उनके मन में हो रहे उथल -पुथल को लेखक यहाँ दर्शाते है, राजनेताओं को भी सच्चाई मालूम होती है किन्तु वे भी उनके ऊपर रहे मंत्री से विवश हैं l वीरबाबू जब गाँव में सरकार और अपना प्रचार -प्रसार करने आए हैं तो इसीसे यह जरूर पता चला है कि महाराणा बाबू इससे अपनी उन्नति की आस लगाए बैठे हैं l अचानक यह पता चलता है कि मंत्री जी की टोपी चोरी हो गई l भले ही यह एक साधारण टोपी है, किन्तु पूरे गांव और महाराणा बाबू के लिए किसी अमूल्य वस्तु से कम नहीं है l गाँव की उन्नति इसी टोपी के मिलने पर निर्भर है, समय चाहे जो भी हो ,किसी नेता को कष्ट नहीं होना चाहिए l टोपी महाराणा बाबू के बंदर ने ले लिया था,अंत में मंत्री जी रूठ कर चले जाते हैं और वहीं महाराणा बाबू के उन्नति पर प्रश्न चिह्न लग जाता है l यह कहानी आज भी उतना ही प्रासंगिक हैं जितना उस समय था l समय भले ही परवर्तन हो गया हो किन्तु परिस्थिति नहीं बदली ,वर्तमान भी देश की राजनैतिक व्यवस्था वैसे ही चल रही है जैसा कि तब चल रही थी ,इसलिए इस कहानी का महत्व वर्तमान समय में और भी बढ़ जाता है l

'बिलेइ': बिलेइ (हिंदी में बिल्ली) एक साधारण सी कहानी है किन्तु उसमें निहित लेखक के द्वारा दिए गए सन्देश में जो गंभीरता है ,तथा व्यंग्य का जो मनोवैज्ञानिक पहलू है,वह अनोखा है l कहानी का मुख्य पात्र बहुत दिनों के वाद अपने गाव वापस आया है l एक ओड़िआ व्यक्ति जहाँ भी रहे उसे चूल्हे में पके हुए भात यानि चावल और सुखी मछली के प्रति जो प्रेम है,उसको लेखक ने दिखाया है l वह अपनी माँ की प्रिय बिल्ली को गाँव के बाहर दूर खदेड़ देता है ,वहीँ उसी दृश्य अपनी माँ की मृत्यु के पश्चात उसके मानसिक अशांति का कारण बनता है l यह कहानी सबसे पहले एक माता और पुत्र का आपसी प्रेम लग सकता है ,किन्तु वास्तव में अपनी नौकरी के दौरान जिस प्रकार वह छुप-छुप कर रिश्वतखोरी का काम करता है,उसे बिल्ली के माध्यम से दिखाया गया है ,जैसे 'बिल्ली' खाना चुपके से खा जाती है,वैसे ही लोगों की आखों से बच कर रिश्वत लिया जाता है l मनोज दास ने कहानी के मुख्य पात्र के चरित्र को बिल्ली के प्रतीकात्मक रूप में दर्शाया है l मनोज दास की यह कहानी में कथन की जो शैली है वह अन्यत्र दुर्लभ है l इसीलिए उनकी कहानियों का अनुवाद अन्य भारतीय भाषाओँ में भी होना चाहिए l

'कूअ' : (हिंदी अनुवाद 'कुआं') l यह कहानी संपूर्णतः एक मनौवेज्ञानिक कहानी है l सदानंद बाबू जो अपनी सेवानिवृत्ति के पश्चात बेटे और बहू के साथ एक खुशहाल जीवन की कल्पना कर रहे थे l वे आजीवन अकेले रहने के कारण उनमें प्रत्येक घटना के लिए सतर्कता बरतना आदत बन गयी थी किन्तु यह शायद उनके सेवानिवृत्त होने के बाद उनमें आये एकाकीपन के कारण हुआ था,जिसे अंग्रेजी में हम **'लॉनिलीनेस्स'** कहते हैं l यह एकाकीपन हर उम्रदराज व्यक्ति में देखने को मिलता है l सदानन्द बाबू जो एक पुराने घर को खरीद लेते हैं, उनके घर के पास

एक कुआं होता है l उनके मित्र के द्वारा यह संकेत किया जाता है कि वह उनके लिए विपत्ति का कारण वन सकता है l शायद लेखक मनोज दास यहाँ यह संकेत कर देते हैं कि सदानंद बाबू की आत्महत्या का प्रयास वे पहेले से अंदाजा लगा लिए थे l सदानन्द बाबू का रात को बार -बार कुँए के पास जाना उससे बचने के लिए दीवार का निर्माण करना यह दर्शाता है कि वे अपने आप को बचाने का प्रयास तो निश्चित रूप में कर रहे थे l अपने पुत्र के द्वारा उसी कुँए को पत्थरों से भर देने के प्रयास से वह रात में उसी कुँए में अपनी जान दे देते हैं l यह न केवल एक वृद्ध व्यक्ति की कहानी है बल्कि पिता पुत्र के संबंध में आये दूरी को भी दर्शता है l जिसे वर्त्तमान FOMO (FEAR OF MISSING OUT) हम कहते हैं l संकेत यह है कि व्यक्ति के अपने आप को अगेल पीढ़ी से साथ जोड़ नहीं पाना l हुबहू इसी प्रकार की घटना हमें निर्मल वर्मा की कहानी **सुबह की सैर** में दिखाई देती है l कहने का तात्पर्य यह है कि हिंदी साहित्य के पाठक वर्ग तो निर्मल वर्मा के कहानी से परिचित हैं किन्तु मनोज दास के कहानी से उनका परिचय करना अनुवाद द्वारा ही संभव हो सकता है l

इस प्रकार के विषय को आधार बनाकर कई सारी कहानियों का सृजन किया गया है जो वर्त्तमान एक गंम्भीर सामाजिक विषय है l व्यक्ति से ही समाज बनता है किन्तु अंत में व्यक्ति उसी समाज से दूर हो जाता है l कभी मनुष्य का अपनी संतानें जीवन की सबसे अनमोल वस्तु होती हैं लेकिन वृद्धावस्था में वे उनसे दूर हो जाते हैं l मनोज दास इसी समस्या को कई वर्ष पहले सामने लाने की प्रयास किये है जो वर्तमान में यह और भी गंभीर विषय बन गया है l यह कहानी तब लिखी गयी थी जब टेक्नोलॉजी और स्मार्ट फोन का प्रयोग मनोरंजन के लिए नहीं किये जाते थे l इनके बढ़ते प्रचलन के कारण दो पीढ़ियों के बीच का अंतर और भी बढ़ता जा रहा है l इसलिए यह कहना गलत नहीं होगा कि मनोज दास एक ऐसे दूरदर्शी कहानीकार है जो अपने समय से कई गुण आगे की परिस्थिति को ध्यान में रख कहानियों के माध्यम पाठक को दिशा प्रदान किये है l

‘लुलुर्भा पर्वत र एक द्विपहर’

यह कहानी ओड़िशा में कहानी कथन की शैली के ऊपर आधारित है l मनोज दास केवल एक कहानीकार नहीं थे बल्कि वे एक उत्कृष्ट वाचक भी थे,क्यूंकि जो अच्छी कहानी निर्माण करने की क्षमता रखता हो तो उनकी कल्पना करने की शक्ति भी उतना हीं सृजनात्मक होती है l किसी भी विधा का सृजन करने के लिए मौलिक चिंतन की आवश्यकता निश्चित है l इस कहानी में कहानीकार ने शैलीगत के साथ चमत्कार ,पौराणिकता शैली तथा राजा एवं राजकुमारी जैसे चारित्रिक विशेष को कहानी का माध्यम बनाया है,उसको दर्शाया गया है l उनकी इस प्रकार कहानी कथन (स्टोरी टेल्लिंग) के लिए उनको ओड़िआ भाषा की विष्णुशर्मा भी कहा गया है l

इस कहानी में कुछ पुरातत्वविक अधिकारी पहाड़ के संधान दो पहर के समय में पहुंचते हैं l उन्हें यह देख कर आश्चर्य होता कि पहाड़ को जहाँ होना चाहिए था वहां न होकर आधा मिल दूरी पर है l यह तो हमारी भारत की संस्कृति का हिस्सा है कि प्रत्येक जगह के साथ कुछ किस्सा अवश्य जरुर जोड़ दिया जाता है ,और वह वहां की लोक-संस्कृति का एक हिस्सा बन जाता है l कहानी में मुख्य पात्र डमरू नामक व्यक्ति अपने प्रलोभन के कारण पर्वत को उठा सकने की ताकत का स्वयं शिकार होकर उसी पहाड़ के नीचें दब जाता है,उस घटना चित्रण किया गया है l हमारी परम्परा में अत्यधिक लोभ करने का कूफल स्वयं व्यक्ति को भोगना पड़ता है l प्राचीन कहानियों को मनोज दास रूपकात्मक एवं उपदेशात्मक रूप में प्रस्तुत करते हैं l प्रस्तुत कहानी में भी एक व्यक्ति विशेष की चरित्र को उस स्वरूप में उन्होंने प्रस्तुत किया है l उसमें व्यक्ति की सामाजिक मानसिकता को प्रदर्शन करने की प्रयास है l यहाँ पर कहानीकार का सामाजिक संस्करात्मक दृष्टिकोण नजर आता है l कहानी में उनकी फंतासी ,अवास्तविक

तथा कल्पनाशीलता प्रदर्शन हुई हैं l एसा लगता है कि कहानीकार मानवीय संस्कार तथा उसके आचरण में आत्मिक परिवर्तन की वार्ता देना यहाँ आवश्यक समझते है l

'शेष वसंत र चिठि' :

यह मनोज दास की सबसे प्रसिद्ध कहानियों में से एक है l ओड़िआ साहित्य के प्रत्येक पाठक इस कहानी से परिचित है l जिस प्रकार प्रेमचंद का हामिद (ईदगाह) हिन्दी पाठकों के बीच एक बाल चरित्र के रूप में परिचत है ,उसी प्रकार मनोज दास की इस कहानी में छोटी सी बालिका(रीना) अपनी माँ की इंतजार कर रही है ,उसके बाल सुलभ प्रयासों को एवं डाकिये की राह देखने का जो भावभीनी चित्रण लेखक ने किया है वह पाठक को संवेदनशील होने में मजबूर कर देती है l जिस प्रकार हामिद के अपने माता- पिता की राह ताकना, उसके अपनी उम्र से अधिक समझदारी की बात करना और अपने से ज्यादा अपने बूढ़ी दादी के बारे में सोचना पाठक को झकझोर कर देता है ,उसी प्रकार अपने माता की मृत्यु से अनजान बालिका रीना भी डाकिए से माँ की चिट्ठी के लिए दिन-रात राह देखती है l रीना की इस अथक प्रयास को देख पड़ोस में रह सज्जन बिचलित हो उठते हैं l माँ की मृत्यु के पश्चात एक छोटी सी बच्ची पर क्या प्रभाव पड़ती है, उसका मनोवैज्ञानिक चित्रण इस कहानी में किया गया है l इस कहानी के शीर्षक को अगर हम हिंदी में अनुवाद करें तो उसका रूपांतरण **'वसंत की आखरी चिट्ठी'** होगा l इस प्रकार की एक सुन्दर बाल मनोवैज्ञानिक कहानी ओड़िआ पाठकों में सीमित हो कर रह गया है l इस कहानी को दूरदर्शन द्वारा (DD ODIA) में धारावाहिक रूप में प्रसारण भी किया गया था l इस कहानी को पाठक पढ़ने के बाद ही इसकी मार्मिकता और मनोज दास की शैली से परिचित हो सकते हैं l कहानी में बाल्यावस्ता जीवन को केवल एक स्तर तक नहीं बल्कि जीवन की एक दिशा होती है l बाल मनोविज्ञान को लेखक ने आधार बनाया है l इस कहानी की कई जगह समीक्षा किया गया है l इस कहानी के बारे में चंद्रशेखर रथ लिखते है कि " The child represents the character,the attitude the style,the philosophy and the truth of entire world of which Manoj Das speaks in these stories" (Rath Chadra Sekhar ,1989)

भाषा शैली :

किसी भी कहानीकार की कहानियों के संन्दर्भ में जब बात की जाती तब सबसे पहले उसकी भाषा संरचना पर हमारा ध्यान जाता है l क्योंकि कहानियों के आकार जितने छोटे होते हैं, उसका प्रभाव भी उतना ही गंभीर होता है l मनोज दास की कहानियों के सन्दर्भ में उपयुक्त कथन सही बैठता है l क्यूंकि उनकी कहानियों का आकार छोटी हो कर भी प्रभावोत्पादक है l यह कहानीकार का विचार भी है कि **"minimum material maximum effect"**[9] इस तत्व को वे अपनी सभी कहानियों के लिए वे उचित मानते थे l मनोज दास के पाठक वर्ग बौद्धिक और चिन्तनशील है l मनोज दास के पास कहानी- कथन की वह शैली थी, जो कि एक प्राचीन ढंग की कहानियों को भी नवीन शैली में प्रस्तुत कर देती है l यह केवल उनकी भाषा को रोचक प्रयोग के द्वारा संभव हो पाता था l वे किसी भी कहानी को इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं कि पाठक एक अन्य परिप्रेक्ष्य से उस कहानी को विचार करने में मजबूर हो जाता है l उसके दृष्टिकोण की विभिन्न दिशाएँ खोल जाती हैं और पाठक स्वयं एक विचारक के रूप में प्रस्तुत हो जाता है l मनोज दास की कहानियाँ आवेगपूर्ण तथा बोद्धिकता के चरम शीर्ष को स्पर्श करती हैं l ओड़िआ साहित्य में सुरेन्द्र महांती ,गोपीनाथ महांती ,वामाचरण मिश्र ,किशोरी चरण दास ,शांतनु कुमार आचार्य आदि की कहानियों में भी ऐसी विशेषता पाई जाती है l

सृजन की प्रेरणा :

मनोज दास को बाल्यकाल से अपनी माता और बड़ी बहन से पढने का अभ्यास विरासत के रूप में मिला है l उनसे मनोज दास की अध्ययन रूचि विकसित हुई है,और लेखन कार्य भी उनका प्रभाव पड़ा था l कालांतर में साहित्य जगत में मनोज दास का कहानीकार विकसित हुआ l उनकी कहानियों में अनुभूति और कल्पना दोनों समाहित हैं l उन्होंने स्वयं भी यह स्वीकार किया है कि कल्पना और अनुभूति दोनों ही अपरिहार्य हैं, किन्तु उनसे भी बढ़कर है प्रेरणा l प्रेरणा ही ऐसी वस्तु है जो कि रचना का रूप धारण कर लेती है, और सृजन के समय अनुभूति और कल्पना को अपना उपादान के रूप में ग्रहण करती है l प्रेरणा के बिना केवल अनुभूति और कल्पना से गंभीर साहित्य की सृजन करना संभव नहीं है l

मनोज दास अरविंद दर्शन के अनुयायी थे इसलिए उनकी कहानियों के मूल आधार भी यही है l उन्होंने यह भी कहा है कि "सभी प्रेरणाओ का उत्स ही उर्द्ध चेतना है" (दास मनोज, अप्रैल 12 ,1987)

प्रेरणा ही सृजन क्रिया को सार्थक बनाती है l इसलिए मनोज दास ने कभी कहानियों के परिमाण पर जोर नहीं दिया बल्कि उनकी गुणात्मकता को आधार बनाया, जिससे सृजन में वो स्वभाविकत आजाए l जिसकी कलात्मक और भावात्मक दोनों तत्व साहित्य को और भी सुदृढ़ बनाते हैं l वे खुद यह कहते हैं कि "it is a gathering experience in a symbolic manner.it is intuition and imaginativeness on which the writer banks "(Das manoj ,june 1988)

कहानियों में अनुभूति ही सार्थक है,उसे ही प्रतीकात्मक रूप प्रदान किया जाता है जो कि कल्पना से मिलकर भी स्वाभाविक होती है l विलियम वर्ड्सवर्थ का कहना था कि कविता भावनाओं की स्वतः प्रवाह है l गद्ध विधाओं के लिए भी कहा जा सकता है l

चारित्रिक वैशिष्ट्य :

मनोज दास ने अपने कहानियों के चरित्रों को हमेशां साधारण वर्ग से चयन किया है l उनके चरित्र सामाजिक जीवन से सरोकार रखने वाले होते हैं l समाज में रहते हुए एक व्यक्ति किस प्रकार उससे स्वतंत्र है उसको उन्होंने अपनी कहानियों में दर्शाया है l उनके प्रत्येक चरित्र अपने -अपने मानसिक उहापोह में दिखाई देते हैं l मनोज दास किसी एक ही सीमा के अन्दर उनके सारे चरित्रों को सीमित करके किये हैं रखे हो l समाज के प्रत्येक हिस्से से उनकी कलम की रेखा समृद्ध हुई है l बृद्ध से लेकर बाल सुलभ चेष्टाओं तक उनकी कहानियों में हम देख सकते हैं l उनकी कहानियाँ कभी आधुनिक हैं तो कभी प्राचीन किन्तु प्रत्येक कहानी उनका एक नया प्रयोग जान पड़ता है lउन्होंने पुराण ,कल्पना ,राजनीति ,अलौकिकता,आध्यात्मिक आदि सभी विषय से संबधित कहानियाँ लिखी है,किन्तु जिस शैली से वे अपने चरित्रों को गठन पर हमेंशा नवीनता लाने का प्रयास करते हैं, वह अन्य कथाकारों में हमें मिलना दुर्लभ है l

निष्कर्ष

उपयुक्त पांच कहानियाँ एक दूसरें से भिन्न कथानक ,भिन्न शैली और वातावरण पर आधारित है l यह उनका अप्रतिम प्रतिभासंपन्न होने का प्रमाण है l इनमें से पहली कहानी 'अपहृत टोपी र रहस्य' एक राजनैतिक व्यंग्यपूर्ण कहानी है l'बिलेइ' कहानी नौकरीपेशा जीवन में रिश्वतखोरी का एक प्रतीकात्मक कहानी है l 'कूअ' कहानी में वृद्ध- जीवन की एकाकीपन और मानसिक पीड़ा को दर्शाया गया है l 'लुलुर्भा पर्वत र एक द्विपहर' ओड़िआ भाषा एवं उसके कहानी- कथन की विशिष्ट शैली का एक अप्रतिम उदाहरण है l 'शेष वसंत र चिठि' एक बाल मनोविज्ञान की कहानी है l

मनोज दास की कहानियाँ कभी पाठक वर्ग को कठिन प्रतीत नहीं हुई,क्यूंकि जो भी कथावस्तु उन्होंने अपनी कहानियों के लिए चयन किया है,वह हमारें आस- पास से लिया गया से है l साधारण को असाधारण रूप में प्रस्तुत करना मनोज दास की कलात्मक है l

कोई भी कहानी छोटी नहीं होती वह कम शब्दों में अधिक कह जाती है l मनोज दास की कहानी कहीं आध्यात्मिक चेतना को उजागर करती है तो कहीं हमारे चेतना को अतिमानस चेतना के साथ जोड़ने का प्रयास करती है l वह कभी नीतिशास्त्र की एक नितिवाणी के सदृश्य जीवन की एक सीख भी दे जाती है l उनकी कहानी को समझने के लिए कथाकार की परिस्थिति को भी समझना अत्यतं आवश्यक है, क्यूंकि जिस परिस्थिति और विषय को आधार बनाकर कहानी की रचना की गयी होगी,उसकी उद्देश्य भी उसी के आधार पर तय है l

मनोज दास के कई चरित्र विदेश की पृष्टभूमि पर भी चित्रित है ,किन्तु अधिकतर् उनकी कहानियाँ में ओड़िशा को और उसके परिवेश को प्रस्तुत किया गया है l इसलिए यह कहना कदाचित गलत नहीं होगा कि ओड़िशा की संस्कृति तथा उसकी परंपरा को समझने के लिए मनोज दास की कहानियों का अध्ययन करना एक उत्कृष्ट माध्यम है l

उनकी प्रत्येक कहानी अपने आप में मौलिक है l यह प्रतीत नहीं होता कि एक ही लेखक के द्वारा यह लिखी गयी है l मनोज दास की कहानियों की शैली को अनुवाद करना कठिन है l यह उनकी कहानीकार रूप की गरिमा है l प्रतिभा संपन्न साहित्यकार अपने क्षेत्र -विशेष के से ऊपर उठकर आज साहित्य के मुख्य धारा में सम्मिलित हैं l उनके साहित्य को भारतीय साहित्य से जोड़ने का काम अनुवाद और तुलनात्मक अध्ययन द्वारा संभव हो सकता है l

सन्दर्भ सूची :

1. Pound, Ezra. *ABC of Reading*. New Haven: Yale University Press, 1934, p. 88.
2. दास, मनोज. *मनोज दास कं कथा ओ काहाणी*. फ्रेंड्स पब्लिशर्स, 2023, पृ. 1–12, 60–69, 214–222, 331–336.
3. पांडव, डॉ. शत्रुघ्न. *कथा शिल्पी मनोज दास*. फ्रेंड्स पब्लिकेशन, 2019, पृ. 4, 61, 63, 98, 191.
4. मेहेर, डॉ. मणिन्द्र कुमार. *मनस्वी मनोज*. फ्रेंड्स पब्लिशर्स, 2022, पृ. 6, 36, 42.
5. Ramakrishna, E. V., Harish Trivedi, and Chandra Mohan (eds.). *Interdisciplinary Alternatives in Comparative Literature*. 2023.
6. Arnold, Matthew. *Culture and Anarchy: An Essay in Political and Social Criticism*. London: Smith, Elder & Co., 1889.
7. चौधुरी, इंद्रनाथ. *तुलनात्मक अध्ययन: भारतीय परिदृश्य*. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2020, पृ. 9, 15.
8. पांडव, डॉ.शत्रुघ्न ,कथा शिल्पी मनोज दास , फ्रेंड्स पब्लिशर्स ,2019,पृष्ट 64

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 146-153
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

अमीर खुसरो के साहित्य में सूफी दर्शन और सांस्कृतिक चेतना

डॉ. शीनुल इस्लाम मलिक
असिस्टेंट प्रोफेसर,
हिंदी विभाग, गाँधी फ़ैज़-ए-आम कॉलेज, शाहजहांपुर

शोध-सार

मध्यकालीन भारत की सांस्कृतिक संरचना को केवल राजनीतिक सत्ता, राजवंशों और धार्मिक संस्थाओं के इतिहास के रूप में दृष्टिगत करना उसके जीवंत सामाजिक-सांस्कृतिक अनुभव को संकुचित कर देने के समान है। तत्कालीन समय के इतिहास में असंख्य व्यक्तित्व ऐसे भी हुए जिन्होंने अपने गुण धर्म और विशेषताओं के बल पर सम्पूर्ण भारतभूमि को एक नई पहचान दी। ऐसे ही हस्ताक्षर हैं अमीर खुसरो। खुसरो (1253–1325 ई.) विविधतामयी संस्कृतियों से आच्छादित इस संसार के ऐसे रचनाकार हैं जिनके साहित्य में फ़ारसी दरबारी साहित्य, चिश्ती सूफी आध्यात्मिकता, हिंदवी/स्थानीय भाषिक व्यवहार, संगीत और लोक-संवेदना एक-दूसरे से संवाद करते दिखाई देते हैं। उनके साहित्य में व्यक्त सूफी संवेदना—विशेषतः इश्क़, आत्म-विलोपन, आध्यात्मिक समर्पण, गुरु-भक्ति और समा—की मधुरिम अनुभूतियां निहित हैं। उनके अनुभव सांस्कृतिक चेतना में किस प्रकार रूपांतरित होते हैं यह दर्शनीय है। उनका साहित्य उनके बहुमुखी व्यक्तित्व के समान ही विविध रंगों से सुसज्जित है।'नुह सिपिहर' के भारत-बोध, भाषिक बहुलता तथा हिंदवी लोक-रचनाओं से खुसरो का संबद्ध उनके वैशिष्ट्य का परिचायक है। उनका कृतित्व लोकप्रिय स्मृति और ऐतिहासिक प्रमाण के बीच अंतर बनाए रखते हुए 'ख़ालिक़बारी', सितार-तबला तथा कुछ संगीत-विधाओं के आविष्कार संबंधी अभिव्यंजनाओं से भी समन्वित है। अतः प्रस्तुत चिंतन का केंद्रीय आधार खुसरो की ऐतिहासिक महत्ता किसी एक विधा या आविष्कार के निर्विवाद दावे में नहीं, बल्कि उन सांस्कृतिक संपर्क-स्थलों को सृजनात्मक रूप देने में निहित है जहाँ आध्यात्मिक अनुभूति, सूफी चिंतन, भाषा, कविता, संगीत और लोकजीवन के माध्यम से अभिकल्पित अभिव्यंजनायें रूप ग्रहण करती हैं।

बीज शब्द : अमीर खुसरो; सूफी दर्शन; चिश्ती परंपरा; हिंदवी; फ़ारसी; समा; क़व्वाली; सांस्कृतिक चेतना; नुह सिपिहर; बहुभाषिकता।

1. प्रस्तावना

भारतीय मध्यकाल का सांस्कृतिक परिदृश्य अनेक धाराओं के सह-अस्तित्व, संपर्क और पुनर्संयोजन से मण्डित है। इसे मात्र 'सम्प्रदायगत परम्पराओं के रूप में विभक्त कर देखना तत्कालीन वैशिष्ट्य और उसके सौन्दर्य को गौरवहीन करने के जैसा होगा; जबकि यदि उस समय के वैविध्य की ओर दृष्टिपात करें तो साहित्य संस्कृति सभी कुछ दरबार, ख़ानक़ाह, बाज़ार, लोक, भाषाएँ, संगीत और धार्मिक अनुभव सब एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं। सूफी और भक्ति परंपराओं का महत्त्व इसी संदर्भ में उभरता है। इन परंपराओं ने आध्यात्मिकता को केवल शास्त्रीय या संस्थागत विमर्श न रहने देकर प्रेम, करुणा, लोकभाषा और सामुदायिक सहभागिता के माध्यम से व्यापक समाज से जोड़ा।

राजेन्द्र यादव के अनुसार सूफीमत को आध्यात्मिक, नैतिक, सामाजिक और मानवीय जीवन-दृष्टि से संबद्ध ऐसी परंपरा के रूप में रेखांकित किया गया है जिसने संकीर्ण सम्प्रदायगत सीमाओं से परे मनुष्य और परमात्मा के संबंध को प्रेम तथा साधना के धरातल पर देखने की प्रवृत्ति विकसित की है (यादव, 2015, p. 11)। इसको मध्यकालीन भारतीय संदर्भ में रख कर देखें तो सत्य ही; सूफी परंपरा कोई सरल 'धर्म-संमिश्रण' नहीं थी; वह इस्लामी आध्यात्मिक परंपरा के भीतर विकसित विविध साधना-पद्धतियों का व्यापक संसार थी, जो भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश में नए रूपों से जुड़ी।

इसी बहुस्तरीय सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में अमीर खुसरो का व्यक्तित्व विशेष महत्त्व ग्रहण करता है। वे कवि हृदय के रूप में फ़ारसी साहित्य के प्रणेता, दरबारी साहित्यकार, सूफी-संवेदना से जुड़े रचनाकार और भारतीय भाषिक-सांगीतिक संसार के सूक्ष्म पर्यवेक्षक थे। अतः उन्हें केवल 'कवि' या 'संगीतज्ञ' कह देना उनके रचनात्मक व्यक्तित्व की बहुस्तरीयता को सीमित करने के समान है। उनकी काव्य-दृष्टि में प्रेम व्यक्तिगत अनुभूति नहीं, वरन् आत्म की सीमाओं को शिथिल करने वाला आध्यात्मिक अनुभव बनके उभरा; उनकी भाषा संप्रेषण से कहीं अधिक सांस्कृतिक संपर्क का माध्यम थी; और संगीत मनोरंजन से परे सामूहिक आध्यात्मिक अनुभूति की अभिव्यंजनात्मक सुन्दरता का प्रमाण था।

अस्तु अमीर खुसरो ने क्या लिखा या किस संगीत-परंपरा से जुड़े? मूल प्रश्न यह नहीं, बल्कि यह है कि, उनकी रचनात्मकता ने सूफी आध्यात्मिक अनुभव को किस प्रकार भाषिक, काव्यात्मक और सांस्कृतिक रूप दिया। इसी प्रश्न से आगे बढ़ते हुए यह चिंतन लोकप्रिय दावों की पुनरावृत्ति करने के बजाय प्रमाण, पाठ-परंपरा और सांस्कृतिक स्मृति के बीच एक आलोचनात्मक संवाद है।

2. अध्ययन के उद्देश्य

• अमीर खुसरो के साहित्य में व्यक्त सूफी संवेदना के प्रमुख आयामों—इश्क़, फ़ना, समर्पण, गुरु-भक्ति और समा—का विवेचन करना।

• खुसरो की बहुभाषिकता तथा फ़ारसी और हिंदवी/स्थानीय भाषिक संसार के अंतर्संबंध को सांस्कृतिक चेतना के संदर्भ में समझना।

• चिश्ती परंपरा, निज़ामुद्दीन औलिया और समा-क़व्वाली की भूमिका को खुसरो की साहित्यिक संवेदना से जोड़कर देखना।

3. अध्ययन की पद्धति

यह अध्ययन गुणात्मक और व्याख्यात्मक है। प्राथमिक सामग्री के रूप में खुसरो से संबद्ध फ़ारसी कृतियों, 'नुह सिपिहर', चिश्ती मालफ़ूज़ात की परंपरा तथा लोकप्रिय रूप से प्रचलित हिंदवी पदों को संदर्भित किया गया है। द्वितीयक

सामग्री में विभिन्न अध्येताओं के कार्यों को आधार बनाया गया है। भारतीय शैक्षिक संदर्भ के लिए NCERT की 'भक्ति–सूफ़ी परंपराएँ' सामग्री का भी उपयोग किया गया है।

4. सूफीमत, भारतीय संदर्भ और चिश्ती परंपरा

'सूफी' और 'तसव्वुफ' की अवधारणाएँ मध्यकालीन इस्लामी आध्यात्मिक संसार में आत्मशोधन, ईश्वर-सान्निध्य, प्रेम और साधना से संबंधित हैं। राजेन्द्र यादव के अनुसार सूफीमत की भारतीय उपस्थिति को केवल धार्मिक मत के रूप में नहीं, बल्कि उसके सामाजिक और मानवीय प्रभावों के संदर्भ में भी देखना चाहिए (यादव, 2015, pp. 11–14)। रामधारी सिंह दिनकर ने भी भारतीय सांस्कृतिक इतिहास में इस्लाम और भारतीय परंपराओं के संपर्क को एक महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक प्रक्रिया के रूप में देखा है (दिनकर, 2010)।

भारतीय उपमहाद्वीप में विभिन्न सूफी मतों का प्रसार हुआ, परंतु चिश्ती परंपरा का सामाजिक प्रभाव विशेष रूप से व्यापक रहा। NCERT के अनुसार चिश्ती ख़ानक़ाहें विभिन्न सामाजिक पृष्ठभूमियों के लोगों के संपर्क का स्थल थीं और वहाँ स्थानीय परंपराओं, भाषाओं तथा संगीत के साथ संवाद की प्रक्रियाएँ दिखाई देती हैं। निज़ामुद्दीन औलिया की ख़ानक़ाह इस संदर्भ में विशेष महत्त्व रखती है, जहाँ आध्यात्मिक अनुशासन के साथ लोकसमाज से संपर्क भी साधा गया विद्वान लेखक यादव के अनुसार चिश्ती परंपरा की सामाजिक स्वीकृति को उसके प्रेम, सेवा, संगीतात्मक मजलिसों और व्यापक जन-संपर्क के साथ जोड़ा गया (यादव, 2015, pp. 30–31)।

5. अमीर खुसरो : जीवन, समय और साहित्यिक व्यक्तित्व

अबुल हसन यमीनुद्दीन अमीर खुसरो का जन्म 1253 ई. में पटियाली में हुआ और 1325 ई. में उनका निधन हुआ। वे दिल्ली सल्तनत के अनेक शासकों के समय सक्रिय रहे और फ़ारसी दरबारी साहित्य में प्रतिष्ठित हुए। सुनील शर्मा जी के अनुसार खुसरो को केवल दरबारी कवि के रूप में देखना अपर्याप्त है; उनका व्यक्तित्व कवि, दरबारी, संगीत-संस्कृति से जुड़े कलाकार और सूफी परंपरा के निकट रचनाकार के रूप में बहुआयामी है।

खुसरो की रचनात्मकता उस समय विकसित हुई जब दिल्ली एक गतिशील राजनीतिक और सांस्कृतिक केंद्र थी। राजाश्रय ने उनके व्यक्तित्व को फ़ारसी साहित्यिक संसार से समन्वित किया, तो निज़ामुद्दीन औलिया से उनका संबंध उन्हें ख़ानक़ाही आध्यात्मिकता के संसार की ओर प्रवृत्त करने में सक्षम हुआ। इन दोनों वृत्तों को परस्पर विरोधी मानना उचित नहीं; बल्कि इनके बीच की आवाजाही ही उनके व्यक्तित्व की ऐतिहासिक क्लिष्टता परन्तु भावमयता की बोधक बनी।

उनकी प्रमुख फ़ारसी कृतियों में 'क़िरानुस्सादैन', 'मिफ़्ताहुल फ़ुतूह', 'ख़ज़ाइनुल फ़ुतूह', 'नुह सिपिहर' और 'तुग़लक़नामा' उल्लेखनीय हैं। 'ख़म्सा' की रचनात्मक संरचना पर फ़ारसी काव्य-परंपरा का प्रभाव है, किंतु खुसरो की विशिष्टता इस परंपरा को भारतीय अनुभवों और स्थानीय सांस्कृतिक संकेतों से जोड़ने में दिखाई देती है।

उल्लेखनीय यह है कि, उनकी लोकप्रिय पहचान का एक बड़ा हिस्सा बाद की मौखिक और प्रदर्शनकारी परंपराओं से निर्मित हुआ है। इसलिए 'अमीर खुसरो की रचनाएँ' कहे जाने वाले प्रत्येक पद, दोहे, पहेली, मुकरी या गीत पृथक-पृथक सौन्दर्य की अभिव्यंजनात्मक अनुभूतियां हैं; जिनसे लोकप्रिय स्मृति का सांस्कृतिक महत्त्व जीवंत होता है, किंतु उसका ऐतिहासिक प्रमाण-मूल्य अलग प्रश्न है।

6. निज़ामुद्दीन औलिया और खुसरो : गुरु-शिष्य संबंध का आध्यात्मिक अर्थ

अमीर खुसरो और निज़ामुद्दीन औलिया का संबंध खुसरो की सांस्कृतिक चेतना की व्याख्या में केंद्रीय स्थान रखता है। K. A. Nizami ने निज़ामुद्दीन औलिया के जीवन और चिश्ती परंपरा को समझने के लिए मालफ़ूज़ात, तज़किरों और अन्य ऐतिहासिक स्रोतों की आलोचनात्मक समीक्षा की है। उनके अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि निज़ामुद्दीन औलिया की आध्यात्मिक प्रतिष्ठा केवल धार्मिक अनुयायियों तक सीमित नहीं थी; उनका प्रभाव सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में भी गहरा था।

सूफी परंपरा में पीर-मुरीद का संबंध आध्यात्मिक अनुशासन, आत्म-परिवर्तन और मार्गदर्शन का प्रतीक है। 'फ़ना' की अवधारणा में साधक के अहं का क्षरण और प्रिय/परम सत्ता के प्रति समर्पण का भाव निहित है। खुसरो के प्रेम-काव्य में प्रिय, सखी, दुल्हन, रंग और मिलन जैसे लौकिक प्रतीक इसी आध्यात्मिक अनुभव के काव्यात्मक रूपांतरण की संभावना से अन्वित हैं।

'फ़वाइद-अल-फ़ुआद' जैसी मालफ़ूज़ात परंपरा निज़ामुद्दीन औलिया की शिक्षाओं को समझने का महत्त्वपूर्ण स्रोत है। Hasan Sijzi द्वारा संकलित इन संवादों का आधुनिक अंग्रेज़ी अनुवाद Bruce B. Lawrence ने किया है; यह स्रोत चिश्ती आध्यात्मिकता के नैतिक और मानवीय आयामों को समझने में उपयोगी है (Sijzi, 1992)।यथा-

"खुसरो रैन सुहाग की, जागी पी के संग;
तन मेरो मन पीउ को, दोउ भए इक रंग।"

7. खुसरो के साहित्य में सूफी दर्शन के प्रमुख आयाम

सूफी काव्य में 'इश्क़' सांसारिक आकर्षण के रूप में अभिव्यक्त न होकर; आत्म को उसके सीमित अहं से बाहर ले जाने वाली अनुभूति के रूप में अभिव्यक्त हुआ है। खुसरो की प्रेम-भाषा में यह अनुभूति कभी प्रियतम के रूपक, कभी गुरु के प्रति समर्पण और कभी रंग में डूब जाने की छवि के माध्यम से सामने आती है। 'प्रेम भटी' में मदिरा का बिंब आध्यात्मिक उन्मेष का रूपक बन जाता है-

"खुसरो दरिया प्रेम का, उलटी वा की धार;
जो उतरा सो डूब गया, जो डूबा सो पार।

इसी तरह-

गोरी सोवे सेज पर, मुख पर डारे केस।
चल खुसरो घर आपने, रैन भई चहुँ देस।।"

'डूबना' और 'पार उतरना' का विरोधाभास सूफी काव्य की उस प्रतीकात्मक संरचना को उद्घाटित करता है जिसमें अहंकार का संरक्षण आध्यात्मिक उपलब्धि में बाधा है। यहाँ फ़ना का अर्थ अस्तित्व का भौतिक विनाश नहीं, बल्कि सीमित 'मैं' की आध्यात्मिक सत्ता का क्षरण है। इस प्रकार प्रेम आत्म-विस्तार का नहीं, आत्म-परिवर्तन का मार्ग बनता है।

खुसरो के साहित्य में गुरु के प्रति समर्पण को सूफी साधना के नैतिक अनुशासन से अलग नहीं। पीर के प्रति प्रेम, आत्मिक आश्रय और स्वयं को 'रंग' में रंग देने की भाषा उस आध्यात्मिक प्रक्रिया का संकेत देती है जिसमें साधक अपने व्यक्तिगत अहं की सीमाओं को ढीला करता है-

“छाप तिलक सब छीनी रे मोसे नैना मिलाइके;
प्रेम भटी का मदवा पिलाइके।
मतवारी कर लीन्ही रे मोसे नैना मिलाइके
गोरी गोरी बईयाँ, हरी हरी चूड़ियाँ
बईयाँ पकड़ धर लीन्ही रे मोसे नैना मिलाइके
बल बल जाऊं मैं तोरे रंग रजवा
अपनी सी रंग दीन्ही रे मोसे नैना मिलाइके”

चिश्ती परंपरा में समा केवल संगीत-सुनने की क्रिया नहीं, बल्कि आध्यात्मिक श्रवण और भावानुभूति का अनुशासित अवसर था। क़ौल क़व्वाली के प्रारंभ या समापन में गाया जाने वाला आध्यात्मिक पद था। इसके बाद फ़ारसी, हिंदवी अथवा मिश्रित भाषिक रचनाएँ प्रस्तुत की जाती थीं।

खुसरो को ‘क़व्वाली का आविष्कारक’ कहना अतिश्योक्ति नहीं; उन्होंने पहले से विद्यमान सूफी समा और भारतीय संगीत-सांस्कृतिक तत्वों के बीच रचनात्मक संबंधों को नया रूप दिया। उनकी क़व्वालियों में सामूहिकता का सांस्कृतिक महत्त्व विद्यमान रहा है। इसीलिए खुसरो से संबद्ध काव्य-संगीत परंपरा सूफी दर्शन के लोकानुभव में रूपांतरण का एक सशक्त माध्यम बनती है।

खुसरो की लोकप्रिय स्मृति में पहेलियाँ, मुकरियाँ और लोकधर्मी पद अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। इनके माध्यम से भाषा गंभीर आध्यात्मिक या दरबारी विमर्श से उतरकर रोज़मर्रा के जीवन, वस्तुओं, ध्वनियों और हास्य के संसार में प्रवेश करती है। पहेली का सौंदर्य उसके उत्तर में जितना है, उतना ही संकेत, ध्वनि और अर्थ के खेल में भी है; यथा-

एक थाल मोती से भरा,
सबके सिर पर औंधा धरा।
चारों ओर वह थाली फिरे,
मोती उससे एक न गिरे।
उत्तर : आकाश और तारे

श्याम बरन की है एक नारी,
माथे ऊपर लागे प्यारी।
जो मानस इस अर्थ को खोले,
कुत्ते की वह बोली बोले।
उत्तर : भौं (भौंह)

उनकी भाषिक दृष्टि उनके सांस्कृतिक व्यक्तित्व की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषताओं में से है। वे फ़ारसी के उच्च साहित्यिक संसार में प्रतिष्ठित थे, किंतु भारतीय भाषिक व्यवहार के प्रति उनकी संवेदनशीलता उनकी रचनात्मकता में दिखाई देती है। ‘ज़िहाल-ए-मिस्कीं’ जैसी मिश्रित भाषिक रचना इस बहुभाषिक संसार की स्मृति को व्यक्त करती है-

“ज़िहाल-ए-मिस्कीं मकुन तग़ाफ़ुल, दुराए नैना बनाए बतियाँ।”

निश्चय ही उनकी भाषा में फ़ारसी और हिंदवी का सम्मिलन केवल शब्दों का मिश्रण नहीं है; वरन् उस सामाजिक संसार का भाषिक रूप है जिसमें दरबारी फ़ारसी और स्थानीय भाषिक व्यवहार एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्पृक्त रहे हैं।

8. 'गंगा-जमुनी तहज़ीब'

अमीर खुसरो को 'गंगा-जमुनी तहज़ीब' का अग्रदूत कहने की परंपरा लोकप्रिय सार्वजनिक स्मृति में अत्यंत प्रभावशाली है। उनके साहित्य में फ़ारसी-इस्लामी और भारतीय भाषिक-सांगीतिक तत्वों की अंतःक्रिया इस तथ्य को आधार प्रदान करती है। खुसरो उन दीर्घकालिक सांस्कृतिक प्रक्रियाओं की प्रारंभिक साहित्यिक अभिव्यक्तियों में से हैं जिनमें भाषाएँ, संगीत, धार्मिक अनुभव और लोक-संस्कृतियाँ परस्पर समन्वय धारण करती हैं। उन्हें आधुनिक 'साझी संस्कृति' का पूर्णतः तैयार सिद्धांतकार बनाना उतना ही सरलीकरण होगा जितना उनके सांस्कृतिक योगदान को केवल दरबारी फ़ारसी तक सीमित कर देना।

9. लोकप्रिय परंपरा और ऐतिहासिक प्रमाण

लोकप्रिय मान्यता	महत्त्वपूर्ण तथ्य	अधिक उपयुक्त निष्कर्ष
'ख़ालिक़बारी' खुसरो की निश्चित कृति है।	लेखकीयता पर पांडुलिपि और आंतरिक प्रमाणों के आधार पर गंभीर विवाद है।	इसे 'खुसरो से संबद्ध' पाठ के रूप में प्रस्तुत करना अधिक सुरक्षित है।
सितार और तबला खुसरो ने आविष्कृत किए।	समकालीन निर्णायक प्रमाण नहीं; वाद्यों का विकास दीर्घकालिक प्रक्रिया है।	खुसरो को संगीत-संस्कृति के विकास/रूपांतरण से जोड़ें, 'आविष्कारक' के रूप में नहीं।
खुसरो आधुनिक 'हिंदू-मुस्लिम एकता' के सिद्धांतकार थे।	यह आधुनिक राजनीतिक श्रेणी है; मध्यकालीन सामाजिक संरचना भिन्न थी।	उनकी बहुभाषिकता और सांस्कृतिक अंतःक्रिया को ऐतिहासिक संदर्भ में पढ़ें।
खुसरो की सभी हिंदवी रचनाएँ प्रमाणित हैं।	कई लोक-पद बाद की मौखिक/मुद्रित परंपरा से जुड़े हैं।	'परंपरागत रूप से संबद्ध' जैसी सावधान भाषा अपनाएँ।

Walter N. Hakala ने 'ख़ालिक़बारी' की लोकप्रियता को खुसरो के नाम से जुड़ी परंपरा के परिणाम के रूप में देखते हैं, किंतु पांडुलिपीय और आंतरिक साक्ष्यों के आधार पर किसी एक मूल लेखक की निश्चित पहचान को समस्या-ग्रस्त मानते हैं।

10. समकालीन प्रासंगिकता :

आज अमीर खुसरो की प्रासंगिकता को केवल दरगाहों में गाई जाने वाली कव्वाली या सांस्कृतिक समारोहों की लोकप्रियता से नहीं मापा जा सकता; उनकी स्थायी प्रासंगिकता उस सांस्कृतिक दृष्टि में है जिसमें भाषा पहचान की

बंद दीवार नहीं, संवाद का माध्यम बनती है; संगीत धार्मिक सीमा नहीं, साझा अनुभव का क्षेत्र है; और प्रेम केवल निजी भाव नहीं, बल्कि मनुष्य के साथ मनुष्य के संबंध की नैतिक भूमि का प्रतीक है।

11. निष्कर्ष

निष्कर्षतः अमीर खुसरो का साहित्य मध्यकालीन भारत की उस रचनात्मक चेतना का साक्ष्य है जिसमें आध्यात्मिक अनुभव और सांस्कृतिक बहुलता परस्पर अर्थ प्रदान करने वाली प्रक्रियाएँ हैं। उनका सूफी प्रेम, आत्म-विसर्जन, गुरु-भक्ति और समा जैसी आध्यात्मिक अवधारणाएँ अमूर्त दार्शनिक सूत्रों के रूप में कविता, रूपक, संगीत, भाषा और सामूहिक अनुभव में रूपांतरित होती हैं।

चिंतन का सबसे महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष यह है कि खुसरो की स्थायी उपलब्धि किसी एक संगीत-विधा के आविष्कार या किसी एक लोकगीत की लेखकीयता में सीमित नहीं की जा सकती। उनका वास्तविक महत्त्व सांस्कृतिक सौन्दर्य को सृजनात्मक ऊर्जा में बदलने की क्षमता में है। फ़ारसी और हिंदवी, दरबार और लोक, आध्यात्मिकता और सौंदर्य, गुरु-भक्ति और मानवीय प्रेम—इन विभिन्न क्षेत्रों के बीच उनकी रचनात्मकता चहुंओर ओर सूफीयत माधुर्य से अनुप्राणित है। उनके साहित्य में विद्यमान सूफीयाना अंदाज हर युग में प्रासंगिक रहेगा।

संदर्भ सूची

1. आलम, एम. (2011). मध्यकाल में हिंदी/हिंदवी: भाषा के विकास और मान्यता के आयाम। आई. आलम और एस. ई. हुसैन (सं.), प्रिमस बुक्स।
2. बच्चन सिंह. (2006). *हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास*। राधाकृष्ण प्रकाशन।
3. दिनकर, रामधारी सिंह. (2010). *संस्कृति के चार अध्याय*। लोकभारती प्रकाशन।
4. काला, डब्ल्यू. एन. (2014). ख़ालिक़बारी में 'ख़ुसरो' की लेखकीयता की समस्या। *इंडियन इकोनॉमिक एंड सोशल हिस्ट्री रिव्यू, 51*(4), 481–496।
5. https://doi.org/10.1177/0019464614550764
6. मिर्ज़ा, एम. डब्ल्यू. (1936). *अमीर खुसरो का जीवन और कृतित्व*। बैप्टिस्ट मिशन प्रेस।
7. मिर्ज़ा, एम. डब्ल्यू. (सं.). (1947). *अमीर खुसरो कृत नुह सिपिहर*। ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
8. निज़ामी, के. ए. (2007). *शेख़ निज़ामुद्दीन औलिया का जीवन और युग*। ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
9. शिमेल, ए. (1975). *इस्लाम के रहस्यवादी आयाम*। यूनिवर्सिटी ऑफ़ नॉर्थ कैरोलिना प्रेस।
10. शोफ़ील्ड, के. बी. (2004). *अमीर खुसरो की संगीत-विरासत और उत्तर भारतीय संगीत का विकास* [पीएच.डी. शोध-प्रबंध, किंग्स कॉलेज लंदन]।
11. शर्मा, एस. (2005). *अमीर खुसरो: सुल्तानों और सूफ़ियों के कवि*। वनवर्ल्ड पब्लिकेशन्स।
12. सिज्ज़ी, ए. एच. (1992). *निज़ामुद्दीन औलिया: हृदय के लिए नैतिक शिक्षाएँ—शेख़ निज़ामुद्दीन औलिया के संवाद* (बी. बी. लॉरेंस, अनु. एवं सं.)। पॉलिस्ट प्रेस।
13. एनसीईआरटी. (2009). *भक्ति–सूफ़ी परंपराएँ: धार्मिक विश्वासों और भक्ति-साहित्य में परिवर्तन*। भारतीय इतिहास के विषय, भाग-II।
14. यादव, राजेन्द्र. (2015). *हिंदी साहित्य: सूफी भक्ति की प्रासंगिकता*। आयुष पब्लिशिंग हाउस।

15. ग़नी, के. (2011). समा की ध्वनि: दक्षिण एशियाई सूफ़ी संगीत में काव्यात्मक बिंबों का प्रयोग। *कम्पेरेटिव इस्लामिक स्टडीज़, 5*(2), 273–296।
16. अन्स्ट, सी. डब्ल्यू. (2004). *शाश्वत उद्यान: दक्षिण एशियाई सूफ़ी केंद्र में रहस्यवाद, इतिहास और राजनीति*। ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

Sheenulislam19@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 154-160
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ग्रामीण क्षेत्रों में ई–कॉमर्स और उद्यमिता का विकासः– अवसर, चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ

डॉ. पूजा यादव
(अतिथि प्राध्यापक),
डॉ. खूबचंद बघेल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय भिलाई–3, दुर्ग, छत्तीसगढ

सारांश

वर्तमान डिजिटल युग में ई–कॉमर्स ने व्यापार और उद्यमिता के स्वरूप को पूरी तरह बदल दिया है। पहले जहाँ ग्रामीण क्षेत्रों के उत्पाद केवल स्थानीय बाजारों तक सीमित थे, वहीं आज इंटरनेट और डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से वे राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाजारों तक पहुँच रहे हैं। ई–कॉमर्स ने ग्रामीण उद्यमियों, किसानों, कारीगरों, महिला स्वयं सहायता समूहों तथा लघु उद्योगों को नए बाजार उपलब्ध कराए हैं। इससे रोजगार के अवसर बढ़े हैं, आय में वृद्धि हुई है तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था को नई गति मिली है। यह शोध–पत्र ग्रामीण क्षेत्रों में ई–कॉमर्स एवं उद्यमिता के विकास, उसकी वर्तमान स्थिति, चुनौतियों, सरकारी प्रयासों तथा भविष्य की संभावनाओं का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द :– ई–कॉमर्स, ग्रामीण उद्यमिता, डिजिटल अर्थव्यवस्था, स्वरोजगार, डिजिटल भुगतान, ऑनलाइन विपणन, ग्रामीण विकास।

➢ परिचय

भारत विश्व की सबसे बड़ी ग्रामीण आबादी वाले देशों में से एक है। ग्रामीण क्षेत्रों की अर्थव्यवस्था लंबे समय तक कृषि एवं पारंपरिक व्यवसायों पर आधारित रही है। डिजिटल तकनीक, इंटरनेट, स्मार्टफोन और ऑनलाइन भुगतान प्रणालियों के विस्तार के कारण ग्रामीण व्यापार में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है।

ई–कॉमर्स ने ग्रामीण उत्पादों जैसे हस्तशिल्प, कृषि उत्पाद, जैविक खाद्य सामग्री, हथकरघा वस्त्र, मसाले, शहद, बाँस उत्पाद और डेयरी उत्पादों को बड़े बाजार तक पहुँचाने का अवसर दिया है। इससे ग्रामीण युवाओं में उद्यमिता की भावना विकसित हुई है और स्वरोजगार के नए अवसर पैदा हुए हैं।

➢ अध्ययन के उद्देश्य

- ग्रामीण क्षेत्रों में ई–कॉमर्स की भूमिका का अध्ययन।
- ग्रामीण उद्यमिता के विकास में डिजिटल तकनीक के योगदान का विश्लेषण।
- ई–कॉमर्स से उत्पन्न रोजगार एवं आय के अवसरों का अध्ययन।
- ग्रामीण ई–कॉमर्स की चुनौतियों का विश्लेषण।
- विकास हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

➢ **अनुसंधान पद्धति**

यह अध्ययन द्वितीयक आँकड़ों पर आधारित है। जानकारी पुस्तकों, शोध–पत्रों, सरकारी रिपोर्टों, पत्र–पत्रिकाओं तथा विश्वसनीय ऑनलाइन स्रोतों से संकलित की गई है।

➢ **ई–कॉमर्स की अवधारणा**

ई–कॉमर्स का अर्थ इंटरनेट के माध्यम से वस्तुओं एवं सेवाओं का क्रय–विक्रय करना है। इसमें ऑनलाइन ऑर्डर, डिजिटल भुगतान, ऑनलाइन विपणन तथा ग्राहक सेवा जैसी प्रक्रियाएँ शामिल होती हैं।

➢ **ई–कॉमर्स के प्रमुख प्रकार**

- B2B (Business to Business)
- B2C (Business to Consumer)
- C2C (Consumer to Consumer)
- C2B (Consumer to Business)

➢ **ग्रामीण क्षेत्रों में ई–कॉमर्स का महत्व**

1. बड़े बाजार तक पहुँच :–

ग्रामीण उत्पाद अब केवल स्थानीय हाट या मंडी तक सीमित नहीं हैं, बल्कि पूरे देश और विदेश तक पहुँच सकते हैं।

2. किसानों को उचित मूल्य :–

ऑनलाइन बिक्री से बिचौलियों की भूमिका कम होती है और उत्पादकों को बेहतर मूल्य प्राप्त होता है।

3. रोजगार के नए अवसर :–

ऑनलाइन विक्रेता, पैकेजिंग, लॉजिस्टिक्स, डिजिटल मार्केटिंग तथा डिलीवरी जैसे क्षेत्रों में रोजगार बढ़ता है।

4. महिला उद्यमिता :–

महिलाएँ घर से ही हस्तशिल्प, खाद्य उत्पाद एवं अन्य वस्तुओं की ऑनलाइन बिक्री कर सकती हैं।

5. स्थानीय उद्योगों का विकास :–

हस्तशिल्प, हथकरघा, कुटीर उद्योग और कृषि–आधारित उद्योगों को नए ग्राहक मिलते हैं।

➢ **ग्रामीण उद्यमिता का विकास**

ग्रामीण उद्यमिता स्थानीय संसाधनों, कौशल और नवाचार पर आधारित व्यवसायों की स्थापना एवं संचालन है।

➢ **प्रमुख क्षेत्र**

जैविक खेती, डेयरी उद्योग, मधुमक्खी पालन, मत्स्य पालन, खाद्य प्रसंस्करण, हस्तशिल्प, हथकरघा उद्योग, ऑनलाइन सेवाएँ , डिजिटल सेवा केंद्र, ग्रामीण् पर्यटन, ई–कॉमर्स और ग्रामीण उद्यमिता का संबंध|

➢ **ई–कॉमर्स ग्रामीण उद्यमिता को निम्न प्रकार से बढ़ावा देता है**

1. ऑनलाइन विपणन :–

ई–कॉमर्स के माध्यम से ग्रामीण उद्यमी अपने उत्पादों को इंटरनेट पर बेच सकते हैं। पहले जहाँ बिक्री केवल स्थानीय बाजार तक सीमित रहती थी, वहीं अब उत्पाद पूरे देश और विदेश के ग्राहकों तक पहुँच सकते हैं। इससे बिक्री बढ़ती है और उद्यमी की आय में वृद्धि होती है।

2. डिजिटल भुगतान :–

ई–कॉमर्स प्लेटफॉर्म डेबिटध्क्रेडिट कार्ड, नेट बैंकिंग और डिजिटल वॉलेट जैसी सुविधाएँ प्रदान करते हैं। इससे भुगतान तेज, सुरक्षित और पारदर्शी होता है। नकद लेन–देन की आवश्यकता कम हो जाती है और व्यवसाय अधिक व्यवस्थित बनता है।

3. कम लागत में व्यवसाय प्रारंभ करना :–

ई–कॉमर्स के माध्यम से व्यवसाय शुरू करने के लिए बड़ी दुकान, गोदाम या अधिक कर्मचारियों की आवश्यकता नहीं होती। एक मोबाइल फोन, इंटरनेट और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म की सहायता से कम पूंजी में व्यवसाय शुरू किया जा सकता है। इससे ग्रामीण युवाओं और महिलाओं को स्वरोजगार के नए अवसर मिलते हैं।

4. सोशल मीडिया के माध्यम से प्रचार :–

Facebook, Instagram, WhatsApp, YouTube आदि सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के माध्यम से ग्रामीण उद्यमी अपने उत्पादों का प्रचार–प्रसार कर सकते हैं। आकर्षक फोटो, वीडियो और ग्राहक प्रतिक्रियाएँ साझा करके अधिक लोगों तक पहुँचा जा सकता है, जिससे बिक्री और ब्रांड की पहचान बढ़ती है।

5. ग्राहकों से सीधा संपर्क :–

ई–कॉमर्स में उत्पादक और ग्राहक के बीच सीधे संपर्क की सुविधा होती है। ग्राहक अपनी आवश्यकताओं, सुझावों और शिकायतों को सीधे उद्यमी तक पहुँचा सकते हैं। इससे ग्राहक संतुष्टि बढ़ती है, विश्वास मजबूत होता है और उत्पादों की गुणवत्ता में सुधार करने में सहायता मिलती है।

6. ब्रांड निर्माण :–

ई–कॉमर्स ग्रामीण उत्पादों को एक अलग पहचान दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। उद्यमी अपने उत्पादों के लिए नाम, लोगो, पैकेजिंग और गुणवत्ता बनाए रखकर अपना ब्रांड विकसित कर सकते हैं। एक मजबूत ब्रांड ग्राहकों का विश्वास जीतता है और लंबे समय तक व्यवसाय की सफलता सुनिश्चित करता है।

7. निर्यात की संभावना :–

ई–कॉमर्स के माध्यम से ग्रामीण उत्पाद अंतरराष्ट्रीय बाजार तक पहुँच सकते हैं। हस्तशिल्प, हथकरघा, जैविक उत्पाद, मसाले, शहद, बाँस और लकड़ी से बने उत्पाद जैसे स्थानीय उत्पादों की विदेशों में भी मांग होती है। इससे विदेशी मुद्रा अर्जित होती है, ग्रामीण उद्यमियों की आय बढ़ती है और स्थानीय अर्थव्यवस्था को मजबूती मिलती है।

➢ **ग्रामीण ई–कॉमर्स की चुनौतियाँ**

1. इंटरनेट की सीमित उपलब्धता :– कई गाँवों में अभी भी तेज इंटरनेट उपलब्ध नहीं है।
2. डिजिटल साक्षरता का अभाव :– कई उद्यमियों को ऑनलाइन व्यापार की जानकारी सीमित है।
3. लॉजिस्टिक्स समस्याएँ :– दूरदराज क्षेत्रों में समय पर डिलीवरी कठिन होती है।
4. वित्तीय समस्याएँ :– व्यवसाय विस्तार के लिए पूंजी की कमी।
5. साइबर सुरक्षा :– ऑनलाइन धोखाधड़ी और डेटा सुरक्षा की चुनौतियाँ।
6. गुणवत्ता एवं पैकेजिंग :– उचित पैकेजिंग और मानकीकरण का अभाव।

➢ **सरकारी योजनाएँ**

ग्रामीण ई–कॉमर्स एवं उद्यमिता को बढ़ावा देने हेतु प्रमुख योजनाएँ

1. डिजिटल इंडिया :–

डिजिटल इंडिया कार्यक्रम का उद्देश्य भारत को डिजिटल रूप से सशक्त समाज और ज्ञान–आधारित अर्थव्यवस्था बनाना है। इस योजना के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट, डिजिटल सेवाओं और ई–गवर्नेंस का विस्तार किया गया है। इससे ग्रामीण उद्यमी ऑनलाइन व्यापार, डिजिटल भुगतान, ई–कॉमर्स प्लेटफॉर्म और सरकारी सेवाओं का लाभ आसानी से प्राप्त कर सकते हैं। यह योजना ग्रामीण व्यवसायों को आधुनिक तकनीक से जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

2. प्रधानमंत्री मुद्रा योजना :–

प्रधानमंत्री मुद्रा योजना के अंतर्गत छोटे और सूक्ष्म उद्यमों को बिना गारंटी के ऋण उपलब्ध कराया जाता है। इस योजना में शिशु (₹50,000 तक), किशोर (₹50,000 से ₹5 लाख) और तरुण (₹5 लाख से ₹10 लाख या वर्तमान प्रावधानों के अनुसार अधिक) श्रेणियों में ऋण दिया जाता है। इस वित्तीय

सहायता से ग्रामीण युवा, महिलाएँ और छोटे व्यापारी अपना व्यवसाय शुरू या उसका विस्तार कर सकते हैं।

3. प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम :–

प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम का उद्देश्य ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में नए सूक्ष्म उद्योग स्थापित कर रोजगार के अवसर बढ़ाना है। इस योजना के अंतर्गत उद्योग स्थापित करने के लिए बैंक ऋण के साथ सरकारी अनुदान (सब्सिडी) भी प्रदान किया जाता है। इससे बेरोजगार युवाओं को स्वरोजगार अपनाने और नए उद्यम स्थापित करने के लिए प्रोत्साहन मिलता है।

4. राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन :–

राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन का उद्देश्य ग्रामीण गरीब परिवारों, विशेषकर महिलाओं को स्वयं सहायता समूह के माध्यम से आर्थिक रूप से सशक्त बनाना है। यह योजना प्रशिक्षण, वित्तीय सहायता, बैंक ऋण और विपणन सुविधाएँ उपलब्ध कराती है। इससे ग्रामीण महिलाओं को छोटे उद्योग, हस्तशिल्प, कृषि आधारित व्यवसाय और ई–कॉमर्स से जुड़ने के अवसर मिलते हैं।

5. स्टार्टअप इंडिया :–

स्टार्टअप इंडिया योजना का उद्देश्य नवाचार और नए उद्यमों को बढ़ावा देना है। इस योजना के अंतर्गत स्टार्टअप्स को पंजीकरण में सरलता, कर संबंधी रियायतें, वित्तीय सहायता, मार्गदर्शन (Mentorship) और निवेशकों से जुड़ने के अवसर प्रदान किए जाते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों के नवाचार आधारित व्यवसायों को भी इससे लाभ मिलता है।

6. स्टैंड अप इंडिया :–

स्टैंड अप इंडिया योजना अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति तथा महिला उद्यमियों को नया व्यवसाय स्थापित करने के लिए बैंक ऋण उपलब्ध कराती है। इस योजना के अंतर्गत विनिर्माण, सेवा और व्यापार क्षेत्रों में नए उद्यम शुरू करने के लिए वित्तीय सहायता दी जाती है। इसका उद्देश्य समाज के वंचित वर्गों में उद्यमिता को बढ़ावा देना है।

7. स्किल इंडिया मिशन :–

स्किल इंडिया मिशन का उद्देश्य युवाओं को रोजगारोन्मुख कौशल प्रदान करना है। इस योजना के अंतर्गत विभिन्न क्षेत्रों में तकनीकी, व्यावसायिक और उद्यमिता संबंधी प्रशिक्षण दिया जाता है। प्रशिक्षित युवा ई–कॉमर्स, डिजिटल मार्केटिंग, पैकेजिंग, ऑनलाइन बिक्री और आधुनिक व्यवसाय संचालन में दक्ष होकर स्वरोजगार प्राप्त कर सकते हैं।

8. प्रधानमंत्री सूक्ष्म खाद्य उद्योग उन्नयन योजना :–

इस योजना का उद्देश्य सूक्ष्म खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों का आधुनिकीकरण और विकास करना है। इसके अंतर्गत तकनीकी सहायता, प्रशिक्षण, ब्रांडिंग, पैकेजिंग, विपणन तथा वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। इससे अचार, पापड़, मसाले, जैम, शहद, मिलेट उत्पाद आदि बनाने वाले ग्रामीण उद्यमियों को अपने उत्पाद राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाजार तक पहुँचाने में सहायता मिलती है।

9. कॉमन सर्विस सेंटर :–

कॉमन सर्विस सेंटर ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल सेवाएँ उपलब्ध कराने वाले केंद्र हैं। यहाँ नागरिकों को सरकारी सेवाएँ, बैंकिंग, बीमा, आधार, पैन, डिजिटल भुगतान, ऑनलाइन आवेदन, ई–कॉमर्स तथा डिजिटल साक्षरता जैसी सुविधाएँ मिलती हैं। ग्रामीण उद्यमी की सहायता से अपने उत्पादों का ऑनलाइन विपणन, डिजिटल लेन–देन और सरकारी योजनाओं का लाभ आसानी से प्राप्त कर सकते हैं।

- **ग्रामीण क्षेत्रों में ई–कॉमर्स के लाभ**

ई–कॉमर्स ग्रामीण विकास का एक महत्वपूर्ण साधन बनकर उभरा है। यह न केवल ग्रामीण लोगों की आय और रोजगार के अवसर बढ़ाता है, बल्कि महिलाओं के सशक्तिकरण, स्थानीय उत्पादों के प्रचार, वैश्विक बाजार तक पहुँच, पारदर्शी व्यापार और डिजिटल भुगतान को भी प्रोत्साहित करता है। इस प्रकार ई–कॉमर्स ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने और समावेशी विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

1. आय में वृद्धि :–

ई–कॉमर्स के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों के किसान, कारीगर और छोटे व्यापारी अपने उत्पादों को सीधे ग्राहकों तक बेच सकते हैं। इससे उन्हें बिचौलियों पर निर्भर नहीं रहना पड़ता और उचित मूल्य प्राप्त होता है। अधिक बिक्री होने से उनकी आय में वृद्धि होती है।

2. रोजगार सृजन :–

ई–कॉमर्स के बढ़ने से पैकेजिंग, डिलीवरी, वेयरहाउसिंग, डिजिटल मार्केटिंग, ग्राहक सेवा और ऑनलाइन स्टोर प्रबंधन जैसे नए रोजगार के अवसर पैदा होते हैं। इससे स्थानीय युवाओं को अपने ही क्षेत्र में रोजगार मिलने लगता है।

3. पलायन में कमी :–

जब ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार और आय के पर्याप्त अवसर उपलब्ध होते हैं, तो लोगों को काम की तलाश में शहरों की ओर पलायन करने की आवश्यकता कम पड़ती है। इससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था भी मजबूत होती है और परिवार एक साथ रह पाते हैं।

4. महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण :–

ई–कॉमर्स महिलाओं को घर बैठे अपने उत्पाद, जैसे हस्तशिल्प, कपड़े, आचार, पापड़, मसाले आदि बेचने का अवसर देता है। इससे वे आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनती हैं, परिवार की आय में योगदान देती हैं और समाज में उनकी भागीदारी बढ़ती है।

5. स्थानीय उत्पादों की पहचान :–

ग्रामीण क्षेत्रों के पारंपरिक और स्थानीय उत्पाद, जैसे हस्तशिल्प, हथकरघा, जैविक कृषि उत्पाद और क्षेत्रीय विशेष वस्तुएँ, ई–कॉमर्स प्लेटफॉर्म के माध्यम से देश–विदेश में पहचान प्राप्त करते हैं। इससे स्थानीय संस्कृति और परंपराओं को भी बढ़ावा मिलता है।

6. वैश्विक बाजार तक पहुँच :–

ई–कॉमर्स के माध्यम से ग्रामीण उद्यमी अपने उत्पाद केवल स्थानीय बाजार तक ही सीमित नहीं रखते, बल्कि उन्हें राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय ग्राहकों तक भी पहुँचा सकते हैं। इससे निर्यात के अवसर बढ़ते हैं और अधिक लाभ प्राप्त होता है।

7. पारदर्शी व्यापार :–

ऑनलाइन लेन–देन में कीमत, भुगतान, ऑर्डर और डिलीवरी की पूरी जानकारी डिजिटल रूप में उपलब्ध रहती है। इससे धोखाधड़ी की संभावना कम होती है और व्यापार अधिक पारदर्शी एवं विश्वसनीय बनता है।

8. नकदी रहित लेन–देन को बढ़ावा :–

ई–कॉमर्स डिजिटल भुगतान जैसे डेबिट कार्ड, क्रेडिट कार्ड, नेट बैंकिंग और मोबाइल वॉलेट का उपयोग बढ़ाता है। इससे नकदी पर निर्भरता कम होती है, भुगतान सुरक्षित और तेज होता है तथा डिजिटल अर्थव्यवस्था को बढ़ावा मिलता है।

➢ **भविष्य की संभावनाएँ**

ई–कॉमर्स का भविष्य ग्रामीण भारत के लिए अत्यंत उज्ज्वल है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता, मोबाइल कॉमर्स, डिजिटल स्टार्टअप, ड्रोन तकनीक, ब्लॉकचेन, स्मार्ट वेयरहाउस और वैश्विक बाजार तक पहुँच जैसी आधुनिक तकनीकें ग्रामीण व्यापार को नई दिशा देंगी। इससे किसानों, कारीगरों, महिला उद्यमियों और छोटे व्यापारियों को अधिक अवसर मिलेंगे, रोजगार बढ़ेगा, आय में वृद्धि होगी और ग्रामीण अर्थव्यवस्था अधिक सशक्त एवं आत्मनिर्भर बनेगी।

1. कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित व्यापार :–

भविष्य में कृत्रिम बुद्धिमत्ता ई–कॉमर्स को अधिक स्मार्ट और प्रभावी बनाएगी। ग्राहकों की पसंद और खरीदारी के व्यवहार का विश्लेषण करके उन्हें उनकी आवश्यकता के अनुसार उत्पाद सुझाएगी। इससे बिक्री बढ़ेगी और ग्राहकों को बेहतर अनुभव मिलेगा। AI की सहायता से चौटबॉट, ग्राहक सेवा, मांग का अनुमान तथा स्टॉक प्रबंधन भी अधिक सटीक होगा।

2. मोबाइल कॉमर्स का विस्तार :–

स्मार्टफोन और इंटरनेट के बढ़ते उपयोग के कारण मोबाइल कॉमर्स तेजी से विकसित होगा। ग्रामीण क्षेत्रों के लोग मोबाइल ऐप के माध्यम से आसानी से खरीदारी और बिक्री कर सकेंगे। डिजिटल भुगतान और मोबाइल बैंकिंग के बढ़ते उपयोग से ऑनलाइन व्यापार और अधिक सुविधाजनक तथा सुरक्षित बनेगा।

3. ग्रामीण डिजिटल स्टार्टअप :–

भविष्य में ग्रामीण युवाओं द्वारा स्थानीय समस्याओं के समाधान के लिए नए डिजिटल स्टार्टअप स्थापित किए जाएंगे। ये स्टार्टअप कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य, हस्तशिल्प, पर्यटन और स्थानीय उत्पादों के विपणन जैसे क्षेत्रों में नवाचार करेंगे। इससे रोजगार के नए अवसर पैदा होंगे और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूती मिलेगी।

4. ड्रोन आधारित कृषि सेवाएँ :–

ड्रोन तकनीक का उपयोग खेती में तेजी से बढ़ेगा। ड्रोन के माध्यम से फसलों की निगरानी, उर्वरक और कीटनाशकों का छिड़काव, भूमि का सर्वेक्षण तथा फसल की स्थिति का आकलन किया जा सकेगा। इससे समय और लागत की बचत होगी, उत्पादन में वृद्धि होगी तथा किसानों को बेहतर निर्णय लेने में सहायता मिलेगी।

5. ब्लॉकचेन आधारित आपूर्ति श्रृंखला :–

ब्लॉकचेन तकनीक ई–कॉमर्स की आपूर्ति श्रृंखला को अधिक सुरक्षित और पारदर्शी बनाएगी। इससे उत्पाद की उत्पत्ति, गुणवत्ता, परिवहन और वितरण की पूरी जानकारी डिजिटल रूप से सुरक्षित रहेगी। नकली उत्पादों पर रोक लगेगी और ग्राहकों का विश्वास बढ़ेगा।

6. स्मार्ट वेयरहाउस :–

भविष्य में आधुनिक तकनीक से युक्त स्मार्ट वेयरहाउस का उपयोग बढ़ेगा। इनमें स्वचालित मशीनें, रोबोट, सेंसर और AI आधारित इन्वेंट्री प्रबंधन प्रणाली होगी। इससे उत्पादों का सुरक्षित भंडारण, तेज पैकिंग और समय पर डिलीवरी संभव होगी। लागत कम होगी और कार्यक्षमता बढ़ेगी।

7. ग्रामीण ब्रांडों का वैश्विक विस्तार :–

ई–कॉमर्स प्लेटफॉर्म के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों के हस्तशिल्प, हथकरघा, जैविक कृषि उत्पाद, मसाले, शहद, बांस उत्पाद तथा अन्य पारंपरिक वस्तुएँ अंतरराष्ट्रीय बाजार तक पहुँच सकेंगी। इससे ग्रामीण उत्पादों को वैश्विक पहचान मिलेगी, निर्यात बढ़ेगा और स्थानीय उत्पादकों की आय में वृद्धि होगी।

➢ **सुझाव**

ग्रामीण क्षेत्रों में ई–कॉमर्स को सफल बनाने के लिए मजबूत इंटरनेट, डिजिटल शिक्षा, वित्तीय सहायता, बेहतर पैकेजिंग, कुशल परिवहन व्यवस्था, महिला उद्यमिता को बढ़ावा, स्थानीय उत्पादों का ऑनलाइन विपणन तथा साइबर सुरक्षा पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। इन सुझावों को प्रभावी ढंग से लागू करने से ग्रामीण अर्थव्यवस्था मजबूत होगी, रोजगार के अवसर बढ़ेंगे, किसानों और कारीगरों की आय में वृद्धि होगी तथा आत्मनिर्भर और डिजिटल ग्रामीण भारत के निर्माण का लक्ष्य तेजी से पूरा किया जा सकेगा।

1. प्रत्येक गाँव में उच्च गति इंटरनेट उपलब्ध कराया जाए :–

ई–कॉमर्स के सफल संचालन के लिए तेज और विश्वसनीय इंटरनेट सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है। इसलिए प्रत्येक गाँव में ब्रॉडबैंड, फाइबर ऑप्टिक और जैसी उच्च गति इंटरनेट सेवाएँ उपलब्ध कराई जानी चाहिए। इससे ग्रामीण लोग ऑनलाइन खरीदारी, बिक्री, डिजिटल भुगतान और सरकारी सेवाओं का आसानी से लाभ उठा सकेंगे।

2. डिजिटल साक्षरता प्रशिक्षण को बढ़ावा दिया जाए :–

ग्रामीण लोगों को स्मार्टफोन, कंप्यूटर, इंटरनेट, ऑनलाइन भुगतान, ई–कॉमर्स वेबसाइटों और मोबाइल ऐप का उपयोग करने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। स्कूलों, पंचायतों और सामुदायिक केंद्रों के माध्यम से नियमित डिजिटल साक्षरता कार्यक्रम चलाए जाएँ ताकि लोग आत्मविश्वास के साथ डिजिटल सेवाओं का उपयोग कर सकें।

3. ग्रामीण उद्यमियों को आसान ऋण उपलब्ध कराया जाए :–

कई ग्रामीण उद्यमियों के पास अच्छा व्यवसायिक विचार होता है, लेकिन पूंजी की कमी के कारण वे अपना व्यवसाय शुरू या विस्तार नहीं कर पाते। सरकार और बैंक कम ब्याज दर पर आसान ऋण, सब्सिडी और वित्तीय सहायता उपलब्ध कराएँ, जिससे वे ई–कॉमर्स के माध्यम से अपना व्यवसाय बढ़ा सकें।

4. पैकेजिंग और ब्रांडिंग की सुविधा विकसित की जाए :–

ग्रामीण उत्पादों की गुणवत्ता अच्छी होने के बावजूद उनकी पैकेजिंग और ब्रांडिंग कमजोर होती है। आधुनिक पैकेजिंग, आकर्षक लेबल, गुणवत्ता प्रमाणन और ब्रांड निर्माण की सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाएँ ताकि उत्पाद बाजार में अधिक प्रतिस्पर्धी बन सकें और ग्राहकों का विश्वास बढ़े।

5. लॉजिस्टिक्स और परिवहन व्यवस्था को मजबूत किया जाए :–

ई–कॉमर्स की सफलता समय पर डिलीवरी पर निर्भर करती है। इसलिए ग्रामीण क्षेत्रों में बेहतर सड़कें, परिवहन सुविधाएँ, गोदाम (वेयरहाउस), कोल्ड स्टोरेज और डिलीवरी नेटवर्क विकसित किए जाएँ। इससे उत्पाद सुरक्षित और समय पर ग्राहकों तक पहुँचेंगे तथा परिवहन लागत भी कम होगी।

6. महिला उद्यमियों के लिए विशेष सहायता कार्यक्रम चलाए जाएँ :–

महिलाओं को ई–कॉमर्स से जोड़ने के लिए विशेष प्रशिक्षण, वित्तीय सहायता, डिजिटल कौशल विकास, स्वयं सहायता समूहों को प्रोत्साहन तथा विपणन सहायता प्रदान की जाए। इससे महिलाएँ घर बैठे अपने उत्पाद बेचकर आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बन सकेंगी।

7. स्थानीय उत्पादों को ऑनलाइन प्लेटफॉर्म से जोड़ा जाए ::–

हर क्षेत्र के विशेष उत्पादकृजैसे हस्तशिल्प, हथकरघा, जैविक कृषि उत्पाद, मसाले, शहद, बाँस के उत्पाद और पारंपरिक वस्तुएँ को ई–कॉमर्स प्लेटफॉर्म पर सूचीबद्ध किया जाए। इससे स्थानीय उत्पादों को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाजार मिलेगा, बिक्री बढ़ेगी और उत्पादकों की आय में वृद्धि होगी।

8. साइबर सुरक्षा के प्रति जागरूकता बढ़ाई जाए :–

ऑनलाइन लेन–देन के साथ साइबर धोखाधड़ी का जोखिम भी बढ़ता है। इसलिए ग्रामीण लोगों को सुरक्षित पासवर्ड, की गोपनीयता, फिशिंग से बचाव, सुरक्षित डिजिटल भुगतान और ऑनलाइन धोखाधड़ी की पहचान के बारे में जागरूक किया जाए। इससे उनका विश्वास बढ़ेगा और वे सुरक्षित रूप से ई–कॉमर्स का उपयोग कर सकेंगे।

➢ निष्कर्ष

ई–कॉमर्स ग्रामीण भारत के आर्थिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण माध्यम बन चुका है। इसने ग्रामीण उद्यमियों, किसानों और कारीगरों को नए बाजार, बेहतर आय और स्वरोजगार के अवसर प्रदान किए हैं। डिजिटल तकनीक, सरकारी योजनाओं और कौशल विकास कार्यक्रमों के प्रभावी क्रियान्वयन से ग्रामीण अर्थव्यवस्था अधिक सशक्त और आत्मनिर्भर बन सकती है। भविष्य में ई–कॉमर्स और उद्यमिता का समन्वय ग्रामीण विकास की दिशा में एक निर्णायक भूमिका निभाएगा।

➢ संदर्भ

- भारत सरकार, ग्रामीण विकास मंत्रालय वार्षिक रिपोर्ट।
- इलेक्ट्रॉनिक्स एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय डिजिटल इंडिया से संबंधित प्रकाशन।
- भारतीय रिजर्व बैंक वार्षिक रिपोर्ट।
- ग्रामीण विकास एवं वित्तीय समावेशन रिपोर्ट।
- नीति आयोग डिजिटल अर्थव्यवस्था एवं ग्रामीण विकास संबंधी रिपोर्ट।
- भारतीय आर्थिक सर्वेक्षण।
- विभिन्न शोध–पत्र, पुस्तकें एवं राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय जर्नल।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 161-165
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भीष्म साहनी कृत उपन्यास 'निल्लू नीलिमा नीलोफ़र' में स्त्री-अस्तित्व, स्वायत्तता और समकालीन समाज: एक सघन विश्लेषण

21वीं सदी के सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक संदर्भों में उपन्यास की प्रासंगिकता का विस्तृत संश्लेषण

रिम्पल सिंह
शोधार्थी,
डॉ. दिनेश कुमार मीणा
शोध निर्देशक,
जे.जे.टी. विश्वविद्यालय, जुडैला, झुंझुनूं (राजस्थान)

शोध सार (Abstract)

प्रस्तुत शोध पत्र प्रगतिशील हिंदी उपन्यासकार भीष्म साहनी द्वारा रचित उपन्यास 'निल्लू नीलिमा नीलोफ़र' (1988) का समकालीन समाजशास्त्र और स्त्री-विमर्श के आलोक में विस्तृत एवं सघन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। 20वीं सदी के उत्तरार्ध में रचित यह कृति केवल तीन महिलाओं के जीवन का वृत्त नहीं है, बल्कि यह भारतीय मध्यवर्गीय समाज की संरचना, पितृसत्तात्मक उत्पीड़न, लैंगिक विषमता और स्त्री स्वायत्तता के आंतरिक द्वंद्वों को उघाड़ने वाला एक महत्वपूर्ण साहित्यिक दस्तावेज़ है। वर्तमान 21वीं सदी के भूमंडलीकृत, तकनीक-संचालित और उत्तर-आधुनिक दौर में जहाँ 'स्त्री सशक्तीकरण' का ढोल पीटा जा रहा है, वहाँ यह उपन्यास हमें यह पड़ताल करने का अवसर देता है कि क्या स्त्री की सामाजिक एवं मानसिक स्थिति में कोई मूलगामी परिवर्तन आया है या केवल शोषण का रूप बदला है। प्रस्तुत शोध पत्र में नीलिमा, निल्लू और नीलोफ़र के चरित्रों के माध्यम से वर्ग-संरचना, भावनात्मक शोषण, स्वायत्तता की सीमाएँ, और आधुनिकता के पाखंड का विश्लेषणात्मक संश्लेषण किया गया है।

बीज शब्द (Keywords): भीष्म साहनी, निल्लू नीलिमा नीलोफ़र, पितृसत्ता, स्त्री स्वायत्तता, मध्यवर्गीय पाखंड, समकालीन स्त्री-विमर्श, भावनात्मक दोहन।

प्रस्तावना और सैद्धांतिक पृष्ठभूमि

हिंदी उपन्यास साहित्य के इतिहास में भीष्म साहनी (1915–2003) का स्थान एक ऐसे संवेदनशील और यथार्थवादी कथाकार के रूप में सुरक्षित है, जिन्होंने समाज की सतह के नीचे बहने वाली अंतर्धाराओं को अत्यंत सूक्ष्मता से पहचाना। जहाँ 'तमस' में उन्होंने सांप्रदायिकता के विकराल रूप को रेखांकित किया, वहीं 'बसंती' और 'निल्लू नीलिमा नीलोफ़र' जैसे उपन्यासों में उन्होंने समाज के हाशिए पर स्थित स्त्रियों तथा मध्यवर्गीय पारिवारिक संरचना के भीतरी खोखलेपन को अपनी लेखनी का विषय बनाया। 1988 में प्रकाशित उपन्यास 'निल्लू नीलिमा नीलोफ़र' भीष्म साहनी के उत्तरकालीन लेखन की एक उत्कृष्ट रचना है, जो पूरी तरह से स्त्री-मनोविज्ञान, उसकी नियति और सामाजिक व्यवस्था से उसके संघर्ष पर केंद्रित है।

आधुनिक समाजशास्त्र में 'स्त्री-अस्तित्व' (Female Identity) और 'स्वायत्तता' (Autonomy) दो ऐसे केंद्रीय बिंदु हैं, जिन पर निरंतर विमर्श जारी है। फ्रांसीसी दार्शनिक सिमोन द बोवा (Simone de Beauvoir) ने अपनी युगांतरकारी पुस्तक 'द सेकेंड सेक्स' (The Second Sex) में लिखा था कि "स्त्री पैदा नहीं होती, बल्कि बना दी जाती है।" भीष्म साहनी का यह उपन्यास इसी 'बनाए जाने' की प्रक्रिया और उस प्रक्रिया के विरुद्ध उठने वाली स्त्री-आकांक्षाओं के संघर्ष की गाथा है। उपन्यास का कथा-फलक तीन अलग-अलग स्वभाव, वर्ग और परिस्थितियों की स्त्रियों—निल्लू, नीलिमा और नीलोफ़र—के इर्द-गिर्द घूमता है। ये तीनों नाम केवल तीन पात्रों के नहीं हैं, बल्कि ये भारतीय समाज में स्त्रियों की तीन भिन्न अवस्थाओं और चेतना के स्तरों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

वर्तमान 21वीं सदी में जब हम इस उपन्यास का पुनर्मूल्यांकन करते हैं, तो यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि आज से लगभग चार दशक पूर्व लिखा गया उपन्यास आज के संदर्भ में कितना प्रासंगिक है? आज का भारत डिजिटल क्रांति, आर्थिक उदारीकरण और आधुनिक शिक्षा के दौर से गुजर रहा है। आज स्त्रियाँ अंतरिक्ष से लेकर कॉर्पोरेट बोर्डरूम तक अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही हैं। परंतु क्या इस बाह्य चमक-दमक ने उस पितृसत्तात्मक ढाँचे को ध्वस्त कर दिया है, जिसकी तरफ भीष्म साहनी ने ध्यान आकृष्ट किया था? यह शोध पत्र इसी बुनियादी प्रश्न की पड़ताल करता है।

उपन्यास 'निल्लू नीलिमा नीलोफ़र' की कथा संरचना अत्यंत जटिल और बहुआयामी है। यह उपन्यास पारंपरिक कथा-वाचन शैली से थोड़ा हटकर चरित्र-प्रधान और मनोवैज्ञानिक धरातल पर निर्मित है। तीनों मुख्य महिला पात्रों के माध्यम से साहनी जी ने स्त्री-जीवन के तीन कोणों को उभारा है:

नीलिमा उपन्यास का सबसे जटिल और केंद्रीय पात्र है। वह शिक्षित, सुंदर, कलात्मक अभिरुचि वाली और आत्मनिर्भर बनने की आकांक्षा रखने वाली महिला है। नीलिमा का विवाह सुधेंदु से होता है, जो एक उच्च-मध्यवर्गीय महत्वाकांक्षी पुरुष है। नीलिमा का संघर्ष केवल अपने पति से नहीं है, बल्कि उस संपूर्ण परिवेश से है जो एक स्त्री को केवल 'वस्तु' या 'सजावटी सामान' के रूप में देखता है। नीलिमा नाटक और संगीत में रुचि रखती है, अपनी स्वतंत्र पहचान बनाना चाहती है, लेकिन उसका पति उसकी इस प्रतिभा का उपयोग अपने सामाजिक और व्यावसायिक लाभ के लिए करना चाहता है।

नीलिमा का चरित्र यह उजागर करता है कि कैसे एक संभ्रांत और शिक्षित परिवार में भी स्त्री की कलात्मक अभिव्यक्ति को पुरुष के अहंकार और सामाजिक स्थिति के अधीन कर दिया जाता है। जब नीलिमा अपनी स्वतंत्रता की मांग करती है, तो उसे 'अहंकारी' या 'अव्यवहारिक' करार दे दिया जाता है। नीलिमा का यह मानसिक द्वंद्व आधुनिक

कामकाजी महिलाओं की उस स्थिति से मेल खाता है, जहाँ उन्हें अपनी सफलता की कीमत अपने निजी जीवन और शांति से चुकानी पड़ती है।

निल्लू: सहजता, भावनात्मकता और समर्पण की नियति

निल्लू, नीलिमा की बहन है, जो स्वभाव से अत्यंत सहज, भावुक और पारंपरिक संस्कारों से बंधी हुई है। वह जीवन से बहुत बड़ी अपेक्षाएँ नहीं रखती; उसकी चाहत केवल एक शांत, प्रेमपूर्ण और सुरक्षित पारिवारिक जीवन की है। परंतु, समाज की क्रूरता और पुरुषों के छलावे से वह भी नहीं बच पाती। निल्लू का जीवन इस बात का प्रमाण है कि यदि स्त्री अत्यधिक समर्पित और भावुक हो, तो समाज और पुरुष वर्ग उसे कमज़ोर मानकर उसका शोषण करने में कोई संकोच नहीं करता।

निल्लू का चरित्र भारतीय समाज की उस बहुसंख्यक महिला आबादी का प्रतिनिधित्व करता है, जो बिना किसी बड़े विद्रोह के व्यवस्था के भीतर रहकर अपनी खुशियाँ ढूँढने का प्रयास करती है। लेकिन व्यवस्था का ढाँचा ऐसा है कि उसकी यह निष्ठा और समर्पण ही उसकी सबसे बड़ी कमज़ोरी बन जाते हैं।

नीलोफ़र: चेतना, विद्रोह और स्वायत्तता की तलाश

नीलोफ़र इस त्रिकोण का तीसरा और सबसे मुखर कोण है। वह सामाजिक बंधनों, धार्मिक और रूढ़िवादी ढाँचों को सीधे चुनौती देने वाली पात्र है। नीलोफ़र का जीवन यह दर्शाता है कि जब एक स्त्री अपने अधिकारों के प्रति सचेत होती है और समाज के स्थापित नियमों को मानने से इंकार करती है, तो समाज उसे किस प्रकार बहिष्कृत या लांछित करने का प्रयास करता है। नीलोफ़र के भीतर एक प्रकार की अनर्गल जिजीविषा और विद्रोह की ज्वाला है।

नीलोफ़र केवल अपने लिए नहीं लड़ती, बल्कि वह व्यवस्था के खोखलेपन पर तीखे प्रहार करती है। वह नीलिमा और निल्लू दोनों के लिए एक उत्प्रेरक (Catalyst) का कार्य करती है, जो उन्हें उनकी स्थिति का भान कराती है।

समकालीन सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ में उपन्यास की प्रासंगिकता

किसी भी कालजयी रचना की कसौटी यह होती है कि वह अपने समय का अतिक्रमण करके आने वाले समय के प्रश्नों का उत्तर दे सके। 'निल्लू नीलिमा नीलोफ़र' इस कसौटी पर पूरी तरह खरी उतरती है। 21वीं सदी के तीसरे दशक में, जब हम भारतीय समाज का अवलोकन करते हैं, तो हमें भीष्म साहनी द्वारा उठाए गए मुद्दे और अधिक प्रासंगिक और विकराल रूप में दिखाई देते हैं।

वर्तमान समय में 'महिला सशक्तीकरण' (Women Empowerment) एक लोकप्रिय विमर्श बन चुका है। सरकारें, कॉर्पोरेट और मीडिया यह दावा करते हैं कि स्त्री अब स्वतंत्र है। परंतु, यदि हम नीलिमा के जीवन का सूक्ष्म विश्लेषण करें, तो हम पाते हैं कि आधुनिकता ने पितृसत्ता को समाप्त नहीं किया है, बल्कि उसे एक 'सभ्य' और 'आकर्षक' आवरण पहना दिया है।

आज की महिला आर्थिक रूप से स्वावलंबी है, वह नौकरी करती है, कार चलाती है, निर्णय लेती है। परंतु, घर की चौखट के भीतर और पुरुषों की मानसिकता में आज भी उससे वही अपेक्षाएँ रखी जाती हैं जो शताब्दियों पूर्व रखी जाती थीं। इसे आधुनिक समाजशास्त्र में 'दोहरा बोझ' (Double Burden) कहा जाता है। कामकाजी महिला को बाहर अपनी पेशेवर दक्षता साबित करनी होती है और घर आकर पारंपरिक गृहिणी की भूमिका भी निभानी पड़ती है। यदि वह इसमें असफल होती है, तो उसे अपराध बोध (Guilt) का शिकार बनाया जाता है। नीलिमा का चरित्र इसी दोहरे बोझ और मानसिक तनाव की सटीक व्याख्या करता है।

उपन्यास में पुरुषों द्वारा स्त्रियों के भावनात्मक दोहन (Emotional Exploitation) को बहुत बारीक ढंग से दिखाया गया है। सुधेंदु और अन्य पुरुष पात्र स्त्रियों को शारीरिक नुकसान पहुँचाने की बजाय उनके आत्म-विश्वास और आत्म-सम्मान को धीरे-धीरे तोड़ते हैं।

आज के मनोविज्ञान और समाजशास्त्र में इसके लिए 'गैसलाइटिंग' (Gaslighting) और 'टॉक्सिक रिलेशनशिप' (Toxic Relationship) जैसे आधुनिक शब्दों का प्रयोग किया जाता है। भीष्म साहनी ने 1988 में ही यह दिखा दिया था कि कैसे एक पुरुष अपनी पत्नी या प्रेमिका को यह अहसास करा देता है कि समस्या उसमें स्वयं में है, समाज या पुरुष में नहीं। नीलिमा को बार-बार यह अहसास कराया जाता है कि वह अति-संवेदनशील है या उसे व्यवहार व्यावहारिक होना नहीं आता। आज के दौर में भी लाखों शिक्षित महिलाएँ इस अदृश्य और सूक्ष्म भावनात्मक हिंसा (Invisible Emotional Violence) की शिकार हैं।

भीष्म साहनी मध्यवर्ग के चितेरे लेखक हैं। 'निल्लू नीलिमा नीलोफ़र' में उन्होंने मध्यवर्गीय समाज की उस दोहरी मानसिकता पर करारा प्रहार किया है जो बाहर से अत्यंत प्रगतिशील और उदार दिखाई देती है, लेकिन अंदर से उतनी ही संकीर्ण और रूढ़िवादी होती है।

आज के सोशल मीडिया के युग में यह पाखंड और अधिक बढ़ गया है। लोग फेसबुक और इंस्टाग्राम पर 'लैंगिक समानता' और 'स्त्री-विमर्श' पर लंबे-चौड़े भाषण पोस्ट करते हैं, लेकिन अपने व्यक्तिगत जीवन में वे अपनी बेटियों, पत्नियों और बहनों पर वही पुराने प्रतिबंध लागू करते हैं। समाज का मुख्य सरोकार आज भी 'लोग क्या कहेंगे' और 'परिवार की प्रतिष्ठा' ही है। नीलिमा की प्रतिभा का उपयोग उसका पति समाज में अपनी 'प्रगतिशील' छवि बनाने के लिए करता है, लेकिन जब नीलिमा वास्तव में स्वतंत्र निर्णय लेने लगती है, तो उसकी स्वतंत्रता पर अंकुश लगा दिया जाता है। यह यथार्थ आज के सोशल मीडिया-संचालित समाज में भी ज्यों का त्यों विद्यमान है।

समकालीन स्त्री-विमर्श और भीष्म साहनी की दृष्टि

हिंदी साहित्य में स्त्री-विमर्श के कई चरण रहे हैं। शुरुआती चरण में स्त्री को केवल 'पीड़िता' और 'सहानुभूति की पात्र' के रूप में देखा गया (जैसे प्रेमचंद के उपन्यासों में सेवासदन की सुमन या गोदान की धनिया)। लेकिन 1980 के दशक के बाद, विशेष रूप से भीष्म साहनी, मन्नू भंडारी, उषा प्रियंवदा और कृष्णा सोबती जैसे रचनाकारों ने स्त्री को 'अभिकर्ता' (Agent) के रूप में प्रस्तुत करना शुरू किया।

भीष्म साहनी की दृष्टि की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे स्त्रियों के प्रति सस्ती सहानुभूति नहीं जताते, न ही वे पुरुषों को एकतरफा 'विलेन' बनाकर पेश करते हैं। वे एक समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण अपनाते हैं। वे दिखाते हैं कि पुरुष भी उसी पितृसत्तात्मक व्यवस्था की देन हैं जिसने उनकी सोच को भी सीमित कर दिया है।

उपन्यास में साहनी जी यह स्थापित करते हैं कि स्त्री की मुक्ति किसी पुरुष के प्रति घृणा या केवल पुरुषों की नकल करने में नहीं है, बल्कि अपनी पहचान, अपनी स्वायत्तता और अपने स्व-विवेक को पहचानने में है। नीलोफ़र का चरित्र इसी चेतना का प्रतीक है। वह किसी पुरुष की बैसाखी के बिना अपने जीवन का मार्ग चुनती है।

भीष्म साहनी की भाषा-शैली की प्रासंगिकता इस बात में है कि वे अत्यंत सहज, आडंबरहीन और सीधी बात कहने वाले लेखक हैं। 'निल्लू नीलिमा नीलोफ़र' में उन्होंने बोलचाल की हिंदी, जिसमें उर्दू और अंग्रेजी के शब्दों का स्वाभाविक मिश्रण है, का प्रयोग किया है।

उपन्यास की शैली में एकाधिक संवाद और आंतरिक स्वगतकथन (Internal Monologues) का सुंदर प्रयोग किया गया है। लेखक पात्रों के मन के भीतर झाँककर उनके द्वंद्व, भय, आशंकाओं और आकांक्षाओं को पाठकों के सामने रखता है। आज के उत्तर-आधुनिक दौर में, जहाँ मानवीय रिश्ते अत्यधिक जटिल और खंडित (Fragmented) हो चुके हैं, साहनी जी की यह मनोवैज्ञानिक विश्लेषण शैली और भी अधिक प्रभावी प्रतीत होती है।

निष्कर्ष एवं शोध की मुख्य उपलब्धियाँ

भीष्म साहनी कृत उपन्यास 'निल्लू नीलिमा नीलोफ़र' का समग्र अध्ययन और समकालीन समाज से इसका संश्लेषण करने के पश्चात निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त होते हैं:

कालजयी प्रासंगिकता: यह उपन्यास केवल 1980 के दशक के समाज का चित्र प्रस्तुत नहीं करता, बल्कि 21वीं सदी के भारतीय समाज में स्त्री-पुरुष संबंधों, पारिवारिक तनावों और स्त्री-अस्तित्व के प्रश्नों की पूर्व-पीठिका तैयार करता है।

संरचनात्मक परिवर्तन बनाम मानसिक अपरिवर्तनशीलता: बाह्य रूप से समाज में तकनीक, शिक्षा और आर्थिक अवसरों का विस्तार हुआ है, लेकिन आंतरिक रूप से पितृसत्तात्मक मानसिकता और मध्यवर्गीय पाखंड आज भी जस के तस बने हुए हैं।

स्त्री स्वायत्तता की बहुआयामी परिभाषा: उपन्यास यह सिद्ध करता है कि स्त्री स्वायत्तता केवल आर्थिक आत्मनिर्भरता से प्राप्त नहीं होती। जब तक स्त्री को अपने जीवन, अपने शरीर, अपनी कला और अपने निर्णयों पर पूर्ण अधिकार नहीं मिलता, तब तक सच्ची स्वतंत्रता संभव नहीं है।

स्त्री-सहकारिता (Sisterhood): उपन्यास नीलिमा, निल्लू और नीलोफ़र के माध्यम से यह संदेश देता है कि स्त्रियों का आपस में जुड़ाव और एक-दूसरे के अनुभवों को समझना ही पितृसत्ता के विरुद्ध सबसे बड़ी ताकत है।

अंततः, यह कहा जा सकता है कि भीष्म साहनी का 'निल्लू नीलिमा नीलोफ़र' आज भी समकालीन स्त्री-विमर्श का एक जगमगाता नक्षत्र है। यह पाठकों और विचारकों को निरंतर उद्वेलित करता है और उन्हें एक ऐसे समतामूलक समाज के निर्माण की प्रेरणा देता है जहाँ स्त्री केवल किसी की 'पत्नी', 'बहन' या 'बेटी' के रूप में नहीं, बल्कि एक पूर्ण मानवीय इकाई के रूप में अपना जीवन जी सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची (References)

1. साहनी, भीष्म (1988). निल्लू नीलिमा नीलोफ़र. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. साहनी, भीष्म (1974). तमस. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. बोवा, सिमोन द (1949/1988). द सेकेंड सेक्स (हिंदी अनुवाद). ग्रंथ शिल्पी, नई दिल्ली।
4. शर्मा, रामविलास (2002). भारतीय समाज और स्त्री स्वायत्तता. नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।
5. सिंह, नामवर (1995). कहानी: नयी कहानी. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
6. पालीवाल, कृष्णदत्त (2010). समकालीन हिंदी उपन्यास और स्त्री चेतना. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
7. गुप्ता, रमणिका (2008). स्त्री विमर्श: सिद्धांत और व्यवहार. सामायिक प्रकाशन, नई दिल्ली।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 166-169
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

समकालीन हिंदी फिल्मों में बाल यौन शोषण की समस्या एवं सरकारी नीतियों की सिनेमाई अभिव्यक्ति
(विशेष सन्दर्भ: कहानी 2, आर्टिकल 15 एवं A Thursday)

हिक्की देवदास,
शोधार्थी (PT),
हिंदी विभाग ,यूनिवर्सिटी कॉलेज ,तिरुवनंतपुरम ,केरल
डॉ० बी अशोक ,
शोध निदेशक

सारांश (Abstract)
समकालीन हिंदी सिनेमा ने सामाजिक समस्याओं के चित्रण में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। विशेषतः बाल शोषण जैसी संवेदनशील एवं गंभीर सामाजिक समस्या को कुछ चुनिंदा फिल्मकारों ने अत्यंत साहसपूर्ण एवं यथार्थवादी दृष्टि से प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत शोध-पत्र में तीन प्रमुख हिंदी फिल्मों — 'कहानी 2 : दुर्गा रानी सिंह' (2016), 'आर्टिकल 15' (2019) तथा 'A Thursday' (2022) — के विशेष सन्दर्भ में बाल शोषण की समस्या एवं इससे सम्बंधित सरकारी नीतियों के सिनेमाई प्रतिनिधित्व का विश्लेषण किया गया है।
इन फिल्मों में पॉक्सो (POCSO) अधिनियम 2012, बाल श्रम (निषेध एवं नियमन) अधिनियम, राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग (NCPCR) तथा अनुच्छेद 15 जैसे संवैधानिक प्रावधानों का किस प्रकार चित्रण किया गया है, यह शोध का केन्द्रीय सवाल है। शोध में यह स्पष्ट होता है कि हिंदी सिनेमा न केवल सामाजिक जागरूकता का माध्यम बना है, बल्कि यह नीति-निर्माण की प्रक्रिया में भी एक सशक्त सांस्कृतिक हस्तक्षेप प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द
हिंदी फिल्म, बाल शोषण, सिनेमाई प्रतिनिधित्व, पॉक्सो अधिनियम, सामाजिक यथार्थवाद, बाल अधिकार, सरकारी नीतियाँ

प्रस्तावना

भारतीय सिनेमा का इतिहास जितना विनोद एवं मनोरंजन से भरा है, उतना ही वह सामाजिक यथार्थ के आईने के रूप में भी कार्य करता है। स्वतंत्रता के बाद से ही भारतीय फिल्मकारों ने दलित उत्पीड़न, स्त्री शोषण, सांप्रदायिक हिंसा, भ्रष्टाचार तथा गरीबी जैसी जटिल सामाजिक समस्याओं को सिनेमा पर उकेरने का प्रयास किया है। परन्तु बाल शोषण जैसा विषय — जो अपनी प्रकृति में अत्यंत संवेदनशील एवं वर्जित माना जाता है — हिंदी मुख्यधारा की सिनेमा में दीर्घकाल तक उपेक्षित रहा। 21वीं सदी के दूसरे दशक में जब भारत में पॉक्सो अधिनियम (2012) लागू हुआ तथा बाल संरक्षण संबंधी नीतियों पर राष्ट्रीय बहस तेज हुई, तब सिनेमा ने भी इस विमर्श पर ध्यान दिया। 'कहानी 2' (2016) ने मुख्यधारा के हिंदी सिनेमा में बाल यौन शोषण को केन्द्रीय कथानक के रूप में प्रस्तुत करने का साहस दिखाया। उसके उपरांत 'आर्टिकल 15' (2019) ने जातीय भेदभाव एवं बालिका उत्पीड़न के अन्तःसम्बन्ध को संवैधानिक दृष्टि से प्रस्तुत किया तथा 'A Thursday' (2022) ने बाल शिक्षा व्यवस्था की विफलताओं एवं बाल अधिकारों के प्रति सरकारी उदासीनता पर तीखा प्रश्नचिह्न लगाया है। यह शोध-पत्र इन तीनों फिल्मों का सामग्री विश्लेषण करते हुए यह समझने का प्रयास करता है कि हिंदी सिनेमा बाल शोषण की समस्या को किस प्रकार प्रस्तुत करता है तथा सरकारी नीतियों एवं कानूनी ढाँचे के प्रति उसका दृष्टिकोण क्या है। प्रस्तुत शोध गुणात्मक पद्धति पर आधारित है।

फिल्म 'कहानी 2: दुर्गा रानी सिंह' (2016) में व्यक्त नीतिगत और सिनेमाई प्रतिनिधित्व मुख्य रूप से बाल यौन शोषण, कानूनी व सामाजिक न्याय, और पितृसत्तात्मक व्यवस्था पर चोट करता है। निर्देशक सुजॉय घोष ने इस संवेदनशील विषय को एक थ्रिलर के रूप में प्रस्तुत किया है। कथानक में एक माँ (विद्या बालन) की संघर्षगाथा है, जो अपनी पालित पुत्री मिनी के यौन शोषण का बदला लेने के लिए अपनी जान दांव पर लगा देती है। फिल्म नीतिगत स्तर पर समाज की उस मानसिकता पर कड़ा प्रहार करती है, जहां घर के भीतर होने वाले बाल शोषण को बदनामी के डर से छुपाया जाता है। मिनी के चाचा मोहित दीवान ही इस यौन उत्पीड़न का कारण था। सिनेमाई प्रतिनिधित्व की दृष्टि से यह फिल्म कई महत्त्वपूर्ण आयाम प्रस्तुत करती है। पहले तो इस फिल्म में बाल यौन शोषण को एक पारिवारिक-सामाजिक समस्या के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यहाँ शोषणकर्ता जाना-पहचाना पड़ोसी नहीं है, बच्ची का अपना चाचा है। इस अत्याचार के कारण मिनी गहरे मानसिक आघात से गुजर रही थी। जब विद्या को इस अपराध का पता चलता है, तो वह मिनी को बचाने का निर्णय लेती है और उसे लेकर वहाँ से चली जाती है। फिल्म के अंत में विद्या का सामना अपराधी से होता है। संघर्ष के दौरान अपराधी मारा जाता है। एक बात तो साफ है कि अधिकांश बाल यौन शोषण के मामलों में अपराधी परिचित व्यक्ति होता है। फिल्म दिखाती है कि पीड़ित को समय पर न्याय नहीं मिल पाता। इससे न्यायिक प्रक्रिया की जटिलता और सुधार की आवश्यकता उजागर होती है। दूसरे पुलिस तंत्र की संवेदनहीनता, संस्थागत न्याय व्यवस्था की असफलता एवं कानूनी प्रक्रिया की जटिलता को भी फिल्म में दर्शाया गया है, जो पॉक्सो अधिनियम के प्रभावी क्रियान्वयन की चुनौतियों को रेखांकित करती है। फिल्म यह संदेश देती है कि महिलाओं और बच्चों को न्याय दिलाना राज्य का उत्तरदायित्व है, तथा सामाजिक न्याय केवल कानून बनाने में ही नहीं, बल्कि उनके प्रभावी क्रियान्वयन से संभव है। यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम (Protection of Children from Sexual Offences Act – POCSO), 2012 भारत में बाल यौन शोषण के विरुद्ध एक व्यापक कानूनी ढाँचा प्रदान करता है। इस अधिनियम के अंतर्गत बाल यौन उत्पीड़न, बाल पोर्नोग्राफी तथा यौन उद्देश्य से बच्चों का पीछा करना आदि अपराधों के लिए कठोर दंड का प्रावधान है। 'कहानी 2' इसी कानूनी पृष्ठभूमि में बाल यौन शोषण की कथा बुनती है। कानूनी व्यवस्था से जूझते हुए और न्याय के

लिए लड़ते हुए दुर्गा रानी सिंह को कई चुनौतियों और बाधाओं का सामना करना पड़ता है; यह कहानी इंसानियत के स्याह पहलू को उजागर करती है, और साथ ही मासूम बच्चों को जिन कठोर सच्चाइयों का सामना करना पड़ता है, उन्हें भी सामने लाती है। यह फ़िल्म विद्या की यात्रा के ज़रिए POCSO Act की गहराई में उतरती है। फिल्म का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योगदान यह है कि इसने बाल शोषण जैसे वर्जित विषय को मुख्यधारा दर्शकों के सम्मुख रखा।

आर्टिकल 15 (2019)

अनुभव सिन्हा द्वारा निर्देशित 'आर्टिकल 15' (2019), समकालीन भारत में जातीय भेदभाव, सामाजिक अन्याय और हाशिए पर पड़े समुदायों के खिलाफ हिंसा से निपटने वाली सबसे महत्वपूर्ण हिंदी फिल्मों में से एक है। 'आर्टिकल 15' भारतीय जाति व्यवस्था की क्रूरता एवं उससे उत्पन्न बाल एवं महिला उत्पीड़न को एक पुलिस जाँच के माध्यम से उद्घाटित करता है। यह फिल्म उत्तर प्रदेश के एक काल्पनिक गाँव में दो किशोरी दलित बालिकाओं के सामूहिक बलात्कार एवं हत्या की सत्य घटना, बदायूँ कांड, से प्रेरित है। एक आदर्शवादी आईपीएस अधिकारी, अयान रंजन (आयुष्मान खुराना), जाति-आधारित पुलिस तंत्र की भ्रष्ट व्यवस्था से लड़ते हुए सत्य का प्रकाशन करने का प्रयास करता है। फिल्म का शीर्षक भारतीय संविधान के आर्टिकल 15 से लिया गया है, जो धर्म, नस्ल, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव को प्रतिबंधित करता है। बाल शोषण के सिनेमाई प्रतिनिधित्व की दृष्टि से 'आर्टिकल 15' एक बहुस्तरीय विश्लेषण प्रस्तुत करता है। फिल्म में दलित परिवारों को दिखाया गया है, जो लगातार भय, अपमान और आर्थिक निर्भरता में जी रहे हैं। माता-पिता अपनी बेटियों की रक्षा करने में असमर्थ हैं क्योंकि उच्च जाति के जमींदार और राजनीतिक नेता ग्रामीण जीवन के हर पहलू पर हावी हैं। इस फिल्म में लड़कियों के लापता होने और हत्या पर शुरू में बहुत कम ध्यान दिया जाता है, क्योंकि पीड़ित निचली जातियों से हैं। पुलिस अधिकारी, राजनेता और उच्च जाति के ग्रामीण मामले को दबाने का प्रयास करते हैं। इन दलितों की बस्ती में सरकारी सुविधाएँ न के बराबर हैं, विद्यालय जर्जर हैं, और बच्चे बाल मजदूरी करने को बाध्य हैं। यह चित्रण RTE अधिनियम के क्रियान्वयन की विफलता का सशक्त सिनेमाई साक्ष्य है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 15 में धर्म, वंश, जाति, लिंग अथवा जन्म-स्थान के आधार पर भेदभाव का निषेध किया गया है। 'आर्टिकल 15' फिल्म इसी संवैधानिक प्रावधान को शीर्षक में दर्शाती है एवं यह दिखाती है कि किस तरह जातीय भेदभाव से उत्पन्न सामाजिक असमानता बालिकाओं के शोषण को जन्म देती है।

बेहज़ाद खंबाटा द्वारा निर्देशित "ए थर्सडे" (2022) एक गहन मनोवैज्ञानिक थ्रिलर है जो समकालीन भारतीय समाज में महिलाओं और बच्चों के खिलाफ हिंसा के मुद्दे को सुझाव करती है। यह फिल्म नैना जयस्वाल के इर्द-गिर्द घूमती है। 'A Thursday' एक अत्यंत भिन्न प्रकार का बाल-केंद्रित आख्यान प्रस्तुत करती है। एक प्री-स्कूल शिक्षिका नैना जोशी (यामी गौतम) अपने विद्यालय के 16 बच्चों को बंधक बनाकर प्रधानमंत्री से सीधी बात करने की माँग करती है। माँग है — बच्चों के विरुद्ध यौन अपराधों के दोषियों को फांसी की सजा। फिल्म में यह भी उजागर होता है कि नैना स्वयं बचपन में यौन शोषण का शिकार रही है। फिल्म पॉक्सो अधिनियम के अंतर्गत दंड प्रावधानों के प्रभावी क्रियान्वयन पर प्रश्न उठाती है। यह फिल्म बाल शोषण के प्रति सरकारी उदासीनता पर सीधा आक्रमण करती है। नैना का प्रधानमंत्री से संवाद, पुलिस तंत्र की प्रतिक्रिया, एवं मीडिया का व्यवहार — ये सभी मिलकर एक ऐसी व्यवस्था का चित्र प्रस्तुत करते हैं जो बाल अधिकारों को केवल कागज़ी घोषणाओं तक सीमित रखती है। फिल्म पॉक्सो अधिनियम के अंतर्गत दंड प्रावधानों के प्रभावी क्रियान्वयन पर प्रश्न उठाती है। 'A Thursday' में बाल शोषण के पीड़ित नैना जोशी को एक निष्क्रिय शिकार के रूप में नहीं, बल्कि एक सक्रिय प्रतिरोधकर्ता के रूप में प्रस्तुत करती है। फिल्म में नर्सरी स्कूल की शिक्षिका नैना जोशी द्वारा बच्चों को बंधक बनाने का कारण यही नीतिगत विफलता एवं बाल अधिकारों के उल्लंघन तथा प्रशासनिक उदासीनता को दर्शाता है।

यह तीनों फिल्में बाल शोषण को एक सामाजिक समस्या के रूप में दिखाती हैं, जिसमें व्यक्तिगत अपराध, सरकारी तंत्र और कानून व्यवस्था की कमियों को उजागर किया गया है। ये फिल्में पॉक्सो अधिनियम की भावना को भी व्यक्त करती हैं। इन संवेदनशील विषयों को प्रस्तुत करने के लिए, फिल्मकारों ने अलग-अलग सिनेमा तकनीकों का इस्तेमाल किया है। तीनों फिल्मों में बच्चे की मासूम छवि और वयस्कों की जटिल नैतिकता के बीच का विरोधाभास दर्शाते हैं, जो एक शक्तिशाली दृश्य प्रस्तुत करता है।प्रस्तुत है।

निष्कर्ष

भारतीय सिनेमा हमेशा कहानी कहने, मनोरंजन करने और शिक्षित करने का एक प्रभावशाली माध्यम रहा है। हाल के वर्षों में, ऐसी फ़िल्में बनाने का रुझान बढ़ा है जो सामाजिक मुद्दों को उजागर करती हैं और महत्वपूर्ण विषयों के बारे में जागरूकता फैलाती हैं। ऐसा ही एक अहम मुद्दा जिसे भारतीय सिनेमा ने उठाना शुरू किया है, वह है 'यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण' (POCSO) अधिनियम। ये फ़िल्में बाल यौन शोषण और उत्पीड़न की चौंकाने वाली तस्वीरें दिखाती हैं, जिससे समाज में चर्चा और जागरूकता बढ़ती है। इन फ़िल्मों में यथार्थवादी चित्रण न्याय व्यवस्था की जटिलताओं को भी उजागर करते हैं, और सामाजिक बदलाव में योगदान देते हैं, साथ ही पीड़ितों और उनके परिवारों को राहत पहुंचाते हैं।

प्रस्तुत शोध के निष्कर्ष यह स्पष्ट करते हैं कि समकालीन हिंदी सिनेमा बाल शोषण की समस्या को एक गंभीर नीतिगत एवं सामाजिक प्रश्न के रूप में प्रस्तुत कर रहा है। 'कहानी 2', 'आर्टिकल 15' तथा 'A Thursday' — तीनों फिल्में मिलकर दर्शकों को सामाजिक जागरूकता की ओर प्रेरित करती हैं। ज़्यादातर मामलों में, पीड़ित बच्चे का परिवार मामले की रिपोर्ट करने के लिए आगे नहीं आता है, क्योंकि भारतीय समाज में मौजूद सामाजिक कलंक लोगों को बच्चों के शोषण के खिलाफ बोलने से रोकता है। इन फिल्मों ने यह भी सिद्ध किया है कि पॉक्सो अधिनियम, अनुच्छेद 15 तथा शिक्षा के अधिकार (RTE एक्ट) जैसी सरकारी नीतियाँ तब तक प्रभावी नहीं होंगी जब तक उनके क्रियान्वयन में सामाजिक जागरूकता नहीं हो। सिनेमा इस जागरूकता के निर्माण में एक शक्तिशाली माध्यम है। हिंदी फिल्में अब केवल 'सामाजिक समस्या दिखाने' तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे नीतिगत संवाद को भी प्रभावित कर रही हैं। अंततः यह कहा जा सकता है कि समकालीन हिंदी सिनेमा बाल संरक्षण नीतियों का एक महत्त्वपूर्ण आईना बन चुका है। यह न केवल समस्या को दृश्यमान बनाता है, बल्कि दर्शकों को एक जागरूक नागरिक की भूमिका निभाने के लिए भी प्रेरित करता है।

संदर्भ-सूची

1. Arora, R. (2018). Child Rights and Indian Cinema: A Socio-Legal Perspective. New Delhi: Sage Publications.
2. NCPCR (2022). Annual Report on Child Rights in India. New Delhi: National Commission for Protection of Child Rights.
3. यादव, रामनरेश (2017). हिंदी सिनेमा और समाज. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन।
4. सिंह, प्रभाकर (2022). बाल अधिकार और भारतीय संविधान. लखनऊ : उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान।
5. कहानी 2: दुर्गा रानी सिंह, सुजॉय घोष ,2016
6. आर्टिकल 15, अनुभव सिन्हा ,2019
7. A Thursday, बहज़ाद खंबाट, 2022

ई मेल - hickyarun @gmail .com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 170-173
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Contemporary Global Issues and New World Order

Dr. Pankaj Kumar Tiwari
(Assistant Professor),
Dept. of Political Science,
R.D.S. College Muzaffarpur Bihar, (India)

Abstract:- The contemporary world experienced a complex outlook of global challenges that demand collective action. Most inflammable global issues like: Climate change, geo political conflicts, economic inequality, terrorism, migration, American hegemony, food and energy insecurity, pandemics like COVID-19, cyber threads and responsible use of Emerging Technologies like AI. These type of challenges are deeply interconnected. Climate change has emerged as *Key Notes* factor of 21st Century, threatening Ecosystem, livelihoods, food security and human well being. Geo political tensions and armed conflicts continue to undermine international peace and disrupt global supply chains, Economic inequality as unequal access to education, health care and employment. The rapid development of Artificial Intelligence (AI) and Technology offers enormous opportunities for innovation and development, but it has also raised privacy, cyber security and misinformation etc.

Remarks and keywords: Above mentioned challenges requires a renewed commitment to multilateralism, sustainable development, democratic governance and international cooperation. International organizations like United Nations and Regional Organizations have an important role in facilitating dialogue and collective solutions. It is indeed remarkable to say that the future of humanity depend on transforming global challenges into opportunities for cooperation, innovation and inclusive development. A peaceful, sustainable world can be achieved only when nations recognize that shared problems require shared responsibilities and Coordinating global action. Some major contemporary issues are followings:

Cold War:-After second World War, world politics was characterized by the *Cold War* between United States of America and Soviet Union. The *Cold War* was an ideological struggle in which there was a competition for supremacy between the capitalist and communist blocks. The *Cold War* was kind of war of words, it was a war fought in the minds of people in which both blocks were blaming each other. It was at the peak in decade of 1950 and 1960. In future, The feelings of *DÉTENTE* has developed between the relation of America and Soviet Union. We must feel that "Discipline and self accepted control should be base of international organisation[1]"

Unipolar World System:-After second World War, the entire world was divided in two blocks (USA and Soviet Union) but In the last of 20th Century it seemed that the United States was the single greatest power in the world. In fact, victory of America in the *Gulf War* increased its power, influence and dominance beyond imagination. Today, America's immense nuclear power and economic potential have made it the ruler of the world. Now, United Nations has dominated by USA. The world bank and International Monetary Fund operate in its interest. Most matters within the United Nations are decided according to American will."The founder of united nation system were not only impacted by league of nation, also from world war themselves.[2]" Since, the emergence of economic globalization USA has become the world's sole super power. World Trade Organization (WTO) cannot make any decision against American wishes. In the name of national interest and security it has unilaterally violated international environmental agreements such as Kyoto protocol. In short, after the end of *Cold War*, world has become unipolar and to a large extent, global economic progress is also determined by American perspective. "We know that security council works as membership agent of UNO[3]" **Collapse of Communism:-** In 1990-91, a great revolution took place and communism was buried in Eastern Europe. Communist rule ended in Hungry on November 7th 1985, in Poland on January 20th 1990, In East Germany on March 18th 1990, also in numerous countries. After the collapse of communist parties, the adoption of a multi party system, free election and a market oriented economy unleashed a wave of freedom in Eastern Europe and the Soviet Republic but now a days "Approach and competition of atomic war emerged the possibility of atom war.[4] "

USA Nature of Trade Agreement:- In the global scenario of *New World Order* U.S President Donald Trump's trade agreements create a new category within established international trade agreements. The fact, however, that this deals are not in accordance with the General Agreement on Tariffs, Trade and the World Trade Organization make them legally suspicious. U.S. President Donald Trump has signed several trade agreements with countries such as Malaysia, Cambodia, Argentina and Bangladesh. These agreements have been signed under the shadow of intimidating and illegal tariffs. The U.S. has also announced a trade agreement with India, for which the two sides have issued a joint statement. Trade agreements exemplify the legalization of international trade relations. But are all trade agreements are same? Can the India-U.S. trade deal, once finalized, be compared to India's recent agreements with the EU or the U.K.? The U.S. refers to agreement signed by Mr. Trump as Agreements on Reciprocal Trade (ART), as opposed to Free Trade Agreements (FTAs). This creates a new category in international trade deals which are considerable for all underdevelopment countries. "America has a strong military power and Military dominance is a serious challenge before the world.[5]"

Multilateralism:- At the core of international trade treaties is the robust multilateral trade agreement established by the General Agreement on Tariffs and Trade (GATT) and the World Trade Organization (WTO). The GATT untethered and global American project of creating a non-discriminating trading regime firmly grounded in the Most-Favoured-Nation (MFN) rule (WTO rule specifies that if a special favour is granted to one country, such as lower tariffs, than it has to be extended to all other WTO member as well).

" American behaviour is against of UN Constitutional Law.[6]" The U.S. established a multilateral trading arrangement, based on an unconditional MFN rule, due to the pursuit of trade protectionism during the interwar years. Further, the formation of the WTO in 1995 provided an institutional architecture to this multilateral trade project. The WTO expanded trade beyond goods to include services and intellectual property and established an intricate dispute settlement mechanism. While some view the WTO as part of a global imperialist state its *one-country-one-vote* principle provides developing countries with same agency and an

opportunity to forge alliances and bargain with the developed world. “There is a great role of emerging super power India in world economy.”[7]

The Global Environmental issues:- Trend Slightly more than a decade age, in June 1972, the United Nations convenced a major intergovernmental conference on the Human Environment at Stockholm, Sweden. It was undoubtedly the most important environmental even of an international character that took place during the past two decades and to a extent set into motion a process through which international issues and concerns to be discussed, reviewed and analyzed.

When the Stockholm Conference was first proposed by Sweden in 1968, the industrialized countries in general reacted favorably. This is not surprising since interest in environmental issues in those countries was high. The activities of numerous citizen’s group and non-governmental organizations continually focused the attention of the general and politician to deteriorating environmental situations. Many groups took the streets to protest, and especially in United States, environment and Vietnam became two of the major issues with the youth rebelled against the establishment. “ China as a superpower will play the role in future.[8]” These pressure groups and several Scientist started to publicise critical and emerging environmental issues, some real and other not so. At the crest of the environment movement, the *Earth Day* attracted and estimated 20 million participants in the United States alone.

Deforestation:- Expansion of agriculture is a primary cause of deforestation at present, followed by demand of fuel wood, and forest products. If present trends continue, it is estimated that both forest cover and stocks of commercial-size wood will decline by 40% during the next two decades in developing countries. From the environmental viewpoint, the potential impacts of these loss would be reduction of biological diversity and changes in climate and in soil and water regimes. Biotic diversity is not only an important indicator of the ecological health of the planet, but also an essential storehouse for genetic materials for developing new crop varieties and medicinal drugs. While extinction has been the normal fate of virtually all species, the magnitude of deforestation projected in coming decades would mean that the rate of natural extinction would be trivial when compared to man-made extinctions, which will occur primarily due to loss of habitats. “Declition and erosion of environment is the international problem.[9] “

So far as climate is concerned, the main potential impact of deforestation could be increase levels of Carbon Dioxide. While much of the Carbon Dioxide in the atmosphere comes from the combustion of fossil fuels, recent studies indicate the carbon stored in *biomass* is decreasing rather than increasing. Net decrease of biomass volume would imply carbon dioxide build-up in the future through present estimate of the amount very considerably.

Terrorism:- **T**errorism is the burning contemporary issue in the world today. The primary object of terrorism is to instill fear and terror in humans and human society through violence and force. The debate on international terrorism has become more heated since the September 11, 2001 attack by Alqueda on the World Trade Centre in the United States. The heinous attack on the Indian Parliament on December 13, 2001 by Pakistan backed terrorist organization like Lashkar-e –Tiaba and Jaish-e-Mohammad. Today, a new face of Terrorism “Masked Terrorism” is also being seen. Its primary objective is to establish the rule of a particular religion in the world.

It is clear that violence, terrorism and terror have no place in a civilized society. Any campaign against international terrorism can only be effective if the United Nations initiates it impartially. “Disarmament may reduct and and eliminate of some or all weapons.[10]” However, given the current economic situations this does not seems possible therefore it is essential to build universal consciousness against terrorism. Now the basic question emerging here that in this contemporary global perspective or New World order where India is standing….? India is

a country where largest population of the youth across the world live together but it is more than truth that in India largest youth of the world are unskilled. It is right that India is trying to insert himself in global geopolitics. It is predicted that till 2050 China will be first economy, India will be second economy and America will be third economy of the world and America is mostly worried for this. Experts say that after second world war new world order is circulating around multipollar to bypollar to unipollar and again with more than more chance of multipollar, recently the war taken place in this year, Iran was test of it. "Changing is the eternal rule of nature.[11]" American President wants realize to whole world that without America how the world will be? COVID-19 has disappeared all the world order even new world order.

If In the next 30 years india has not involved in any type of war, undoubtedly India will be a develop country till 2047.

References:-

1. Pant Prof Pushpesh, "International Organization" Tata M C Hills Publication company limited, New Delhi, 2008 page n. 3
2. Leeland M Goodrich, "The maintenance of international peace and security" International organization (samar 1965) page 429,431
3. Planno and Piggs, forging world order, The politics of international organization Page-92
4. Sinhal Dr S C, " International organization" Lakshmi narayan agrawal publication, Agra 2013 Page-328
5. Shukla Dr Shashi, " International Organisation" Bharat Publication Lucknow,2009 Page-32
6. Vashu Dr Rumki, " UNO Theory and behaviour" Jawahar publishers and distributors, New Delhi -2008, Page-379
7. Tripathi Prof SPMT," International Organisation" Pratyush Publication, Delhi-2013, Page-131
8. Phadiya B L, "International Politics" SBP Agra 2002, Page-246
9. Malcon N Shaw, International Law, Cambridge university press fourth law, edition 1998 p-585
10. Margenthau Hans J. "Politics among Nation" third edition page 291-92
11. Tiwari Dr P K, " Sanyukt Rashtra Sangh Badalte sandarbh ewam prasangikta" Ankit Publication Delhi,2018 page-207

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 174-178
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

रामफल सिंह खटकड़ के प्रबन्धकाव्यों में राष्ट्रीयता की भावना

रजनी
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय रोहतक

रामफल सिंह खटकड़ के प्रबन्धकाव्यों में राष्ट्रीयता की भावना पर विचार करने से पूर्व मुझे लगा की राष्ट्रीय–चेतना और राष्ट्रीयता की भावना के अन्तर को भी समझ लिया जाए। रामफल सिंह खटकड़ ने अपने अप्रकाशित निबन्ध–संग्रह चिन्तन–सौरभ में राष्ट्रीय–चेतना और राष्ट्रीयता की भावना का अन्तर स्पष्ट करते हुए लिखा है कि ''राष्ट्रीय–चेतना और राष्ट्रीयता की भावना, दोनों अवस्थाएँ राष्ट्र के प्रति प्रेम से जुड़ी हैं, लेकिन राष्ट्रीय–चेतना एक व्यापक, बौद्धिक और जागरूक अवस्था है जबकि राष्ट्रीयता की भावना मुख्य रूप से अपनत्व और प्रेम की भावात्मक अनुभूति है। जहाँ राष्ट्रीय–चेतना में राष्ट्र का ज्ञान और कर्तव्यबोध शामिल है, वहीं राष्ट्रीयता की भावना में राष्ट्र–भक्ति और बलिदान की भावना प्रबल होती है, इसी को राष्ट्रवाद भी कहा जाता है। राष्ट्रीय–चेतना और राष्ट्रीयता की भावना में मुख्य अन्तर यह है कि राष्ट्रीयता की भावना राष्ट्र के प्रति अगाध प्रेम, निष्ठा और समर्पण की भावना होती है। यह एक मानसिक अनुभूति है जो देश की संस्कृति और सभ्यता के प्रति गौरव पैदा करती है, जबकि राष्ट्रीय–चेतना राष्ट्र के प्रति जागरूक सामूहिक सोच है; इसमें राष्ट्र की अस्मिता, गौरव, संस्कृति और राष्ट्र के प्रति नागरिकों की समग्र समझ अन्तर्निहित रहती है। राष्ट्रीयता की भावना प्रायः श्रद्धा, भक्ति और प्रेम पर आधारित होती है, जिसमें कभी–कभी ज्ञान का अभाव हो सकता है; जबकि राष्ट्रीय–चेतना में राष्ट्र के इतिहास, अधिकारों और कर्तव्यों का बौद्धिक ज्ञान सम्मिलित होता है। राष्ट्रीयता की भावना एक व्यक्ति की अपने देश के प्रति व्यक्तिगत या सामूहिक भावना हो सकती है। राष्ट्रीय–चेतना अधिक व्यापक है, जो पूरे राष्ट्र को एक सूत्र में पिरोती है और राष्ट्र–निर्माण में सहायक होती है। राष्ट्रीयता की भावना का प्रकटीकरण देश के लिए बलिदान, शौर्य और प्रेम के रूप में अभिव्यक्त होता है, जबकि राष्ट्रीय–चेतना का प्रकटीकरण सामाजिक सुधार, राजनीतिक जागरूकता और राष्ट्र की अस्मिता की रक्षा के रूप में होता है। संक्षेप में कहें तो कहा जा सकता है कि राष्ट्रीयता एक भावना है, जबकि राष्ट्रीय–चेतना उस भावना का जागरूक और बौद्धिक रूप है। जब राष्ट्रीयता की भावना यानी राष्ट्रप्रेम में ज्ञान और विवेक जुड़ जाते हैं, तो वही राष्ट्रीय–चेतना बन जाती है।''[1] उक्त आधार पर राष्ट्रीयता की भावना को परिभाषित करूँ तो कहा जा सकता है कि राष्ट्रीयता की भावना एक जैसे इतिहास, संस्कृति और परम्पराओं के आधार पर लोगों के बीच भावनात्मक लगाव है, जिससे वे राष्ट्रहित के लिए स्वार्थ को त्यागने और सुरक्षा व प्रगति के लिए प्रेरित होते हैं।

राष्ट्रीय प्रतीकों और पुरुषों के प्रति आदर का भाव, राष्ट्र की सुरक्षा और अखण्डता के लिए व्यक्तिगत स्वार्थों से ऊपर उठकर कार्य करने और सांस्कृतिक एकता का भाव, दमनकारी परिस्थितियों में राष्ट्र की स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करने का भाव, देशवासियों को एक–दूसरे के प्रति सम्मान और राष्ट्र की प्रगति के लिए प्रेरित करना का भाव भी राष्ट्रीयता की भावना में ही सम्मिलित हैं। किसी समाज के सारे व्यक्तियों में किसी निर्दिष्ट भौगोलिक सीमा के अन्दर अपने पारस्परिक भेद–भावों को भुला, सामूहिकता की भावना से प्रेरित होकर राष्ट्र के प्रति मन, वचन, कर्म से संवेदनशील, सजग और राष्ट्रहितार्थ अपनी निजता को त्यागकर सर्वस्व बलिदान करने की भावना हो तो उसे भी राष्ट्रीयता की भावना कहा जा सकता है। उक्त परिभाषाओं के आधार पर खटकड़ जी के पन्नाधाय का महा बलिदान, वीराँगना दुर्गा देवी वोहरा का मौन बलिदान, सतनामी साधों का शांति–युद्ध और महा–वीर चारों प्रबन्धकाव्यों में राष्ट्रीयता की भावना पर विचार करने पर जो मुख्य–बिंदु हमें देखने को मिलते हैं वे निम्नलिखित हैं :–

1. राष्ट्र के प्रति मन, वचन, कर्म से संवेदनशील, सजग और राष्ट्रहितार्थ अपनी निजता को त्यागकर सर्वस्व बलिदान करने की भावना :–

राष्ट्रहित के लिए सर्वस्व परित्याग की भावना किसी भी देश के नागरिकों का सबसे बड़ा गुण होती है। भारत के इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण हैं, जहाँ वीर बलिदानियों ने अपने व्यक्तिगत सुख, परिवार और जीवन की परवाह न करते हुए राष्ट्रहित को सर्वोच्च रखा और अपने प्राणों की आहुति दी, उनमें वीराँगना दुर्गा देवी और भगवतीचरण वोहरा भी सम्मिलित हैं। रावी नदी के किनारे पर बम–परीक्षण करते हुए भगवतीचरण के मारे जाने के पश्चात उनकी पत्नी दुर्गा देवी वोहरा के घटनास्थल पर जाने को लेकर खटकड़ जी ने वीराँगना दुर्गा देवी वोहरा का मौन बलिदान प्रबन्धकाव्य का प्रणयन किया है, जो राष्ट्रहित में निजी हितों के परित्याग, राष्ट्रीयता की भावना और बलिदान का सर्वोच्च उदाहरण है। जीवन के अन्तिम क्षणों में भी निजी स्वार्थों, पारिवारिक मोह, सुख–सुविधाओं और यहाँ तक कि प्राणों को भी राष्ट्र की सम्प्रभुता, सुरक्षा और समृद्धि के लिए न्योछावर कर देने की भगवतीचरण वोहरा की भावना इनके कार्यों, निर्णयों और जीवन–शैली में भी दिखती है, जो वीराँगना दुर्गा देवी वोहरा के लिए प्रेरणा का स्रोत बनती है। जिसका वर्णन खटकड़ जी ने अपने प्रबन्धकाव्य वीराँगना दुर्गा देवी बोहरा का मौन बलिदान के षष्ठ सर्ग मुक्ति–पथ में निम्न प्रकार से किया है :–

"जीवन के अन्तिम क्षणों में, भगवती ने कही मन की बात।
पराधीनता के उजले दिन, लगते हैं मुझे काली रात।
मुझ में भी जीने की इच्छा, कैसे इसे नकारूँ दुर्गे!
पराधीन शर्तों पर जीना, कैसे मैं स्वीकारूँ दुर्गे!
बोला, जितना दे सकता था, उतना देश को दिए चला।
विभ्रम, भय, शाप मिटाने हेतु, मैं बन बलिदानी दीप जला।
नयन–दृष्टि सबकी सम दीखे, पर दृष्टिकोण समान नहीं हैं।
एक मरता अस्मिता खातिर, वहीं दूजे को ध्यान नहीं है।
कभी न बनना कलश–कंगूरा, नींव का पत्थर बनना दुर्गे!
चला करके बलिदानी–चरखा, मुक्ति का वस्त्र बुनना दुर्गे!
दुर्गा बोली, मुझे याद हैं, मिलन–रात की बातें सारी।
देश–धर्म पर छाया संकट, भारत की हालातें सारी।
बोली, वीर–वधू बन करके, सौ–स्वर्गों का सुख मुझे मिला।
प्रियतम! इसे बुझने न दूँगी, जो अग्न जलाई, निज देह जला।।" [2]

2. सांस्कृतिक–मूल्यों की पहचान और स्वदेश–प्रेम की भावनाओं की अभिव्यक्तिः–

खटकड़ जी ने अपने प्रबन्धकाव्य पन्नाधाय का महा बलिदान में भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों को पहचान दिला कर उनके गौरव को स्थापित किया है। महाराणा संग्राम सिंह और उनकी पत्नी महारानी कर्मावती को राजकुमार उदय सिंह की प्राणों की रक्षा के लिए अपने इकलौते बेटे चन्दन का बलिदान देकर

राजधात्री पन्ना द्वारा दिए गए वचन का पालन करना, भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की रक्षा करना और उन्हें पहचान दिलाना ही तो है। इनके प्रबन्धकाव्यों में अहिंसा, असहयोग, और स्वावलंबन जैसे गाँधीवादी–मूल्यों के साथ–साथ देश की आजादी के लिए त्याग की भावना भी झलकती है। भारतीय नारी के त्याग को राष्ट्रप्रेम से जोड़कर नारी को राष्ट्र की शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित करना भी इनके प्रबन्धकाव्य–लेखन का मुख्य उद्देश्य रहा है। महाराणा संग्राम सिंह के बड़े बेटे राजकुमार विक्रमादित्य को क्रूरता से मारने के पश्चात महाराणा संग्राम सिंह के बड़े भाई महाराणा पृथ्वीसिंह का अनौरस पुत्र बनवीर जब उनके छोटे बेटे राजकुमार उदय सिंह को मारने के लिए उदय सिंह के कक्ष में प्रवेश करता है तो खटकड़ जी ने उस दृश्य का जो मर्मस्पर्शी वर्णन किया है, वह वर्णन नारी के त्याग और बलिदान की पराकाष्ठा का अद्वितीय उदाहरण है। द्रष्टव्य है :–

"प्रलोभी बनवीर जब आया, धाय त्याग–भाव से भर गई।
वचन पालन के संकल्प को, और अधिक वह पक्का कर गई ।।
वचन, फर्ज ने याद दिलाया; बड़ा नहीं ममता–बन्धन है।
कटकर जग को वासित करता, मेरा चन्दन वह 'चन्दन' है।
चन्दन की माँ थी जो पन्ना, सुला सुत को, मर गई पन्ना।
पूत–शीश वचन–बेदी पर, अपने हाथों धर गई पन्ना ।।
चन्दन उदय, उदय चन्दन है, सम–भाव से भर गई पन्ना।
भय के सब आधार मिटाकर, भय–सिन्धु से तर गई पन्ना।।
मान फर्ज़ को बड़ा मर्ज से, हृदय काबू कर गाई पन्ना।
विराट रूप दे ममता को, अमर धाय को कर गई पन्ना।।
त्याग, धर्म का सही मार्ग है, यही सोचकर तर गई पन्ना।
प्रहार–पशुता का सहने को, शिव–भाव से भर गई पन्ना।। [3]

3. औपनिवेशिक दासता के विरुद्ध विद्रोह और राष्ट्र की स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करने का भाव तथा पारस्परिक सम्मान और सामूहिकता की भावना :–

यह कथन भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के मूल तत्वों को बहुत ही सटीक तरीके से रेखांकित करता है। ये भावनाएँ ही भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन की नींव, ब्रिटिश हुकूमत के शोषण, अन्याय और अत्याचार के खिलाफ तीव्र प्रतिक्रिया और एक संप्रभु राष्ट्र की स्थापना के लिए संघर्ष करने की भावना को जागृत करने का कारण बनी। यह केवल सत्ता हस्तांतरण नहीं, बल्कि आत्मसम्मान की लड़ाई थी। यही कारण था कि विविधता के बावजूद भी पूरा देश एकजुट होकर अंग्रेजों के खिलाफ लड़ा, जिसने राष्ट्रीयता की भावना को जन्म दिया और भारत को एक औपनिवेशिक राज्य से एक लोकतान्त्रिक गणराज्य में बदलने के लिए प्रेरित किया। यह एकजुटता ही ब्रिटिश साम्राज्यवाद को हराने का मुख्य हथियार बनी, जिसमें क्रान्तिकारियों की भाभी वीराँगना दुर्गा देवी वोहरा जैसी महिलाओं का भी सक्रिय योगदान रहा, जिसके सक्रिय योगदान को खटकड़ जी ने अपने प्रबन्धकाव्य वीराँगना दुर्गा देवी वोहरा का मौन बलिदान में निम्न प्रकार से रेखांकित किया है :–

"पुत्र नेह–सिंधु में तैरती, भाव–विह्वल दुर्गा को देखा।
दुखी–व्यथित सुखदेव भाल पर, गहरी हुई चिंता की रेखा।
कैसे कहूँ दुर्गा–भाभी से, भैया नदिया पार गए हैं।
कूल–किनारे छोड़ बहे जो, बन रावी की धार गए हैं।।
सुखदेव को मौन देखा, तो जागी शंका दुर्गा मन में।
शचि लिपट सुखदेव से बोला, चाचु तुम कब आए सदन में ।
सूक्खी मौन, दुर्गा भी मौन, मौन सदन का कोना–कोना।
मौन, मौन रह लगा बोलने, समझे मौन, मौन का होना।

मौन अधर सुखदेव के कांपे, गीले नयन हुए थे लाल।
अनहोनी बन होनी हो गई, दुर्गा समझ गई तत्काल।।'' [4]

4. राष्ट्रहित के लिए विवेकपूर्ण तरीके से स्वार्थ के परित्याग और बलिदान की भावना :–

राष्ट्रहित के लिए विवेकपूर्ण तरीके से स्वार्थ के परित्याग और बलिदान की भावना का अर्थ है, व्यक्तिगत हितों को राष्ट्र की भलाई, सुरक्षा और विकास के लिए पीछे छोड़ देना। यह कायरता नहीं, बल्कि एक उच्च स्तरीय समझदारी और देशभक्ति है, जहाँ व्यक्ति समझता है कि राष्ट्र के सुरक्षित और समृद्ध रहने में ही उसका अपना वास्तविक हित निहित है, इसी को विवेकपूर्ण परित्याग कहा जाता है, यह अंधाधुंध त्याग नहीं होता, बल्कि एक सचेत निर्णय होता है, जहाँ व्यक्ति राष्ट्र के लिए क्या, कब और कितना बलिदान करना है, इसका निर्णय समझदारी से लेता है और अपनी संकीर्ण इच्छाओं, व्यक्तिगत लाभ, लोभ और अहंकार को त्यागकर राष्ट्र को प्राथमिकता देता है। कर्तव्यपरायणता, त्याग, बलिदान और समर्पण की इसी भावना को राष्ट्रीयता की भावना कहा जाता है, जो हम सब के लिए प्रेरणा का स्रोत होती है। राष्ट्रीयता की इसी भावना को खटकड़ जी ने अपने प्रबन्धकाव्य महा–वीर में निम्न प्रकार से अभिव्यंजित किया है :–

''अपने वंश के लाल–मणि, लो तुझे सौंप चला आज सोनिये!
देशभक्त वीरों के वंशज, हैं ये वंश के ताज सोनिये!
राहुल–प्रियंका को कहना, कि रखें वंश की लाज सोनिये!
तब देखना; केवल तू ही न, देश करेगा नाज सोनिये!
कहना बढ़ें जन–सेवा पथ पर, अपनी सुख–सुविधा को त्याग।
हमदर्दी की राह दिखलाना, जले नहीं बदले की आग ।।
आत्मोत्सर्ग बिन नहीं संभव है, सत्य का सन्धान सोनिये!
सत्य सदा माँगता साधक से, उसके सिर का दान सोनिये!
बलि–पथ पर तुम बढ़ते जाना, करने को बलिदान सोनिये!
मेरी शिथिल देह करती है, अब तो अग्नि–स्नान सोनिये!
दिव्य–लोक को ले जाएगी, पुत्र–करों से प्रज्वलित आग।
'महामिलन' को उत्सुक है अब, निष्प्राण–देह का 'दिव्य–भाग'।।'' [5]

5. मिथकीय प्रयोग यानी ऐतिहासिक पात्रों, घटनाओं और पौराणिक संदर्भों से प्रेरणा :

मिथकीय प्रयोग का अर्थ है साहित्य, कला या विमर्श में पौराणिक पात्रों, घटनाओं, लोककथाओं और ऐतिहासिक संदर्भों को वर्तमान संदर्भ में पुनर्व्याख्यायित करना। यह केवल पुरानी कहानियों को दोहराना नहीं है, बल्कि मिथकों के माध्यम से आधुनिक जीवन की जटिलताओं, संघर्षों और मूल्यों को सहज व रोचक तरीके से प्रस्तुत करना भी है। पौराणिक पात्र केवल व्यक्ति नहीं, बल्कि विशिष्ट मानवीय प्रवृत्तियों के प्रतीक भी होते हैं। लोक–मानस में गहरे रचे–बसे होने के कारण मिथक, पीढ़ियों से चली आ रही कहानियों के माध्यम से न केवल विरासत को जीवन्त रखते हैं, बल्कि सामाजिक या व्यक्तिगत संघर्षों को जानने–पहचानने का माध्यम भी होते हैं। खटकड़ जी ने भारतीय इतिहास और पुराणों से उपेक्षित पात्रों और घटनाओं को चुनकर उन्हें राष्ट्रीयता की भावना के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया है। खटकड़ जी ने अपने प्रबन्धकाव्य वीराँगना दुर्गा देवी वोहरा का मौन बलिदान के प्रथम सर्ग मंगलाचरण में मिथकीय प्रयोग करके पौराणिक पात्रों और घटनाओं की वर्तमान संदर्भ में जिस प्रकार से पुनर्व्याख्या की है, वह उनके कुशल प्रबन्धकाव्यकार होने का परिचायक तो है ही, बहुविज्ञ होने का प्रमाण भी है। द्रष्टव्य है :–

''जहाँ राजसभाएँ नहीं धर्म की ढाल बनें,
सिंह–से वीर भी भय के कारण शृगाल बनें
अर्थानर्थ पर बिना विचारे भरी सभा में–
जहाँ शिशुपाल मर्यादा भूल वाचाल बनें,
तब बन चक्रपाणि, सुदर्शन चक्र चलाने,

हे मात शारदे! तुम आना।।
जहाँ दुर्योधन और दुःशासन कुकर्म करें,
भरी सभा के बीच द्रोपदी लाज हरें,
जुआ–खेल खेलते बन षड्यंत्रकारी
अधर्मी–शकुनि, जब युधिष्ठिर–विवेक हरें,
तब बन कृष्ण–कर–चीर कृष्णा–लाज बचाने,
हे मात शारदे! तुम आना।।" (6)

6. राष्ट्रीयता की भावना के साथ–साथ मानवतावादी सोच और विश्व बन्धुत्व के भावना की अभिव्यंजना :–

खटकड़ जी के प्रबन्धकाव्यों की एक विशेषता यह भी है कि इनके प्रबन्धकाव्यों में राष्ट्रीयता की भावना के साथ–साथ सम्पूर्ण मानवता की प्रगति की कामना करते हुए विश्वबन्धुत्व की भावना को भी अभिव्यंजित होते हुए देखा जा सकता है। उदाहरण स्वरूप इनके महा–वीर नामक प्रबन्धकाव्य को लिया जा सकता है, जो राजीव गाँधी की निर्मम हत्या को लेकर लिखा गया एक ऐतिहासिक–प्रबन्धकाव्य है। सर्वविदित है कि चेन्नई तमिलनाडु के पेरम्बटूर में चुनाव प्रचार के दौरान षड्यंत्रकारी और उपद्रवी ताकतों द्वारा भारत के पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गाँधी की निर्मम हत्या इसलिए कर दी गई थी क्योंकि राजीव गाँधी पड़ोसी देशों के साथ मधुर सम्बन्ध स्थापित करके, विश्व स्तर पर शान्ति और सुव्यवस्था स्थापित करना चाहते थे और यह सब उन उपद्रवी ताकतों को मंजूर नहीं था। राजीव गाँधी की हत्या के बाद जब उनका मृत शरीर 'वीर–भूमि' के श्मशान घाट में लाकर चिता पर रखा गया तो उसपर श्रद्धा–सुमन चढ़ाते हुए उनके मित्रगणों द्वारा उनके व्यक्तित्व के बारे में जिस प्रकार के भाव अभिव्यक्त किए गए, वे भाव इस बात का प्रमाण हैं कि राजीव गाँधी की राष्ट्रीयता की भावना संकीर्ण नहीं, बल्कि उसमें मानवतावादी सोच और विश्वबन्धुत्व की भावना भी निहित थी। द्रष्टव्य है :–

"कहते थे खुशहाल करेंगे, भूख–गरीबी दूर भगाकर।
सद्भावों से भरे रहें मन, सांकीर्ण्य दीवारें गिराकर।
सीमाओं के बनेंगे रक्षक, सौहार्द के दीप जलाकर।
प्रवेश करें हम नयी सदी में, सबको अपने गले लगा कर।
राष्ट्र–हित को सर्वोपरि रखा, गाया सदा मानवता–राग।
हे मानवता के सजग प्रहरी ! कहाँ चल दिए लिए विराग।।"(6)

अन्ततोगत्वा मैं यही कहूँगी कि राष्ट्रीयता एक भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक भावना है, जो एक जनसमूह को साझा इतिहास, संस्कृति, भौगोलिक क्षेत्र और राजनीतिक आकांक्षाओं के आधार पर एकता के सूत्र में पिरोती है। इसके मूल तत्वों में भौगोलिक एकता, समान भाषा, साझा इतिहास, सांस्कृतिक समानता, धर्म और राजनीतिक चेतना शामिल हैं। इन तत्वों के सम्मिलित प्रभाव से लोगों में हम की भावना विकसित होती है, जो राष्ट्र निर्माण के लिए अनिवार्य है। इस भावना की अनुगूँज रामफल सिंह खटकड़ के प्रबन्धकाव्यों के शब्द–शब्द में सुनाई देती है।

संदर्भ

1. चिंतन–सौरभ (निबन्ध–संग्रह, अप्रकाशित), लेखक–रामफल सिंह खटकड़
2. वीराँगना दुर्गा देवी वोहरा का मौन बलिदान (प्रबन्धकाव्य), लेखक–रामफल सिंह खटकड़ पृष्ठ 97
3. पन्नाधाय का महा बलिदान (प्रबन्धकाव्य), लेखक–रामफल सिंह खटकड़, पृष्ठ 81
4. वीराँगना दुर्गा देवी वोहरा का मौन बलिदान (प्रबन्धकाव्य), लेखक–रामफल सिंह खटकड़ पृष्ठ 44
5. महा–वीर (प्रबन्धकाव्य), लेखक–रामफल सिंह खटकड़, पृष्ठ 53
6. वीराँगना दुर्गा देवी वोहरा का मौन बलिदान (प्रबन्धकाव्य), लेखक–रामफल सिंह खटकड़ पृष्ठ 27

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 179-183
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पूर्वांचल की लोक-संस्कृति में धोबिया गीत एवं नृत्य: ऐतिहासिक संदर्भ, समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य और समकालीन संकट

डॉ. दीपक कुमार कन्नौजिया
सुरसी, रुदौली, मीरजापुर, उत्तर प्रदेश

शोध-सार (Abstract)
लोक-संस्कृतियाँ समाज की संरचनात्मक वास्तविकताओं, श्रम-प्रक्रियाओं, जातीय संबंधों और प्रतिरोध की वाचिक स्मृतियों का जीवंत अभिलेख होती हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश (पूर्वांचल) और पश्चिमी बिहार के भोजपुरी-अवधी अंचल में प्रचलित 'धोबिया गीत एवं नृत्य' केवल एक प्रदर्शनकारी लोकविधा नहीं, बल्कि श्रमजीवी धोबी समुदाय की सांस्कृतिक अस्मिता, मनोवैज्ञानिक विरेचन और सामाजिक अनुबंध की सशक्त अभिव्यक्ति है। प्रस्तुत शोध-आलेख में धोबिया विधा के ऐतिहासिक उद्भव, श्रम-संस्कृति, जजमानी व्यवस्था में इसकी प्रकार्यात्मक उपादेयता तथा 'काठ के घोड़े' के मिथकीय प्रतीक का समाजशास्त्रीय विश्लेषण किया गया है। साथ ही, इमाइल दुर्खीम के सामूहिक उल्लास (Collective Effervescence), जेम्स सी. स्कॉट के अदृश्य प्रतिरोध (Hidden Transcripts) तथा एम.एन. श्रीनिवास के सांस्कृतिकरण व प्रतीकात्मक दावे के सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्यों के आलोक में इस कला की पड़ताल की गई है। अंततः, आधुनिक तकनीकी प्रसार, जजमानी के विघटन और समकालीन उपभोक्तावादी संस्कृति के बीच इस विधा के अस्तित्वगत संकट और संरक्षण के उपायों को रेखांकित किया गया है।

कुंजी-शब्द (Keywords) धोबिया गीत, धोबिया नृत्य, समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण, श्रम-संस्कृति, काठ का घोड़ा, जजमानी व्यवस्था, गुप्त पाठ (Hidden Transcripts), सामूहिक उल्लास, पूर्वांचल।

प्रस्तावना (Introduction)
भारतीय समाज की संरचना में लोक-साहित्य और पारंपरिक प्रदर्शनकारी कलाएं कभी भी दैनिक जीवन और आजीविका से पृथक नहीं रहीं। डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय के अनुसार, लोकगीत केवल अमूर्त काव्य न होकर जनजीवन के सामूहिक हर्ष-विषाद, श्रम और संबंधों का स्वाभाविक प्रकटीकरण हैं। पूर्वांचल का धोबिया गीत और नृत्य इसी श्रम-आधारित लोक-परंपरा का एक विशिष्ट और समृद्ध रूप है। यह विधा गीत, द्रुत गति के तालबद्ध वादन और नर्तक के तीव्र शारीरिक अभिनय का समन्वित रूप है। पारंपरिक रूप से यह मांगलिक प्रसंगों-यथा विवाह, द्विरागमन (गौना), मुंडन और जन्मोत्सव-पर प्रस्तुत किया जाता रहा है। किंतु यह केवल उत्सवधर्मिता का साधन नहीं है;

समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह समुदाय के आंतरिक मनोवैज्ञानिक संतुलन, जातियों के बीच प्रकार्यात्मक अंतर्क्रिया और दमित वर्गों द्वारा सत्ता-संरचना के समक्ष प्रतीकात्मक समानता की मांग का सशक्त मंच रहा है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं श्रम-संस्कृति की उत्पत्ति (Historical Background and the Origins of Labor Culture) धोबिया गीत का इतिहास औपचारिक राजकीय अभिलेखों के बजाय वाचिक परंपरा (Oral Tradition) के माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी विकसित हुआ है-

श्रम की लयबद्धता और मनोवैज्ञानिक विरेचन (Catharsis): नदी-जलाशयों के घाटों पर पत्थरों पर भारी कपड़ों को धोना, खंगालना और सुखाना एक कठिन और नीरस शारीरिक श्रम था। पत्थरों पर कपड़ों के टकराने की आवर्ती ध्वनि (Rhythm) ने एक आंतरिक ताल को जन्म दिया। दिनभर के कठोर परिश्रम के उपरांत शाम के समय मृदंग और करताल की तेज थाप पर झूमना श्रमिकों के लिए शारीरिक अवसाद और मानसिक तनाव से मुक्ति का प्राकृतिक विरेचन सिद्ध हुआ।

अध्ययन की पद्धति (Methodology of the study)

प्रस्तुत अध्ययन मुख्यतः वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक प्रकृति का है। इसमें लोक-संस्कृति, लोकगीत, लोकनृत्य, ग्रामीण समाज, जाति व्यवस्था तथा सांस्कृतिक परिवर्तन से संबंधित उपलब्ध साहित्य और द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है।

ऐतिहासिक एवं नृवंशविज्ञानपरक साक्ष्य(Historical and ethnographic evidence)

विलियम क्रुक (William Crooke) ने अपनी कृति *'The Tribes and Castes of the North-Western Provinces and Oudh'* (1896, Vol. II) में उत्तर भारत के धोबी समाज के वैवाहिक और पारिवारिक अनुष्ठानों में इस नृत्य और गायन की सामाजिक अनिवार्यता दर्ज की है।

औपनिवेशिक कालीन **डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स** (यथा गाजीपुर, आजमगढ़, मिर्ज़ापुर और बनारस) के सांस्कृतिक खंडों में भी ग्रामीण मेलों और स्थानीय जातियों के विशिष्ट कला-रूपों में धोबिया नाच का स्पष्ट उल्लेख मिलता है

संरचनात्मक विधान एवं 'काठ के घोड़े' का प्रतीकात्मक विश्लेषण

वाद्य एवं प्रस्तुति शैली धोबिया नृत्य की गति अत्यंत तीव्र (द्रुत लय) होती है। इसमें मुख्य रूप से तीन वाद्ययंत्र रीढ़ का कार्य करते हैं:

- **मृदंग / पखावज / ढोलक:** जो नर्तक के चरणों को तीखी गति और ताल प्रदान करते हैं।
- **झांझ अथवा करताल:** धातु की यह खनक ताल के चक्र को बांधे रखती है।
- **घुंघरू व घंटी** नर्तक के पैरों व कमर में बंधे भारी घुंघरू व घंटी पद-संचालन के साथ गूंजकर पूरे वातावरण को ऊर्जावान बनाते हैं।

प्रस्तुति में एक मुख्य नर्तक-गायक होता है तथा अन्य वादक कोरस (पछुआ) की भूमिका निभाते हैं। इनके मध्य त्वरित संवाद, सवाली-जवाबी और हास्य-विनोद की सुंदर जुगलबंदी चलती है।

'काठ का घोड़ा' दमित वर्ग का प्रतीकात्मक दावा

धोबिया नृत्य की सर्वप्रमुख पहचान नर्तक की कमर पर बंधा लकड़ी का कृत्रिम घोड़ा (‘काठ का घोड़ा’) है। यह प्रतीक अत्यंत गहरा समाजशास्त्रीय अर्थ समेटे हुए है

- पारंपरिक पेशे में धोबी समुदाय का दैनिक संगी **गधा** रहा, जिसे सामंती समाज में मूक, सहनशील और अत्यंत हेय दृष्टि से देखा जाता था।

- लोक-कलाकारों ने अपनी कलात्मक प्रस्तुति में गधे के स्थान पर **घोड़े** को अंगीकार किया। मध्यकालीन सामंती व्यवस्था में घोड़ा राजसी ठाठ, गति, वीरता और प्रभुत्वशाली जातियों (क्षत्रिय/शासक वर्ग) का विशेषाधिकार माना जाता था।
- गधे से घोड़े का यह प्रतीकात्मक रूपांतरण कला के माध्यम से अपनी गरिमा और सामाजिक प्रतिष्ठा को पुनर्गठित करने का एक सशक्त सांस्कृतिक प्रयास था।

समाज में धोबिया लोक-परंपरा का बहुआयामी महत्व(The Multidimensional Significance of the Dhobiya Folk Tradition in Society)

जजमानी व्यवस्था में प्रकार्यात्मक अंतर्क्रिया पारंपरिक ग्रामीण समाज में जजमानी प्रथा जातियों के बीच आर्थिक और अनुष्ठानिक पारस्परिकता का आधार थी। धोबी समाज द्वारा यजमान के द्वारे पर नृत्य-गीत प्रस्तुत करना मांगलिक शुचिता का अनिवार्य अंग माना जाता था। इसके बदले प्राप्त होने वाला 'नेग' (अन्न, वस्त्र, मुद्रा, पशुधन) कलाकारों को सामाजिक संबल और आर्थिक सुरक्षा प्रदान करता था।

सामाजिक एकीकरण और ग्रामीण उत्सवधर्मिता जब विवाह के अवसर पर दरवाजे पर धोबिया नाच शुरू होता था, तो सामंती ऊंच-नीच की कठोर सीमाएं कुछ समय के लिए शिथिल हो जाती थीं। पूरा गांव एकत्रित होकर इस कला का दर्शक बनता था। यह कला ग्रामीण जीवन के भीतर सामूहिकता, सहज सौहार्द और साझा उल्लास का संचार करती थी।

लोक-शिक्षा और मौखिक इतिहास का संवहन औपचारिक शिक्षा से वंचित ग्रामीण समाज में लोकगीत ही सामाजिक संहिताओं के संवाहक थे। गीतों के माध्यम से पारिवारिक मर्यादाएं (ननद-भौजाई, सास-बहू, देवर-भाभी के संबंध), नदी और घाटों के पारिस्थितिक नियम, तथा स्थानीय देवी-देवताओं (शिव-पार्वती, शीतला माता) के मिथकों को आने वाली पीढ़ियों तक मौखिक रूप से पहुंचाया जाता था।

समाजशास्त्रीय एवं मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण (Sociological and anthropological perspective धोबिया गीत एवं नृत्य को विभिन्न समाजशास्त्रीय सिद्धांतों के आलोक में विश्लेषित किया जा सकता है जो निम्नवत है।

इमाइल दुर्खीम के 'सामूहिक उल्लास' (Collective Effervescence) एवं यांत्रिक सुदृढ़ता इमाइल दुर्खीम के अनुसार, जब किसी समुदाय के सदस्य साझा अनुष्ठान में एकत्र होकर उच्च तीव्रता के साथ गति करते हैं, तो वहां एक 'सामूहिक उत्तेजना या उल्लास' (Collective Effervescence) का जन्म होता है, जहां व्यक्तिगत चेतना सामूहिक चेतना में विलीन हो जाती है। धोबिया नृत्य के द्रुत क्लाइमेक्स में नर्तकों और दर्शकों के बीच की दूरी मिट जाती है। यह साझा ऊर्जा समुदाय के भीतर यांत्रिक सुदृढ़ता (Mechanical Solidarity) को सुदृढ़ करती है और सामाजिक बंधन को मजबूती देती है।

जेम्स सी. स्कॉट के 'अदृश्य प्रतिरोध' और 'गुप्त पाठ' (Hidden Transcripts)

राजनीतिक समाजशास्त्री जेम्स सी. स्कॉट ने *'Domination and the Arts of Resistance'* में स्पष्ट किया है कि शक्तिहीन वर्ग सीधे तौर पर प्रभुत्वशाली वर्ग का विरोध नहीं कर सकता; वह अपने प्रतिरोध को रूपकों, लोकगीतों, मुहावरों और हास्य-व्यंग्य में छिपाकर रखता है। धोबिया गीतों में कंजूस यजमानों, दहेज-लोभियों, भ्रष्ट कारिंदों और जमींदारी शोषण पर कसे जाने वाले तीखे तंज दरअसल **'कमजोरों के हथियार' (Weapons of the Weak)** हैं। हंसी-ठिठोली के आवरण में यह विधा सामाजिक अन्याय की खुली आलोचना दर्ज कराती थी।

एम. एन. श्रीनिवास के 'सांस्कृतिकरण' बनाम 'प्रतीकात्मक दावा' (Sanskritization & Symbolic Assertion) एम.एन. श्रीनिवास द्वारा प्रतिपादित 'सांस्कृतिकरण' की अवधारणा उच्च जातियों के रीति-रिवाजों

और जीवन-शैलियों के अनुकरण पर केंद्रित है। किंतु धोबिया कला में 'काठ के घोड़े' का प्रयोग केवल अनुकरण नहीं, बल्कि एक **प्रतीकात्मक दावा (Symbolic Assertion)** है। यह सामंती विशेषाधिकारों को कलात्मक स्तर पर चुनौती देकर पदानुक्रम में अपनी उपस्थिति को मुखर करने का माध्यम बनता है।

कार्ल मार्क्स के 'श्रम का मानवीकरण' बनाम 'अलगाव' (Humanization of Labour) मार्क्सवादी दर्शन में जब श्रम केवल विवशता बन जाता है, तो वह श्रमिक को स्वयं से और समाज से विमुख (Alienate) कर देता है। धोबिया गीत उस कठोर शारीरिक श्रम को संगीत, ताल और नृत्य के साथ जोड़कर उसका मानवीकरण करते हैं। कपड़ों को धोने की शारीरिक क्रिया को कलात्मक गति देकर श्रमिकों ने अपने श्रम को केवल शोषण का औजार नहीं रहने दिया, बल्कि उसे सृजन और उत्सव में रूपांतरित कर दिया।

समकालीन परिदृश्य एवं संकट के प्रमुख आयाम (Contemporary Scenario and Key Dimensions of the Crisis) वर्तमान वैश्वीकरण, तकनीकी प्रगति और तीव्र सामाजिक परिवर्तन के दौर में धोबिया लोक-विधा गंभीर संकट के चौराहे पर खड़ी है:

आर्थिक आधार का क्षरण जजमानी व्यवस्था के टूटने से कलाकारों का निश्चित 'नेग' समाप्त हो गया; मात्र प्रदर्शन से परिवार का भरण-पोषण असंभव।

तकनीकी विस्थापन शादियों और मांगलिक उत्सवों में पारंपरिक वाद्य-नृत्य की जगह लाउड डीजे, ब्रास बैंड और आधुनिक आर्केस्ट्रा का वर्चस्व।

मूल श्रम-संस्कृति का लोप स्वचालित वाशिंग मशीनों और आधुनिक लॉन्ड्री संस्कृति के आने से घाटों की वह साझी श्रम-संस्कृति समाप्त हो गई, जिससे ये गीत उपजे थे।

सामाजिक गतिशीलता व झिझक आधुनिक शिक्षा और शहरीकरण के कारण युवा पीढ़ी जातिगत पेशे से जुड़ी ऐतिहासिक हीनभावना से बचने हेतु इस कला को सीखने से विमुख हो रही है।

डिजिटल विकृतिकरण सोशल मीडिया और व्यावसायिक संगीत प्लेटफॉर्मों पर धोबिया तालों पर अश्लील व द्विअर्थी बोल थोपे जा रहे हैं, जिससे इसकी पारंपरिक लोक-मर्यादा क्षत-विक्षत हो रही है।

संरक्षण की सीमाएं एवं नीतिगत सुझाव (Limitations of Protection and Policy Suggestions) वर्तमान में संगीत नाटक अकादमी और संस्कृति विभागों के प्रयासों से इस विधा को ताज महोत्सव, गंगा महोत्सव अथवा गणतंत्र दिवस जैसे मंचों पर स्थान मिला है। किंतु यह संरक्षण इसे **'प्रदर्शनी कला' (Museumized Art)** में तब्दील कर रहा है, जिससे इसका सामुदायिक जीवन छिन रहा है।

नीतिगत सुझाव की बात की जाए तो कलाकारों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान कर बुजुर्ग एवं सक्रिय कलाकारों को नियमित मासिक पेंशन, मानदेय और स्वास्थ्य बीमा प्रदान किया जाए।

अकादमिक अभिलेखीकरण के माध्यम से विश्वविद्यालयों और लोक-संस्कृति शोध केंद्रों द्वारा पारंपरिक गीतों के मूल पाठ (Texts) और संगीत संरचनाओं का डिजिटल आर्काइव तैयार किया जाए।

पाठ्यक्रमों में समावेश कर राज्य के ललित कला और प्रदर्शनकारी कला संकायों में इसे एक शास्त्रीय लोक-विधा के रूप में मान्यता देकर युवाओं को इसका औपचारिक प्रशिक्षण दिया

चर्चा (Discussion)

धोबिया गीत एवं नृत्य का अध्ययन स्पष्ट करता है कि लोक-संस्कृति स्थिर और अपरिवर्तनशील व्यवस्था नहीं है। यह सामाजिक परिवर्तन के साथ निरंतर परिवर्तित होती रहती है।

पारंपरिक समाज में धोबिया गीतों का संबंध श्रम और जातिगत पेशे से अधिक मजबूत था। आधुनिक समाज में यह संबंध कमजोर हुआ है, लेकिन लोक परंपरा पूरी तरह समाप्त नहीं हुई है। इसके स्थान पर उसके नए रूप विकसित हो रहे हैं।

इस परिवर्तन को **सांस्कृतिक संक्रमण** के रूप में समझा जा सकता है। एक ओर पारंपरिक गीत और प्रदर्शन शैली कमजोर हो रही है, वहीं दूसरी ओर डिजिटल मीडिया और नए सांस्कृतिक मंच लोककला को नई पहचान प्रदान कर रहे हैं।

इसलिए धोबिया लोक परंपरा के भविष्य को केवल संरक्षण बनाम विनाश के द्वंद्व में नहीं देखना चाहिए। वास्तविक प्रश्न यह है कि परंपरा को उसकी सांस्कृतिक पहचान बनाए रखते हुए आधुनिक माध्यमों से कैसे जोड़ा जाए।

निष्कर्ष (Conclusion)

धोबिया गीत एवं नृत्य पूर्वांचल के श्रमजीवी समाज का अत्यंत परिष्कृत और प्रामाणिक सांस्कृतिक आख्यान है। यह जहां एक ओर प्रकार्यात्मक दृष्टि से ग्रामीण समाज के सामाजिक ताने-बाने को जोड़े रखता था, वहीं सबाल्टर्न दृष्टि से सामंती शोषण के विरुद्ध 'अदृश्य प्रतिरोध' दर्ज करने का सांस्कृतिक औजार भी था। इसे मात्र एक लुप्तप्राय जातिगत नाच मानकर नहीं छोड़ा जा सकता। इसके संरक्षण का अर्थ केवल एक कला को बचाना नहीं, बल्कि उस साझी श्रम-संस्कृति, मानवीय गरिमा और लोक-चेतना को सुरक्षित रखना है, जो आधुनिकता की आंधी में तेजी से विस्मृत हो रही है।

संदर्भ सूची (References)

1. उपाध्याय, डॉ. कृष्णदेव (1960). भोजपुरी लोक-साहित्य का अध्ययन. प्रयाग: हिंदी साहित्य सम्मेलन.
2. उपाध्याय, डॉ. कृष्णदेव (1984). भोजपुरी लोकगीत (भाग 1 एवं 2). वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन.
3. श्रीनिवास, एम. एन. (1966). Social Change in Modern India. Berkeley: University of California Press.
4. स्कॉट, जेम्स सी. (1990). Domination and the Arts of Resistance: Hidden Transcripts. New Haven: Yale University Press.
5. दुर्खीम, इमाइल (1912). The Elementary Forms of the Religious Life (J. W. Swain, Trans.). London: George Allen & Unwin.
6. सिन्हा, डॉ. सत्यव्रत (1975). भोजपुरी लोकगाथा. इलाहाबाद: हिंदुस्तानी एकेडमी.
7. तिवारी, डॉ. उदय नारायण (1954). भोजपुरी भाषा और साहित्य. पटना: बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्.
8. मिश्र, डॉ. विद्यानिवास (1998). भारतीय संस्कृति के आधार. नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन.
9. Crooke, William (1896). The Tribes and Castes of the North-Western Provinces and Oudh (Vol. II). Calcutta: Office of the Superintendent of Government Printing.
10. Nevill, H. R. (1907). Ghazipur: A Gazetteer, Being Volume XXIX of the District Gazetteers of the United Provinces of Agra and Oudh. Allahabad: Government Press.
11. उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी (विभिन्न अंक). छायानट: लोककला विशेषांक. लखनऊ: उ.प्र. संगीत नाटक अकादमी.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 184-188
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

دکنی ادب کی تحقیق

نبیلہ جبین

ریسرچ اسکالر خواجہ بندہ نواز یونیورسٹی گلبرگہ

Co-Author, **Dr. Maimuna Begum Sardgi**

دکن ادب موجودہ اُردو ادب کا قدیم ترین روپ ہے۔ بعض لوگ اپنی ناواقفیت اور کم علمی کی بناء پر دکنی زبان وا دب کو اُردو زبان سے الگ زبان سمجھتے ہیں ۔ جو لوگ علم لسانیات سے واقفیت رکھتے ہیں لیکن وہ جانتے ہیں کہ دنیا کی اکثر بڑی زبانو ں کی طرح ہر زبان کی قدیم ترین شکل اس کے موجودہ روپ سے بالکل سے مختلف ہو تی ہے ۔ یہی حال دکنی اُردو اور موجودہ اُردو کا بھی ہے۔

خواجہ بندہ نوازؒ اور نظام بیدری کے عہد سے آج تک اس بان کا متواتر ارتقاء ہورہا ہے۔ اور یہ زبان صدیوں کی مسافت طئے کر کے موجودہ زمانے کے شعراء وادبا تک پہنچی ہے۔

بیسویں صدی کے ربع اوّل میں دکنی ادب کی تحقیق و بازیافت کے دوسرے مرحلے کا آغاز "شمس المورخین" حلیم شمس اللہ قادری اور بابائے اُردو مولوی عبدالحق سے ہوتا ہے۔ اول الزکر نے ابتداً 1910ء میں "اُردو ئے قدیم کے عنوان سے ایک مضمون لکھنؤ کا رسالہ "لسان العصر" میں شائع ہوا تھا حذف کرکے اسی کو مزید ترمیم واضافے کے ساتھ انہوں نے 1925ء میں کتابی صورت میں شائع کیا۔

حکیم صاحب کے اس غیر معمولی تحقیقی کارنامے نے تاریخ ادب اُردو میں صدیوں کا اضافہ کر دیا۔ اس کی اشاعت سے ادبی دنیا میں تہلکہ مچ گیا۔ قادری صاحب کا دکنی ادب کی تحقیق سے متعلق ایک اور کارنامہ انڈیا آفس لائبریری لندن کے اُردو مخطوطات ہے۔

مولوی صاحب نے 1922ء میں کلیات محمد قلی کے شاہی مطلاو مذہب اور مکمل نسخے پر ایک مفصل تعارفی بابائے اُردو نے دکنی ادب کی بعض تصانیف کو مختلف نسخوں سے تقابلی مطالعے کے بعد مرتب و مدون کر کے انہیں اپنے عالمانہ مقدموں کے ساتھ شائع کیا تھا۔ مولوی صاحب

کی دکنی ادب کی تحقیق سے متعلق کتابوں میں اسداللہ وجہی کی سب رس 1932اور قطب مشتری 1939کے علاوہ نصرتی کی "گلشن عشق " کے تدوین بھی اپنی دین ہے۔
ڈاکٹر محمد علی اثر صاحب دکنی ادب کی تحقیق اور عبدالحق کے متعلق لکھتے ہیں ۔
بابائے اُردو نے جس خلوص محنت اور دقت نظر سے کام کر کے اُردو تحقیق کے سرمائے کو گراں مایہ اور وسیع کیا ہے وہ اپنی مثال آپ ہے۔ چنانچہ یہ کہنا غلط نہ ہو گا کہ بابائے اُردو اُردو تحریک ہی کے نہیں اُردو تحقیق کے بھی ابو البشر تھے۔ (دکنی ادب کی تحقیق ص(
عبدالحق صاحب کے بعد نصیر الدین ہاشمی اور حافظ محمود شیرانی جسے محقین کے تحقیقی کارنامے منظر عام پر آئے ۔ ہاشمی صاحب کی تصانیف میں دکن میں اُردو کو بہت شہرت حاصل ہوئی۔ اس کے علاوہ یورپ میں دکنی مخطوطات "مدراس میں اُردو " وغیرہ قابل ذکر ہیں ۔ اثر صاحب کے اس اقتباس سے معلو م ہوتاہے مولوی عبدالحق کے دکنی ادب کی ترقی میں بڑھ چڑھ کر حصہ لیا۔ دکن ادب اور زور صاحب سے متعلق ڈاکٹر اسماء تبسم یوں رقمطر از ہے "1928ء میں ڈاکٹر زور نے ایک کتاب مرتب کی اُردو شہ پارے جو کہ حقیقت میں اُردو کی پہلی تحقیقی کتاب ہے۔ یہ ان کتابوں میں سے ہے جس نے تحقیق کی نئی راہیں کھول دی اس کتاب کے حوالے کیلئے ہندوستان ہی نہیں بلکہ یورپ اور لندن کے کتب خانوں سے استفادہ کیا گیا تھا۔
(گیسوئے اُردو دکنی ادب نمبر ص(
1935ء میں نواب سالا ر جنگ کی سرپرستی میں مجلس اشاعت دکنی مخطوطات قائم ہوئی جس کے صدر سٹی کالج کے پرنسپل سید محمد اعظم نائب صدر ڈاکٹر اور معتمد پروفیسر سید محمد تھے۔ اس مجلس کے ذریعہ دکنی ادب کی ترویج و اشاعت کا کام منظم انداز میں شروع کیا گیا چنانچہ ڈاکٹر زور نے محمد قلی قطب شاہ کاضخیم دیوان شائع کیا۔ پروفیسر عبدالقادر سروری نے ابن نشاطی کی مثنوی پھول بن مقیمی کی قصہ بے نظیر اور کلیات سراج اور رنگ آبادی مرتب کی۔ پروفیسر سید محمد نے نصرتی کی گلشن عشق و جدیؔ کی پنچھی پاچھا، فائز کی رضوان شاہ روح افزاء اور کلیات عبداللہ قطب شاہ کو مرتب کر کے شائع کیا۔ محمد اکبر الدین صدیقی نے مقیمی کی چندر بدن و ماہ پار اور میر سعادت رضوی نے عوامی کی مثنویات سیف الملوک و بدیع الجمال ، طوطی نا مہ کو مرتب کیا جب کہ عبدالمجید صدیقی نے نصرتی کی علی نامہ اور خواجہ حمید الدین شاہد نے شفیق اورنگ ؔآبادی کی مثنوی تصویر جاناں کو مرتب کر کے شائع کیا۔ ان کتابوں کے شائع ہونے سے دکنی ادب سے متعلق تصانیف کا ایک بڑا ذخیرہ منظر عام پر آیا ۔
مولوی سخاوت مرزا کے دکنی ادب سے متعلق مختلف رسائل میں بیسؤں مضامین اور مقابلوں کی اشاعت عمل میں آئی ۔ نیز انہوں نے دیوان شاہ قاسم اور نگ آبادی، اور مثنوی من لگن، کی تدوین کی ، سخاوت مرزا ایک عرصے تک حیدرآباد میں ملازمت کرنے کے بعد کراچی منتقل ہوگئے تھے ۔ انہوں نے وہاں بھی اپنے تحقیقی کام کا سلسلہ جاری رکھا ان کے علاوہ جن تحقیق نگاروں نے دکنی ادب کو بہ طور خاص اپنا موضوع بنایا ان میں خواجہ حمیدالدین شاہد، افسر صدیقی ، ڈاکٹر جمیل جالبی، مشفق خواجہ، عبادت بریلوی، شفقت رضوی سلطانہ بخش، اور پروفیسر معین الدین عقیل کے نام بہت اہمیت رکھتے ہیں ۔
خواجہ حمید الدین شاہد نے نہ صرف کراچی میں بھی بلکہ زور صاحب کی طرح دکنی ادب کی تحقیق و تدوین کا سلسلہ جاری رکھا اور ایوان اُردو کے نام ایک کتب خانہ قائم کیا۔ اور سب رس کے عنوان سے ایک تحقیقی ماہ نامہ بھی جاری کیا۔ اسی طرح افسر صدیقی نے اشرف بیابانی کی

مثنوی نوسرہار کو مرتب و شائع کیا اور بیاض مراثی کے عنوان سے دکنی مرثیوں پر مشتمل ایک کتاب بھی شائع کی۔ ان کے علاوہ ڈاکٹر جمیل جالبی نے بھی دکنی ادب کے تحقیقی سرمایہ میں مزید اضافہ کیا ۔ دکنی ادب کی تحقیق انکا محبوب مشغلہ رہا ہے۔ اُردو ادب کی تاریخ اور مثنوی نظامی، (کدم رواپدم راؤ کی تدوین) ان کے سندی مقالے ہیں ۔

1971ء میں ڈاکٹر جمیل جالبی نے دیوان حسن شوقی کو مرتب کیا اور دیوان نصرتی کی بھی تدوین و اشاعت کی، ڈاکٹر عبادت بریلوی کا شمار اُردو کے سر برآور دہ نقادوں میں ہوتا ہے انہوں نے تنقید کے موضوع پر متعدد کتابیں تصنیف کی ہیں لیکن ادب کے خاتم الشعراء ولی اورنگ آبادی کے مضوع پر ایک کتاب شائع کر کے اپنا نام دکنی کے محققین میں شامل کروالیا ہے۔ مولوی شفقت رضوی نے جوں تو دکنی کے متعدد شعراء پر تحقیقی مضامین مختلف دکنی کے متعدد شعراء پر تحقیقی مضامین مختلف رشائل میں شائع کیئے ہیں ۔ اور ان کے چند منتخب دکنی ادب سے متعلق مضامین کا ایک مجموعہ تحقیقی نقوش کے نام سے منظر عام پر آیا ہے۔

ڈاکٹر سلطانہ بخش پاکستان کی واحد خاتون محقق ہے جنہوں نے دکنی ادب کی تحقیق و تنقید کے سلسلے میں کار ہائے نمایاں انجام دیئے ہیں انہوں نے ڈاکٹر جمیل جالبی کی رہنمائی میں شاہ تراب چشتی کے ضخیم دیوان کو مرتب کیا۔

اس کے بعد بعد پروفیسر معین الدین عقیل کا نام آتا ہے انہوں نے حسن عزت علی کی مثنوی فتح نامہ ٹیپو سلطان کی عالمانہ انداز میں تدوین کی نیز مادح و قدح دکن کردم1993بہ اشتراک عمر خالدی اور دکن وایران بھی اہمیت کے حامل ہے۔

ڈاکٹر حامد اللہ ندوی کی دکنی ادب سے متعلق دو کتابیں جامع مسجد بمبئی اور مخطوطات1990اور اُردو کی چند نایاب مثنویاں 1993شائع ہو ئی ہیں ۔

دکنی ادب کی تحقیق کے تیسرے مرحلے کا آغاز اس وقت شروع ہوا جب کہ پروفیسر مسعود حسین خان کا تقرر جامعہ عثمانیہ میں صدر شعبہ کے عہد ے پر ہوا تھا۔ اور 1962ء میں علی گڑھ سے حیدرآباد آئے۔ ان کی ادارت میں جامعہ عثمانیہ سے قدیم اُردو کے نام سے ایک تحقیقاتی مجلہ 1965ء میں جاری ہوا جس میں سائنٹفک اصولوں کی روشنی میں قدیم مخطوطات کی تدوین کو سب سے زیادہ اہمیت دی گئی۔ اس مجلے کی جلدیں شائع ہوئی جن کے ذریعے دکنی ادب کی متعدد متو ن جیسے غواصی کی مثنوی میناستونتی، مرتب ڈاکٹر غلام عمر خان، فیروز بیدری کی مثنوی پرت نامہ، مرتبہ مسعود حسین خاں ، کلام ، معظم بیجاپوری مرثیہ، ڈاکٹر ابو النصر محمد خالدی، شاہ اول بیجاپوری کی کشف الوجود، مرثیہ، محمد اکبرالدین صدیقی دکنی رباعیاں مرثیہ ڈاکٹر سیدہ جعفر منظر عام پر آئے۔

ڈاکٹر عبدالستار دلوی نے من سجاون اور دکنی اردو مرتب کر کے شائع کیں ۔ ڈاکٹر حبیب ضیاء کی دکنی ادب کی قواعد بدیع حسینی کی۔ دکن میں ریختی کا ارتقاء اور شمائل الاتقاء پروفیسر اشرف رفیع کی دکنی مثنویوں کا انتخاب ڈاکٹر فضل اللہ کی دیوان قربی وغیرہ قابل ذکر تصانیف ہیں ۔

محمد اکبر الدین صدیقی نے دکنی ادب کے محقق کی حیثیت سے بہت کام کیا ہے انہوں نے رسالہ سب رس (حیدرآباد) کا نصیر الدین ہاشمی ، نمبر مرتب کیا۔ محمد علی اثر کے اشتراک سے انہوں نے تذکرہ اُردو مخطوطات کی چھٹی توضیحی فہرست مرتب کی اس کے علاوہ صحیفہء اھل ہدی، کشف الوجود، انتخاب محمد قلی ان کی اہم تصانیف ہیں ۔

اسی عرصے میں اُردو ادب کے بعض قدآور نقادوں ڈاکٹر مغنی تبسم ، ڈاکٹر یوسف سرمست اور شمس الرحمن فاروقی نے بھی دکنی ادب سے متعلق کتابیں مرتب کی ہیں اول الذکر نے پروفیسر آغا حیدرحسین کے غیر مطبوعہ مسودہ دکنی نعت اور تذکرہ مخطوطات کو موجودہ معلومات کی روشنی میں مرتب و شائع کی ہیں پروفیسر شمس الرحمن فاروقی نے اُردو کا ابتدائی زمانہ کے نام سے 2001میں شائع کی۔

ڈاکٹر قیوم صادق گلبرگہ یونیورسٹی کے پروفیسر سابقہ اور صدر شعبہ تھے انہوں نے دکنی ادب کے موضوع پر خود بھی کام کیا اور اپنے طلباء کو بھی اسی جانب راغب کیا۔ دکنی ادب سے متعلق ان کی چار کتابیں منظر عام پر آئی ہیں دکنی غالب ملاوجہی، بیجاپور کی اردو مثنویاں دکنی ادب اور دکن زندہ کردم ، ڈاکٹر زینت ساجدہ، اور ڈاکٹر مباز الدین رفعت نے علی عادل شاہی کے دیوان کو علاحدہ علاحدہ مرتب کیا۔

دکنی ادب کے ہم عصر محققین میں ڈاکٹر محمد علی اثر ڈاکٹر حمیرہ جلیلی ، ڈاکٹر نور السیعد اختر، ڈاکٹر نسیم الدین فریس، ڈاکٹر عطاء اللہ خان ، ڈاکٹر صبیحہ نسرین وغیرہ اہمیت رکھتے ہیں -

محمد علی اثر نے 1982ء میں دکنی اور دکنیات ، کے عنوان سے ایک حوالہ جاتی کتاب لکھی۔ دکنی ادب کی تحقیق و تنقید اور ترتیب و تدوین سے متعلق انہوں نے بے شمار کتابیں لکھی جسے دکنی غزل کی نشو نما دکن میں اُردو شاعری ولی سے پہلے دکن کی تین مثنویاں ، تحقیقات اثر وغیرہ،

دکنی محققین میں ڈاکٹر راہی فدائی اُردو کے علاوہ عربی اور فارسی کے عالم اور محقق کی حیثیت سے سامنے آئے ہیں ان کی چند اہم تحقیقی کتابیں یہ ہیں اکتساب نظر، کڑپہ میں اُردو، جوئے شیر، وغیرہ قابل ذکر ہیں ۔

ڈاکٹر حمیراجلیلی اُردو کی ایک خاموش خدمت گذار خاتون ہیں انہوں نے سب رس کی تحقیقی تدوین کے موضوع پر تحقیقی مقالہ سپرد قلم کر کے جامعہ عثمانیہ سے پی ایچ ڈی کی سند حاصل کی تھی اور انہوں نے حضرت امین الدین اعلیٰ کی نثری تصنف کلمۃ الاسرار 1974ء کی تدوین بھی انکا اہم کارنامہ ہیں ۔ ڈاکٹر نسیم الدین فریس بھی قابل ذکر دکنی محقق ہے انہوں نے دکنی کی متروک اصناف سخن تحقیقات دکنی ادب کے مطالعے کی جہتیں اور سلاطین دکن کی نعتیہ شاعری، 2004ء دکنی ادب کی تحقیق میں اضافہ کی حیثیت رکھتے ہیں ایک اور دکنی محقق ڈاکٹر عطاء اللہ خان جنہوں نے "دیوانہ پروانہ"دیوان فدوی ، مقالات محمود قادری، 2006قابل ذکر ہیں ۔

دکنی ادب کے دیگر محققین میں کرناٹک کے ڈاکٹر صبغت اللہ اور تروپتی کے ڈاکٹر عبدالستار ساحر کے نام اہمیت رکھتے ہیں ۔

ڈاکٹر حبیب النساء نے بھی دکنی ادب کی ترقی میں اپنے کارہا ئے نمایاں انجام دیئے ہیں ۔ ان کی چند کتابیں جو دکنی ادب سے تعلق رکھتی ہیں دکنی کی ابتداء 1973ء اور ریاست میسور میں اُردو کی نشو ونما " قابل ذکر ہیں ۔ ان کے علاوہ دیگر خاتون محققین میں جن کے نام آتے ہیں -

ڈاکٹر آمنہ خاتون ، ڈاکٹر فہمیدہ بیگم ، انہو ں نے یعنی ڈاکٹر فہمیدہ بیگم نے قدیم اُردو نظم رسالہ فکر و تحقیق قلمبند کیا۔ ڈاکٹر صبحیہ نسرین جو حیدرآباد سے تعلق رکھنے والی ہے انہوں

نے وصیت النور، 1988ء میں مثنوی نورنامہ 2004شائع کروایا۔ ڈاکٹر میمونہ دلوی نے دکھڑے کے عنوان سے ایک کتاب ممبئی سے شائع کی تھی۔ اس عرصے میں ڈاکٹر زیب حیدرنے تاریخ دکن کے چند گوشے اور ہدیہ تحقیق کے عنوان سے دوکتابیں شائع کی ہیں ۔

ایک خوش آئندہ بات یہ ہے کہ حالیہ عرصے میں مرد محققین کے مقابلے میں خاتون محققین کی تعداد میں اضافہ ہوا ہے اس دوران میں دکنی ادب کی تحقیق سے متعلق جو کتابیں شائع ہوئی ہیں ۔ ان میں ڈاکٹر مہ جبین اختر کی دکنی مثنویوں میں مذہبی کردار 2002ء ۔

ڈاکٹر میمونہ بیگم سرڈگی صاحبہ کا نام بھی دکنی محققین میں آتا ہے 2007میں ان پہلی تصنیف دکنی، غزل ، تحقیق ، تجزیہ منظر عام پر آئی، آپکی دوسری تصنیف ، میر کی غزل کااثعار تی نظام ، ہے علاوہ ازیں آپ نے دکنیات سے متعلق کئی موضوعات پر مقالے قلمبند گئے ہیں ماہانہ سخنوا میں جلونمبر 3شمارہ نمبر 20فروی 20صفحہ نمبر 59نظم بہ عنوان" گذرتے لمحے "لکھے۔

پروفسیر محمد علی اثر ڈاکٹر میمو نہ بیگم سرڈگی صاحبہ کے متعلق یو ں لکھتے ہیں ۔

"دکنی غزل پر ان کی کتابوں دکنی غزل کی نشوو نما ء اور ظہیر الدین مدینہ کی کتاب اُردو غزل ولی تک کے علاوہ کوئی اور کتاب منظرِ عام پر نہیں آئی میمو نہ بیگم کی دکنی غزل تحقیق و تجزیہ اسی کی تیسری کتاب ہے"۔ ۴

حوالہ جات :

۱۔ ڈاکٹر محمد علی اثر — دکنی ادب کی تحقیق — ۱۱

۲۔ ڈاکٹر اسما ء تبسم — گیسوئے اُردو — ۱۳۴

۳۔ ڈاکٹر محمد علی اثر — دکنی غزل تحقیق و تجزیہ — ۴

مرجع و مصادر :

۱۔ ڈاکٹر اسما ء تبسم — گیسوئے اُردو — ڈیجیٹل آفسیٹ، گلبرگہ ۲۰۱۵

۲۔ ڈاکٹر محمد علی اثر — دکنی ادب کی تحقیق — نشاط پبلشر، حیدرآباد ۲۰۱۲

۳۔ ڈاکٹرمحی الدین قادری — دکنی ادب کی تاریخ — نشاط پریس ، کراچی ۱۹۶۰

۴۔ مسز عسکری صفدر — دکنی ادب کی محققین و محسنین — ایجوکیشنل پبلشنگ ہاؤس ۲۰۱۸

۵۔ ڈاکٹر جمیل جالبی — تاریخ ادب اُردو — فروغ اُردو بھون، نئی دہلی ۱۹۷۷

۶۔ ڈاکٹر میمونہ بیگم سرڈگی — دکنی غزل تحقیق و تجزیہ — زیگ پبلیکشین ۲۰۰۷

nabilajabeen909@gmail.com, 9620027909

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 189-192
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

वन-विनाश और रामायण की अरण्य-चेतना

Sanchita Santra
Research scholar,
BBMKU(Dhanbad) & Assistant Professor, Dept of Sanskrit
Saltora Netaji Centenary College, Bankura, W.B

१. भूमिका :- प्रकृति और मानव-जीवन का संबंध भारतीय चिंतन की अत्यन्त प्राचीन एवं महत्त्वपूर्ण अवधारणा है। भारतीय साहित्य में प्रकृति को केवल भौतिक संसाधन अथवा मनुष्य के उपभोग की वस्तु न मानकर जीवन-व्यवस्था के अभिन्न अंग के रूप में देखा गया है। महर्षि वाल्मीकि की रामायण में इस दृष्टि का अत्यन्त प्रभावशाली स्वरूप दिखाई देता है। यहाँ वन केवल वृक्षों, लताओं, पर्वतों, नदियों और वन्यजीवों से निर्मित भौगोलिक प्रदेश नहीं है, बल्कि वह तपस्या, साधना, ज्ञान, सह-अस्तित्व और आत्मसंयम का जीवंत संसार है।

राम, सीता और लक्ष्मण के वनवास से संबंधित प्रसंगों में दण्डकारण्य, चित्रकूट, पंचवटी तथा विभिन्न आश्रमों का विस्तृत वर्णन मिलता है। इन प्रसंगों में वृक्ष, पुष्प, पक्षी, पशु, नदियाँ और पर्वत मानव-जीवन के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए दिखाई देते हैं। अतः रामायण की अरण्य-चेतना केवल प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन नहीं, बल्कि मनुष्य और प्रकृति के संतुलित संबंध की एक सांस्कृतिक एवं नैतिक दृष्टि भी प्रस्तुत करती है।

२. रामायण में अरण्य का स्वरूप :- रामायण में वन बहुआयामी जीवन-क्षेत्र के रूप में उपस्थित है। वह एक ओर प्राकृतिक संपदा का आधार है, तो दूसरी ओर ऋषियों की तपोभूमि और आध्यात्मिक साधना का आश्रय है। राम के वनवास के अनेक प्रसंगों से ज्ञात होता है कि वन को प्राचीन भारतीय जीवन में सभ्यता से अलग अथवा अनुपयोगी प्रदेश नहीं माना जाता था। चित्रकूट के प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन करते हुए राम लक्ष्मण से कहते हैं—

" बस्वौकसारां नलिनीमतीत्यैवोत्तरान् कुरून्।
पर्वतश्चित्रकूटोऽसौ बहुमूलफलोदकः॥" २ (अयोध्याकाण्ड.९४.२६)

अरण्यकाण्ड के प्रथम सर्ग में आश्रम के चारों ओर स्थित वृक्षों का वर्णन करते हुए कहा गया है—

"आरण्यैश्च महावृक्षैः पुण्यैः स्वादुफलैर्वृतम्।" [२] (अरण्यकाण्ड, १.५)

अर्थात्, एक पूर्ण विकसित वृक्ष के अस्तित्व के साथ अनेक जीवों का जीवन प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से जुड़ा रहता है। **वृक्ष—भोजन → आश्रय → छाया → पक्षियों का निवास → पशु-पक्षियों का आवास → मृदा-संरक्षण → जलचक्र → मानव-जीवन** —इस सम्पूर्ण पारिस्थितिक श्रृंखला का एक केंद्रीय घटक है।

यहाँ पर्वत और पक्षियों का वर्णन केवल दृश्य-सौन्दर्य उत्पन्न करने के लिए नहीं है। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि प्रकृति मनुष्य के मानसिक आनन्द और शान्ति का स्रोत है। राम के लिए वनवास केवल राजमहल से दूर रहने की अवस्था नहीं, बल्कि प्रकृति के निकट जीवन का अनुभव भी है।

३. दण्डकारण्य, पंचवटी और आश्रम-संस्कृति :- दण्डकारण्य रामायण का प्रमुख वन-प्रदेश है। यहाँ अनेक ऋषियों के आश्रम थे और विविध प्रकार के वन्यजीव निवास करते थे। आश्रमों का जीवन प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित होते हुए भी संयम और आवश्यकता-आधारित उपयोग पर केन्द्रित था। फल, मूल, पुष्प तथा अन्य वन-संपदाओं का उपयोग जीवन-निर्वाह के लिए किया जाता था, परन्तु अत्यधिक संग्रह अथवा अनियंत्रित उपभोग की प्रवृत्ति प्रमुख नहीं थी।

पंचवटी में राम, सीता और लक्ष्मण का निवास प्रकृति के साथ मनुष्य के सामंजस्य का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत करता है। यहाँ वृक्ष, लताएँ, पुष्प, पक्षी, पशु और नदी मिलकर एक समन्वित प्राकृतिक संसार का निर्माण करते हैं। मनुष्य स्वयं को प्रकृति का स्वामी न मानकर उसके बीच जीवन व्यतीत करता है। इस दृष्टि से पंचवटी का जीवन आधुनिक सतत जीवन-पद्धति की अवधारणा के साथ तुलनीय है। पञ्चवटी की प्रमुख विशेषताओं में से एक उसकी वनस्पति-विविधता है –

" शालैस्तालैस्तमालैश्च खर्जूरैः पनसैर्द्रुमैः।
नीवारैस्तिनिशैश्चैव पुन्नागैश्चोपशोभिताः॥
चन्दनैः स्पन्दनैर्नीपैः पर्णासैर्लकुचैरपि।
धवाश्वकर्णखदिरैः शमीकिंशुकपाटलैः॥"[3] (अरण्यकाण्ड, १५, १६-१८)

अतः पञ्चवटी को केवल प्राकृतिक सौन्दर्य से युक्त रमणीय स्थल के रूप में देखना पर्याप्त नहीं है। यह विविध वनस्पतियों, जीव-जंतुओं तथा उनके पारस्परिक संबंधों से निर्मित एक जटिल पारिस्थितिक तंत्र (ecosystem) का प्रतिनिधित्व करती है। इसी प्रकार आश्रम-संस्कृति में सीमित आवश्यकताएँ, मितव्ययिता, संयम और प्रकृति के प्रति सम्मान प्रमुख थे। वर्तमान पर्यावरण-संकट के संदर्भ में यह दृष्टि विशेष महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि आज संसाधनों का अति-दोहन और उपभोग-प्रधान जीवन-शैली पर्यावरणीय असंतुलन के प्रमुख कारणों में हैं।

४. वृक्ष, वनस्पति और जैव-विविधता :- रामायण में अशोक, आम्र, कदम्ब, चन्दन, पलाश, शाल, तिलक, बिल्व और जाम्बू आदि अनेक वृक्षों तथा वनस्पतियों का उल्लेख मिलता है। इनका प्रयोग केवल काव्य-सौन्दर्य के लिए नहीं, बल्कि वन के विविधतापूर्ण जीवन को व्यक्त करने के लिए भी हुआ है। वृक्ष फल, पुष्प, छाया और औषधि प्रदान करने वाले जीवनदायी तत्व हैं। वन मृदा, जल और स्थानीय जलवायु के संतुलन में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

इसी प्रकार रामायण के वन में मृग, हाथी, सिंह, व्याघ्र, वानर, भालू तथा विभिन्न पक्षियों का उल्लेख मिलता है। इससे स्पष्ट होता है कि वन केवल मनुष्य का क्षेत्र नहीं था; वह अनेक जीव-प्रजातियों का प्राकृतिक आवास भी था। वन्यजीवों

की यह विविधता जैव-विविधता की उस धारणा की ओर संकेत करती है जिसे आधुनिक पर्यावरण-विज्ञान पारिस्थितिक संतुलन का आधार मानता है।

इस दृष्टि से रामायण की वन-चेतना मनुष्य को यह समझने में सहायता करती है कि वृक्ष और वन्यजीव केवल उपयोगिता की वस्तुएँ नहीं, बल्कि व्यापक जीवन-तंत्र के आवश्यक घटक हैं।

५. वन-विनाश की आधुनिक समस्या :- आधुनिक युग में वन-विनाश गंभीर पर्यावरणीय संकट का रूप ले चुका है। जनसंख्या-वृद्धि, अनियंत्रित नगरीकरण, औद्योगीकरण, सड़क एवं भवन-निर्माण, खनन, कृषि-विस्तार तथा प्राकृतिक संसाधनों के अति-दोहन के कारण अनेक क्षेत्रों में प्राकृतिक वन लगातार कम हो रहे हैं।

वन-विनाश का प्रभाव केवल वृक्षों की संख्या में कमी तक सीमित नहीं रहता। इससे वन्यजीवों के प्राकृतिक आवास नष्ट होते हैं, जैव-विविधता का ह्रास होता है, मृदा-अपरदन बढ़ता है तथा जल-स्रोतों और स्थानीय जल-चक्र पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसके साथ ही वन कार्बन-संतुलन और जलवायु-नियमन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं; इसलिए वनों का विनाश व्यापक जलवायु-संकट को भी बढ़ा सकता है।

इस प्रकार वन-विनाश केवल पर्यावरण की समस्या नहीं, बल्कि मानव-जीवन, अर्थव्यवस्था और भविष्य की पीढ़ियों की सुरक्षा से जुड़ी हुई समस्या है।

६. वन-संरक्षण के संदर्भ में रामायण की अरण्य-चेतना :- रामायण में प्रकृति के प्रति संबंध अधिकार और स्वामित्व की अपेक्षा सह-अस्तित्व, मर्यादा और उत्तरदायित्व पर आधारित दिखाई देता है। राम का वनवास इस दृष्टि से विशेष महत्त्वपूर्ण है। वे वन को केवल दण्ड या निर्वासन का स्थान नहीं मानते, बल्कि वहाँ के प्राकृतिक जीवन के साथ सामंजस्य स्थापित करते हैं। वन उनके जीवन में अनुभव, आत्मसंयम और आत्मबोध का क्षेत्र बन जाता है।

रामायण के जीवन-दर्शन में 'मर्यादा' का विशेष महत्त्व है। इस मर्यादा को पर्यावरणीय संदर्भ में प्राकृतिक संसाधनों के संयमित उपयोग के सिद्धान्त से जोड़ा जा सकता है। जल, वन, भूमि, खनिज और जैव-संसाधनों का उपयोग आवश्यक है, किन्तु उनका असीमित दोहन उचित नहीं है। प्रकृति से प्राप्त संसाधनों के प्रति कृतज्ञता और उनके संरक्षण का भाव ही दीर्घकालीन संतुलन का आधार बन सकता है।

इस दृष्टि से रामायण की अरण्य-चेतना आधुनिक पर्यावरणीय नैतिकता को एक महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक आधार प्रदान करती है। वन केवल आर्थिक संसाधन नहीं हैं; वे मनुष्य, पशु-पक्षी और समस्त जैव-जगत के साझा जीवन-क्षेत्र हैं। अतः वन-संरक्षण वास्तव में जीवन-संरक्षण है।

७. वर्तमान पर्यावरणीय संदर्भ में प्रासंगिकता : - आज पर्यावरण-संकट का समाधान केवल तकनीकी अथवा कानूनी उपायों से सम्भव नहीं है। इसके लिए मनुष्य की जीवन-दृष्टि और व्यवहार में भी परिवर्तन आवश्यक है। रामायण की अरण्य-चेतना संयमित उपभोग, प्रकृति-सम्मान, जैव-विविधता की रक्षा, सह-अस्तित्व और उत्तरदायित्व जैसे मूल्यों को सामने रखती है। वन-संरक्षण के लिए केवल वृक्षारोपण पर्याप्त नहीं है; प्राकृतिक वनों, पुराने वृक्षों, वन्यजीवों के आवास और स्थानीय पारिस्थितिक तंत्र की रक्षा भी आवश्यक है। स्थानीय समुदायों की सहभागिता, सतत वन-प्रबंधन, अवैध कटाई पर नियंत्रण तथा पर्यावरणीय शिक्षा इस दिशा में महत्त्वपूर्ण उपाय हैं। इन आधुनिक उपायों को यदि प्रकृति के प्रति सांस्कृतिक संवेदनशीलता और नैतिक उत्तरदायित्व के साथ जोड़ा जाए, तो संरक्षण की प्रक्रिया अधिक प्रभावी हो सकती है।

८. उपसंहार :- वन-विनाश आधुनिक सभ्यता के सामने उपस्थित गंभीर पर्यावरणीय समस्याओं में से एक है। इसके कारण जैव-विविधता का ह्रास, वन्यजीवों के आवास का विनाश, मृदा-अवनति, जल-संतुलन में परिवर्तन और जलवायु-संकट जैसी अनेक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। ऐसे समय में महर्षि वाल्मीकि की रामायण की अरण्य-चेतना विशेष रूप से प्रासंगिक हो उठती है।

दण्डकारण्य, चित्रकूट और पंचवटी के प्रसंगों में वन केवल प्राकृतिक पृष्ठभूमि नहीं, बल्कि जीवन, साधना, सह-अस्तित्व और आत्मसंयम का व्यापक संसार है। वृक्ष, वनस्पति, नदी, पर्वत, पशु और पक्षी सभी इस जीवन-तंत्र के अभिन्न अंग हैं। रामायण मनुष्य को प्रकृति से अलग सत्ता के रूप में नहीं, बल्कि उसके व्यापक जीवन-तंत्र के एक अंग के रूप में देखने की प्रेरणा देती है।

अतः वर्तमान पर्यावरणीय संकट के संदर्भ में रामायण की अरण्य-चेतना से संयमित उपभोग, प्रकृति-सम्मान, वन-संरक्षण, जैव-विविधता की रक्षा, सह-अस्तित्व तथा भावी पीढ़ियों के प्रति उत्तरदायित्व जैसे जीवन-मूल्यों की प्रेरणा प्राप्त की जा सकती है। इस प्रकार रामायण की अरण्य-चेतना केवल प्राचीन साहित्यिक अनुभूति नहीं, बल्कि आधुनिक पर्यावरणीय नैतिकता के लिए एक महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक एवं मूल्यपरक आधार भी है।

सन्दर्भसूची:-

1) श्रीमन्महर्षि वाल्मीकि। रामायणम्। सम्पादक पंडितप्रवर श्रीपञ्चानन तर्करत्न, द्वितीय संस्करण, बेनीमाधव शील्स लाइब्रेरी, २०२०, पृ. ३५५

2) तदेव, पृ. ४०५।

3) तदेव, पृ.।

ग्रन्थसूची

1)श्रीमन्महर्षि वाल्मीकि, रामायणम्, द्वितीय एडिशन, सम्पा पंडितप्रवर श्रीपञ्चानन तर्करत्न, बेनीमाधव शीलस् लाइब्रेरी, २०२०

2) चट्टोपाध्याय, अनीश, परिवेश, टि डि पावलिकेशन, प्रथम संस्करण, २००७

3) वन्द्योपाध्याय, अन्तरा,परिवेश ओ मानुष सेकाल एकाल, एभेनेल प्रेस, प्रथम संस्करण,वैशाख १४३०

4) गुप्त, शुभेन्दु, प्राचीन भारते परिवेश चिन्ता, साहित्य संसद, प्रथम संस्करण, २०१२

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 193-198
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

सामाजिक अस्मिता के निर्माण भाषा का योगदान (हिंदी के संदर्भ में)

विन्द्रेश यादव
शोधार्थी,
हिंदी विभाग, कला संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली–110007, भारत
डॉ. ओमप्रकाश
सहायक आचार्य हिंदी विभाग,
कला संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली–110007, भारत

सारांश
भारत की बहुभाषी और बहुसांस्कृतिक संरचना में भाषा केवल विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम नहीं, बल्कि व्यक्ति और समुदाय की सामाजिक अस्मिता के निर्माण एवं अभिव्यक्ति का महत्वपूर्ण आधार है। प्रस्तुत शोध-पत्र में हिंदी के संदर्भ में सामाजिक अस्मिता के निर्माण में भाषा की भूमिका का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन यह रेखांकित करता है कि मातृभाषा व्यक्ति के भावबोध, चिंतन, व्यवहार और सामाजिक जुड़ाव को प्रारंभिक स्तर से प्रभावित करती है तथा व्यक्ति को अपने सांस्कृतिक परिवेश से जोड़ने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हिंदी की विविध बोलियों, सामाजिक प्रयोगों और सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों के माध्यम से क्षेत्रीय एवं सामुदायिक पहचान किस प्रकार निर्मित और पहचानी जाती है, इसे भी विवेचित किया गया है। साथ ही, हिंदी साहित्य, भक्ति परंपरा, लोक-संस्कृति, सिनेमा तथा समकालीन संचार के माध्यम से विभिन्न सामाजिक और सांस्कृतिक समूहों के बीच संवाद एवं समन्वय की प्रक्रिया को समझने का प्रयास किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि हिंदी ने एक ओर स्थानीय और क्षेत्रीय अस्मिताओं को अभिव्यक्ति प्रदान की है, वहीं दूसरी ओर व्यापक भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक एकता के लिए एक सेतु का कार्य किया है। शोध-पत्र इस बात पर भी बल देता है कि हिंदी का भविष्य उसकी समावेशी, लचीली और बहुभाषिक सह-अस्तित्व की दृष्टि पर निर्भर करेगा। अतः हिंदी को अन्य भारतीय भाषाओं और बोलियों के साथ सहकार एवं सम्मान के आधार पर विकसित करना ही सामाजिक अस्मिता की विविधता और भारतीय सांस्कृतिक एकता को सुदृढ़ करने का सार्थक मार्ग है।

बीज शब्द: सामाजिक अस्मिता, भाषा, हिंदी, भाषिक अस्मिता, मातृभाषा, संस्कृति, सामाजिक समन्वय, भारतीय भाषाएँ।

परिचय

भारत एक बहुभाषी देश है। यहां विभिन्न भाषाएं बोली जाती हैं। भिन्न-भिन्न रीति रिवाज हैं। तमिल तेलगु,मलयालम,कन्नड़, बांग्ला,मराठी गुजराती,पंजाबी, हिंदी जैसे संबंधित भाषाएं हैं इनका अपना समृद्ध साहित्य [२] और अपनी क्षेत्रीय संस्कृति है इन भाषाओं का जनमानस पर बहुत ही गहरा प्रभाव है। सांस्कृतिक विशेषताएं भाषाओं में प्रतिबिंबित होती हैं भाषा संस्कृति की देन है और संस्कृति की अभिव्यक्ति भाषा के माध्यम से होती है भाषा सिर्फ संप्रेषण का साधन मात्र नहीं है अपितु हमारे भाव जगत की साकार प्रतिमा है हमारे भाव,विचार,अनुभूतियां आशाएं आकांक्षाएं हर्ष, विषाद आदि भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त होते हैं।

हमारा समाज भाषिक सामाजिक आवरण से ढका हुआ है जिसमें हम सोते जागते उठते बैठते चलते फिरते भाषा से ही घिरे रहते हैं ,हमारा सम्पूर्ण जीवन भाषा के एक आवरण में घिरे रहते हैं जैसे छोटा बच्चा अपनी मातृभाषा में ही सोचता है, अनेकों कल्पनाएं करता है अपने भाषा में ही सपने देखता है चिंतन करता है मनन करता है उसके चतुर्दिक वातावरण उसकी भाषा से ही प्रतिबंधित होता है। भाषा को हम अर्जित करते हैं जो जन्म से ही शुरू हो जाती है अर्जन की प्रक्रिया है भाषा हमारी सांस में व्यवहार में रच बस जाती है और हमारी आत्मा का रूप बन जाती है यदि किसी भी बच्चे को उसकी मातृभाषा के समूह से अलग कर दिया जाए तो उसका भावात्मक मानसिक और शारीरिक विकास प्रभावित हो जाएगा उसका सामाजिक विकास भी अवरोध हो जाएगा और वह अपने को समझ में समायोजित भी नहीं कर पाएगा सामाजिक आवश्यकताओं के पूर्ति के लिए ही हमें भाषा सीखना चाहिए जहां एक ओर मातृभाषा हमारी सामाजिक आवश्यकताओं के पूर्ति करती है वहीं दूसरी ओर हमें आत्मिक आनंद भी देती है भाषा राष्ट्रीय भावना का पोषण भी करती है। इसके विपरीत भाषा समुदायों से स्नेह एवं आपसी संवाद स्थापित करती है।

दोनों रहिमन एक से, जों लों बोलत नाहिं।
जान परत हैं काक पिक, रितु बसंत के माहिं।।

इस दोहे से हमें अस्मिता शब्द का अर्थ मिलता है जब तक दोनों बोलते नहीं है तब तक कौवा और कोयल एक जैसे ही दिखते मालूम होते हैं लेकिन वह पहचाने तभी जाते हैं जब बसंत ऋतु आने पर बोलते हैं।

अस्मिता की पहचान तभी होती है और जब अपने यहां लगभग सभी लोग हिंदी बोलते हैं अगर प्रदेश और मौलिक नाम नहीं बताया जाता है तब वह उनके उच्चारण से आप पहचान कर सकते हैं कि उनकी मातृभाषा कौन सी है इससे उनके भाषिक अस्मिता का बोध होता [२]

अस्मिता का अर्थ है- पहचान तथा भाषाई अस्मिता से तात्पर्य है- भाषा बोलने वालों की अपनी पहचान। 'अस्मिता' शब्द के संदर्भ में **डॉ. नामवर सिंह ने कहा है कि**- "हिंदी में 'अस्मिता' शब्द पहले नहीं था। 1947 से पहले की किताबों में मुझे तो नहीं मिला और संस्कृत में भी अस्मिता का यह अर्थ नहीं है।'अहंकार' के अर्थ में आता है, जिसे दोष माना जाता है। हिंदी में 'आइडेंटिटी' का अनुवाद 'अस्मिता' किया गया और हिंदी में जहाँ तक मेरी जानकारी है, पहली बार अज्ञेय ने 'आइडेंटिटी' के लिए अनुवाद 'अस्मिता' शब्द का प्रयोग हिंदी में कियाहै।"

संसार में प्रत्येक व्यक्ति की अपनी निजी विशेषताएँ होती है। भाषा उनमें से एक है। यह प्रमाणित हो चुका है कि प्रत्येक व्यक्ति की भाषा दूसरे से अलग होती है। एक ही भाषा का प्रयोग करने वाले लोगों में उच्चारण, शब्द चयन एवं शैली के स्तर पर भेद पाए जाते हैं। हिंदी में कविता के संदर्भ में जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पंत, महादेवी वर्मा, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', तथा 'अज्ञेय' आदि की भाषा एक-दूसरे से भिन्न दिखाई पड़ती है। इसी प्रकार किसी वर्ग विशेष, समाज विशेष एवं राष्ट्र विशेष के लोगों की भाषा भी दूसरे से भिन्न होती है। अतः कह सकते हैं कि किसी वर्ग, समाज एवं राष्ट्र आदि की अस्मिता उसकी भाषा में भी प्रतिबिंबित होती है। अस्मिता को प्रकट करने वाली भाषा को हम मनोवैज्ञानिक, भौगोलिक, सामाजिक, राष्ट्रीय तथा जातीय आदि कई आधार पर देख सकते हैं।

भाषा केवल व्याकरणिक संरचना से बड़ी नहीं होती है जब समाज में भाषा का व्यवहार होता है तो वह व्याकरणिक बंदों को तोड़ते भी है यह तो हम जानते हैं की भाषा का व्यवहार समाज में होता है समाज अनेक स्तरों पर बात होता है इस सामाजिक स्तर दहेज के कारण भाषा स्तर भेद निर्मित होता है कारण स्पष्ट है , भाषा और समाज में अटूट संबंध होता है। हम जिस समाज में रहते हैं उसके नियमों और मान्यताओं के अनुरूप भाषा का प्रयोग करते हैं। यदि हम ऐसा करते हैं तभी हमारा भाषा प्रयोग उपयुक्त और सटीक माना जाता है। हर समाज बाहरी दुनिया को अपने ढंग से देखा है उसे भाषा में संगठित करता है भाषा जिस सामाजिक स्तरों पर भाषा प्रयोग के स्तर भी भिन्न-भिन्न होते हैं साथ ही श्रोता के साथ हमारा पारस्परिक संबंध भी हमारे भाषा व्यवहार में विविधता ले आता है इस प्रकार सामाजिक संदर्भ में भाषा विषम रूपी होती है।

भाषा सामाजिक वस्तु ै

हम जिस समाज में रहते हैं इस समाज की भाषा हम सीखते हैं इसलिए भाषा को सिखाने में परिवेश बहुत महत्व रखता ै परिवेश का अर्थ है जिस समाज में हम रहते हैं उसकी व्यवस्था उसके मूल्य उसकी संस्कृति उसके लोग आदि पूर्ण ग्राम इसी परिवेश के आधार पर हर भाषा अपना रूप विकसित करती है और अपनी अलग पहचान बनती है।

हिंदी भाषा समाज नाते रिश्ते के हर संबंध को महत्व देता है इसलिए हिंदी में हर नाते रिश्ते के लिए भिन्न-भिन्न शब्द ै जैसे- मौसी,चाचा,मामी आदि।

अतः हम इस संरचना को देखकर के हम कह सकते हैं की भाषा एक सामाजिक वस्तु है,इसमें कोई संदेह नहीं है।

हिंदी के जरिए सांस्कृतिक समन्वय

सांस्कृतिक समन्वय वह प्रक्रिया है जिसमें विविध सांस्कृतिक समूह एक सामूहिक पहचान, मूल्यों और परंपराओं के आधार पर आपस में जुड़ते हैं। भारत जैसे बहुसांस्कृतिक और बहुभाषायी देश में यह प्रक्रिया विशेष रूप से जटिल है, जहाँ असंख्य भाषाएँ, बोलियाँ और क्षेत्रीय रीति-रिवाज मौजूद हैं। इस परिप्रेक्ष्य में हिंदी भाषा एक सेतु की तरह उभरी है, जो विभिन्न समुदायों को एकजुट करते हुए सांस्कृतिक समन्वय को बढ़ावा देती है। हिंदी केवल संवाद का साधन नहीं है, बल्कि यह भारत की सांस्कृतिक समृद्धि को संरक्षित करते हुए एक साझा अस्मिता का निर्माण करती है। यह लेख हिंदी के जरिए सांस्कृतिक समन्वय की प्रक्रिया को साहित्य, सिनेमा, लोक परंपराओं और समकालीन संचार के संदर्भ में विश्लेषित करता है।

हिंदी द्वारा साहित्य और सांस्कृतिक संयोग

हिंदी साहित्य ने सांस्कृतिक समन्वय में मूलभूत योगदान दिया है। मध्यकाल से लेकर वर्तमान समय तक, हिंदी के रचनाकारों ने ऐसी कृतियाँ रची हैं जो विभिन्न समुदायों की भावनाओं को एक मंच पर लाती हैं। तुलसीदास की

रामचरितमानस इसका एक प्रमुख उदाहरण है। हिंदी में रचित यह कृति उत्तरी भारत में व्यापक रूप से लोकप्रिय हुई और हिंदू धर्म की साझा आस्था को एक सामूहिक सांस्कृतिक कथा के रूप में स्थापित किया। भक्ति काल के कवि जैसे कबीर, सूरदास और मीरा ने अपनी रचनाओं में सामाजिक सुधार और सर्वधर्म समभाव का संदेश दिया, जो विभिन्न जातियों और समुदायों को एकजुट करता था।

निष्कर्ष :

भाषा मनुष्य के लिए अभिव्यक्ति का माध्यम मात्र नहीं है वह मानवी संबंधों का आधार भी है। किसी दूरस्थ देश में जब कभी तो सम भाषा भाषी अचानक मिल जाते हैं तो उनके आपसी व्यवहार में परिवर्तन आ जाता है तत्काल में एक दूसरे के अंतरंग बन जाते हैं भाषा के बारे में कहा जाता रहा है चार कोष पर पानी बदले आठ कोस पर बनी के बदलने की पुरानी पद्धति रही है और पुराने समय की व्यवस्था भी जब लोगों के तीव्र संरक्षण के लिए यातायात का कोई साधन नहीं था लोगों के बीच लगातार इतनी डरी बार-बार तय करने की प्रथम नहीं थी संवादों लोकाचारों समाचारों संस्कृतियों के आदान-प्रदान का कोई संचार माध्यम नहीं था तब थोड़ी दूर पर भाषा और सामाजिक आचार व्यवहार में परिवर्तन हो जाना स्वाभाविक था एक ही शब्द के स्वरूप भिन्न स्थानों पर स्थानीय वातावरण के प्रभाव मनुष्य की व्यक्ति योग्यता और शारीरिक आंगिक क्षमता के कारण बदल जाते थे यूं ही परिवर्तन तो आज भी हो जाता है भिन्न-भिन्न प्रांत और भिन्न-भिन्न भाषाओं में बाटे इस भारत देश को यदि इन विभिन्नताओं और इन परिवर्तनों के दुष्परिणामों से परे सोचा जाए तो एक सुखद स्थिति सामने आती है। भारतीय भाषाओं के साहित्य के अवलोकन करें तो हिंदुस्तान नाम भाषभिन्नता के कारण मानवीय देश डंडों के बारे में सोने की गुंजाइश नहीं रहने देता विभिन्न भारतीय भाषा के साहित्य के विश्लेषण और अध्ययन से बहुत स्पष्ट दिखता है कि भारत देश का साहित्य कई भाषाओं में एक चीज कहता है या भारतीय साहित्य है इसके पुत्र पर भारत जैसे विशाल देश के नागरिक सारी भिन्नताओं के बावजूद एक सूत्र में बंधे हैं इस देश के जवानों ने अब तक अपने खेल में सफलता नहीं पाई है तो इसका श्रेय साहित्य को ही जाता है भाषा को जाता है और उसमें से मुख्य रूप जो इस देश में सबसे बड़े भूभाग पर बड़े संख्या के द्वारा बोली जाने वाली भाषा हिंदी को जाता है। भाषा के द्वारा सामाजिकता निर्माण की एक बहुत महत्वपूर्ण जिम्मेवारी है जिससे हम या समझ जाते हैं कि अमुक व्यक्ति हिंदी कि यह बोली बोल रहा है तो किस अंचल का है किस प्रांत का है और किस अस्मिता का बोध कर रहा [२] इस तरह से हम देखते हैं की भाषाओं के माध्यम से जो सामाजिक ताना-बाना है सामाजिक एकरूपता है समाज का प्रतिनिधित्व भाषाओं के द्वारा होता है जैसे हम अगर कोई बांग्ला भाषा में संवाद स्थापित करता है तो हम तुरंत जान जाते [३] कि यह व्यक्ति पश्चिम बंगाल पश्चिम बंगाल क्षेत्र का निवासी है। अगर कोई अवधि में संवाद करता है या भोजपुरी में संवाद करता है तो हम मैं समझने में तनिक भी देर नहीं लगती कि यह व्यक्ति अवधि है तो अवध क्षेत्र के आसपास का होगा।

सामाजिक अस्मिता के निर्माण में हिंदी भाषा की भूमिका बहुआयामी और गहन है। यह एक ऐसी भाषा है जो केवल संचार के साधन से परे जाकर भारत की सांस्कृतिक आत्मा, ऐतिहासिक गौरव और सामाजिक एकता को प्रतिबिंबित करती है। इस शोध पत्र में हमने देखा कि हिंदी ने विभिन्न कालखंडों में-चाहे वह मध्यकालीन भक्ति आंदोलन हो, स्वतंत्रता संग्राम का दौर हो, या आधुनिक डिजिटल युग—सामाजिक अस्मिता को आकार देने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। यह एक ओर स्थानीय बोलियों के माध्यम से क्षेत्रीय पहचान को मजबूत करती है, तो दूसरी ओर साहित्य, सिनेमा और लोक संस्कृति के जरिए राष्ट्रीय एकता का आधार बनती है।

हिंदी का यह योगदान केवल संयोग नहीं है, बल्कि इसकी अंतर्निहित समावेशी प्रकृति का परिणाम है। यह भाषा अपनी उत्पत्ति से ही संस्कृत की शास्त्रीयता, प्राकृत की सादगी और अपभ्रंश की लोकप्रियता को आत्मसात करती आई है। स्वतंत्रता संग्राम में इसने विभिन्न क्षेत्रों और समुदायों को एक साझा मंच प्रदान किया, जिससे यह राष्ट्रीय अस्मिता का प्रतीक बनी। संविधान में इसे राजभाषा का दर्जा मिलना इसकी औपचारिक स्वीकृति थी, लेकिन इसका वास्तविक प्रभाव जनमानस में इसके स्वाभाविक स्वीकार्य होने में निहित है। साहित्य में जहाँ प्रेमचंद ने सामाजिक विसंगतियों को उजागर किया, वहीं बॉलीवुड ने हिंदी को एक ऐसी भाषा बनाया जो देश के कोने-कोने में गूँजती है।

भविष्य में हिंदी की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि यह कितनी समावेशी और लचीली बनी रह सकती है। इसे क्षेत्रीय भाषाओं के साथ एक सह-अस्तित्व का रास्ता अपनाना होगा, न कि उन पर प्रभुत्व का। नीति निर्माताओं को यह सुनिश्चित करना होगा कि हिंदी का प्रचार थोपने के बजाय स्वाभाविक और स्वैच्छिक रूप से हो। शिक्षा में हिंदी को तकनीकी और वैज्ञानिक क्षेत्रों में सशक्त बनाने की आवश्यकता है ताकि यह अंग्रेजी के समकक्ष खड़ी हो सके। साथ ही, बोलियों को प्रोत्साहित करने और उनके साहित्य को बढ़ावा देने से हिंदी की विविधता और समृद्धि बढ़ेगी।

इस संदर्भ में हिंदी को एक ऐसी भाषा के रूप में देखा जा सकता है जो भारत की आत्मा को प्रतिबिंबित करती है-विविध, गतिशील और एकसमान यह न केवल अतीत की संरक्षक है, बल्कि वर्तमान और भविष्य को जोड़ने वाली कड़ी भी है। हिंदी की सामाजिक अस्मिता को बनाए रखने और विकसित करने की जिम्मेदारी केवल सरकार या साहित्यकारों की नहीं, बल्कि हर उस व्यक्ति की है जो इसे बोलता, लिखता और जीता है। यदि हिंदी अपनी इस यात्रा में संतुलन और समावेशिता को बनाए रखती है, तो यह निश्चित रूप से आने वाली पीढ़ियों के लिए सामाजिक अस्मिता का एक मजबूत आधार बनी रहेगी।

अंत में यह कहा जा सकता है कि हिंदी एक भाषा से कहीं अधिक है यह एक सांस्कृतिक शक्ति है, एक सामाजिक बंधन ै और एक ऐसी पहचान है जो भारत की आत्मा को जीवंत रखती है। इसके संरक्षण और विकास के लिए संयुक्त प्रयासों की आवश्यकता है ताकि यह न केवल अतीत की गूँज बने, बल्कि भविष्य की आवाज भी बन सके।

संदर्भ ग्रन्थ-

1. शर्मा,रामविलास, भारतीय संस्कृति और हिंदी प्रदेश, किताबघर प्रकाशन, वर्ष 1999
2. थ्योंगो, न्गुगी वा, भाषा संस्कृति और राष्ट्रीय अस्मिता, अनुवादक- आनंदस्वरूप वर्मा, सारांश प्रकाशन, वर्ष 1997
3. सोनी, डॉ रामगोपाल , भारतीय जनमानस और भाषायी अस्मिता: राजभाषा भारती,अंक 62, 1993
4. अग्निहोत्री, आर के और संजय कुमार 2001 (संपादकपण). भाषा, बाली और समाज एक अंतः संवाद, नयी दिल्लीः देशकाल।
5. द्विवेदी.मुकुंद (संपादक)-भारतीय भाषाएँ एंव राष्ट्रीय अस्मिता, ,हिंदी अकादमी, दिल्ली, प्रथम संस्करण
6. श्रीवास्तव,रवीन्द्रनाथ -हिंदी भाषा का समाजशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन,दरियागंज, दिल्ली, प्रथम संस्करण
7. केणी चंद्रकांत,भाषा का प्रश्न अस्मिता का ही नहीं, हमारे अस्तित्व का भी है: भारतीय भाषाएं और राष्ट्रीय अस्मिता,हिंदी अकादमी दिल्ली,2001
8. नवीन, डॉ देवशंकर, राष्ट्रीय एकटक सूत्र: साहित्यिक आदान प्रदान,भारतीय भाषाएं और राष्ट्रीय अस्मिता,हिंदी अकादमी दिल्ली,2001

9. मुकर्जी .रविन्द्रनाथ 1989, भारतीय समाज व संस्कति, विवेक प्रकाशन, नईं दिल्ली।
10. श्रीवास्तव, डॉ रवींद्रनाथ, भाषाई अस्मिता और हिंदी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
11. सिंह, नामवर, भारतीय भाषाओं की अस्मिता और संकट: भाषा वृतांत, NASI व्याख्यान

ई-मेल: vindreshyadav5@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 199-203
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

डिजिटल युग में सांस्कृतिक पहचान और सामाजिक परिवर्तन: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

वंदना शर्मा
(दाऊ दयाल महिला पी.जी कॉलेज, फिरोजाबाद)
संबद्ध – डॉ भीमराव अम्बेडकर यूनिवर्सिटी आगरा

प्रो. प्रेमलता
(दाऊ दयाल महिला पी.जी कॉलेज, फिरोजाबाद)
संबद्ध – डॉ भीमराव अम्बेडकर यूनिवर्सिटी आगरा



सारांश

21वीं सदी में डिजिटल तकनीक ने मानव जीवन के लगभग प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है। इंटरनेट, सोशल मीडिया, स्मार्टफोन, डिजिटल मनोरंजन, ऑनलाइन शिक्षा तथा कृत्रिम बुद्धिमत्ता जैसी तकनीकों ने न केवल संचार के स्वरूप को बदला है, बल्कि व्यक्ति की सांस्कृतिक पहचान, सामाजिक संबंधों और जीवन–शैली को भी प्रभावित किया है। संस्कृति अब केवल परिवार, समुदाय, स्थानीय परंपराओं और भौगोलिक सीमाओं के माध्यम से निर्मित नहीं होती, बल्कि डिजिटल माध्यमों पर भी निरंतर निर्मित, प्रस्तुत और पुनर्परिभाषित की जा रही है। इस परिवर्तन ने एक ओर विभिन्न संस्कृतियों के बीच संवाद, सांस्कृतिक अभिव्यक्ति और स्थानीय परंपराओं के वैश्विक प्रसार के नए अवसर पैदा किए हैं, वहीं दूसरी ओर सांस्कृतिक समरूपीकरण, डिजिटल विभाजन, उपभोक्तावाद, पहचान के प्रदर्शन और सामाजिक असमानता जैसी चुनौतियों को भी जन्म दिया है।

यह शोध–पत्र डिजिटल युग में सांस्कृतिक पहचान और सामाजिक परिवर्तन के बीच संबंध का समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इसमें विशेष रूप से सोशल मीडिया, डिजिटल संचार, लोकप्रिय संस्कृति, भाषा, युवा संस्कृति, ग्रामीण–शहरी विभाजन और सांस्कृतिक विविधता पर डिजिटल तकनीक के प्रभाव का अध्ययन किया गया है। अध्ययन द्वितीयक स्रोतों, पुस्तकों, शोध–पत्रों तथा न्छम्ब्ब की रिपोर्टों पर आधारित है। विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि डिजिटल तकनीक संस्कृति को समाप्त करने के बजाय उसके स्वरूप और अभिव्यक्ति के तरीकों को बदल रही है। इसलिए डिजिटल युग में सांस्कृतिक पहचान को एक स्थिर अवधारणा के रूप में देखने के बजाय उसे निरंतर परिवर्तनशील और बहुस्तरीय सामाजिक प्रक्रिया के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है।

1. प्रस्तावना

समाजशास्त्र में संस्कृति को किसी समाज के मूल्यों, मान्यताओं, परंपराओं, भाषा, प्रतीकों, रीति–रिवाजों और जीवन–शैली के समुच्चय के रूप में समझा जाता है। सांस्कृतिक पहचान व्यक्ति और समूह को यह

बोध कराती है कि वे कौन हैं, उनकी सामाजिक जड़ें क्या हैं और वे स्वयं को अन्य समूहों से किस प्रकार अलग या समान मानते हैं। पारंपरिक समाजों में सांस्कृतिक पहचान का निर्माण मुख्यतः परिवार, धर्म, जाति, समुदाय, स्थानीय भाषा, क्षेत्र और परंपराओं के माध्यम से होता था। आधुनिकता और वैश्वीकरण ने इस प्रक्रिया को पहले ही प्रभावित किया था, लेकिन डिजिटल तकनीक ने सांस्कृतिक परिवर्तन की गति और व्यापकता को अभूतपूर्व रूप से बढ़ा दिया है।

आज व्यक्ति अपने स्थानीय सामाजिक परिवेश तक सीमित नहीं है। वह इंटरनेट के माध्यम से देश और दुनिया के विभिन्न समाजों के लोगों से संपर्क कर सकता है, दूसरे देशों की भाषा, संगीत, भोजन, फैशन और जीवन–शैली से परिचित हो सकता है तथा अपनी संस्कृति को भी वैश्विक मंच पर प्रस्तुत कर सकता है। UNESCO के अनुसार डिजिटल तकनीकों ने संस्कृति को संरक्षित करने, निर्मित करने, उपलब्ध कराने और अनुभव करने के तरीकों में महत्वपूर्ण परिवर्तन किया है। सोशल मीडिया ने कलाकारों तथा सांस्कृतिक समुदायों को नए दर्शकों तक पहुँचने के अवसर भी प्रदान किए हैं। भारत जैसे बहुसांस्कृतिक समाज में यह परिवर्तन विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। भारत में अनेक भाषाएँ, धर्म, जातीय समुदाय, लोक परंपराएँ, क्षेत्रीय संस्कृतियाँ और जीवन–शैलियाँ मौजूद हैं। डिजिटल माध्यमों ने इन विविधताओं को एक–दूसरे के निकट लाने के साथ–साथ इनके प्रदर्शन और प्रसार के नए माध्यम उपलब्ध कराए हैं। उदाहरण के लिए, क्षेत्रीय लोकगीत, लोकनृत्य, पारंपरिक व्यंजन और स्थानीय भाषाओं की सामग्री सोशल मीडिया के माध्यम से राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय दर्शकों तक पहुँच सकती है।

हालाँकि, डिजिटल परिवर्तन केवल सकारात्मक प्रक्रिया नहीं है। डिजिटल मंचों पर कुछ भाषाओं और सांस्कृतिक उत्पादों का प्रभुत्व भी दिखाई देता है। इसके अतिरिक्त, जिन लोगों के पास इंटरनेट, डिजिटल उपकरण और डिजिटल साक्षरता की पर्याप्त सुविधा नहीं है, वे इस नए सांस्कृतिक संसार में समान रूप से भाग नहीं ले पाते। इसलिए डिजिटल युग में सांस्कृतिक पहचान का अध्ययन सामाजिक असमानता और शक्ति–संबंधों के अध्ययन से भी जुड़ जाता है।

2. अध्ययन के उद्देश्य

इस शोध–पत्र के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

1. डिजिटल युग में सांस्कृतिक पहचान की बदलती प्रकृति को समझना।
2. डिजिटल तकनीक और सोशल मीडिया के सामाजिक परिवर्तन पर प्रभाव का विश्लेषण करना।
3. डिजिटल माध्यमों द्वारा स्थानीय एवं क्षेत्रीय संस्कृतियों के संरक्षण और प्रसार का अध्ययन करना।
4. डिजिटल वैश्वीकरण से उत्पन्न सांस्कृतिक समरूपीकरण की संभावना को समझना।
5. डिजिटल विभाजन और सांस्कृतिक असमानता के संबंध का समाजशास्त्रीय विश्लेषण करना।
6. भारतीय समाज में युवा संस्कृति और सांस्कृतिक पहचान पर डिजिटल माध्यमों के प्रभाव को समझना।

3. शोध–पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक प्रकृति का है। इसमें मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों का प्रयोग किया गया है। विषय से संबंधित समाजशास्त्रीय पुस्तकों, शोध–पत्रों, UNESCO की रिपोर्टों तथा डिजिटल संस्कृति से संबंधित उपलब्ध अकादमिक सामग्री का अध्ययन किया गया है। Manuel Castells के नेटवर्क समाज संबंधी विचार, Stuart Hall की सांस्कृतिक पहचान की अवधारणा तथा Pierre Bourdieu के सामाजिक एवं सांस्कृतिक पूँजी संबंधी विचार इस अध्ययन के सैद्धांतिक विश्लेषण के लिए उपयोगी आधार प्रदान करते हैं।

यह अध्ययन किसी एक विशेष समुदाय पर किए गए प्रत्यक्ष सर्वेक्षण पर आधारित नहीं है। इसका उद्देश्य डिजिटल तकनीक, सांस्कृतिक पहचान और सामाजिक परिवर्तन के व्यापक संबंध को समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से समझना है।

4. डिजिटल युग और सांस्कृतिक पहचान

सांस्कृतिक पहचान को स्थिर और अपरिवर्तनीय मानना आधुनिक सामाजिक परिस्थितियों में पर्याप्त नहीं है। Stuart Hall के अनुसार पहचान किसी एक निश्चित और स्थायी स्थिति के बजाय निरंतर निर्मित होने वाली प्रक्रिया है। व्यक्ति अलग–अलग सामाजिक परिस्थितियों में अपनी पहचान के विभिन्न पक्षों को व्यक्त करता है। डिजिटल माध्यम इस प्रक्रिया को और अधिक दृश्यमान बनाते हैं।

सोशल मीडिया पर व्यक्ति अपने पहनावे, भाषा, भोजन, संगीत, धार्मिक या क्षेत्रीय प्रतीकों तथा जीवन–शैली के माध्यम से अपनी पहचान प्रस्तुत करता है। इस प्रकार डिजिटल मंच एक प्रकार का सामाजिक और सांस्कृतिक प्रदर्शन–स्थल बन जाता है। व्यक्ति केवल वास्तविक सामाजिक जीवन में ही नहीं, बल्कि ऑनलाइन वातावरण में भी यह तय करता है कि वह स्वयं को किस प्रकार प्रस्तुत करना चाहता है।

डिजिटल पहचान और वास्तविक पहचान के बीच संबंध हमेशा सरल नहीं होता। व्यक्ति ऑनलाइन अपने व्यक्तित्व का चयनित रूप प्रस्तुत कर सकता है। इससे पहचान का निर्माण अधिक लचीला हो जाता है। एक भारतीय युवा एक ही समय में अपनी स्थानीय भाषा और परंपरा से जुड़ा हो सकता है तथा वैश्विक संगीत, फैशन और मनोरंजन संस्कृति का हिस्सा भी हो सकता है। इस स्थिति को सांस्कृतिक संकरण या hybridity के रूप में समझा जा सकता है।

UNESCO की सांस्कृतिक विविधता संबंधी रिपोर्टें भी इस बात की ओर संकेत करती हैं कि डिजिटल संस्कृतियाँ नई प्रकार की सांस्कृतिक विविधता और अभिव्यक्ति को जन्म दे सकती हैं। इंटरनेट के माध्यम से व्यक्ति और समुदाय अपनी सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों को नए रूपों में प्रस्तुत कर सकते हैं।

5. सोशल मीडिया और सामाजिक परिवर्तन

सोशल मीडिया ने सामाजिक संपर्क की प्रकृति में व्यापक परिवर्तन किया है। पारंपरिक समाज में सूचना का प्रवाह अपेक्षाकृत सीमित और एकतरफा था। समाचार–पत्र, रेडियो और टेलीविजन जैसे माध्यमों में सामग्री का निर्माण मुख्यतः संस्थागत स्तर पर होता था। सोशल मीडिया ने इस व्यवस्था को काफी हद तक बदल दिया है। अब सामान्य व्यक्ति भी सामग्री का निर्माता और प्रसारक बन सकता है।

इस परिवर्तन ने सामाजिक भागीदारी के नए अवसर पैदा किए हैं। छोटे शहरों और गाँवों के लोग भी अपने विचार, कला और संस्कृति को बड़े दर्शक वर्ग तक पहुँचा सकते हैं। लोक कलाकार, छोटे व्यवसायी, विद्यार्थी और सामाजिक संगठन डिजिटल मंचों का उपयोग अपने कार्य को प्रस्तुत करने के लिए कर रहे हैं। इस दृष्टि से डिजिटल माध्यम सामाजिक गतिशीलता और सांस्कृतिक लोकतंत्रीकरण को बढ़ावा दे सकते हैं।

भारत में सस्ते स्मार्टफोन और मोबाइल इंटरनेट के विस्तार ने डिजिटल सामाजिक जीवन को व्यापक बनाया है। भारत पर किए गए अध्ययनों में यह भी पाया गया है कि मोबाइल इंटरनेट के विस्तार ने सोशल नेटवर्किंग और लोकप्रिय संस्कृति की वृद्धि को गति दी है। साथ ही, सोशल मीडिया स्वयं एक व्यावसायिक मीडिया उद्योग और संस्कृति–उद्योग का हिस्सा बन गया है। फिर भी सोशल मीडिया के प्रभाव को केवल सकारात्मक नहीं माना जा सकता। एल्गोरिदम उपयोगकर्ताओं को उनके पूर्व व्यवहार के आधार पर सामग्री दिखाते हैं, जिससे समान विचारों वाले समूहों में सीमित रहने की संभावना बढ़ सकती है। इसके परिणामस्वरूप सामाजिक ध्रुवीकरण, गलत सूचना और रूढ़ धारणाओं का प्रसार भी हो सकता है। इसलिए डिजिटल सामाजिक परिवर्तन को तकनीकी परिवर्तन के साथ–साथ शक्ति और नियंत्रण की प्रक्रिया के रूप में भी समझना आवश्यक है।

6. स्थानीय संस्कृति और डिजिटल संरक्षण

डिजिटल तकनीक स्थानीय संस्कृति के संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण साधन बन सकती है। लोकगीत, लोकनृत्य, पारंपरिक कला, हस्तशिल्प, ऐतिहासिक दस्तावेज, मौखिक परंपराएँ और स्थानीय भाषाएँ डिजिटल माध्यमों में रिकॉर्ड की जा सकती हैं। इससे ऐसी सांस्कृतिक सामग्री को भविष्य की पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रखने की संभावना बढ़ती है।

डिजिटल अभिलेखागार और ऑनलाइन संग्रहालयों ने सांस्कृतिक विरासत तक पहुँच को भी आसान बनाया है। UNESCO के अनुसार डिजिटल सांस्कृतिक संसाधनों में विरासत, कला, रचनात्मकता, संग्रहालय, पर्यटन तथा समाज की जीवन–शैली और विविधता जैसे क्षेत्र शामिल हो सकते हैं। भारतीय संदर्भ में यह प्रक्रिया विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि देश की अनेक लोक परंपराएँ स्थानीय समुदायों और मौखिक परंपराओं पर निर्भर हैं। यदि किसी लोकगीत या लोककला को डिजिटल रूप में दर्ज किया जाता है, तो उसके संरक्षण और प्रसार की संभावना बढ़ जाती है। इसके साथ ही स्थानीय कलाकारों को अपने उत्पादों के लिए व्यापक बाजार भी मिल सकता है।

हालाँकि, डिजिटल संरक्षण के साथ सांस्कृतिक स्वामित्व का प्रश्न भी जुड़ा है। किसी समुदाय की परंपरा को इंटरनेट पर डाल देने मात्र से यह सुनिश्चित नहीं होता कि उस समुदाय को उसके उपयोग से उचित

लाभ मिलेगा। इसलिए डिजिटल संस्कृति के विकास में समुदाय की सहमति, बौद्धिक संपदा अधिकार और सांस्कृतिक स्वामित्व की रक्षा आवश्यक है।

7. वैश्वीकरण, सांस्कृतिक समरूपीकरण और सांस्कृतिक संकरण

डिजिटल तकनीक ने वैश्वीकरण की प्रक्रिया को तेज किया है। दुनिया के विभिन्न हिस्सों में बनने वाली सांस्कृतिक सामग्री कुछ ही समय में वैश्विक दर्शकों तक पहुँच सकती है। इससे संगीत, फिल्मों, फैशन, भोजन और मनोरंजन की वैश्विक संस्कृति का विस्तार हुआ है।

इस प्रक्रिया का एक पक्ष सांस्कृतिक समरूपीकरण है। जब कुछ शक्तिशाली भाषाएँ, कंपनियाँ और सांस्कृतिक उत्पाद डिजिटल मंचों पर अधिक प्रभावशाली होते हैं, तो स्थानीय संस्कृतियों पर दबाव बढ़ सकता है। UNESCO ने भी डिजिटल वातावरण में कुछ प्लेटफॉर्मों पर सांस्कृतिक सामग्री के अधिक संकेंद्रण और डिजिटल कौशल की असमानता को सांस्कृतिक विविधता के लिए चुनौती माना है। दूसरी ओर, डिजिटल वैश्वीकरण केवल एकतरफा सांस्कृतिक प्रभाव नहीं पैदा करता। स्थानीय समुदाय वैश्विक तकनीक का प्रयोग अपनी संस्कृति को नए तरीके से प्रस्तुत करने के लिए भी करते हैं। उदाहरण के लिए, कोई स्थानीय कलाकार पारंपरिक संगीत में आधुनिक डिजिटल तकनीक का प्रयोग कर सकता है। इसी प्रकार क्षेत्रीय भाषा की सामग्री आधुनिक वीडियो प्रारूप में प्रस्तुत होकर युवाओं के बीच लोकप्रिय हो सकती है। इसलिए डिजिटल युग में सांस्कृतिक परिवर्तन को केवल पश्चिमीकरण या सांस्कृतिक विनाश के रूप में देखना उचित नहीं होगा। इसके बजाय इसे सांस्कृतिक संकरण की प्रक्रिया के रूप में समझना अधिक उपयोगी है, जिसमें स्थानीय और वैश्विक तत्व मिलकर नए सांस्कृतिक रूपों का निर्माण करते हैं।

8. युवा संस्कृति और डिजिटल समाज

युवा वर्ग डिजिटल परिवर्तन का सबसे सक्रिय भागीदार है। सोशल मीडिया, ऑनलाइन गेमिंग, स्ट्रीमिंग प्लेटफॉर्म, डिजिटल संगीत और वीडियो सामग्री ने युवाओं के मनोरंजन तथा सामाजिक संपर्क के तरीकों को बदल दिया है। युवाओं की भाषा में भी डिजिटल संस्कृति का प्रभाव दिखाई देता है। नए शब्द, संक्षिप्त रूप, मीम और दृश्य प्रतीक दैनिक संचार का हिस्सा बन गए हैं।

युवा अब अपनी सामाजिक पहचान का निर्माण केवल परिवार और स्थानीय समुदाय से प्राप्त मूल्यों के आधार पर नहीं करते, बल्कि ऑनलाइन समुदायों से भी प्रभावित होते हैं। इससे सामाजिक पहचान अधिक बहुस्तरीय बन गई है। कोई युवा एक साथ अपने परिवार, क्षेत्र, भाषा, कॉलेज, ऑनलाइन समुदाय और वैश्विक लोकप्रिय संस्कृति से जुड़ी पहचान रख सकता है।

यह परिवर्तन पीढ़ियों के बीच सांस्कृतिक अंतर को भी बढ़ा सकता है। माता–पिता और युवा एक ही सांस्कृतिक प्रतीक या डिजिटल व्यवहार को अलग–अलग अर्थों में समझ सकते हैं। इसलिए डिजिटल तकनीक पारिवारिक संबंधों और पीढ़ीगत संबंधों के स्वरूप को भी प्रभावित कर रही है।

9. डिजिटल विभाजन और सामाजिक असमानता

डिजिटल समाज में सबसे महत्वपूर्ण समाजशास्त्रीय प्रश्न डिजिटल विभाजन का है। केवल इंटरनेट कनेक्शन की उपलब्धता डिजिटल समानता सुनिश्चित नहीं करती। उपकरणों की गुणवत्ता, इंटरनेट की गति, डिजिटल साक्षरता, शिक्षा, भाषा और आर्थिक स्थिति भी डिजिटल भागीदारी को प्रभावित करती हैं। UNESCO के अनुसार डिजिटल और डेटा साक्षरता में असमानताएँ व्यापक सामाजिक तथा शैक्षिक असमानताओं से जुड़ी हुई हैं। डिजिटल समावेशन केवल तकनीकी पहुँच का प्रश्न नहीं है, बल्कि आवश्यक कौशल और ज्ञान के माध्यम से सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन में भागीदारी का प्रश्न भी है। भारत में ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों, विभिन्न आय–वर्गों तथा अलग–अलग शैक्षिक पृष्ठभूमि वाले लोगों के बीच डिजिटल अवसरों में अंतर दिखाई देता है। इस अंतर का सांस्कृतिक प्रभाव भी पड़ता है। जिन समूहों की डिजिटल पहुँच कम है, वे अपनी संस्कृति को डिजिटल मंचों पर प्रस्तुत करने और अन्य संस्कृतियों तक पहुँचने के अवसरों से वंचित रह सकते हैं।

इसलिए डिजिटल तकनीक को सामाजिक समानता का स्वतः साधन मानना उचित नहीं है। यदि डिजिटल संसाधनों और कौशल तक समान पहुँच नहीं होगी, तो डिजिटल समाज मौजूदा सामाजिक असमानताओं को कम करने के बजाय कुछ परिस्थितियों में उन्हें और मजबूत कर सकता है।

10. निष्कर्ष

डिजिटल युग ने सांस्कृतिक पहचान और सामाजिक परिवर्तन के संबंध को नई दिशा प्रदान की है। आज संस्कृति केवल भौतिक समुदायों और पारंपरिक संस्थाओं में ही निर्मित नहीं होती, बल्कि डिजिटल मंचों पर भी लगातार विकसित हो रही है। इंटरनेट और सोशल मीडिया ने व्यक्तियों तथा समुदायों को अपनी पहचान व्यक्त करने और सांस्कृतिक सामग्री साझा करने के नए अवसर प्रदान किए हैं।

डिजिटल तकनीक ने स्थानीय संस्कृतियों के संरक्षण और वैश्विक प्रसार की संभावनाओं को बढ़ाया है। साथ ही, वैश्विक सांस्कृतिक उत्पादों की उपलब्धता ने सांस्कृतिक आदान–प्रदान को तेज किया है। परिणामस्वरूप सांस्कृतिक पहचान अधिक बहुस्तरीय, गतिशील और मिश्रित होती जा रही है।

फिर भी डिजिटल परिवर्तन के साथ डिजिटल विभाजन, सांस्कृतिक असमानता, व्यावसायीकरण और सांस्कृतिक विविधता पर संभावित दबाव जैसी चुनौतियाँ मौजूद हैं। अतः डिजिटल समाज के निर्माण में केवल तकनीकी विस्तार पर्याप्त नहीं है। डिजिटल साक्षरता, समान पहुँच, स्थानीय भाषाओं का संरक्षण, सांस्कृतिक अधिकारों की रक्षा और विविध सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों को बढ़ावा देना भी आवश्यक है।

समाजशास्त्रीय दृष्टि से देखा जाए तो डिजिटल युग सांस्कृतिक पहचान का अंत नहीं, बल्कि उसके पुनर्गठन का युग है। व्यक्ति अब स्थानीय और वैश्विक दोनों सांस्कृतिक संसारों में एक साथ भाग ले सकता है। इसलिए भविष्य की सांस्कृतिक नीतियों और सामाजिक अध्ययनों को डिजिटल तकनीक को केवल संचार के उपकरण के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक संबंधों, पहचान, शक्ति और संस्कृति को पुनर्गठित करने वाली महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था के रूप में देखना चाहिए।

संदर्भ सूची

1. बॉर्दियू, पियरे (1986)। "पूँजी के रूप"। जे. रिचर्डसन (संपादक), शिक्षा के समाजशास्त्र के सिद्धांत एवं अनुसंधान की पुस्तिका। ग्रीनवुड प्रेस।
2. कैस्टेल्स, मैनुअल (2001)। इंटरनेट गैलेक्सीरू इंटरनेट, व्यवसाय और समाज पर विचार। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
3. कैस्टेल्स, मैनुअल (2010)। नेटवर्क समाज का उदय। वाइली–ब्लैकवेल।
4. हॉल, स्टुअर्ट (1996)। "पहचान की आवश्यकता किसे है?"। स्टुअर्ट हॉल एवं पॉल डू गे (संपादक), सांस्कृतिक पहचान के प्रश्न। सेज प्रकाशन।
5. यूनेस्को (2009)। सांस्कृतिक विविधता एवं अंतर–सांस्कृतिक संवाद में निवेश। यूनेस्को।
6. यूनेस्को (2020)। डिजिटल युग में सांस्कृतिक विविधता का संरक्षण एवं सुरक्षा। यूनेस्को।
7. ूनेस्को (2022)। रचनात्मकता की नीतियों का पुनर्गठनरू संस्कृति को वैश्विक सार्वजनिक वस्तु के रूप में संबोधित करना। यूनेस्को।
8. यूनेस्को (2023)। संस्कृति के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए डिजिटल तकनीकों का उपयोग। यूनेस्को।
9. यूनेस्को (2026)। रचनात्मकता की नीतियों का पुनर्गठनरू 2005 अभिसमय की निगरानी रूपरेखा। यूनेस्को।
10. यूनेस्को। डिजिटल मानवशास्त्र। सामाजिक रूपांतरण प्रबंधन कार्यक्रम (MOST), यूनेस्को।
11. वेसल्स, बी. (2015)। डिजिटल क्रांति के भीतररू पुलिस व्यवस्था एवं डिजिटल विभाजन। डिजिटल समावेशन से संबंधित अध्ययन।

Mobile no – 9889813006
E-mail – vandanasharma20220@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 204-215
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Indian Women's Theatre as a Cultural Intervention: Performance of Sexual and Gender-Based Violence and Resistance

Dinesh Kumar
Research Scholar,
School of Humanities,
Indira Gandhi National Open University Maidan Garhi, New Delhi

Abstract: *Indian Women's Theatre emerged in the 1970s as a mode of cultural intervention to subvert the male gaze and resist, by sharing women's lived experiences, the sexual and gender-based violence in the Indian patriarchal society. Having its origin in the experimental theatre group and the women's liberation movement of the 1960s, Indian Women's Theatre attempts to construct a space for 'women question' in theatre and explores performativity of gender, violence and sexual abuses with an attempt to focus on how women survive, resist and emerge, with an attempt to "consciousness-raising", as critics of the violence. Through a reading of three performance-texts, comprising the Indian women's Theatre, Manjula Padmanabhan's* ***Lights Out****, Dina Mehta's* ***Getting Away with Mur****der and Poile Sengupta's* ***Mangalam****, this paper seeks to examine how the India Women's Theatre challenges male authority and hegemonic social orders through performance of women's lived experiences and women's narratives in the Indian patriarchal socio-cultural contexts. In this paper feminist perspective will be engaged with semiotics and phenomenology in the analysis and interpretation of the signs and symbols, actions, gestures, bodily movements and dialogues presented on the theatrical stage through performance to determine how Indian Women's Theatre forays to intervene into gendered notions entrenched in patriarchal Indian society ensuing sexual and gender-based violence and how feminist standpoints are presented as resistance to them.*

Keywords*: Women's Theatre, Performance, Women, gender, violence, resistance*

Introduction: Indian Women's Theatre

Though theatre mainly serves as a space for entertainment, storytelling and cultural expression, it proves to be one of the most powerful tools in providing a space for women theatre practioners to address and make public oppressed women's private and personal experiences.

Indian Women's Theatre in India emerges as an alternative to the western feminist theatre which in the 1960s and 1970s being evolved as one of the parts of the wider social and political theatrical movement came into existence out of experimental theatrical groups to present women's narratives to resist their marginalization and destabilize the male oppressive gaze. The Indian Women's Theatre as a cultural intervention presenting women's lived experiences in the patriarchal Indian society counters the essentialized women's gender roles and gender-based oppressions of women and challenges historical and socio-cultural norms which naturalize and sustain the perpetration of sexual and gender based social, political, economic and psychological violence against women. Indian women's Theatre as form of cultural activities raises women's issues through the theatrical performance of women with feminist standpoints in the centre of the stage to question male dominated social and cultural hegemonic norms which relegate women to the mainstream to periphery of the social system and marginalizes their subjective experiences by subordinating them as second-class citizens. Through women's performance of the different of forms of violence including physical, sexual, psychological and emotional violence based on gender, sex, identity and masculinist perception or male gaze undermining their autonomy of choice of reproduction, marriage, education, the Indian Women's Theatre as a cultural intervention confronts in a subversive fashion with these sexual and gender-based multifarious violence and adds a remarkable new expression of resistance to patriarchal tendencies and attributes women's agency with a simultaneous prospect of performance of un(doing) gender and disrupting the idea of 'gender performativity' which is socio-culturally constructed, entrenched and naturalized in a Indian patriarchal society.

With the beginning of radical feminism in the 1960s, the male dominated oppressive social system began to be questioned and the radical feminists emphasized on the necessity for the political intervention for bringing changes in the policy for interrupting changes in the structures of gender and power relationships. As a result of radical feminism, the women's liberation movement from 1960s to 1980s became prevalent in questioning the social, cultural and legal validity of patriarchy and oppressive socio-cultural norms. The movement motivated women playwrights, theatre artists, directors and actors across the globe including India, however, to offer their services in presenting women at the centre of the theatrical stage and their experiences as they feel in reality in male dominated cultural and oppressive social systems. By the 1970s and 1980s in India, women playwrights, directors and actors started focusing on women's subjective experiences and their marginalised personal and private issues in a patriarchal familial and social system. Usha Ganguly, Nabaneeta Dev Sen, Tripurari Sharma, Mallika Sarabhai, Neelam Mansingh Chowdhry, Anuradha Kapur, Kirti Jain are among many prominent Indian women playwrights and theatre directors who did not only playwritings but also attempted to generate feminist vocabulary to present women, through feminist lens, with their voice to articulate their subjective experiences confronting tyrannical systems and normative structures of patriarchy to seek response of audience as spec*actors* who represented the community of the women presented in the center of the stage of the Women's Theatre. This study takes three Indian Women English playwrights whose select performance-texts can be categorised to be parts of Indian Women's Theatre in English. These Indian Women English playwrights remain centred to explore also women's issues and experiences through performance on the theatrical stage.

Indian Women's Theatre in English, like feminist theatre in the West, brings women and their personal and private issues as well as their subjective experiences on the theatrical stage where they perform and present the issues of 'gender performativity' and subsequent violence

perpetrated against them by men who have more powerful positions in a patriarchal social system where multifarious violence based on gender is operated against women with an attempt to perpetuate patriarchy, subordinate women, marginalise their subjective experiences and maintain sexist ideology in force. Indian sociologist Reema Bhatia asserts, "Radical feminists like Brownmiller (1975) argue that male violence is the basis of men's control over women. She has been able to show that rape is socially structured in the subordination of women and contend that rape must be recognised and understood as an important aspect of patriarchy" (Reema Bhatia, 2021, 360).

Women playwrights present women actors and characters in oppressed and victimized positions where they confront with different forms of violence including physical, psychological, sexual, cultural, social and economic abuses. Women's Theatre, therefore, includes women playwrights and theatre artists including directors, actors venture out into performing and exploring women's issues and 'woman question' as embodied experiences on the theatrical stage with an attempt to interrupt into the hegemonic and oppressive structures generating and sustaining sexual and gender-based violence against women and disrupt the male gaze. Nivedita Menon, in her book *Seeing Like a Feminist* (2012), very pertinently affirms that it's gaze which shapes specific meanings to violence for a male and a female, "The gaze of the viewer constitutes and reconstitutes the meaning of images" (Menon, 2012, 220). Helene Keyssar poignantly defining feminist theatre maintains that "production and scripts characterised by consciousness of women as women; dramaturgy in which art is inseparable from the condition of women as women; performance (written and acted) that deconstructs sexual differences and thus undermines patriarchal power; scripting and production that present transformation as a structural and ideological replacement for recognition; and the creation of women characters in the 'subject position'…. It was exciting because it dared to venture to the stage with such diverse and sometimes surprising representations and explorations of women, of their relationships to each other and to men, that it created a new audience for theatre" (Keyssar, 1). "Women's Theatre", Tutun Mukherjee in the chapter "Prolegomenon To Women's Theatre" of *Staging Resistance: Plays by Women in Translation* encapsulates, "which is urged by a general concern for gender relations and draws upon women's perspectives and experiences towards 'consciousness raising' to improve the social conditions for women" (2005, 14). In the 1970s and onwards Indian Women playwrights and theatre artists made a dominant advocacy for an urgent need of deconstructing and subverting the prevalent gender and sexual politics through the performance-texts and their presentation on theatrical stage for consciously receptive audience with an attempt to produce for the state to set up social, cultural, political and economic systems free from multifarious sexual and gender-based violence perpetrated against women.

Semiology and Phenomenology of Performance

Performance (written and acted) in Women's Theatre becomes a powerful means of communication and expression of gender-based violence and subsequent traumatic experiences and is appropriately utilized to "political ends and personal aims as well" (Gay and Goodman, 1). The communication of the meanings and motives is processed through the interpretation and analysis of the theatrical signs presented through the performance, i.e., theatrical performance, therefore, examination and production of meaning of the performance in the light of semiotics or semiology becomes relevantly significant. Erika Fischer-Lichte explaining the pertinence of the analysis of theatrical performance through interpretation of the theatrical semiotics maintains, "In epistemological terms, the performance can thus be defined as a text, since the signs it uses have

been found to be theatrical signs, it can be defined as a theatrical text. Performance analysis can therefore be construed as a particular mode of textual analysis and conducted as such" (1993, 173). Tadeusz Kowzan, the Polish semiotician, in his essay "The Sign in the Theatre", claims that a spectacle of the performance is created by theatre artists including writers, directors and actors and this aspect of a spectacle formation necessitates the appropriateness of the semiological analysis of the performance. He maintains that "several theatrical theoreticians and the people in the trade, use the term "sign" when they speak of artistic elements or means of theoretical expression, which proves that semiological consciousness or subconsciousness is something real among those who deal with the spectacle. This confirms at the same time the need of a semiological opening in the theatrical art, the necessity to consider spectacle from the view point of semiology" (1968, 56). Reaffirming the fundamental principles of the Prague School and signification of an object presented through the performance on the theatrical stage, Kowzan claims, "Everything is a sign in a theatrical presentation" (1968, 57). In the line of this assertion made by Kowzan, the semiological analysis of theatrical performance gets more prominence. Women playwrights, theatre artists, directors and actors presenting women on the theatrical stage utilize their bodies, bodily movements, gesture and postures as semiotic vocabulary or language articulating and signifying their subjective and lived experiences and challenges to interrupt and disrupt the male dominated social norms and for the audience as spec*actors,* through interpretation of the theatrical semiotics, to respond the challenges. Women's Theatre presents female body as subject and a sign in the line of theatrical semiotics, in the context of patriarchal socio-cultural parameters, speaking directly in the oppositions to patriarchy, and questioning male gaze, gender differences and violence based on gender and sexuality. Discussing Lacan's view about patriarchal language and its role in generating patriarchal values that women acquire, Jeanie Forte writes that "Cixous agrees with Lacan that it is through language that we acquire patriarchal values, but asserts that it is therefore possible to dismantle the patriarchy through language, specifically by encouraging and exploring women's language, a language rooted in the female body and female sexuality" (Jeanie Forte, 1988, 225). Physical, sexual and psychological violence committed against women's bodies in patriarchy are presented through performance and female bodies become symbolic of resistance and attempt to question and dismantle patriarchal semiotics of the gender-based violence against women. Presentation of hysteria, anxiety, silence, and traumatic and emotional turmoil of women on the theatrical stage is utilized as signs of marginalized and internalized oppressions but women's icebreaking through theatrical performance becomes an admissible sign of resistance to gender differences and sexual and gender-based violence. The female body presented as a sign on the theatrical stage generates a large range of multiple interpretations but put in the patriarchal cultural context a female body on the stage as a sign speaks of the lived and subjective experiences of oppressed and marginalized, at social, economic and psychological levels, women and with the prospect of symbolic vocabulary of women's resistance. Jeanie Forte acutely expresses "The very placement of the female body in the context of performance art positions a woman and her sexuality as speaking subject, an action which cuts across numerous sign-systems not just the discourse of language. The semiotic havoc created by such a strategy combines physical presence, real time, and real women in dissonance with their representations, threatening the patriarchal structure with the revolutionary text of their actual bodies (Forte, 1988, 226).

Women's Theatre presents women articulating their subjective experiences in reality through the theatrical performance on the stage. Understanding and analysis of embodied presence of performers and their embodied experiences to the audience's perception the performances, in

the forms of utterances, actions, events, gestures and bodily movements, and take the presented experiences to be basis of the meanings generated through phenomenological interpretation of the performances. Phenomenology dispenses a large range of creation and formation of meanings entailed through the operation of performer's body on the stage and facilitates audience perception in experiencing the performance. In their edited book *Performance and Phenomenology* (2015), Maaike and others very pertinently maintains about the significance of phenomenology in the construction and perception of the experiences through performance, "Concerned primarily with the structures of experience and perception, phenomenology speaks to fundamental concerns of performance-making, starting with questions about how audience members encounter performances" (Bleeker et al. 4). Phenomenology offers a lens to see the concrete and material reality of the theatrical stage as a whole to interpret actors' embodied performance and audience's perception in concrete reality engaging with particular socio-cultural context in which the whole performances set. Women's Theatre presents women actors on the stage with their embodied experience projected through objects, action, thought, desire, consciousness and images as phenomena for audience to perceive with their own recognition and discernment in relation to the socio-cultural contexts in which it is presented dealing with the writers, directors and actors' motives. Theatrical presentation of experiences being embodied in nature entails a gamut to look for meanings within the purview of phenomenological framework of analysis and interpretation of a particular performance. "Phenomenology insists that the embodied nature of being means more than having a body in a world; it means we exist through the experience of intersubjectivity. Performance stages this each time an act requires or acquires a witness in order to come into being *and to come into meanings*" (Bleeker et al. 8). Phenomenological reduction philosophy, originally envisioned by Husserl in 1913, suspending the preconceived judgment of the audience provides them with new insights perceiving and conceiving the performance presented on the theatrical stage. Commenting on Husserl, Jacques Derrida noted that "phenomenological reduction is a scene, a theatre stage (1973, 86). The relevancy of using semiotics with phenomenological philosophy of analyzing and perceiving the world of performance is very clearly grabbed by Bert O. States, in his book *Great Reckonings in Little Rooms: On the Phenomenology of Theater*, "If we think semiotics and phenomenology as modes of seeing, we might say that they constitute a kind of binocular vision: one eye enables us to see the world phenomenally; the other eye enables us to see it significatively. These are the abnormal extremes of our normal vision" (States, 1985, 8). In this study, therefore, the semiotics and phenomenology are brought together to be complementary to each other in the analysis and examination of the theatrical performance of the Women's Theatre.

Indian Women's Theatre: Performance of Sexual and Gender-Based Violence, and Resistance

Focusing on Padmanabhan's *Lights Out,* Mehta's *Getting Away with Murder,* and Sengupta's *Mangalam* to address performance of different forms of sexual and gender- based violence against women and subsequent traumatic effect of the abuses and their presentations on the theatrical stage, this study delves into how women playwrights, directors and actors attempt to produce a complex and prominent symbol of resistance, reclaiming the female voice, by unfolding the male made stereotypes for imposition of domestic violence and gendered oppressions, breaking silence against sexual violence and challenging, with a subversive attempt, the patriarchal norms and male dominating social orders and hegemonic masculinity which normalize and perpetuates male power and domination over women. "Violence against women is a product of gendered

arrangement which facilitates attack on women in a patterned manner that is distinct from other demographic groups which suggests that they are being targeted precisely because of their gender" (Hunnicutt, 2009) (as quoted in Reema Bhatia, Gender: A Sociological Understanding, 2021, 343). Gendered violence in these performance-texts itself is a kind of performance which take place on the theatrical stage. The representation of gendered violence is performed not only for the sake of unfolding the male gaze and male made stereotypes and hegemonic norms which are imposed on women so that gendered violence can be committed by patriarchy against women, but here the performance of gendered violence and its psychological and traumatic impact facilitates the women playwrights and actors to interact with audience to question the male dominating oppressive socio-cultural norms and interrupt, disrupt, subvert and finally dismantle them.

The *Lights Out*, first performed in 1986 by Sol Theatre Company, at Prithvi Theatre, Bombay, mainly centres on the discussion made by the characters, staying inside their apartment, about the spectacle of the gang rape of the victim woman. *Lights Out* begins with Leela expressing her fear and stress caused by the screams of a victim woman who is being gang raped by four men in a building under construction outside her apartment. Leela expresses the effect of the victim's biting and painful screaming on her psyche, "I feel frightened. All through the day, I feel tensed (Padmanabhan, 5). Her fear and psychological disturbance are the sign which refers to the all marginalized and subordinated women's response and challenges to the sexual and gender-based violence and the situation in which women having too inferior positions are helpless to take decisions in doing anything to stop violence perpetrated against a woman. Leela's incessant imploration to her husband Bhasker to intervene into the sexual assault by calling the police to get it stopped is ignored by her husband, the representative of all the men of a patriarchal society. Bhasker, Mohan and Surinder frequently shift their perceptions about the real nature of the spectacle of the crime by hypothesizing that the sexual incident can be some sort of act done for the sake of pleasure, a part of exhibitionism, a religious ceremony, and further misconceiving and misidentifying the victim woman as a poor woman, a demon possessed weaker sex, a whore, an indecent woman, a woman without shame and without vulnerability to be raped. Their frequent changing conceived notions and perception towards identity of the woman victim mirrors male politics to mystify the identity of women. The patriarchal notions and stereotypes grounded on gendered notions and practiced to maintain different suppositions, stereotypes, prejudices and preconceived notions of patriarchy only to sustained imposition of the socio-cultural norms on women. Bhasker and Mohan being in authority and power, as a rule of patriarchy, to initiate anything to stop the violence instead they fabricate different stories to distract the attention of Leela from the criminal incident happening outside and subsequent effect disturbing her psyche. This depicts the dehumanization of middle-class people towards women sexually assaults and women against whom different forms of sexual and gender-based violence perpetrated in patriarchal Indian society.

The characters Bhasker, Leela, Frieda, Mohan, Naina, Surinder and nobody else including chowkidar, owner of the building and neighbours initiate any action to help the crying victim woman by intervening into it or calling the police to get it stopped. Bhasker's expressing his inability in doing anything to stop the violence is noteworthy:

> BHASKER: I don't want to stick my neck out, that's all (Padmanabhan, 7).
>
> Huh! So why should we! (Padmanabhan, 8)
>
> There is nothing we can do something about it. We just have to ignore it (Padmanabhan, 36).

> Look these things go on all the time, all over the city—who are we to interfere? (Padmanabhan, 41)

They prove to be only bystanders, and inaction on their part depicts the apathy and indifferent attitudes of middle –class people. Representing the dehumanized middle-class, Bhasker's apathetic attitude poignantly turns out.

Leela's point in her frequent imploration to call the police grounds in the idea of social responsibility to interrupt into a crime committed against a woman. She says, "That's we're part of…of what happens outside. That by watching it, we're making ourselves responsible" (Padmanabhan, 6). Mohan's dehumanized opinion and his indifferent attitude towards the happening sexual assault as well his not willing to interrupt is expressed when he says, "Personally, I'm against becoming entangled into other people's private lives. Outsiders can never really be the judge of who is right and who is wrong" (20).

The victim's body is brutalized by the four men involved in the gang rape. Her sensibilities were affected along with the sensibilities of Leela inside the apartment but it is gaze of male and female which creates different image of the victim being raped. Menon says that rape must be considered as a serious crime which spoils women's autonomy and their bodily integrity, "The feminist understanding of rape proceeds on completely different premises. While recognizing rape as a serious crime, its harm is seen to lie in the attack on a woman's autonomy and bodily integrity (Menon, 2012, 120). On the one side Leela gets hysterical with the effect of its spectacle on her psyche, and on the other hand Bhasker and Mohan get voyeuristic pleasure from the rape spectacle and plan to take shots of the gang rape spectacles for a magazine published and sold in a market. Not only the negligence of Bhasker and Mohan towards screams of the victim marginalizes her voice and sensibility, but also their sense of getting pleasure out of the spectacle relegates to the position of commodification of her body. The presentation of such male characters that treat a woman's body to be not only as object but also a commodity to be exchanged and sold points towards the aesthetics of the Women's Theatre in putting women in such position to expose the oppressive and exploitative patriarchal societal structures and counter them through theatrical performance as Nivedita Menon rightly asserts, "The term 'commodification of the female body' refers to a form of critique that feminists have long made, of certain kinds of representation of female bodies—as objects of male desire, as saleable in the market (Menon, 2012, 198-99).

Leela being helpless in interrupting the being committed violent gang rape of a woman victim gets mentally disturbed and confines her children in the room so that they can not see come to see the violence and get affected like her. She does not wish her children to learn the way of doing violence against women but her husband, Bhasker, insists on her to allow them to see the crime because it is cultural phenomenon. Bhasker says, "Now that we know the cultural significance of the spectacle—perhaps we should let them watch" (Padmanabhan, 30)? This signifies hegemonic culture working behind to boost the violence against women and how this oppressive culture is maintained and transferred from one to the next. Mohan attempts to divert Leela's attention by giving a new cultural significance to the violence. His patriarchal preconceived notion works behind his saying, "It's some sort of religious ceremony you see, the local slum dwellers putting on a programme" (Padmanabhan, 33). His understanding the violence through religious lens gives the sexual and gender-based violence committed in the name of socio-cultural rituals and religious ceremony. Leela, being not able to do *yoga* or meditation and being so empathetic towards the brutalization of the victim woman and her painful screaming for help, gets herself so psychologically affected that in the later part of the performance she frequently

becomes hysterical and traumatically experiences the same pain of the victim woman. Her being hysterical and silenced signifies the extremity of violence and marginalization of women's voice in patriarchy. Leela and Naina's points in their continuous persuasion to interrupt into the crime shows their resistance to all male dominating socio-cultural, religious and political notions which not only construct grounds for sexual and gender-based violence against women but also perpetuate. Laila and Naina presenting their points with feminist perspective symbolizes women's resistance to the rape and other kinds of violence based on gender and sexuality imposed over women in a male dominating and oppressive socio-cultural context.

Naina, the other female character, like Leela, feels agitated and expresses resistance to the violence committed against the victim woman. She finds the violence disturbing her as it disturbs Leela. Naina's resistance is explicitly in the following expressions:

> NAINA: But I must, I can't bear to hear this sound and not look. Even if it's something religious, it sounds as if it should be stopped (Padmanabhan, 34).
>
> What ritual?! That's no ritual! That's a—a— (Padmanabhan, 35)
>
> But what can you mean, saying it's a ritual! We must do something about it, get it stopped, call the police! (Padmanabhan, 37)

The male dominating socio-cultural norms and patriarchal prejudices, on the ground gender differences and expectations, women are expected to be decent, but their decency provides them with vulnerability to be victims of sexual and gender-based violence in an authoritative social system. In the later part of the performance of this play, men characters are somehow convinced to see the violence as a rape, but they politicize the rape of the victim woman to be not surprising anyway. The social norms of patriarchy and cultural phenomena become the ground for their gendered gaze and they identify the victim to be a prostitute or a whore who has no decency so is not vulnerable to be raped. Their sense of decency, vulnerability and rape is explicitly expressed here:

> MOHAN: Right. After all, finally, the difference between men and women is that women are vulnerable to rape…
>
> BHASKER: After all…what is a woman but someone decent enough to be raped? (Padmanabhan, 43)

The sexual and gender-based violence committed against women becomes the consequence of gender differences and expectations imposed on women in Indian patriarchal society. Men in power and women in subordinate position interact and behave according to the gendered norms set for them in a cultural context. The reading of this performance-text provides audience with a new language and lens through their consciousness is stirred to think about the entrenched social, religious and cultural norms, entrenched in patriarchy, imposed on women and face violence based on gender with an attempt to interrupt and subvert them.

Dina Mehta's *Getting Away with Murder*, first performed in 1990 by Indus International, a socio-cultural group for women, at the British Council Theatre, Mumbai, presents on the stage three women actors who come in contact to one another by their own need and concerns and who in their own way struggle and resist to patriarchal notions of marginalizing women. Mehta unfolds the multi-layers of violence women come across in a patriarchal social system. She explores sexual and gender-based violence including sexual child abuse, rape, and female foeticide, imposed preference of male child to female, female foeticide and blind adherence to superstitions. Sonali, sexually abused in her childhood, suffers from its traumatic effect in her later parts of life. Getting her first female fetus aborted, she is pregnant in her third month and wants amniocentesis test for

sex detection of the current fetus. Sonali's decision for sex detection of the fetus is the result of the choice and preference of a male child to a female child in a patriarchal Indian society. She does not wish to give birth to a female child also because of her own experience of sexual abuse in childhood at the hand of her uncle. She was not helped by her own mother and brother Gopal when she was being assaulted as they thought exposition of violence of sexual abuse or rape would bring dishonour to the family. In her book *Seeing Like a Feminist* (2012), Nivedita Menon distinguishes between the perceptions of rape by patriarchy and by feminists:

> For patriarchal forces, rape is evil because it is crime against the honour of the family, whereas feminists denounce rape because it is a crime against the autonomy and bodily integrity of a woman. This difference in understanding rape naturally leads to diametrically opposite proposals for fighting rape (Menon, 2012, 117).

Her traumatic experience of the sexual abuse committed by her uncle and the painful remembrance of her mother's suffering only because of being a woman intensifies her determination for going to amniocentesis test. Her traumatic experiences, Sonali express through frequent going into flashbacks of her memory and paintings in which she sketches her uncle looking like monster and in full power to control and sexually victimize Sonali frequently. In patriarchal society men having dominant role in familial, social, cultural and political affairs become powerful to perpetrate domestic and sexual violence against the weak and marginalized women. Victimization of Sonali in her childhood does not only gets her off her own chastity but also spoils her mental peace and affects he so intensely that she submits to all patriarchal dominations in her later life. Raziya, a gynecologist suffers from characteristics of infertility and helplessly thinks to stay with Habib, her husband who is to get married to Zamena, the friend of his Niece. The shortcomings they being women suffer with natural-biological bodies and subsequently victimized by the socio-culturally constructed norms of patriarchy. In her book *Patriarchy,* V. Geetha poignantly maintains:

> Women argued that sexual assault was not a crime against chastity of female moral worth; rather it was an expression of male sexual authority, which in turn was backed by the power of class, caste…women's bodies were often routinely viewed as object of male desire and lust…Women's groups pointed to the range of sexual crimes that were directed at women-child abuse, incest, marital rape—to argue that their social existence was invariably sexualized and therefore not seen as worthy of equality or justice. The family and larger kin group...they noted, actively aided this sexualization of women's bodies by valorizing their fertility and chastity. It was this concerted violence against women, they insisted which secured the patriarch's power, both at the level of family and society (191).

Malu, being in good position at her business, does not wish to marry Gopal, Sonali's brother and younger than her in age. A patriarchal society contains such entrenched norms that a woman should be younger than a man to get married with. Economically being independent Malu has pride to not marry and sell herself to a man who is younger in age. She has pride and dignity of a new woman. This depicts that a woman's independency, in a social and cultural arena, grounds her economic strength and freedom. She has her own sense of freedom and freedom from violence based on gender.

All the three women, somehow, try to stick to the hegemonic socio-cultural norms of patriarchy on the one hand, exposing the male made stereotypes to oppress women's subjective experiences they attack on the hegemonic and oppressive social orders of patriarchy on the other. Sonali says, "It is still my body and my choice. A symbol of my emancipation" (63). She is of the

opinion that her anatomical body is basis for her victimized condition and the same body can be the source to disrupt the social order of the oppressive society. Raziya's points that women should bring changes in their way of looking at and thought process about social, cultural and political norms which are at work to oppress women and objectify and marginalize women's subjective experiences. She once says to Malu, "The enemy is within, don't you see? *It is in our minds, Mallika, that we are underlings!* (78). They adhering to oppressive norms attempt to present and perform for audience to think of them and initiate to interrupt, disrupt the male prejudiced male gaze and subvert oppressive social orders of patriarchy prevalent at every stage irrespective of age, education and economic condition of women and consciously come forward to set up a society free from all forms of violence based on gender and sexuality in Indian patriarchal society.

Mangalam, first performed in 1994 by Playpen at Guru Nanak Bhavan, Bangalore, presents such women characters who become victims of domestic violence, marital infidelity and sexual abuse as well other forms of gendered violence in a patriarchal Indian society across ages and cultures. The play contains two acts. This play utilizes a play within a play technique to emphasize the intensity of the performance in the first act. The characters in the first Act are the same in the second Act of the play. The actors in the performance of the first Act turn out to be viewers in the second Act of the play.

Addressing the death of Mangalam in act I, the playwright focuses multifarious violence women encounter in a patriarchal society. Chitra, daughter of Mangalam, is not allowed to pursue her education and Thangam wants her to get married as she thinks education for a girl can not save her from gendered violence so deeply entrenched in patriarchy. Usha, daughter of Mangalam, stays at her parents' home as she has been mistreated and humiliated based on gender and sexuality by her in-laws. This depicts the married women's miserable condition in their law's house and the violence based on gender they face. Chitra, Mangalam and Dorai's another daughter elopes with a non-Brahmin boy whom she loves. This is unbearable to Dorai as he is too orthodox to accept her daughter's independent choice of marrying a boy of not his class and religion. He thinks that her elopement has brought dishonour to the family and disrespect to him. He expresses his pain and conventional thought, "The whole town is laughing at me. She has thrown mud on me, that wretched girl. How can I face people now (Sengupta, 108)?

Towards the end of the first Act, the actual cause of Mangalam's death is revealed. Like Usha, Mangalam was also victim of violence at the hand of Dorai, Mangalam's husband. Dorai kept on torturing Mangalam as she was not willing to reveal the name of the father of the child with whom she was pregnant with before marriage. In a patriarchal society, a woman's virginity is considered to be the most crucial attribute of her. Mangalam being victim of sexual assault and her getting pregnant with a baby before marriage becomes proves to be mental torture to Dorai. The social norms and their practice make women an object of sexual satisfaction for men. Before her marriage a woman is not expected to have sexual relationship with any man. Mangalam is tortured and sexually abused by Dorai only because she does not disclose anything about her pre-marital relationship. The social norms and their practice are set differently in a patriarchal society and this difference is based on gender norms culturally constructed. The violence and abuses Mangalam faces are rooted in the gender norms and their imposition on women. The following expressions between Thangam and Dorai demonstrate the nature of violence based on gender and its cause along with subversive resistance:

THANGAM: So you stayed because of your greed for money. You stayed with her so that you could punish her every minute of her life. You knocked her and taunted her, you tortured her. I have seen the marks of your hands on her body. Your nail marks.

DORAI: She wouldn't tell me who the father was. First I used to ask her softly, sweetly. She wouldn't tell me. Then I beat her. She stayed quiet. She wouldn't even cry out in pain. She was so obstinate that…then it became a game to see how I could get it out of her (*pause*). She never told me (Mangalam, 121).

DORAI: Why didn't she tell me? If she had told me, I would have forgotten it. I would have treated her well. But she ruined my life. I couldn't rest. I couldn't put my head down on the pillow without wondering who he was (Sengupta, 122).

Act II of the play begins with Suresh and Sumati discussing over the performed and enacted events in the Act I. Thangam, mother of Suresh and Sumati, also joins the discussion. In between the discussion, the playwright attempts to explore the situations in domesticity of familial relationships and in patriarchal socio-cultural context a female child comes across different forms of violence. While discussing, the characters in the Act II of the play present their own problems caused by gendered norms of patriarchy. The playwright Poile Sengupta has well attempted to present the performance of gendered violence and traumatic experiences of Mangalam along with the other characters to present them as the spectacles of women's resistance to different superstitious notions, socio-cultural norms, male made stereotypes only to perpetrate violence and perpetuate women's marginalization and subordination to men in authority in gender and power relationships.

Conclusion

Indian Women's Theatre as a cultural intervention engaging the theatrical performance of sexual and gender-based violence against women in the patriarchal social and cultural contexts with the embodied resistance through the feminist perspective gets prominence in the 1980s in India. The playwrights and theatre practioners including directors and actors attempt to present women in the center to express their lived subjective experiences with 'woman question' and the question of identity along with sexual and gender-based violence they face across age, economic and social position. Performing their lived subjective experiences the women through their presentation on the theatrical stage question the socio-cultural norms and practices entrenched in Indian patriarchal society the Indian Women's Theatre endeavours to raise consciousness among audience who are expected to be not only just spectators, but also as spec*actors*. The semiotics and phenomenological along with feminist understanding of the Indian Women's Theatre provides audience and readers of the theatrical performance with a purview of analyzing the theatrical signs and symbols and embodies experiences of the actors presented with a view to perform to intervene into the sexual and gender based violence rooted within socio-cultural norms and their sustained practices with the simultaneous women's subversive resistance to oppressive social orders of patriarchy.

Works Cited:

1. Bhatia, Reema. *Gender: A Sociological Understanding.* Pearson, 2021.
2. Bleeker, Maaike, et al. *Performance and Phenomenology: Traditions and Transformations*. Routledge, 2015.
3. *Body Blows: Women, Violence and Survival: Three Plays*. Seagull, 2000.
4. Derrida, Jacques. *Speech and Phenomena and Other Essays on Husserl's theory of Signs.* trans. David B. Allison. Northeastern University Press, 1973.

5. Fischer-Lichte, Erika. *The Semiotics of Theatre*. trans. Jeremy Gaines and Doris L. Jones. Indiana University Press, 1993.
6. Forte, Jeanie. "Women's Performance Art: feminism and Postmodernism." *Theatre Journal*, Vol. 40, No. 2, May, 1988, pp. 217-235.
    a. https://www.jstor.org/stable/3207658
7. Gay, Jane de and Lizbeth Goodman. *Language of Theatre Shaped by Women.* Intellect Books,
8. 2003.
9. Geetha, V. *Patriarchy*. Stree, 2007.
10. Keyssar, Helene. *Feminist Theatre and Theory*. Macmillan, 1996.
11. Kowzan, Tadeusz. "The Sign in the Theatre: An Introduction to the Semiology of the Art of the Spectacle."*Diogenes*, Vol. 16, No. 61, March, 1968, pp. 52-80
    a. https://doi.org/10.1177/039219216801606104
12. Menon, Nivedita. *Seeing Like a Feminist*. Zubaan and Penguin Books, 2012.
13. Mukherjee, Tutun. *Staging Resistance: Plays by Women in Translation.* Oxford University Press, 2005.
14. States, Bert O. *Great Reckonings in Little Rooms: On the Phenomenology of Theater*. University of California Press, 1985.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 216-222
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਰਾਜਨੀਤੀ ਵਿੱਚ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਦਾ ਸੰਕਟ: ਇੱਕ ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਣ

(The Leadership Crisis in Punjab Politics: A Critical Analysis)

ਮਨਦੀਪ ਕੁਮਾਰ (Mandeep Kumar)
ਲੈਕਚਰਾਰ ਰਾਜਨੀਤੀ ਸ਼ਾਸਤਰ,
ਸਰਕਾਰੀ ਸੀਨੀਅਰ ਸੈਕੰਡਰੀ ਸਕੂਲ (GSSS) ਮਹਿਤਾਬਪੁਰ

1. Abstract (ਸੰਖੇਪ)

ਇਹ ਖੋਜ ਪੱਤਰ 2022 ਦੀਆਂ ਵਿਧਾਨ ਸਭਾ ਚੋਣਾਂ ਅਤੇ 2024 ਦੀਆਂ ਲੋਕ ਸਭਾ ਚੋਣਾਂ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਰਾਜਨੀਤੀ ਵਿੱਚ ਆਏ ਵੱਡੇ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਬਦਲਾਅ ਦਾ ਅਧਿਐਨ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਪੰਜਾਬ ਵਿੱਚ ਲੰਬੇ ਸਮੇਂ ਤੱਕ ਰਾਜਨੀਤੀ ਕੁਝ ਚੋਣਵੇਂ ਪਰਿਵਾਰਾਂ ਅਤੇ ਕੱਦਵਾਰ ਚਿਹਰਿਆਂ ਦੁਆਲੇ ਘੁੰਮਦੀ ਰਹੀ ਹੈ। ਪਰ ਮੌਜੂਦਾ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਰਵਾਇਤੀ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਦੇ ਪਤਨ ਅਤੇ ਕਿਸੇ ਇੱਕ ਸਰਵ-ਪ੍ਰਵਾਨਿਤ ਆਗੂ ਦੀ ਗੈਰ-ਮੌਜੂਦਗੀ ਨੇ ਇੱਕ 'ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਖਲਾਅ' (Political Vacuum) ਪੈਦਾ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਹੈ। ਇਹ ਪੇਪਰ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਸਿਆਸੀ ਪਾਰਟੀਆਂ (ਆਪ, ਕਾਂਗਰਸ, ਅਕਾਲੀ ਦਲ, ਭਾਜਪਾ, ਵਾਰਿਸ ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਅਤੇ ਬੀ.ਐੱਸ.ਪੀ.) ਦੇ ਅੰਦਰੂਨੀ ਸੰਕਟ, ਚੋਣ ਅੰਕੜਿਆਂ, ਵੋਟਰਾਂ ਦੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਅਤੇ ਖੇਤਰੀ ਪਛਾਣ ਦੇ ਬਦਲਦੇ ਸਰੂਪ ਦਾ ਵਿਸਥਾਰਪੂਰਵਕ ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਣ ਕਰਦਾ ਹੈ।

2. Introduction (ਜਾਣ-ਪਛਾਣ)

ਭਾਰਤੀ ਸੰਘਵਾਦ (Indian Federalism) ਵਿੱਚ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਰਾਜਨੀਤੀ ਹਮੇਸ਼ਾ ਹੀ ਵਿਲੱਖਣ ਅਤੇ ਪ੍ਰਭਾਵਸ਼ਾਲੀ ਰਹੀ ਹੈ। ਦੇਸ਼ ਦੇ ਬਾਕੀ ਰਾਜਾਂ ਦੇ ਉਲਟ, ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਸਿਆਸਤ ਕੇਵਲ ਆਰਥਿਕ ਮੁਦਿਆਂ 'ਤੇ ਨਹੀਂ, ਬਲਕਿ ਖੇਤਰੀ ਪਛਾਣ (Regional Identity), ਪੰਥਕ ਸਰੋਕਾਰਾਂ ਅਤੇ ਕਿਸਾਨੀ ਹਿੱਤਾਂ ਦੁਆਲੇ ਘੁੰਮਦੀ ਰਹੀ ਹੈ। ਦਹਾਕਿਆਂ ਤੱਕ ਇੱਥੋਂ ਦੀ ਸੱਤਾ ਦੋ-ਧਰੁਵੀ ਢਾਂਚੇ (Bi-polar system) ਦੇ ਅਧੀਨ ਰਹੀ, ਜਿੱਥੇ ਇੱਕ ਪਾਸੇ ਸ਼ਿਰੋਮਣੀ ਅਕਾਲੀ ਦਲ (ਸਰਦਾਰ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਸਿੰਘ ਬਾਦਲ ਦੀ ਅਗਵਾਈ ਵਿੱਚ) ਅਤੇ ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਭਾਰਤੀ ਰਾਸ਼ਟਰੀ ਕਾਂਗਰਸ (ਕੈਪਟਨ ਅਮਰਿੰਦਰ ਸਿੰਘ ਦੀ ਅਗਵਾਈ

ਵਿੱਚ) ਇੱਕ-ਦੂਜੇ ਨੂੰ ਟੱਕਰ ਦਿੰਦੇ ਸਨ। ਇਹ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ 'Personality-driven' (ਵਿਅਕਤੀ-ਕੇਂਦਰਿਤ) ਸੀ, ਜਿੱਥੇ ਨੇਤਾ ਦਾ ਕੱਦ ਪਾਰਟੀ ਨਾਲੋਂ ਵੱਡਾ ਮੰਨਿਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ।

ਹਾਲਾਂਕਿ, ਸਾਲ 2022 ਦੀਆਂ ਵਿਧਾਨ ਸਭਾ ਚੋਣਾਂ ਨੇ ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਸਿਆਸੀ ਇਤਿਹਾਸ ਨੂੰ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਬਦਲ ਦਿੱਤਾ। ਰਵਾਇਤੀ ਲੀਡਰਾਂ ਪ੍ਰਤੀ ਜਨਤਾ ਦੇ ਤਿੱਖੇ ਰੋਸ ਨੇ ਆਮ ਆਦਮੀ ਪਾਰਟੀ (AAP) ਨੂੰ ਇੱਕ ਇਤਿਹਾਸਕ ਬਹੁਮਤ (92 ਸੀਟਾਂ) ਬਖਸ਼ਿਆ। ਪਰ ਇਸ ਵੱਡੇ ਬਦਲਾਅ ਦੇ ਬਾਵਜੂਦ, ਮੌਜੂਦਾ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਸਿਆਸਤ ਇੱਕ ਅਜੀਬ 'ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਖਲਾਅ' (Political Vacuum) ਅਤੇ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਦੇ ਗੰਭੀਰ ਸੰਕਟ ਦਾ ਸਾਹਮਣਾ ਕਰ ਰਹੀ ਹੈ। ਪੁਰਾਣੇ ਕੱਦਵਾਰ ਨੇਤਾਵਾਂ ਦੇ ਜਾਣ ਜਾਂ ਸਿਆਸੀ ਤੌਰ 'ਤੇ ਕਮਜ਼ੋਰ ਹੋਣ ਤੋਂ ਬਾਅਦ, ਸੂਬੇ ਵਿੱਚ ਕੋਈ ਵੀ ਅਜਿਹਾ ਸਰਵ-ਪ੍ਰਵਾਨਿਤ ਚਿਹਰਾ ਨਜ਼ਰ ਨਹੀਂ ਆ ਰਿਹਾ ਹੈ ਜੋ ਪੂਰੇ ਪੰਜਾਬ ਨੂੰ ਇੱਕ ਸੂਤਰ ਵਿੱਚ ਪਰੋ ਸਕੇ। ਅੱਜ ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਵਿੱਚ ਖੇਤੀ ਸੰਕਟ, ਪਾਣੀ ਦਾ ਸੰਕਟ, ਕਰਜ਼ੇ ਦਾ ਸੰਕਟ, ਬੇਰੁਜ਼ਗਾਰੀ, ਵੱਧ ਰਿਹਾ ਪ੍ਰਵਾਸ ਅਤੇ ਨਸ਼ੇ ਵਰਗੀਆਂ ਗੰਭੀਰ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ ਮੌਜੂਦ ਹਨ। ਇਹ ਖੋਜ ਪੱਤਰ ਇਸੇ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਸੰਕਟ ਦੇ ਕਾਰਨਾਂ, ਸਰੂਪ ਅਤੇ ਇਸਦੇ ਦੂਰਗਾਮੀ ਪ੍ਰਭਾਵਾਂ ਦਾ ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਣ ਕਰਦਾ ਹੈ।

3. Literature Review (ਸਾਹਿਤ ਦੀ ਸਮੀਖਿਆ)

ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਸਿਆਸਤ 'ਤੇ ਲਿਖਣ ਵਾਲੇ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਕ ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਪ੍ਰੋ. ਰੋਨਕੀ ਰਾਮ (2024) ਅਤੇ ਡਾ. ਪ੍ਰਮੋਦ ਕੁਮਾਰ (2022) ਦੇ ਅਧਿਐਨਾਂ ਮੁਤਾਬਕ, ਪੰਜਾਬ ਵਿੱਚ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਦੀ ਪ੍ਰਵਾਨਗੀ ਹਮੇਸ਼ਾ 'ਖੇਤਰੀ ਖੁਦਮੁਖਤਿਆਰੀ' (Regional Autonomy) ਅਤੇ ਕੇਂਦਰ ਦੇ ਸਾਹਮਣੇ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਆਵਾਜ਼ ਬਣਨ ਦੀ ਸਮਰੱਥਾ 'ਤੇ ਨਿਰਭਰ ਕਰਦੀ ਰਹੀ ਹੈ। ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਸਿੰਘ ਬਾਦਲ ਨੇ 'ਮੋਰਚਿਆਂ' ਰਾਹੀਂ ਅਤੇ ਕੈਪਟਨ ਅਮਰਿੰਦਰ ਸਿੰਘ ਨੇ 'ਪਾਣੀਆਂ ਦੇ ਸਮਝੌਤੇ ਰੱਦ' ਕਰਨ ਵਰਗੇ ਫੈਸਲਿਆਂ ਰਾਹੀਂ ਆਪਣੀ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਨੂੰ ਮਜ਼ਬੂਤ ਕੀਤਾ ਸੀ।

ਮੌਜੂਦਾ ਅਕਾਦਮਿਕ ਚਰਚਾਵਾਂ ਇਹ ਦਰਸਾਉਂਦੀਆਂ ਹਨ ਕਿ 2022 ਵਿੱਚ ਜਨਤਾ ਨੇ ਕਿਸੇ ਨਵੀਂ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਨੂੰ ਨਹੀਂ ਚੁਣਿਆ, ਸਗੋਂ ਪੁਰਾਣੀ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਦੀਆਂ ਨਾਕਾਮੀਆਂ (ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਬੇਅਦਬੀ ਦੇ ਮੁੱਦੇ, ਨਸ਼ਾ ਅਤੇ ਮਾਫੀਆ ਰਾਜ) ਵਿਰੁੱਧ 'ਨਕਾਰਾਤਮਕ ਵੋਟਿੰਗ' (Negative Voting) ਕੀਤੀ ਸੀ। ਨਵੇਂ ਅਧਿਐਨ ਅਤੇ ਉੱਚ ਸਿੱਖਿਆ ਵਿਭਾਗ ਦੇ ਮਾਹਰਾਂ ਦੇ ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਣ ਸੰਕੇਤ ਦਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਸੱਤਾ ਬਦਲਣ ਦੇ ਬਾਵਜੂਦ ਲੋਕਾਂ ਦੀਆਂ ਉਮੀਦਾਂ ਪੂਰੀਆਂ ਨਹੀਂ ਹੋਈਆਂ, ਜਿਸ ਕਾਰਨ ਪੰਜਾਬ ਇਸ ਸਮੇਂ ਇੱਕ ਸਿਆਸੀ ਅਸਥਿਰਤਾ ਅਤੇ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਦੇ ਗੰਭੀਰ ਖੰਡਨ (Fragmentation) ਦੇ ਦੌਰ ਵਿੱਚੋਂ ਲੰਘ ਰਿਹਾ ਹੈ।

4. Main Data & Analysis (ਮੁੱਖ ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਣ)

ੳ) ਚੋਣ ਅੰਕੜਿਆਂ ਦਾ ਤੁਲਨਾਤਮਕ ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਣ (ਬੀ.ਐੱਸ.ਪੀ. ਸਮੇਤ)

ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਸਿਆਸਤ ਵਿੱਚ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਦੇ ਖੰਡਨ (Fragmentation of Leadership) ਅਤੇ ਸਿਆਸੀ ਖਲਾਅ ਨੂੰ ਸਮਝਣ ਲਈ ਪਿਛਲੀਆਂ ਚੋਣਾਂ ਦੇ ਨਤੀਜਿਆਂ ਨੂੰ ਦੇਖਣਾ ਬਹੁਤ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹੈ। ਚੋਣ ਕਮਿਸ਼ਨ ਦੇ ਅੰਕੜਿਆਂ ਮੁਤਾਬਕ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਪਾਰਟੀਆਂ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਹੇਠ ਲਿਖੇ ਅਨੁਸਾਰ ਰਹੀ ਹੈ:

ਸਿਆਸੀ ਪਾਰਟੀ (Political Party)	2022 ਵਿਧਾਨ ਸਭਾ ਚੋਣਾਂ (ਸੀਟਾਂ ਅਤੇ ਵੋਟ %)	2024 ਲੋਕ ਸਭਾ ਚੋਣਾਂ (ਸੀਟਾਂ ਅਤੇ ਵੋਟ %)	ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ 'ਤੇ ਪ੍ਰਭਾਵ / ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਣ (Political Impact)
ਆਮ ਆਦਮੀ ਪਾਰਟੀ (AAP)	92 ਸੀਟਾਂ (42.31%)	3 ਸੀਟਾਂ (26.16%)	ਵੋਟ ਬੈਂਕ ਵਿੱਚ ਵੱਡੀ ਗਿਰਾਵਟ: ਦੋ ਸਾਲਾਂ ਵਿੱਚ ਹੀ ਵੋਟ ਸ਼ੇਅਰ 42% ਤੋਂ ਡਿੱਗ ਕੇ 26% ਰਹਿ ਗਿਆ। ਇਹ ਦਰਸਾਉਂਦਾ ਹੈ ਕਿ ਸਥਾਨਕ ਪੱਧਰ 'ਤੇ ਮਜ਼ਬੂਤ ਸੰਸਥਾਗਤ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਦੀ ਕਮੀ ਕਾਰਨ ਲੋਕਾਂ ਦਾ ਮੋਹ ਭੰਗ ਹੋ ਰਹੀ ਹੈ।
ਇੰਡੀਅਨ ਨੈਸ਼ਨਲ ਕਾਂਗਰਸ (INC)	18 ਸੀਟਾਂ (23.15%)	7 ਸੀਟਾਂ (26.44%)	ਸੀਟਾਂ ਵਿੱਚ ਵਾਧਾ ਪਰ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਗਾਇਬ: ਕਾਂਗਰਸ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡੀ ਪਾਰਟੀ ਬਣ ਕੇ ਉੱਭਰੀ, ਪਰ ਅੰਦਰੂਨੀ ਗੁਟਬਾਜ਼ੀ ਕਾਰਨ ਅੱਜ ਵੀ ਸੂਬੇ ਵਿੱਚ ਕੋਈ ਇੱਕ ਮੁੱਖ ਚਿਹਰਾ ਸਥਾਪਿਤ ਨਹੀਂ ਹੋ ਸਕਿਆ।
ਸ਼ਿਰੋਮਣੀ ਅਕਾਲੀ ਦਲ (SAD)	3 ਸੀਟਾਂ (18.89%)	1 ਸੀਟ (13.48%)	ਪਰੰਪਰਾਗਤ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਦਾ ਪਤਨ: ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਸਭ ਤੋਂ ਪੁਰਾਣੀ ਖੇਤਰੀ ਪਾਰਟੀ ਦਾ ਗ੍ਰਾਫ ਲਗਾਤਾਰ ਡਿੱਗ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਸੁਖਬੀਰ

			ਬਾਦਲ ਦੇ ਅਸਤੀਫ਼ੇ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਪੰਥਕ ਅਤੇ ਪੇਂਡੂ ਵੋਟਰ ਲੀਡਰ-ਵਿਹੂਣੇ ਮਹਿਸੂਸ ਕਰ ਰਹੇ ਹਨ।
ਭਾਰਤੀ ਜਨਤਾ ਪਾਰਟੀ (BJP)	2 ਸੀਟਾਂ (6.78%)	0 ਸੀਟਾਂ (18.65%)	ਵੋਟ ਸ਼ੇਅਰ ਵਧਿਆ ਪਰ ਸੀਟ ਨਹੀਂ: ਭਾਜਪਾ ਦਾ ਵੋਟ ਸ਼ੇਅਰ ਸ਼ਹਿਰੀ ਖੇਤਰਾਂ ਵਿੱਚ ਵਧਿਆ ਹੈ, ਪਰ ਕਿਸਾਨੀ ਅੰਦੋਲਨ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਕਾਰਨ ਪੇਂਡੂ ਪੰਜਾਬ ਅਜੇ ਵੀ ਇਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਨੂੰ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਸਵੀਕਾਰ ਨਹੀਂ ਕਰ ਰਿਹਾ।
ਬਹੁਜਨ ਸਮਾਜ ਪਾਰਟੀ (BSP)	1 ਸੀਟ (1.77%)	0 ਸੀਟਾਂ (ਲਗਭਗ 1.2%)	ਹਾਸ਼ੀਏ 'ਤੇ ਪਹੁੰਚੀ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ: 2022 ਵਿੱਚ ਅਕਾਲੀ ਦਲ ਨਾਲ ਗਠਜੋੜ ਕਰਕੇ ਬੀ.ਐੱਸ.ਪੀ. ਨੇ ਇੱਕ ਸੀਟ ਜਿੱਤੀ ਸੀ, ਪਰ ਸੁਤੰਤਰ ਤੌਰ 'ਤੇ ਚੋਣ ਲੜਨ ਕਾਰਨ ਪਾਰਟੀ ਦਾ ਅਧਾਰ ਲਗਾਤਾਰ ਸੁੰਗੜ ਰਹੀ ਹੈ। ਦਲਿਤ ਵੋਟ ਬੈਂਕ 'ਤੇ ਪਾਰਟੀ ਆਪਣੀ ਪਕੜ ਬਣਾਈ ਰੱਖਣ ਵਿੱਚ ਨਾਕਾਮ ਰਹੀ ਹੈ ਅਤੇ ਇੱਕ

			ਮਜ਼ਬੂਤ ਸਥਾਨਕ ਦਲਿਤ ਚਿਹਰੇ ਦੀ ਕਮੀ ਦਾ ਸਾਹਮਣਾ ਕਰ ਰਹੀ ਹੈ।
ਆਜ਼ਾਦ ਉਮੀਦਵਾਰ / ਹੋਰ	1 ਸੀਟ (3.02%)	2 ਸੀਟਾਂ (7.86%)	ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡਾ ਉਭਾਰ: ਅੰਮ੍ਰਿਤਪਾਲ ਸਿੰਘ ਅਤੇ ਸਰਬਜੀਤ ਖਾਲਸਾ ਵਰਗੇ ਆਜ਼ਾਦ ਉਮੀਦਵਾਰਾਂ ਦੀ ਜਿੱਤ ਇਹ ਸਾਬਤ ਕਰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਜਦੋਂ ਰਵਾਇਤੀ ਪਾਰਟੀਆਂ ਵਿੱਚ ਨੇਤਾ ਨਹੀਂ ਦਿਖਦੇ, ਤਾਂ ਵੋਟਰ ਬਦਲਵੇਂ ਚਿਹਰਿਆਂ ਵੱਲ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।

ਅ) ਰਵਾਇਤੀ ਪਾਰਟੀਆਂ ਅਤੇ ਬੀ.ਐੱਸ.ਪੀ. ਦਾ ਸੰਗਠਨਾਤਮਕ ਪਤਨ

• **ਸ਼ਿਰੋਮਣੀ ਅਕਾਲੀ ਦਲ:** ਸਰਦਾਰ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਸਿੰਘ ਬਾਦਲ ਦੇ ਅਕਾਲ ਚਲਾਣੇ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਪਾਰਟੀ ਕੋਲ ਕੋਈ ਅਜਿਹਾ ਸਰਵ-ਪ੍ਰਵਾਨਿਤ ਚਿਹਰਾ ਨਹੀਂ ਰਿਹਾ। ਸੁਖਬੀਰ ਸਿੰਘ ਬਾਦਲ ਦੇ ਅਸਤੀਫ਼ੇ ਅਤੇ ਪਾਰਟੀ ਦੇ ਅੰਦਰੂਨੀ ਵਿਦਰੋਹ (ਸੁਧਾਰ ਲਹਿਰ) ਨੇ ਸਾਬਤ ਕੀਤਾ ਹੈ ਕਿ ਪਾਰਟੀ ਦਾ ਸੰਗਠਨਾਤਮਕ ਢਾਂਚਾ ਬੁਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਹਿੱਲ ਚੁੱਕਾ ਹੈ।

• **ਭਾਰਤੀ ਰਾਸ਼ਟਰੀ ਕਾਂਗਰਸ:** ਕਾਂਗਰਸ ਪਾਰਟੀ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਗੁਟਬਾਜ਼ੀ (Factionalism) ਦਾ ਸ਼ਿਕਾਰ ਹੈ। ਨਵਜੋਤ ਸਿੰਘ ਸਿੱਧੂ, ਚਰਨਜੀਤ ਸਿੰਘ ਚੰਨੀ, ਅਮਰਿੰਦਰ ਸਿੰਘ ਰਾਜਾ ਵੜਿੰਗ ਅਤੇ ਪ੍ਰਤਾਪ ਸਿੰਘ ਬਾਜਵਾ ਵਰਗੇ ਆਗੂ ਇੱਕ ਮੰਚ 'ਤੇ ਆਉਣ ਦੀ ਬਜਾਏ ਆਪੋ-ਆਪਣੀਆਂ ਸਿਆਸੀ ਡਫ਼ਲੀਆਂ ਵਜਾ ਰਹੇ ਹਨ।

• **ਬਹੁਜਨ ਸਮਾਜ ਪਾਰਟੀ (BSP):** ਪੰਜਾਬ ਬੀ.ਐੱਸ.ਪੀ. ਦੇ ਸੰਸਥਾਪਕ ਮਾਨਯੋਗ ਕਾਂਸ਼ੀ ਰਾਮ ਜੀ ਦੀ ਜਨਮ ਭੂਮੀ ਹੋਣ ਦੇ ਬਾਵਜੂਦ, ਪਾਰਟੀ ਇੱਥੇ ਆਪਣੀ ਹੋਂਦ ਬਚਾਉਣ ਲਈ ਸੰਘਰਸ਼ ਕਰ ਰਹੀ ਹੈ। ਕੇਂਦਰੀ ਹਾਈਕਮਾਂਡ ਦੀ ਪੰਜਾਬ ਇਕਾਈ 'ਤੇ ਬਹੁਤ ਜ਼ਿਆਦਾ ਨਿਰਭਰਤਾ ਅਤੇ ਸਮੇਂ ਸਿਰ ਸਥਾਨਕ ਕੈਡਰ ਦਾ ਵਿਕਾਸ ਨਾ ਹੋਣ ਕਾਰਨ ਪਾਰਟੀ ਦਾ ਰਵਾਇਤੀ ਵੋਟਰ ਦੂਜੀਆਂ ਪਾਰਟੀਆਂ ਵੱਲ ਤਬਦੀਲ ਹੋ ਗਿਆ ਹੈ।

ਏ) ਸੱਤਾਧਾਰੀ ਧਿਰ (AAP) ਦੀਆਂ ਚੁਣੌਤੀਆਂ

ਆਮ ਆਦਮੀ ਪਾਰਟੀ ਨੇ 'ਬਦਲਾਅ' ਦੇ ਨਾਅਰੇ 'ਤੇ ਸਰਕਾਰ ਤਾਂ ਬਣਾ ਲਈ ਅਤੇ ਮੁੱਖ ਮੰਤਰੀ ਭਗਵੰਤ ਮਾਨ ਇੱਕ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਚਿਹਰੇ ਵਜੋਂ ਉੱਭਰੇ, ਪਰ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ 'ਤੇ ਦਿੱਲੀ (ਹਾਈਕਮਾਂਡ) ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਕਾਰਨ ਲਗਾਤਾਰ ਸਵਾਲ ਉੱਠਦੇ ਰਹੇ

ਹਨ। ਪੰਜਾਬੀਆਂ ਦੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਹਮੇਸ਼ਾ ਇੱਕ ਅਜਿਹੇ ਮਜ਼ਬੂਤ ਸਥਾਨਕ ਨੇਤਾ ਦੀ ਰਹੀ ਹੈ ਜੋ ਦਿੱਲੀ ਦੇ ਦਬਾਅ ਅੱਗੇ ਨਾ ਝੁਕੇ, ਜਿਸ ਕਾਰਨ 'ਆਪ' ਦੀ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਸੂਬੇ ਵਿੱਚ ਉਹ ਸਥਾਈ ਭਰੋਸਾ ਨਹੀਂ ਬਣਾ ਸਕੀ ਜੋ ਪੁਰਾਣੇ ਰਵਾਇਤੀ ਲੀਡਰਾਂ ਦਾ ਹੁੰਦਾ ਸੀ।

ਸ) 2024 ਦੀਆਂ ਲੋਕ ਸਭਾ ਚੋਣਾਂ ਅਤੇ ਆਜ਼ਾਦ ਆਵਾਜ਼ਾਂ ਦਾ ਉਭਾਰ

ਸਾਲ 2024 ਦੀਆਂ ਲੋਕ ਸਭਾ ਚੋਣਾਂ ਵਿੱਚ ਖਡੂਰ ਸਾਹਿਬ ਤੋਂ ਅੰਮ੍ਰਿਤਪਾਲ ਸਿੰਘ ਅਤੇ ਫ਼ਰੀਦਕੋਟ ਤੋਂ ਸਰਬਜੀਤ ਸਿੰਘ ਖਾਲਸਾ ਦੀ ਵੱਡੀ ਜਿੱਤ ਨੇ ਸਾਰੀਆਂ ਸਥਾਪਿਤ ਸਿਆਸੀ ਪਾਰਟੀਆਂ ਨੂੰ ਹਿਲਾ ਕੇ ਰੱਖ ਦਿੱਤਾ। ਇਹ ਜਿੱਤ ਇਹ ਸਾਬਤ ਕਰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਪੰਜਾਬ ਦਾ ਵੋਟਰ ਮੌਜੂਦਾ ਸਿਆਸੀ ਜਮਾਤ (Political Class) ਤੋਂ ਬੁਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਅੱਕ ਚੁੱਕਾ ਹੈ। ਜਦੋਂ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਸਥਾਪਿਤ ਪਾਰਟੀਆਂ ਵਿੱਚ ਕੋਈ ਮਜ਼ਬੂਤ ਲੀਡਰ ਨਹੀਂ ਦਿਖਦਾ, ਤਾਂ ਉਹ ਭਾਵਨਾਤਮਕ, ਧਾਰਮਿਕ ਜਾਂ ਆਜ਼ਾਦ ਆਵਾਜ਼ਾਂ ਵੱਲ ਆਕਰਸ਼ਿਤ ਹੁੰਦੇ ਹਨ।

5. Findings (ਖੋਜ ਦੇ ਮੁੱਖ ਨਤੀਜੇ)

• **ਸਿਆਸੀ ਖੰਡਨ (Political Fragmentation):** ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਰਾਜਨੀਤੀ ਹੁਣ ਦੋ-ਧਰੁਵੀ ਤੋਂ ਬਹੁ-ਕੋਣੀ (Multi-cornered) ਹੋ ਚੁੱਕੀ ਹੈ। 2022 ਵਿੱਚ ਜਿਸ ਪਾਰਟੀ (AAP) ਨੂੰ 42% ਵੋਟਾਂ ਮਿਲੀਆਂ ਸਨ, 2024 ਵਿੱਚ ਉਹ 26% 'ਤੇ ਆ ਗਈ, ਜੋ ਸਥਿਰ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਦੀ ਕਮੀ ਨੂੰ ਦਰਸਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਅੱਜ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਕਿਸੇ ਵੀ ਪਾਰਟੀ ਕੋਲ ਕੋਈ ਅਜਿਹਾ ਵੱਡਾ ਨੇਤਾ ਨਹੀਂ ਹੈ ਜਿਸ 'ਤੇ ਲੋਕ ਅੱਖਾਂ ਬੰਦ ਕਰਕੇ ਭਰੋਸਾ ਕਰ ਸਕਣ।

• **ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਅਤੇ ਵਿਜ਼ਨ ਦਾ ਅਕਾਲ:** ਮੌਜੂਦਾ ਲੀਡਰਾਂ ਕੋਲ ਆਪਸੀ ਖਿੱਚੋਤਾਣ ਅਤੇ ਨਿੱਜੀ ਲੜਾਈ ਤੋਂ ਬਿਨਾ ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਅਸਲ ਸੰਕਟਾਂ—ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਕਰਜ਼ਾ, ਧਰਤੀ ਹੇਠਲੇ ਪਾਣੀ ਦਾ ਮੁੱਕਣਾ, ਨੌਜਵਾਨਾਂ ਦਾ ਪਲਾਇਨ (Migration) ਅਤੇ ਬੇਰੁਜ਼ਗਾਰੀ—ਨੂੰ ਹੱਲ ਕਰਨ ਲਈ ਕੋਈ ਠੋਸ ਨੀਤੀ ਜਾਂ ਦੂਰਦਰਸ਼ੀ (Visionary) ਰੋਡਮੈਪ ਨਹੀਂ ਹੈ।

6. Conclusion (ਸਿੱਟਾ)

ਇਸ ਖੋਜ ਪੱਤਰ ਤੋਂ ਇਹ ਸਿੱਟਾ ਨਿਕਲਦਾ ਹੈ ਕਿ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਰਾਜਨੀਤੀ ਇਸ ਸਮੇਂ ਆਪਣੇ ਇਤਿਹਾਸ ਦੇ ਸਭ ਤੋਂ ਗੰਭੀਰ "ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਸੰਕਟ" ਵਿੱਚੋਂ ਲੰਘ ਰਹੀ ਹੈ। ਪਰੰਪਰਾਗਤ ਨੇਤਾਵਾਂ ਦਾ ਦੌਰ ਖ਼ਤਮ ਹੋ ਚੁੱਕਾ ਹੈ ਅਤੇ ਨਵੀਂ ਸੱਤਾਧਾਰੀ ਧਿਰ ਅਜੇ ਤੱਕ ਜਨਤਾ ਦੇ ਦਿਲਾਂ ਵਿੱਚ ਉਹ ਥਾਂ ਨਹੀਂ ਬਣਾ ਸਕੀ। ਆਉਣ ਵਾਲੇ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਪੰਜਾਬ ਦਾ ਅਸਲੀ ਨੇਤਾ ਉਹੀ ਬਣ ਕੇ ਉੱਭਰੇਗਾ ਜੋ ਦਿੱਲੀ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਹੋ ਕੇ, ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਆਰਥਿਕ ਅਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਸੰਕਟਾਂ ਲਈ ਇੱਕ ਠੋਸ 'ਰੋਡਮੈਪ' ਪੇਸ਼ ਕਰੇਗਾ ਅਤੇ ਸੂਬੇ ਦੇ ਖੇਤਰੀ ਹਿਤਾਂ ਦੀ ਸੱਚੀ ਨੁਮਾਇੰਦਗੀ ਕਰੇਗਾ।

7. References & Bibliography

Option A: APA Style (7th Edition)

- Election Commission of India. (2022). Statistical report on general election, 2022 to the Legislative Assembly of Punjab. https://results.eci.gov.in/
- Election Commission of India. (2024). General election to Lok Sabha June 2024: Punjab result overview. https://results.eci.gov.in/
- Kumar, P. (2022). Punjab politics: Emptiness of rhetoric. IDC Publishers.

- Kumar, R. (2025). Electoral Shifts and Institutional Challenges in Higher Education and Political Structures of Punjab. Department of Higher Education, Punjab.
- Ram, R. (2024). Shift in Punjab's electoral dynamics: The rise of alternative voices. Economic and Political Weekly, 59(24), 15–18.
- The Tribune. (2024, June 5). Decoding the 2024 Lok Sabha mandate in Punjab: Fragmentation of traditional vote banks. The Tribune. https://www.tribuneindia.com/

Option B: MLA Style (9th Edition)

- Election Commission of India. Statistical Report on General Election, 2022 to the Legislative Assembly of Punjab. ECI, 2022, https://results.eci.gov.in/.
- ---. General Election to Lok Sabha June 2024: Punjab Result Overview. ECI, 2024, https://results.eci.gov.in/.
- Kumar, Pramod. Punjab Politics: Emptiness of Rhetoric. IDC Publishers, 2022.
- Kumar, Rajesh (Assistant Director). Perspective on Leadership Transition and Social Dynamics in Punjab. Department of Higher Education, Punjab, 2025.
- Ram, Ronki. "Shift in Punjab's electoral dynamics: The rise of alternative voices." Economic and Political Weekly, vol. 59, no. 24, 2024, pp. 15–18.

ਸੰਪਰਕ: 8872143775

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 223-227
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

डिजिटल युग में हिंदी भाषा और साहित्य की चुनौतियाँ

डॉ. महावीर नाथ
सहायक आचार्य, हिंदी
स्वामी विवेकानंद राजकीय महाविद्यालय, खेतड़ी

सारांश

आज का समय सूचना और तकनीक के तीव्र विकास का समय है। डिजिटल माध्यमों ने हमारे जीवन को जिस तरह प्रभावित किया है, उसका असर भाषा और साहित्य पर भी स्पष्ट दिखाई देता है। इंटरनेट, मोबाइल फोन, सोशल मीडिया, ब्लॉग, ई-पुस्तकें, ऑनलाइन पत्रिकाएँ, ऑडियोबुक और पॉडकास्ट ने हिंदी के प्रयोग तथा साहित्य के सृजन और प्रसार के सामने नई संभावनाएँ खोली हैं। अब हिंदी का प्रयोग केवल पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि डिजिटल मंचों पर भी बड़े पैमाने पर हो रहा है। इससे हिंदी को नए पाठक मिले हैं और नए रचनाकारों के लिए अभिव्यक्ति के अवसर बढ़े हैं। दूसरी ओर, डिजिटल माध्यमों में हिंदी की वर्तनी और व्याकरण की उपेक्षा, रोमन लिपि का बढ़ता प्रयोग, हिंदी-अंग्रेजी का अनावश्यक मिश्रण, अप्रमाणिक सामग्री, साहित्यिक गुणवत्ता, कॉपीराइट तथा मौलिकता जैसी समस्याएँ भी सामने आई हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता के विस्तार ने इन संभावनाओं और चुनौतियों को एक नया आयाम दिया है। प्रस्तुत आलेख में डिजिटल युग में हिंदी भाषा और साहित्य के बदलते स्वरूप तथा उससे जुड़ी प्रमुख चुनौतियों और संभावनाओं पर विचार किया गया है।

बीज शब्द : डिजिटल युग, हिंदी भाषा, हिंदी साहित्य, इंटरनेट, सोशल मीडिया, देवनागरी, ई-पुस्तक, कृत्रिम बुद्धिमत्ता।

प्रस्तावना

भाषा केवल बातचीत का साधन नहीं है, बल्कि वह किसी समाज की स्मृतियों, अनुभवों, विचारों और सांस्कृतिक चेतना को भी अपने भीतर समेटे रहती है। साहित्य भाषा के माध्यम से समाज के जीवन और उसकी संवेदनाओं को अभिव्यक्ति देता है। इसलिए समाज में होने वाले परिवर्तन का प्रभाव भाषा और साहित्य पर पड़ना स्वाभाविक है। आज तकनीक ने हमारे दैनिक जीवन की गति और प्रकृति दोनों को बदल दिया है। विशेष रूप से इंटरनेट और स्मार्टफोन ने संवाद के पुराने तौर-तरीकों को काफी हद तक बदल दिया है।

कुछ वर्ष पहले तक किसी लेखक की रचना पाठकों तक पहुँचाने के लिए पुस्तक प्रकाशन या पत्र-पत्रिकाओं का सहारा लेना पड़ता था। आज स्थिति अलग है। कोई भी व्यक्ति अपने विचार, कविता, कहानी या लेख को डिजिटल मंच पर प्रकाशित कर सकता है और वह सामग्री कुछ ही समय में बड़ी संख्या में लोगों तक पहुँच सकती है। इस बदलाव का प्रभाव हिंदी भाषा और साहित्य पर भी पड़ा है। हिंदी अब डिजिटल संसार में लगातार अपना विस्तार कर रही है।

यह परिवर्तन हिंदी के लिए निश्चित रूप से उत्साहजनक है, लेकिन इसके साथ कुछ प्रश्न भी जुड़े हुए हैं। डिजिटल माध्यमों पर हिंदी किस रूप में लिखी जा रही है? क्या भाषा की शुद्धता और साहित्यिक गरिमा बनी हुई है? क्या तकनीक हिंदी के विकास में सहायक है या उसके सामने नई समस्याएँ पैदा कर रही है? इन प्रश्नों पर विचार करना आज आवश्यक हो गया है।

डिजिटल माध्यमों में हिंदी का विस्तार

डिजिटल तकनीक ने हिंदी के प्रयोग का क्षेत्र काफी विस्तृत कर दिया है। इंटरनेट पर हिंदी समाचार, साहित्य, शिक्षा, मनोरंजन और सामाजिक विषयों से जुड़ी सामग्री बड़ी मात्रा में उपलब्ध है। सोशल मीडिया ने हिंदी को विशेष रूप से व्यापक मंच दिया है। लोग अपनी बात हिंदी में लिखने के साथ-साथ वीडियो और ऑडियो के माध्यम से भी प्रस्तुत कर रहे हैं।

डिजिटल माध्यम की सबसे बड़ी विशेषता इसकी तात्कालिकता है। पहले किसी लेख या कविता के प्रकाशन और उसके पाठकों तक पहुँचने में समय लगता था। आज रचना प्रकाशित होते ही पाठकों तक पहुँच सकती है। पाठक भी अपनी प्रतिक्रिया तुरंत दे सकता है। इससे लेखक और पाठक के बीच संवाद अधिक सहज और सीधा हुआ है।

इस परिवर्तन का एक सकारात्मक पक्ष यह भी है कि हिंदी के नए रचनाकारों को सामने आने का अवसर मिला है। जिन लोगों को पारंपरिक प्रकाशन व्यवस्था में स्थान मिलना कठिन था, वे अब डिजिटल माध्यमों पर अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कर सकते हैं। इससे साहित्य का दायरा बढ़ा है और नए विषयों तथा नई अभिव्यक्ति शैलियों को स्थान मिला है।

रोमन लिपि में हिंदी लेखन

डिजिटल युग में हिंदी के सामने एक महत्वपूर्ण भाषिक प्रश्न रोमन लिपि में हिंदी लिखने का है। मोबाइल पर संदेश भेजते समय बड़ी संख्या में लोग हिंदी को देवनागरी में लिखने के बजाय अंग्रेजी अक्षरों का प्रयोग करते हैं। जैसे 'आप कहाँ जा रहे हैं?' को 'Aap kahan ja rahe hain?' लिखा जाता है।

इसके पीछे मुख्य कारण सुविधा और गति है। कई लोगों को मोबाइल पर रोमन अक्षरों में हिंदी लिखना आसान लगता है। विशेष रूप से युवाओं के बीच इसका प्रयोग सामान्य हो गया है। व्यक्तिगत बातचीत में यह तरीका सुविधाजनक हो सकता है, लेकिन साहित्य और औपचारिक लेखन की दृष्टि से देवनागरी का महत्व बना हुआ है।

देवनागरी केवल हिंदी लिखने की लिपि नहीं है, बल्कि हिंदी की साहित्यिक परंपरा और सांस्कृतिक पहचान से भी जुड़ी है। इसलिए डिजिटल माध्यमों पर देवनागरी के प्रयोग को आसान बनाने की दिशा में निरंतर प्रयास आवश्यक हैं। रोमन हिंदी के प्रयोग को पूरी तरह समाप्त करना शायद व्यावहारिक न हो, लेकिन यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि इससे देवनागरी के नियमित प्रयोग पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े।

हिंदी और अंग्रेजी का बढ़ता प्रभाव

डिजिटल संचार ने हिंदी और अंग्रेजी के संपर्क को और अधिक बढ़ा दिया है। रोजमर्रा के डिजिटल संवाद में 'ऑनलाइन', 'मैसेज', 'अपडेट', 'डाउनलोड', 'फाइल' और 'मीटिंग' जैसे शब्द सहज रूप से इस्तेमाल किए जाते हैं। हिंदी ने अपने विकास के दौरान अनेक भाषाओं से शब्द ग्रहण किए हैं। इसलिए दूसरी भाषाओं के शब्दों का हिंदी में आना कोई नई घटना नहीं है।

समस्या तब होती है जब बिना आवश्यकता के अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग बढ़ता जाए और हिंदी के अपने प्रचलित शब्द पीछे छूटने लगें। सोशल मीडिया पर हिंदी और अंग्रेजी का मिश्रित रूप एक सामान्य संचार शैली बन चुका है। इसे भाषा के बदलते स्वरूप के रूप में समझा जा सकता है, लेकिन साहित्यिक और शैक्षणिक लेखन में भाषा की स्पष्टता और गरिमा बनाए रखना जरूरी है।

सोशल मीडिया और हिंदी साहित्य

सोशल मीडिया ने हिंदी साहित्य के लिए एक नया और व्यापक मंच तैयार किया है। आज फेसबुक, इंस्टाग्राम, एक्स, यूट्यूब और अन्य मंचों पर हिंदी कविता, कहानी, व्यंग्य और साहित्यिक सामग्री आसानी से मिल जाती है। इससे साहित्य पढ़ने और लिखने वालों की संख्या में विस्तार हुआ है।

सोशल मीडिया ने साहित्यिक अभिव्यक्ति को अधिक खुला बनाया है। लेखक को अपनी रचना प्रकाशित करने के लिए हमेशा किसी संस्था या प्रकाशक की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। वह सीधे पाठकों तक पहुँच सकता है। पाठकों की प्रतिक्रिया भी तुरंत मिल जाती है। इस कारण साहित्यिक संवाद की गति बढ़ी है।

लेकिन सोशल मीडिया पर लोकप्रियता को साहित्यिक गुणवत्ता का पर्याय नहीं माना जा सकता। किसी रचना के अधिक 'लाइक' या 'शेयर' होने से यह सिद्ध नहीं होता कि वह साहित्यिक दृष्टि से उत्कृष्ट है। साहित्य की गुणवत्ता का निर्धारण उसके विचार, भाषा, संवेदना और शिल्प से होता है। इसलिए डिजिटल लोकप्रियता के साथ साहित्यिक कसौटियों को बनाए रखना भी आवश्यक है।

ई-पुस्तक और साहित्य का नया पाठक

ई-पुस्तकों ने हिंदी साहित्य के पाठकों के लिए नई सुविधा उपलब्ध कराई है। अब पुस्तकों को मोबाइल, टैबलेट और कंप्यूटर पर पढ़ा जा सकता है। इससे पुस्तकों की उपलब्धता बढ़ी है और दूर-दराज के पाठकों के लिए भी साहित्य तक पहुँचना आसान हुआ है।

डिजिटल रूप में पुस्तकों को सुरक्षित रखने का लाभ भी महत्वपूर्ण है। पुराने और दुर्लभ साहित्य को डिजिटल रूप में संरक्षित करके आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाया जा सकता है। शोधार्थियों के लिए डिजिटल पुस्तकालय विशेष रूप से उपयोगी हो सकते हैं, क्योंकि एक ही स्थान से बड़ी संख्या में सामग्री तक पहुँचना संभव हो जाता है।

इसके साथ साहित्य की प्रस्तुति भी बदली है। ब्लॉग, वेब साहित्य, डिजिटल कविता, ऑडियोबुक और पॉडकास्ट ने साहित्य को केवल मुद्रित पृष्ठों तक सीमित नहीं रहने दिया है। पाठक अब साहित्य को पढ़ने के साथ-साथ सुन भी सकता है।

मौलिकता और कॉपीराइट की समस्या

डिजिटल माध्यमों पर किसी सामग्री को कॉपी करना और आगे साझा करना बहुत आसान है। यही सुविधा साहित्य के लिए कॉपीराइट और मौलिकता की समस्या पैदा करती है। लेखक की कविता, कहानी या लेख को बिना अनुमति किसी अन्य व्यक्ति द्वारा अपने नाम से प्रकाशित कर देना डिजिटल युग की गंभीर समस्या है।

शोध के क्षेत्र में भी यह चुनौती महत्वपूर्ण है। इंटरनेट से सामग्री लेना गलत नहीं है, लेकिन उसके स्रोत का उल्लेख किए बिना उसे अपने लेखन के रूप में प्रस्तुत करना अकादमिक दृष्टि से उचित नहीं है। इसलिए डिजिटल सामग्री का उपयोग करते समय संदर्भ और स्रोत की जानकारी देना तथा मौलिक विश्लेषण प्रस्तुत करना आवश्यक है।

डिजिटल सामग्री की विश्वसनीयता

इंटरनेट पर सामग्री की संख्या बहुत अधिक है, लेकिन उसकी विश्वसनीयता समान नहीं है। पारंपरिक पुस्तकों और पत्रिकाओं में संपादन और समीक्षा की प्रक्रिया रहती थी। डिजिटल माध्यमों पर ऐसी कोई अनिवार्य व्यवस्था नहीं है। इसलिए इंटरनेट पर उपलब्ध सामग्री में तथ्यात्मक त्रुटियाँ और भाषिक अशुद्धियाँ मिल सकती हैं।

शोधार्थी के लिए यह आवश्यक है कि वह किसी भी डिजिटल स्रोत को सीधे प्रमाण न मान ले। सामग्री के लेखक, स्रोत, प्रकाशन संस्था और संदर्भ की जाँच करनी चाहिए। विशेष रूप से शोध-पत्र लिखते समय विश्वसनीय और प्रमाणिक स्रोतों का चयन आवश्यक है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता और हिंदी

कृत्रिम बुद्धिमत्ता ने हिंदी भाषा के सामने नई संभावनाएँ पैदा की हैं। आज AI की सहायता से अनुवाद, वाक्-पहचान, भाषा-संशोधन और सामग्री तैयार करने जैसे कार्य किए जा सकते हैं। हिंदी में बोलकर लिखने की सुविधा और स्वचालित अनुवाद जैसी तकनीकें हिंदी के विस्तार में उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं।

AI के माध्यम से हिंदी को अन्य भाषाओं से जोड़ना और हिंदी सामग्री को दूसरे भाषाई समुदायों तक पहुँचाना आसान हो सकता है। शिक्षा और शोध के क्षेत्र में भी इसका उपयोग उपयोगी हो सकता है। किंतु AI से तैयार सामग्री की तथ्यात्मक शुद्धता और मौलिकता की जाँच आवश्यक है।

साहित्य के क्षेत्र में यह प्रश्न और भी महत्वपूर्ण हो जाता है कि क्या मशीन मानव की सृजनात्मकता और संवेदना का स्थान ले सकती है। साहित्य केवल शब्दों का संयोजन नहीं है। उसमें लेखक के जीवनानुभव, संवेदना, कल्पना और सामाजिक दृष्टि का योगदान होता है। इसलिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता को साहित्यकार का विकल्प न मानकर उसके सहयोगी उपकरण के रूप में देखना अधिक उचित होगा।

डिजिटल असमानता की चुनौती

डिजिटल तकनीक का विस्तार होने के बावजूद समाज के सभी वर्गों तक इसकी पहुँच समान नहीं है। इंटरनेट, स्मार्टफोन और डिजिटल साक्षरता की उपलब्धता में अंतर है। ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के लिए डिजिटल संसाधनों की उपलब्धता अभी भी कई बार सीमित होती है।

हिंदी के डिजिटल विकास का वास्तविक लाभ तभी प्राप्त होगा जब डिजिटल सामग्री समाज के व्यापक वर्ग तक पहुँचे। ग्रामीण क्षेत्रों में हिंदी की गुणवत्तापूर्ण शैक्षिक और साहित्यिक सामग्री उपलब्ध कराना इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम हो सकता है।

हिंदी के लिए संभावनाओं का नया संसार

डिजिटल युग हिंदी के लिए अनेक संभावनाएँ लेकर आया है। इंटरनेट ने हिंदी को देश की सीमाओं से बाहर भी पहुँचने का अवसर दिया है। डिजिटल पुस्तकालय हिंदी साहित्य की पुरानी विरासत को सुरक्षित रख सकते हैं। ई-पुस्तकें, ऑडियोबुक और पॉडकास्ट साहित्य को उन पाठकों तक पहुँचा सकते हैं जो पारंपरिक पुस्तकों की अपेक्षा डिजिटल माध्यम को अधिक सुविधाजनक मानते हैं।

सोशल मीडिया ने नए लेखकों को मंच दिया है और डिजिटल पत्रकारिता ने हिंदी में सूचना और विचार के नए क्षेत्र खोले हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता और भाषा-तकनीक के विकास से हिंदी का तकनीकी उपयोग भविष्य में और बढ़ सकता है।

इस दिशा में सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता यह है कि हिंदी तकनीक की उपभोक्ता मात्र न बने, बल्कि तकनीकी विकास में अपनी सक्रिय भूमिका निभाए। हिंदी के लिए बेहतर डिजिटल शब्दकोश, भाषा-संसाधन, देवनागरी उपकरण, डिजिटल पुस्तकालय और उच्च गुणवत्ता वाली सामग्री विकसित करना समय की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

डिजिटल युग ने हिंदी भाषा और साहित्य के सामने एक नई परिस्थिति निर्मित की है। यह समय हिंदी के लिए जितनी चुनौतियाँ लेकर आया है, उतने ही अवसर भी प्रदान कर रहा है। इंटरनेट, सोशल मीडिया, ई-पुस्तक, ब्लॉग, ऑनलाइन पत्रिकाएँ, ऑडियोबुक और पॉडकास्ट ने हिंदी की पहुँच को व्यापक बनाया है। नए रचनाकारों को मंच मिला है और पाठकों के लिए साहित्य तक पहुँचना आसान हुआ है।

इसके साथ रोमन लिपि में हिंदी लेखन, हिंदी-अंग्रेजी मिश्रण, भाषिक अशुद्धियाँ, साहित्यिक गुणवत्ता, कॉपीराइट, अप्रमाणिक सामग्री और डिजिटल असमानता जैसे प्रश्न भी सामने हैं। इन समस्याओं से बचने का रास्ता डिजिटल माध्यमों से दूरी बनाना नहीं, बल्कि उनका विवेकपूर्ण और जिम्मेदार उपयोग करना है।

हिंदी का इतिहास परिवर्तन के साथ आगे बढ़ने का इतिहास रहा है। डिजिटल युग भी हिंदी की इसी विकास-यात्रा का नया चरण है। आवश्यकता इस बात की है कि हिंदी अपनी साहित्यिक परंपरा और सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखते हुए आधुनिक तकनीक को अपनाए। देवनागरी के प्रयोग को बढ़ावा देते हुए डिजिटल संसाधनों का विकास किया जाए और नई तकनीकों का उपयोग भाषा तथा साहित्य के विस्तार के लिए किया जाए। यदि तकनीकी सुविधा और भाषिक-सांस्कृतिक चेतना के बीच संतुलन बनाया जा सके, तो डिजिटल युग हिंदी के लिए केवल चुनौती का समय नहीं रहेगा, बल्कि उसके व्यापक विस्तार और नए सृजन की संभावनाओं का महत्वपूर्ण दौर सिद्ध होगा।

संदर्भ-सूची

1. शुक्ल, रामचंद्र — हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।
2. द्विवेदी, हजारी प्रसाद — हिंदी साहित्य की भूमिका, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. नामवर सिंह — दूसरी परंपरा की खोज, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. बच्चन सिंह — हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. तिवारी, भोलानाथ — हिंदी भाषा, किताब महल, इलाहाबाद।
6. वर्मा, धीरेन्द्र — हिंदी साहित्य कोश, ज्ञानमंडल, वाराणसी।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 228-232
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

मधु कांकरिया के उपन्यासों में नारी अस्मिता और संघर्ष : एक समालोचनात्मक अध्ययन

स्पम कुमारी
शोधार्थी (हिंदी विभाग),
भू. ना. मं. विश्वविद्यालय, मधेपुरा

सार (Abstract)
मधु कांकरिया समकालीन हिंदी साहित्य की महत्वपूर्ण उपन्यासकार हैं। उनके उपन्यासों में स्त्री जीवन की जटिलताओं, सामाजिक विषमताओं, पारिवारिक विडंबनाओं और नारी-अस्मिता के प्रश्नों का यथार्थपरक चित्रण मिलता है। उनकी स्त्री पात्र पीड़ा और शोषण की शिकार मात्र नहीं, बल्कि आत्मसम्मान, स्वतंत्रता, अधिकार और अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करने वाली सजग एवं स्वाभिमानी व्यक्तित्व के रूप में उभरती हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र में उनके प्रमुख उपन्यासों के आधार पर नारी-अस्मिता, संघर्ष, सामाजिक रूढ़ियों के प्रति प्रतिरोध और स्वतंत्र अस्तित्व की खोज का समालोचनात्मक अध्ययन किया गया है। साथ ही, उनकी नारी-दृष्टि में सामाजिक यथार्थ, मानवीय संवेदना और स्त्री-विमर्श के विविध आयामों को रेखांकित किया गया है।

मुख्य शब्द (Keywords): मधु कांकरिया, नारी अस्मिता, संघर्ष, नारी विमर्श, स्त्री चेतना, समकालीन हिंदी उपन्यास।

1. प्रस्तावना

समकालीन हिंदी साहित्य में नारी-विमर्श स्त्री के अधिकार, अस्मिता, आत्मनिर्णय, समानता, स्वतंत्रता और सामाजिक न्याय जैसे प्रश्नों को केंद्र में रखता है। महिला उपन्यासकारों ने स्त्री जीवन के संघर्ष, अंतर्द्वंद्व, संवेदना और आत्मसम्मान को यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया है। ग्रामीण समाज में स्त्री की स्थिति पर सुभाष सेतिया ने कहा है - "ग्रामीण भारत की सबसे बड़ी आर्थिक गतिविधि कृषि है और आज तक महिलाओं को किसान के रूप में मान्यता तक नहीं मिली है। महिला अधिकारों के लिए सामूहिक लड़ाई की मोर्चाबंदी भी गांवों में नगण्य है, जबकि स्त्री-पुरुष असमानता तथा नारी-शोषण का सबसे अधिक भीषण प्रकोप गांवों में ही है। 70 प्रतिशत से अधिक आबादी वाले ग्रामीण भारत में नारी-जागरण रूपी ज्योति की मद्धिम-सी लौ में नारी समानता की तस्वीर बहुत ही धुंधली दिखाई देती

है।"1 ऐसी स्थिति में साहित्य सामाजिक वास्तविकताओं को सामने लाने और नारी-चेतना विकसित करने का महत्वपूर्ण माध्यम बनता है। समकालीन हिंदी कथा-साहित्य में मधु कांकरिया का विशिष्ट स्थान है। उनके उपन्यासों में स्त्री जीवन की जटिलताओं, सामाजिक रूढ़ियों, पितृसत्तात्मक मानसिकता, लैंगिक असमानता तथा पारिवारिक और आर्थिक दबावों का यथार्थपरक चित्रण मिलता है। उनकी स्त्री पात्र संघर्षशील, आत्मचेतस और स्वाभिमानी हैं। उनके संघर्ष में आत्मसम्मान, स्वतंत्र निर्णय, अधिकार और गरिमापूर्ण जीवन की आकांक्षा प्रमुख है। "मधु कांकरिया के उपन्यासों में नारी अस्मिता और संघर्ष : एक समालोचनात्मक अध्ययन" के अंतर्गत उनके प्रमुख उपन्यासों में स्त्री अस्मिता, संघर्ष, प्रतिरोध और सशक्तिकरण के विभिन्न आयामों का अध्ययन किया गया है।

2. मधु कांकरिया के उपन्यासों में नारी अस्मिता

मधु कांकरिया के उपन्यासों में नारी-अस्मिता केंद्रीय और बहुआयामी प्रश्न के रूप में उभरती है। उनकी रचनाओं में स्त्री को केवल परिवार अथवा समाज द्वारा निर्धारित भूमिकाओं तक सीमित नहीं किया गया है, उसे अपनी स्वतंत्र पहचान, इच्छाओं, आकांक्षाओं और निर्णय-क्षमता से युक्त मानवीय व्यक्तित्व के रूप में प्रस्तुत किया गया है। उनकी स्त्री पात्र सामाजिक एवं पारिवारिक दबावों के बीच अपने अस्तित्व को पहचानने, अपनी गरिमा को बनाए रखने तथा जीवन से संबंधित निर्णय स्वयं लेने के लिए संघर्ष करती दिखाई देती हैं। मधु कांकरिया का नारी-विमर्श स्त्री की पीड़ा के चित्रण के साथ-साथ उसकी चेतना, प्रतिरोध, आत्मसम्मान और आत्मनिर्भरता को भी अभिव्यक्त करता है।

2.1 स्त्री की पहचान का प्रश्न

मधु कांकरिया के उपन्यासों में स्त्री की स्वतंत्र पहचान का प्रश्न महत्वपूर्ण है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था में स्त्री की पहचान प्रायः बेटी, पत्नी, बहू और माँ जैसी पारिवारिक भूमिकाओं से निर्धारित होती रही है। मधु कांकरिया की रचनाएँ इस मानसिकता पर प्रश्न उठाते हुए स्त्री को स्वतंत्र व्यक्तित्व के रूप में प्रस्तुत करती हैं। **गंगाबाई** के माध्यम से लेखिका धार्मिक रूढ़ियों और विवाह से जुड़े सामाजिक दबावों को सामने लाती हैं। पारसी के पिता अमरनाथ बाबू कहते हैं -"लड़की को ब्याहना है कि कोई भूत भगाना है जो इस प्रकार हाय-तौबा की जाए। क्या है ये सब अंगूठी व्रत, संतोषी माता के सोलह शुक्रवार ये सब तो लड़की का आत्मबल तोड़ कर रख देंगे।"2 यह प्रसंग विवाह की चिंता और धार्मिक कर्मकांडों के कारण स्त्री के आत्मबल तथा स्वतंत्र व्यक्तित्व पर पड़ने वाले प्रभाव को दर्शाता है। पूर्णिमा देवी के प्रसंग में भी स्त्री के जीवन और वैवाहिक भविष्य को धार्मिक मान्यताओं से जोड़ने वाली सोच दिखाई देती है। नागपंचमी के प्रसंग में वह कहती हैं - "नहीं बेटा हमारे घर पर नागदेव का श्राप पड़ा हुआ है। हमारे घर पर ही नहीं पूरे गाँव पर ही यह श्राप है कि इस गाँव की बेटियाँ आज के दिन नाग देवता की पूजा करके ही दाना मुँह में धरेंगी जिसने भी नागपंचमी के दिन नाग को नहीं पूजा पति सुख से वंचित रह जाएगी वह।"3 यहाँ 'पति सुख' को स्त्री के जीवन से जोड़कर उसकी पहचान को विवाह-केंद्रित बनाया गया है। इस प्रकार मधु कांकरिया धार्मिक रूढ़ियों और विवाह-केंद्रित मानसिकता के माध्यम से स्त्री की स्वतंत्र अस्मिता पर पड़ने वाले प्रभाव को रेखांकित करती हैं।

2.2 आत्मसम्मान और स्वाभिमान

मधु कांकरिया की स्त्री पात्रों में आत्मसम्मान और स्वाभिमान नारी-अस्मिता के महत्वपूर्ण आधार हैं। उनकी स्त्री पात्र सामाजिक दबावों के सामने समर्पण करने के बजाय अपनी स्वतंत्र सोच और व्यक्तित्व बनाए रखने का प्रयास करती हैं। सुकीर्ति इसका प्रमुख उदाहरण है। वह स्त्री के 'सतीत्व' से जुड़ी रूढ़ धारणाओं को चुनौती देते हुए कहती है - "तो तुम्हें डर है कि इन गलियों में जाने से तुम्हारा सतीत्व बिगड़ जाएगा। खैर... ..तुम ऐसा सोच सकते हो, पर मैं एक पत्रकार हूँ, मेरे लिए कोई भी अनुभव वर्जित नहीं है। सभी तरह के लोगों से मिलना और सभी तरह के अनुभवों से

गुजरना मेरे लिए जरूरी है।"4 सुकीर्ति अपने पेशे और अनुभवों को अपनी पहचान का आधार मानती है तथा स्त्री के लिए निर्धारित संकीर्ण नैतिक सीमाओं को स्वीकार नहीं करती। उसके व्यक्तित्व में आत्मविश्वास, आत्मसम्मान और स्वतंत्र विचार स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। इस प्रकार सुकीर्ति स्त्री की स्वायत्तता, स्वतंत्र निर्णय और नारी-अस्मिता का प्रतिनिधित्व करती है।

2.3 स्वतंत्र अस्तित्व की खोज

मधु कांकरिया के उपन्यासों में स्त्री के स्वतंत्र अस्तित्व की खोज नारी-अस्मिता का महत्वपूर्ण आयाम है। उनकी स्त्री पात्र विवाह, परिवार और मातृत्व तक सीमित न रहकर अपने व्यक्तित्व और जीवन के उद्देश्य को व्यापक रूप में देखती हैं। **मणिदीपा** इसका प्रमुख उदाहरण है। वह विवाह को स्त्री जीवन की अंतिम उपलब्धि मानने वाली सामाजिक मानसिकता का विरोध करती है। वह कहती है - "धर्म के इस शुष्क, कर्महीन और भावनाशून्य रास्ते पर यदि तुम सिर्फ इसी कारण जा रही हो कि इस समाज में तुम्हारी शादी संभव नहीं तो याद रखो शादी ही जीवन की अंतिम उपलब्धि नहीं और न ही बाँझ स्त्री वह स्त्री है जिसने संतान को जना नहीं। बाँझ वे सभी स्त्री-पुरुष हैं जिन्होंने संसार से लिया ही लिया, दिया कुछ भी नहीं।"5 मणिदीपा का कथन स्त्री के मूल्यांकन को विवाह और मातृत्व की सीमाओं से बाहर ले जाता है। उसके अनुसार स्त्री का अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व, उद्देश्य और सामाजिक योगदान है। इस प्रकार उसका चरित्र स्त्री के स्वतंत्र अस्तित्व, आत्मसम्मान और वैकल्पिक जीवन-दृष्टि का प्रतिनिधित्व करता है।

3. मधु कांकरिया के उपन्यासों में नारी संघर्ष

मधु कांकरिया के उपन्यासों में नारी-अस्मिता के साथ नारी-संघर्ष का भी व्यापक चित्रण मिलता है। उनकी स्त्री पात्र सामाजिक विषमता और पितृसत्तात्मक व्यवस्था की निष्क्रिय शिकार न होकर अपने अस्तित्व, सम्मान, अधिकार और स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करती हैं। यह संघर्ष पारिवारिक अपेक्षाओं, आर्थिक निर्भरता, लैंगिक भेदभाव, यौन शोषण, मानसिक दबाव और सामाजिक रूढ़ियों जैसी परिस्थितियों से जुड़ा है। लेखिका ने नारी-संघर्ष को केवल बाहरी शोषण तक सीमित न रखकर उसके आंतरिक द्वंद्व, आत्मनिर्णय और स्वतंत्र अस्तित्व से भी जोड़ा है।

3.1 पारिवारिक संघर्ष

मधु कांकरिया की स्त्री पात्रों में आत्मसम्मान और स्वाभिमान नारी-अस्मिता के महत्वपूर्ण आधार हैं। उनकी स्त्री पात्र सामाजिक दबावों के सामने समर्पण करने के बजाय अपनी स्वतंत्र सोच और व्यक्तित्व बनाए रखने का प्रयास करती हैं। सुकीर्ति इसका प्रमुख उदाहरण है। वह स्त्री के 'सतीत्व' से जुड़ी रूढ़ धारणाओं को चुनौती देते हुए कहती है - "तो तुम्हें डर है कि इन गलियों में जाने से तुम्हारा सतीत्व बिगड़ जाएगा। खैर... ..तुम ऐसा सोच सकते हो, पर मैं एक पत्रकार हूँ, मेरे लिए कोई भी अनुभव वर्जित नहीं है। सभी तरह के लोगों से मिलना और सभी तरह के अनुभवों से गुजरना मेरे लिए जरूरी है।"6 सुकीर्ति अपने पेशे और अनुभवों को अपनी पहचान का आधार मानती है तथा स्त्री के लिए निर्धारित संकीर्ण नैतिक सीमाओं को स्वीकार नहीं करती। उसके व्यक्तित्व में आत्मविश्वास, आत्मसम्मान और स्वतंत्र विचार स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। इस प्रकार सुकीर्ति स्त्री की स्वायत्तता, स्वतंत्र निर्णय और नारी-अस्मिता का प्रतिनिधित्व करती है।

3.2 सामाजिक संघर्ष

मधु कांकरिया के उपन्यासों में नारी-संघर्ष का महत्वपूर्ण आयाम सामाजिक संघर्ष है। स्त्री को सामाजिक रूढ़ियों, पितृसत्तात्मक मान्यताओं, नैतिक नियंत्रण और लैंगिक पूर्वाग्रहों का सामना करना पड़ता है। लेखिका इन मानदंडों पर प्रश्न उठाते हुए स्त्री की स्वतंत्रता, समानता और सम्मान को रेखांकित करती हैं। 'सलाम आखिरी' में स्त्री के

सामाजिक और यौन शोषण का मार्मिक चित्रण मिलता है - "यहाँ सभी मर्द हरामी है। यहाँ सबकी लंगोटी में दाग है। ऊ मेरी जिंदगी का पहला ऐसा बड़ा दुःख था जिसे मैंने मन से कबूल लिया था और उसके बाद मई खुद अपनी मालकिन बन गई। अपने माँ- बाबा को धियान कर उनसे में ही मन माफी माँगकर मैंने अपनी, नै बनी चकले की मालकिन द्वारा दी गयी साड़ी पहन ली और वेश्यावृत्ति कबूल कर ली।"7 यह शोषण, असुरक्षा और सामाजिक उपेक्षा के बीच स्त्री के संघर्ष को सामने लाता है। 'अपनी मालकिन' बनना उसके भीतर विकसित आत्मचेतना और आत्मनिर्णय की भावना को भी व्यक्त करता है।

3.3 आर्थिक संघर्ष

नारी-संघर्ष का महत्वपूर्ण पक्ष आर्थिक संघर्ष है। आर्थिक निर्भरता स्त्री की स्वतंत्रता और निर्णय-क्षमता को प्रभावित करती है। मधु कांकरिया के उपन्यासों में आर्थिक आत्मनिर्भरता और कार्यक्षेत्र में स्त्री की स्थिति को नारी-अस्मिता से जोड़ा गया है। रोजगार प्राप्त करने के बाद भी स्त्री को पुरुष-प्रधान मानसिकता, लैंगिक भेदभाव और यौन उत्पीड़न जैसी परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। मधु कांकरिया के **'सेज प्रसाद'** उपन्यास में कार्यस्थल पर स्त्री के शोषण की स्थिति इस प्रकार अभिव्यक्त हुई है - "मधु कांकरिया की सेज प्रसाद उपन्यास में, एक ऑफिस में मालिक ने उसके हाथ अपने हाथों में लेकर दबाते हुए कहा था "आपकी नौकरी पक्की पर यह बताइए कि प्रोग्रामिंग के अलावा आप क्या कर सकती है ?"8 यह प्रसंग नौकरी की स्थिरता को स्त्री की व्यक्तिगत सीमाओं और उसकी देह से जोड़ने वाली पुरुषवादी मानसिकता को उजागर करता है। इस प्रकार आर्थिक संघर्ष केवल आर्थिक अभाव तक सीमित नहीं, बल्कि रोजगार, कार्यस्थल पर सम्मान और आर्थिक स्वतंत्रता को सुरक्षित रखने के संघर्ष से भी जुड़ा है।

4. समालोचनात्मक मूल्यांकन

मधु कांकरिया के उपन्यासों में नारी जीवन की जटिलताओं, संघर्षों और अस्मिता का यथार्थपरक चित्रण मिलता है। उनकी नारी-दृष्टि स्वतंत्रता, आत्मसम्मान, समानता और आत्मनिर्णय पर आधारित है। उनकी स्त्री पात्र केवल पीड़ित न होकर संघर्षशील, आत्मनिर्भर और अपने अधिकारों के प्रति सजग दिखाई देती हैं। सामाजिक रूढ़ियों, लैंगिक असमानता, पारिवारिक एवं मानसिक संघर्ष तथा स्त्री-स्वतंत्रता के प्रश्न उनके साहित्य के प्रमुख विषय हैं। कुछ रचनाओं में यौन-संबंधों का प्रत्यक्ष चित्रण कहीं-कहीं संवेदनात्मकता पर वैचारिकता को अधिक प्रभावी बनाता है। फिर भी उनका साहित्य स्त्री-अस्मिता और संघर्ष को सामाजिक यथार्थ एवं मानवीय संवेदना से जोड़ते हुए समकालीन नारी-विमर्श को व्यापक दृष्टि प्रदान करता है।

5. निष्कर्ष

मधु कांकरिया के उपन्यासों में नारी जीवन की जटिलताओं, संघर्षों और अस्मिता का संवेदनशील एवं यथार्थपरक चित्रण मिलता है। उनकी स्त्री पात्र सामाजिक, पारिवारिक और पितृसत्तात्मक बंधनों के बीच अपने अधिकार, आत्मसम्मान, स्वतंत्रता और गरिमापूर्ण जीवन के लिए संघर्ष करती हैं। लेखिका ने स्त्री के पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक और मानसिक संघर्षों के साथ उसके प्रतिरोध, आत्मचेतना और आत्मनिर्णय को भी प्रमुखता दी है। उनकी रचनाओं में स्त्री की स्वतंत्रता अपनी पहचान और निर्णय-क्षमता स्थापित करने की प्रक्रिया के रूप में सामने आती है। इस प्रकार मधु कांकरिया का साहित्य नारी-अस्मिता और संघर्ष को सामाजिक यथार्थ एवं मानवीय संवेदना से जोड़ते हुए समकालीन हिंदी नारी-विमर्श को व्यापक दृष्टि प्रदान करता है।

संदर्भ सूचि -

1. सुभाष सेतिया - स्त्री अस्मिता के प्रश्न, कल्याणी शिक्षा परिषद - जटवाड़ा, दरियागंज नई दिल्ली, संस्करण - 2008, पृष्ठ संख्या 10
2. खुले गगन के लाल सितारे मधु कांकरिया पृ. सं. 54
3. सेज पर संस्कृत मधु. कांकरिया पृ. सं. 8
4. सलाम आखिरी मधु कांकरिया पृ. सं 63
5. खुले गगन के लाल सितारे मधु कांकरिया पृ. सं 153
6. सुनीता कावले - कथाकार मधु कांकरिया, पृष्ठ संख्या – 188
7. मधु कांकरिया - खुले गगन के लाल सितारे, पृ. संख्या – 154
8. मधु कांकरिया - सेज पर संस्कृत, पृष्ठ संख्या - 150

ईमेल – spambharti9534@gmail.com

Mob - 9534079292

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 September 2026 Page No. : 233-236
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

'परख' में प्रेम और मर्यादा का द्वन्द्व

नियंता
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग,पटना विश्वविद्यालय, पटना
डॉ० कुमार धनंजय
शोध निर्देशर्क,
सहायक प्राध्यापकहिन्दी विभाग ,
पटना वीमेन्स कॉलेज, पटना विश्वविद्यालय, पटना

सारांश :
इस उपन्यास के माध्यम से जैनेन्द्र जी ने यह प्रतिपादित किया है कि सच्चा प्रेम सामाजिक सौदेबाजी या पारिवारिक का मोहताज नहीं होता मर्यादा थोपना इंसान को भीतर से खोखला बना देता। परख में यह दिखाया गया है कि जब एक व्यक्ति का तीव्र स्वाभाविक प्रेम समाज द्वारा बनाई मर्यादाओं और उसकी महत्वकांक्षाओं से टकराती है, तो उसके अंतर्मन में तूफान उठता है।

मुख्य शब्द : अंतर्द्वन्द्व, मर्यादा, त्याग, प्रेम, समर्पण, विवाह आदि।

लोग कहते है, वह विधवा है, कम नसीब लड़की जान गयी, वह विधवा है, कम नसीब भी होगी। लेकिन फिर हंसने, खेलने, भागने, कुदने का अधिकार वह क्यों नहीं रखती यह सब नहीं समझ पाती।

बालिका सुन्दर विशेष नहीं है। उसके होंठ जरा ज्यादा ताजे और ज्यादा खुले है और फैलते–फैलते एकाएक रूक गये है। चेहरे के एक–एक अंग में और भी दोष निकाले जा सकते हैं।

(परख, पृ० 20)[1]

और कट्टो की आंखों से बड़ा ही सुन्दर मनोवैज्ञानिक पहलू पेश करते हुए कहते है कि, ''इन आंखों से ही कह सकते हो सुन्दर नहीं है और इनके कारण ही कहा जा सकता है कि अत्यन्त सुन्दर है, जैसे मानों स्त्रीत्व छनकर इन आंखों में भर गया है।

(परख, पृ० 21)[2]

मतलब इन आंखों में ही हिंसा, प्रेम, करूणा, कुतूहल सभी कुछ समाहित है और आंखें सब कुछ देखती भी है और नहीं भी... अर्थात् स्त्री सब कुछ देख कर भी अनदेखी सी प्रकट होती है और नहीं देख कर भी अपनी अंतःकरण से सब कुछ समझ लेती है, यहाँ हम आगे उपन्यास में क्या घटित होने वाला है

इसकी झलक इन दो पंक्तियों में ही पा लेते हैं। कट्टो पढ़ना चाहती है परन्तु जब आवश्यक कार्यवश मास्टर जी को अपने घर जाना पड़ता है उस समय भी विरह वेदना में रोते हुए भी वह मास्टर जी को तकिया उपहार स्वरूप देना नहीं भूलती। यहाँ स्त्री की मनोदशा का बड़ा ही मार्मिक एवं करूणामय चित्रण किया गया है जो कि दर्शाता है स्त्री कितनी भी विवश हो पर अपना प्यार को किसी न किसी रूप में प्रकट करना नहीं भूलती और सत्यधन को भी सदा ही कट्टों की चिन्ता रहती है कि वह स्थापित जीवन–यापन कर सकें, जब पिता का आदेश विवाह करने हेतु मास्टर जी का प्राप्त होता है तब मास्टर की कट्टो से विवाह करने की मंशा छिपे रूप में पिता के सामने प्रकट करते है तथा मन में यह भी विरोधाभाष होता है कि मैं स्वयं विवाह कर न सकूं तो कट्टो का विवाह किसी अन्य से करवा कर ही खुद विवाह करूँ।

यहाँ एक अन्य पात्र बिहारी के रूप में सामने आता है जो निर्द्वन्द्व आदमी है पैसे खर्च करने वाला है जिसके विवाह की चिन्ता भी उसके पिता नहीं करते है परन्तु पुत्री गरिमा के विवाह की चिन्ता उनके पिता को है तथा गरिमा की शादी वह सत्यधन से करना चाहते है। यहाँ पुरूष को बेपरवाह उच्श्रृंखल एवं महिला को आश्रित जो पिता के लिए एक चिन्ता का विषय हो, उसके अनुभव दिखाया गया है। वहीं अपनी श्रेष्ठता वो त्यागी परमार्थी रूप को व्यक्त करते हुए सत्यधन मास्टर जी अपनी प्रेमिका कट्टो से बिहारी को विवाह करने के लिए रजामंद कर लेता है और इस प्रकार अपनी हीन भावना और असमंजस्य एवं करूणा भाव को दूसरे व्यक्ति के ऊपर तिरोहित कर खुद ही खुदा बनने का स्वांग रचा जाता है बिना यह समझे जाने की नारी जिसके विषय में निर्णय लिया जा रहा है उसकी ईच्छा और आकांक्षा क्या है अथवा उसकी मनोदशा पर क्या बितेगी और किस पर यह विश्वास भी कि वह कट्टो को तो मना ही लेगा। एक ओर जहाँ कट्टो की प्रेमपूर्ण भी विवशता एवं अध्ययन करने की उत्कंठा मन को प्रभावित करती है वहीं दूसरी ओर सत्यधन के विवाह हेतु प्रस्तावित गरिमा का व्यक्तित्व भी गरिमा पूर्ण रूप से सामने आया है जहाँ अपने गरिमा के साथ विवाह के प्रस्ताव को वह अस्वीकार करता है तब गरिमा कहती है। मैंने आपको क्या समझा है? और आप क्यों यह सब बातें मुझसे कहने बैठे? ''मैं कहे देती हूँ, मेरे अपमान की आपकी मंशा हो भी, तो भी अधिकार नहीं है।''

उपर्युक्त कथन में स्त्री का सबल पक्ष प्रस्तुत किया गया है जो किसी भी स्थिति में अपना और अपने पिता का अपमान बर्दाश्त नहीं कर सकती है। सत्य की मनःदशा प्रस्तुत उपन्यास में क्षण–क्षण बदलती हुई भी दृष्टिगोचर होती है जब वह यह महसूस करता है कि कट्टो को भूल जायेगा।

''गरिमा ने कहा और तभी एक ताजे उठे हुए भाव से उसका चेहरा चमक गया। पूछा ''अच्छा, मैंने वैसे ही बन जाऊं तो कैसा। तुम्हें अच्छा लगेगा? ''तुम बन नहीं सकती।'' बन सकती हूँ।'' यह तो तुम जानने नहीं।'' 'आप' से 'तुम' पर वह कब उतर आयी थी, सो उसे पता नहीं चला।

'कैसे'?

'ऐसे'।''

कहकर वह झट से भाग गयी और पास के दरख्त पर चढ़ गयी, जैसे बन्दर की आत्मा उसमें आ गयी हो। सत्य भी उस दरख्त के नीचे पहुँच गया। पहुँचना था कि उसके सिर पर सूखे पत्तों और छोटी–छोटी टहनियों की बारिश हो पड़ी।

''अब कैसे?''

''अब मैं पछताऊंगा। 'सत्य' ने कहा'' पछताना नहीं। कट्टो को दुनिया में सब कुछ न मानने लगना। तकिये की बात है तो आज एक मुझसे ले लेना। तैयार रखा है। सत्य को लगा जैसे अब वह यही करेगा। कट्टो को भूल जाएगा।

(परख, पृ० 34)[3]

एवं अंततः जब सत्यधन कट्टो को समझ बिहारी के साथ विवाह करने का प्रस्ताव रखता है, एवं कट्टो को इसके लिए रजामंदी चाहता है तब कट्टो कहती है अपनी उन्हीं आंखों के विषय में जिसके मन में

सत्य गढ़े थे वह प्रस्ताव का जबाव देते हुए कहती है कि ''उसके पास वहीं आंखें हैं जिन्हें उठा सकती है और गिरा सकती है। उन्हीं में पढ़ लो क्या लिखा है वही उसका उत्तर है''।

(परख, पृ० 37)[4]

सत्यधन आगे पछताने की धमकी भी देता है परन्तु कट्टो कुछ न बोली उसकी आंखों ने कहा ''मैं किसी को दोष नहीं देती। पर तुम मुझसे ऐसी बातें न कहो''।

(परख, पृ० 38)[5]

जहाँ प्रेम का उत्कृष्ट, उत्कर्ष रूप हमारे सामने आता है जिसमें व्यक्ति का प्रेम सर्वोपरि महसूस होता है बाकी सभी बौने प्रतीत होते है जहाँ प्रेम ऐसी भावना के रूप में व्यक्त होती है जिसके वर्णन हेतु शब्द ही खुद को शब्दहीन महसूस करते है और प्रेम ऐसा लगता है कि यह केवल आंखों में ही दिखता है।

सत्यधन पुनः जब कट्टो से मिलता है तब सत्यधन की मनोदशा में परिवर्तन पाते है और उसके परिवर्तित मनोभावों को व्यक्त करते हुए कहा गया है कि आज यह मानव मूर्ति, इस अंधेरे वातावारण में, मानों सत्य की आत्मा को प्रकाश दिखलाने के लिए आयी है। जब कट्टो बिना कुछ बोले मास्टर के पैर टटोल लेने चाहती है।

''पैर को पाकर कट्टो ने अश्रु जल से उनका खूब ही अभिसिंचन किया।''

(परख, पृ० 39)[6]

तब मास्टर जी का मानसिक रूप संभाल नहीं पाए और अपनी करूणिक हृदय लिए सुध–बुध खोकर गंगा किनारे जाकर सो जाते हैं। प्रेम की अनिश्चितता तथा एक–दूसरे के प्रति सच्चा समर्पण यहाँ प्रस्तुत किया गया है जहाँ स्पष्टतः प्रतीत होता है कि दोनों सामाजिक वर्जनाओं को मानते हुए एक–दूसरे से अत्यधिक लगाव महसूस करते हैं। प्रेम की अनुभूति होते ही नारी सुलभ लज्जा का मनोभाव प्रकट होता दिखाता है ''कही कोई देख न ले।'' इस सौभाग्य को किसी की नजर न लगने पाएगी। आज उसमें न जाने कहाँ की लाज गयी है।

(परख, पृ० 40)[7]

और फिर अपनी आंतरिक पीड़ा जब व्यक्ति के मन से अश्रु रूप में पिघल कर बाहर आ जाती है तब व्यक्ति प्रफुल्लित हो जाता है तथा अतिशय दुःख अथवा अतिशय सुख में व्यक्ति सारे संसार का हो जाता है उसके लिए संसार की सीमाएं छोटी हो जाती है तभी तो कट्टो के मन में आता है पर्वी मूला घूमने की बात और अपने उछाह और अपने प्रणय से विश्व को पलावित कर देना चाहती है और इधर सत्यधन की मनोदशा उद्यव की तरह थी जिसे श्री कृष्ण ने गोपियों को समझाने के लिए भेजा था सत्यधन बात तो बिहारी की करने आए थे और यहाँ खुद ही बाँके बिहारी की स्थिति हो गई। यहाँ सत्यधन अपनी मानसिक स्थिति से मजबूर हैं वहीं दूसरे ओर उनके मन में माता की चिन्ता भी है कि उनके विवाह से इन्कार कर वह हतप्रभव न हो जाए। इन्हीं अंतर्विरोधों में संवाद चलता है और अंत में बिहारी के यह समझाने पर कि गरिमा पढ़ी लिखी काबिल है सत्यधन को गरिमा से विवाह कर लेता है और कट्टो का बिहारी से विवाह हो जाता है और अंत में वही कट्टो सत्यधन के पिता की अंतिम समय सेवा करने के लिए प्रस्तुत होती है और सभी संपत्ति कट्टो के पति बिहारी को दे दिया और अंत में दोनों अपनी अलग राह पर चल दिये। इस प्रकार कट्टो का जीवन एक उत्सर्ग तपस्या, बलिदान एवं त्रासदी की कहानी के सिवा कुछ भी नहीं है तो बस एक ऊर्जा जीवन से हार नहीं मानने वाली उत्कंठा और समर्पण।

इस उपन्यास का मूल कथ्य ही प्रेम और मर्यादा का अंतर्द्वन्द्व है। इसके माध्यम से हमें यह संदेश मिलता है कि समाज की मर्यादाएं उदाहरण के तौर पर धन, जाति या झूठी प्रतिष्ठा इंसान पर डालना उसके प्रेम की हत्या कर देती है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. कुमार, जैनेन्द्र, 'परख', भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, पृ० 20
2. वही, पृ० 21

3. वही, पृ० 34
4. वही, पृ० 37
5. वही, पृ० 38
6. वही, पृ० 39
7. वही, पृ० 40

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/1

Certificate of Publication

is awarded to

प्रो॰ अरुण कुमार सिंह

इतिहास विभाग

डी.ए.वी. पी.जी. कॉलेज,

(सम्बद्ध महाराजा सुहेलदेव विश्वविद्यालय आजमगढ़) आजमगढ़, उत्तर प्रदेश,

पिन कोड - 276001

for the paper titled

अवध की प्रशासनिक एवं सैन्य व्यवस्था : नवाबी शासन की संस्थागत संरचना का अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 11-18

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/2

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० नेमीचंद कुमावत

सह आचार्य, हिंदी,

माणिक्य लाल वर्मा राजकीय महाविद्यालय, भीलवाड़ा (राजस्थान) 311001

for the paper titled

प्रकृति का नैसर्गिक सौंदर्य और डॉ. 'सुमन' की कविता

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 19-23

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/3

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० सतकुमार

एसोसिएट-प्रोफेसर (हिन्दी विभाग),

छोटू राम किसान, महाविद्यालय, जीन्द, हरियाणा

for the paper titled

जयशंकर प्रसाद के काव्य में प्राकृतिक सौन्दर्य

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 24-27

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/4

Certificate of Publication

is awarded to

सुमन यादव
शोधार्थी,
इन्दिरा प्रियदर्शिनी राजकीय स्नातकोत्तर महिला वाणिज्य महाविद्यालय
हल्द्वानी (नैनीताल)

for the paper titled

राजेंद्र यादव के उपन्यासों में दांपत्य जीवन : एक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 28-31

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/5

Certificate of Publication

is awarded to

मोनिका
शोधार्थी,
हिंदी विभाग महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा
डॉ० अनिल कुमार
सहायक प्रोफेसर,
हिंदी विभाग महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा

for the paper titled

आदिवासी समाज में पिछड़ेपन के कारण

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 32-35

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/6

Certificate of Publication

is awarded to

सलोनी प्रिया

शोध छात्रा,

केशव प्रसाद मिश्र राजकीय महिला महाविद्यालय औराई

संबद्ध महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी

for the paper titled

रेत समाधि:हर हद-सरहद पार का आख्यान

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 36-41

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/7

Certificate of Publication

is awarded to

संजू लदेर

शोधार्थी

पी. एच. डी.(हिन्दी)

डॉ. सी वी रमन विश्वविद्यालय करगी रोड कोटा बिलासपुर छत्तीसगढ़

डॉ. राधा शर्मा

शोध निर्देशक

सहा. प्राध्यापक (हिन्दी)

डॉ.सी वी रमन विश्वविद्यालय करगी रोड कोटा बिलासपुर छत्तीसगढ़

for the paper titled

छत्तीसगढ़ की नदी-परंपरा और हिन्दी साहित्यः प्रकृति, आस्था एवं जीवन-दर्शन का अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 42-47

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/8

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. कुलदीप
सहायक प्रोफेसर हिंदी,
राजकीय स्नातकोत्तर नेहरू महाविद्यालय झज्जर

for the paper titled

मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानी 'बिगड़ैल बच्चे' में मूल्यबोध

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 48-51

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/9

Certificate of Publication

is awarded to

मनीषा देवी
शोधार्थी हिंदी-विभाग,
महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक

for the paper titled

रमणिका गुप्ता की कहानी 'जिंदा रहने के लिए' में आदिवासी जीवन का संघर्ष

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 52-55

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/10

Certificate of Publication

is awarded to

RUPINDER SINGH

ASSISTANT PROFESSOR,

DEPARTMENT POLITICAL SCIENCE, DAV COLLEGE BATHINDA

for the paper titled

Idea"s of the Guru Nanak Dev Ji for Human Rights: Relevance in Democracy

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 56-60

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/11

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. सुदेश कुमारी
सहायक प्रोफेसर हिंदी,
राजकीय स्नातकोत्तर नेहरू महाविद्यालय झज्जर

for the paper titled

जीवन मूल्य के सन्दर्भ में ज्ञानप्रकाश विवेक की कहानी 'शिकारगाह' का अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 61-63

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/12

Certificate of Publication

is awarded to

राहुल
शोधार्थी,
हिंदी विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय

for the paper titled

गिरीश कारनाड के नाटक 'पुष्प' में मिथकीय प्रयोग : भक्ति, कामना और आधुनिक चेतना

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 64-67

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/13

Certificate of Publication

is awarded to

रंजन तिग्गा

सहायक प्राध्यापक,

फातमा टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज दुबलिया, चंदवे, काँके, राँची

for the paper titled

झारखण्ड के विद्यालयों में शारीरिक शिक्षा एवं खेल सुविधाओं की उपलब्धता, उपयोगिता एवं चुनौतियों का अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 68-72

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/14

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० सतकुमार

एसोसिएट-प्रोफेसर (हिन्दी विभाग),
छोटू राम किसान, महा विद्यालय, जीन्द, हरियाणा

for the paper titled

हरियाणा के लोकसाहित्य में सांस्कृतिक चेतना

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 73-77

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/15

Certificate of Publication

is awarded to

मंजीत कुमार
शोधार्थी
हिंदी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
आर्य कन्या महाविद्यालय, हरदोई, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, उ०प्र०

for the paper titled

हाशिए से केंद्र तक : दलित साहित्य की वैचारिक यात्रा एवं ओमप्रकाश वाल्मीकि का कथा साहित्य

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 78-86

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/16

Certificate of Publication

is awarded to

भारत सिंह जामोद
सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य)
वीर बलिदानी खाज्या नायक शास. स्नातकोत्तर महाविधालय
सेंधवा बड़वानी (म.प्र.) 451666

for the paper titled

डिजिटल मार्केटिंग का आधुनिक व्यवसाय एवं उपभोक्ता व्यवहार पर प्रभाव: एक अध्ययन

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 87-91

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/17

Certificate of Publication

is awarded to

संदीप उपाध्याय

शोधार्थी,

डी.ए.वी.पी.जी. कॉलेज लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

for the paper titled

"अग्निदेव का त्रिविध स्वरुप"
गृहय, दाक्षिणात्य एवं आहवनीय का शास्त्रीय विवेचन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 92-96

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/18

Certificate of Publication

is awarded to

फातिमा हेन्ना

शोधार्थी,

हिंदी विभाग महाराजास कॉलेज एर्नाकुलम 682011

for the paper titled

चित्रा मुद्गल के कालातीत नारीवादी उपन्यास "आवा"

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 97-99

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/19

Certificate of Publication

is awarded to

ਡਾ. ਲਖਵਿੰਦਰ ਕੌਰ
ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ
ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ, ਡੀ. ਏ. ਵੀ ਕਾਲਜ ਬਠਿੰਡਾ

for the paper titled

ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕ ਕਾਵਿ ਦੀ ਸਿਰਜਣ ਵਿਧੀ

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 100-104

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/20

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ0 अमित कुमार

सहायक आचार्य,

राजनीति विज्ञान विभाग, के0 बी0 पी0 जी0 कालेज मिर्जापुर

for the paper titled

भारत–अमेरिका सामरिक साझेदारी और भारत–रूस संबंधों के बीच संतुलनः बदलती वैश्विक राजनीति का अध्ययन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 105-109

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/21

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ0 योगेश कुमार कनौजिया,

सहायक आचार्य,

अखिलभाग्य स्नातकोत्तर महाविद्यालय रानापार, गोरखपुर

for the paper titled

भारत की 'Neighbourhood First' नीति का दक्षिण एशिया की क्षेत्रीय सुरक्षा एवं आर्थिक एकीकरण पर प्रभाव : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 110-114

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/22

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ.उषस .पी .एस

सहायक प्राध्यापक

पी.जी विभाग,द.भा.हिंदी प्रचार सभा,एर्णाकुलम,केरलम

for the paper titled

'वर्किंग विमेंस हॉस्टल' की कविताओं में स्त्री प्रतिरोध के विविध आयाम

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 115-121

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/23

Certificate of Publication

is awarded to

Dr. Bhuneshwarlal Sahu

Assistant Professor,

School of Studies in Political Science,

Shaheed Mahendra Karma Vishwavidyalaya, Bastar, Jagdalpur, Chhattisgarh, India

Dr. Digeshwar Sahu

Assistant Professor,

School of Studies in Social Work,

Shaheed Mahendra Karma Vishwavidyalaya, Bastar, Jagdalpur, Chhattisgarh, India

for the paper titled

Youth-Led Development in Chhattisgarh and the Viksit Bharat Vision: Demographic Dividend, Skills, and Civic Participation

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 122-126

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/24

Certificate of Publication

is awarded to

डा० मुन्ना जोशी
असिस्टेण्ट प्रोफेसर
संस्कृत विभाग एम . बी . पी . जी .महाविद्यालय, हल्द्वानी

for the paper titled

नाट्यशास्त्रानुसार नाटक व नाटक की विशिष्टता

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 127-131

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/25

Certificate of Publication

is awarded

डॉ. ममता गौतम

सहायक प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान),

राजकीय पीजी कॉलेज-नोएडा, गौतमबुद्ध नगर, उ. प्र.

for the paper titled

भारत में समान आचार संहिता:अवधारणा, विवाद एवं समकालीन संभावनाएँ

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 132-136

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/26

Certificate of Publication

is awarded to

चंद्रिका भोइ

शोधार्थी,

ओड़िशा केंद्रीय विश्वविद्यालय ,कोरापुट

डॉ.चक्रधर पधान

(सह आचार्य एवं विभागाध्यक्ष)

हिंदी विभाग, ओड़िशा केंद्रीय विश्वविद्यालय ,कोरापुट

for the paper titled

साहित्य और संस्कृति के संवाहक के रूप में अनुवाद और तुलनात्मक अध्ययन का महत्व :मनोज दास की (ओड़िआ) कहानियों के संदर्भ में

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 137-145

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/27

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. शीनुल इस्लाम मलिक
असिस्टेंट प्रोफेसर,
हिंदी विभाग, गाँधी फ़ैज़-ए-आम कॉलेज, शाहजहांपुर

for the paper titled

अमीर खुसरो के साहित्य में सूफी दर्शन और सांस्कृतिक चेतना

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 146-153

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/28

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. पूजा यादव

(अतिथि प्राध्यापक),

डॉ. खूबचंद बघेल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय भिलाई–3, दुर्ग, छत्तीसगढ

for the paper titled

ग्रामीण क्षेत्रों में ई–कॉमर्स और उद्यमिता का विकासः– अवसर, चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 154-160

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/29

Certificate of Publication

is awarded to

रिम्पल सिंह

शोधार्थी,

डॉ. दिनेश कुमार मीणा

शोध निर्देशक,

जे.जे.टी. विश्वविद्यालय, जुडैला, झुंझुनूं (राजस्थान)

for the paper titled

भीष्म साहनी कृत उपन्यास 'निल्लू नीलिमा नीलोफ़र' में स्त्री-अस्तित्व, स्वायत्तता और समकालीन समाज: एक सघन विश्लेषण

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 161-165

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/30

Certificate of Publication

is awarded to

हिक्की देवदास,

शोधार्थी (PT),

हिंदी विभाग ,यूनिवर्सिटी कॉलेज ,तिरुवनंतपुरम ,केरल

डॉ॰ बी अशोक ,

शोध निदेशक

for the paper titled

समकालीन हिंदी फिल्मों में बाल यौन शोषण की समस्या एवं सरकारी नीतियों की सिनेमाई अभिव्यक्ति (विशेष सन्दर्भ: कहानी 2, आर्टिकल 15 एवं A Thursday)

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 166-169

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/31

Certificate of Publication

is awarded to

Dr. Pankaj Kumar Tiwari

(Assistant Professor),

Dept. of Political Science,

R.D.S. College Muzaffarpur Bihar, (India)

for the paper titled

Contemporary Global Issues and New World Orde

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 170-173

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/32

Certificate of Publication

is awarded to

रजनी

शोधार्थी,

हिन्दी विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय रोहतक

for the paper titled

रामफल सिंह खटकड़ के प्रबन्धकाव्यों में राष्ट्रीयता की भावना

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 174-178

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/33

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. दीपक कुमार कन्नौजिया

सुरसी, रुदौली, मीरजापुर, उत्तर प्रदेश

for the paper titled

पूर्वांचल की लोक-संस्कृति में धोबिया गीत एवं नृत्य: ऐतिहासिक संदर्भ, समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य और समकालीन संकट

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 179-183

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/34

Certificate of Publication

is awarded to

نبیلہ جبین

ریسرچ اسکالر خواجہ بندہ نواز یونیورسٹی گلبرگہ

Co-Author, Dr. Maimuna Begum Sardgi

for the paper titled

دکنی ادب کی تحقیق

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 184-188

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/35

Certificate of Publication

is awarded to

Sanchita Santra

Research scholar,

BBMKU(Dhanbad) & Assistant Professor, Dept of Sanskrit

Saltora Netaji Centenary College, Bankura, W.B

for the paper titled

वन-विनाश और रामायण की अरण्य-चेतना

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 189-192

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/36

Certificate of Publication

is awarded to

विन्द्रेश यादव

शोधार्थी,

हिंदी विभाग, कला संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-110007, भारत

डॉ. ओमप्रकाश

सहायक आचार्य हिंदी विभाग,

कला संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-110007, भारत

for the paper titled

सामाजिक अस्मिता के निर्माण भाषा का योगदान (हिंदी के संदर्भ में)

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 193-198

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/37

Certificate of Publication

is awarded to

वंदना शर्मा

(दाऊ दयाल महिला पी.जी कॉलेज, फिरोजाबाद)

संबद्ध – डॉ भीमराव अम्बेडकर यूनिवर्सिटी आगरा

प्रो. प्रेमलता

(दाऊ दयाल महिला पी.जी कॉलेज, फिरोजाबाद)

संबद्ध – डॉ भीमराव अम्बेडकर यूनिवर्सिटी आगरा

for the paper titled

डिजिटल युग में सांस्कृतिक पहचान और सामाजिक परिवर्तन: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 199-203

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/38

Certificate of Publication

is awarded to

Dinesh Kumar

Research Scholar,

School of Humanities,

Indira Gandhi National Open University Maidan Garhi, New Delhi

for the paper titled

Indian Women's Theatre as a Cultural Intervention: Performance of Sexual and Gender-Based Violence and Resistance

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 204-215

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/39

Certificate of Publication

is awarded to

ਮਨਦੀਪ ਕੁਮਾਰ (Mandeep Kumar)
ਲੈਕਚਰਾਰ ਰਾਜਨੀਤੀ ਸ਼ਾਸਤਰ,
ਸਰਕਾਰੀ ਸੀਨੀਅਰ ਸੈਕੰਡਰੀ ਸਕੂਲ (GSSS) ਮਹਿਤਾਬਪੁਰ

for the paper titled

ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਰਾਜਨੀਤੀ ਵਿੱਚ ਲੀਡਰਸ਼ਿਪ ਦਾ ਸੰਕਟ: ਇੱਕ ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਣ

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 216-222

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/40

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. महावीर नाथ

सहायक आचार्य, हिंदी

स्वामी विवेकानंद राजकीय महाविद्यालय, खेतड़ी

for the paper titled

डिजिटल युग में हिंदी भाषा और साहित्य की चुनौतियाँ

Published in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 223-227

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/41

Certificate of Publication

is awarded to

स्पम कुमारी
शोधार्थी (हिंदी विभाग),
भू. ना. मं. विश्वविद्यालय, मधेपुरा

for the paper titled

मधु कांकरिया के उपन्यासों में नारी अस्मिता और संघर्ष : एक समालोचनात्मक अध्ययन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 228-232

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. September 2026/42

Certificate of Publication

is awarded to

नियंता

शोधार्थी,

हिन्दी विभाग,पटना विश्वविद्यालय, पटना

डॉ० कुमार धनंजय

शोध निर्देशर्क,

सहायक प्राध्यापकहिन्दी विभाग ,

पटना वीमेन्स कॉलेज, पटना विश्वविद्यालय, पटना

for the paper titled

'परख' में प्रेम और मर्यादा का द्वन्द्व

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

September 2026, Vol. 23, Issue-3(part-one), Page No. 233-236

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152